शिक्षा में नवाचार

एवं

आधुनिक प्रवृत्तियाँ

(INNOVATIONS AND MODERN TRENDS IN EDUCATION)

शंकर शरण श्रीवास्तव

रीडर, शिक्षा संकाय

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

हर प्रसाद भार्गव

4/230 कचहरी घाट, आगरा-4

मुख्य विक्रेता
भार्गव बुक हाऊस
राजामण्डी, आगरा-282 002

द्वितीय संस्करण 1989 90

मूल्य Rs 35/

मुद्रक :
अजन्ता प्रिंटर्स, आगरा-3

परम पूज्य श्री प्रेमजी महाराज
जिनकी
अहेतुकी कृपा से जीवन
को एक दिशा मिली
और प्रत्येक परिस्थिति
को भगवान का
प्रसाद समझने
की दृष्टि
को
सादर सप्रेम समर्पित

द्वितीय संस्करण की भूमिका

'शिक्षा मे नवाचार एव आधुनिक प्रवत्तियाँ' का द्वितीय सस्करण हिन्दी भाषी क्षेत्र के विश्वविद्यालयो और महाविद्यालयों में शिक्षाशास्त्र विषयक छात्रो और प्राध्यापको के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। शिक्षाशास्त्र के छात्रो और अध्यापको ने जिस सदयता आत्मीयता और सुरुचिपूर्ण सरचनात्मक आलोचना के साथ पुस्तक का स्वागत किया है उसके लिए हम उनके आभारी हैं। प्रथम सस्करण मे कुछ अध्यायो के कतिपय भाग अस्पष्ट रह गये थे, तथा मुद्रण सम्बन्धी कुछ त्रुटिया रह गयी थीं। प्रस्तुत सस्करण मे इन न्यूनताओ को दूर करने का प्रयास किया गया है अन्यथा पुस्तक के कलेवर मे अधिक परिवतन नही किया गया है। कुछ अध्यायों की भाषा को अधिक सरल और प्राजल बनाया गया है, साथ ही विषय वस्तु के प्रतिपादन को अधिक से अधिक सुपाठ्य और सुबोध बनाने का भी प्रयास किया गया है।

द्वितीय सस्करण के प्रणयन मे लेखक ने भरसक प्रयत्न किया है कि अध्येता आद्योपान्त पुस्तक पढने के बाद शिक्षा मे नवाचार के स्वरूप, उसके विविध पक्षो, मूलभूत सम्प्रत्ययों, विधियो एव नवाचार की आधुनिक प्रवृत्तियो तथा उपलब्धियो का प्रारम्भिक परिचय प्राप्त कर सकें। पाठ्य सामग्री को इस प्रकार सगठित करने का प्रयास किया गया है कि अध्येता की रुचि नवाचार सम्बन्धी अधुनातन जानकारी प्राप्त करने की दिशा मे प्रवृत्त हो सके। पुस्तक का उद्देश्य पूव स्नातक एव पूव स्नातकोत्तर छात्रो के लिए परीक्षा मे उत्तीण कराना न होकर, शिक्षा के क्षेत्र मे नवाचार को अगीकृत करने सम्बन्धी प्रतिबद्धता एव सिद्धता प्राप्त करने की दिशा में पहल करना है। फिर भी परीक्षा का अपना एक विशेष स्थान एव महत्व है। अत प्रत्येक अध्याय के अन्त मे अभ्यास हेतु सम्भावित प्रश्नो को भी इस सस्करण मे विद्यार्थियो के हित मे स्थान दिया गया है। अपने प्रयास म लेखक को कहाँ तक सफलता मिली है, भविष्य मे विषय के अध्येता ही निर्णीत कर सकेंगे।

विजया दशमी —शकर शरण श्रीवास्तव

17 अक्टूबर, 1989

आमुख

तकनीकी विकास और उससे उत्पन्न सामाजिक अनिवार्यताएँ तथा उभरती हुई जनाकांक्षाएँ शिक्षा के स्वरूप को तेजी से बदल रही हैं। परिवर्तन की माग एव परिवर्तन की प्रक्रिया आजकल विश्वव्यापी घटना है। बदलते हुये परिवेश मे शिक्षा के उद्देश्य और साथ ही साथ शिक्षण की प्रक्रिया भी एक अत्यन्त व्यावसायिक एव कौशलयुक्त प्रक्रिया बनती जा रही है। शिक्षा के क्षेत्र विस्तार एव शिक्षण प्रक्रिया की प्रभावकारिता की वृद्धि के लिए नित्य नवीन नवाचारो का जन्म हो रहा है। शैक्षिक उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए शिक्षा के नियोजक, प्रशासक एव शिक्षक इन नवाचारो को अपनाने के लिए कायरत हैं क्योंकि इनके बिना वे प्रगतिशील परिवर्तन के प्रवाह मे अपने को सतुलित नही रख पायेंगे और देश की भावी पीढ़ी शिक्षा जगत मे पिछड जायेगी

ज्ञान, कौशल एव विशिष्टता के बढते हुये भण्डार को अधिकतम व्यक्तियो तक प्रभावकारी रीति से सम्प्रेषित करने हेतु आज के शिक्षक को शिक्षा सम्बन्धी नवाचारो एव नवीन प्रवृत्तियों से परिचित होना अत्यावश्यक है। किसी भी नवाचार को अपनाने की प्रक्रिया म सवप्रथम अनिवार्यता है नवाचार की जानकारी एव उसमे रुचि। इसी शत की पूर्ति हेतु इस पुस्तक म कुछ प्रमुख शैक्षिक नवाचारो एव नवीन प्रवृत्तियो का सतुलित एव समीक्षात्मक विवरण प्रस्तुत करने की चेष्टा की गयी है। शैक्षिक नवाचार, एव नवीन प्रवृत्तियो के स्वरूप और उनकी कार्यविधि पर प्रकाश डालने वाली पुस्तक का हिन्दी भाषा म नितान्त अभाव शिक्षा के क्षेत्र म काम करने वाले छात्रो, अध्यापको, प्रशिक्षणार्थियो एव प्रशासको को खटकता रहा है। इस अभाव की पूर्ति ही इस पुस्तक के लेखन का प्रेरणा स्रोत रही है।

शैक्षिक नवाचारो एव नवीन प्रवृत्तियों को समग्र रूप म प्रस्तुत करना सम्भव नही है क्योंकि यह अविरल परिवर्तनशील एव विकासशील क्षेत्र है जिसकी सीमाएँ दिन प्रतिदिन विस्तृत एव नवीन रगो से भरी जाती हैं। फिर भी यथासम्भव यह प्रयास किया गया है कि अपने देश मे अपनाने योग्य कोई क्षेत्र अछूता न रह जाय। इस पुस्तक को उन्नीस अध्यायो मे प्रस्तुत किया गया है। प्रथम तीन अध्याय शैक्षिक नवाचार शैक्षिक तकनीकी आन्दोलन एव शिक्षा म प्रणाली उपागम नवाचारों एव नवीन प्रवृत्तियो के सिद्धान्तो की पृष्ठभूमि एव प्रकृति का सरल एव स्पष्ट चित्र

प्रस्तुत करते हैं। अगले चार अध्याय वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली, अभिक्रमित अनुदेशन तथा शिक्षण मशीन, शिक्षा मे कम्प्यूटर एव अनुदेशनात्मक माड्यूल कुछ ऐसे नवाचारो की प्रवृत्ति, व्यूह रचना नियोजन तथा क्रियान्वयन को प्रस्तुत करते हैं जिनको अगीकृत कर कोई भी छात्र व्यक्तिगत स्तर पर अधिगम उद्देश्यो को अपनी गति के साथ सीखता हुआ शैक्षिक उद्देश्यो को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है। अगले सात अध्याय ऐसे नवाचारो से सम्बन्धित हैं जो सामूहिक अनुदेशन की प्रक्रिया का प्रभावी तो बनाते ही हैं साथ ही साथ शिक्षा को देश की जनता के द्वार तक पहुचाते है। अध्यायो के इस सकुल में ऐसे नवाचारो एव प्रवृत्तियो का प्रस्तुतीकरण भी किया गया है जिनको अपनाने से देश के प्रत्येक छात्र एव नागरिक को समाज उपयोगी एव उत्पादक सदस्य बनाया जा सकता है और उनमे सामुदायिक सेवा की भावना भरी जा सकती है। अतिम पाँच अध्याय शिक्षा के उन नवाचारो से सम्बन्धित हैं जिन्हे हम विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र म अपनाकर विकलाग, मन्दितमना एव व्यावहारिक समस्याओ स ग्रसित बालको को भी समुचित शिक्षा द्वारा राष्ट्र जीवन की मुख्य धारा म मिला सकते हैं एव उन्हे भी समाज का उपयोगी अग बना सकते है।

पुस्तक का प्रणयन कर शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थियो को शैक्षिक नवाचारो से परिचित कराने का प्रयास इसलिए नही किया गया है कि उन्हे इस पुस्तक के द्वारा शैक्षिक समस्याओ के समाधान हेतु कोई रामबाण औषधि प्रदान की जाय अपितु पुस्तक लेखन का उद्देश्य शिक्षाशास्त्र के हिन्दी भाषी विद्यार्थियो को शिक्षा के विभिन्न नवाचारो से परिचित कराने के साथ साथ उनमे इस बात की समझ विकसित करना है कि वे विभिन्न नवाचारो का प्रयोग विभिन्न शैक्षिक उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए कर सकें।

विषय क्षेत्र की जटिलता, विस्तार और सन्दर्भ ग्रन्थो की दुष्प्राप्यता ने लेखन काय को अत्यन्त कठिन बना दिया था। व्यावसायिक जीवन की व्यस्तता एव पारिवारिक कठिनाइयो न इस काय का दुष्कर भी बना दिया किन्तु अनेक मित्रों और छात्रो की सहायता से यह काय सम्पन्न हो सका है। प्रोफेसर टी० एस० राव के मार्गदर्शन एव डॉ० गोपाल चन्द्र भट्टाचार्य के सहयोग के लिए उनका चिर आभारी हूँ। मेरे शोध छात्र श्री अमरनाथ दत्त गिरि न पाण्डुलिपि की तैयारी म मेरी जो सहायता की है, उसे भुला नही सकता। पाण्डुलिपि की प्रेस प्रतिलिपि की तयारी मे मेरे शोध छात्र सवश्री जनादन प्रसाद शुक्ल, तथा कमलेशकुमार मिश्रा का सहयोग उल्लेखनीय रहा है। पूज्य पिताजी की अस्वस्थता एव अन्य पारिवारिक कठिनाइयो मे भी मेरे पुत्र रवि प्रकाश, सूय प्रकाश एव पुत्री सुहासिनी के सहयोग का ही यह प्रतिफल है कि यह पुस्तक पाठकों के हाथ मे है।

पुस्तक के प्रणयन मे जिन पुस्तका एव अनुसधानकर्त्ताओं के लेखो की सहायता ली गयी है, उनके प्रति मैं अपना आभार प्रदशन करता हू। पुस्तक के प्रकाशन मे

तत्परता और कुशलता का परिचय देने के लिए डा० महेश भार्गव का भी आभारी हूं।

आशा है, शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थियो, शिक्षको एव अभिभावको के लिए यह पुस्तक समान रूप से उपयोगी सिद्ध होगी। पुस्तक के परिमार्जन एव सशोधन के लिए पाठको के सुझावो की प्रतीक्षा बनी रहेगी।

विजया दशमी

अक्टूबर, 1987 —शकर शरण श्रीवास्तव

विषय-सूची

1

शैक्षिक नवाचार

[EDUCATIONAL INNOVATION]

शैक्षिक नवाचार आवश्यकता एवं भूमिका (Educational Innovation Need and Role)

'यथावत रहने की अपेक्षा परिवर्तन' सफल जीवन के लिए एक आदर्श वाक्य बन गया है और शिक्षा व्यवस्थित रूप से परिवर्तन लाने वाला एक साधन मान लिया गया है। किन्तु सामाजिक परिवर्तनों के द्वारा तेजी के साथ बदलती हुई परिस्थितियों की दौड़ में शैक्षिक परिवर्तन पिछड़ गया है। सर्वत्र इस बात की माँग की जा रही है कि शिक्षा में जनाकांक्षाओं एवं लक्ष्यों के अनुरूप परिवर्तन किया जाय। 'नयी शिक्षा नीति' इसी दिशा में गतिशीलता प्रदान करने हेतु अपनायी गयी है। शिक्षाशास्त्रियों द्वारा शिक्षा प्रणाली में नये विचार, नये कार्यक्रम, नयी विधियों और तकनीकों के द्वारा जिन्हें हम 'शैक्षिक नवाचार' (Educational Innovations) कहते हैं, सुधार लाने का प्रयास किया जा रहा है।

तकनीकी विकास और उससे उत्पन्न सामाजिक अनिवार्यताएँ शिक्षा के स्वरूप को बहुत तेजी के साथ बदल रही हैं। परिवर्तन की माँग एवं परिवर्तन की प्रक्रिया आज एक विश्वव्यापी घटना है। सामाजिक रूपान्तरण अथवा अभिनव परिवर्तनों का संक्षिप्त विश्लेषण हमें यह समझने में सहायक होगा कि शैक्षिक नवाचार क्यों आवश्यक है और इनकी भूमिका क्या है?

जनसंख्या में विस्फोट सामाजिक एवं आर्थिक समस्या ही नहीं उत्पन्न करता अपितु अनेक शैक्षिक समस्याओं एवं आवश्यकताओं को भी जन्म देता है। आज हमें अधिक विद्यालय, अधिक उपकरणों, अधिक पुस्तकों की आवश्यकता है, क्योंकि एक प्रजातान्त्रिक और समाजवादी राष्ट्र होने के कारण हमें सबके लिए शिक्षा को सुलभ बनाना है। अतः स्कूल के पाठ्यक्रम और संगठन प्रारूप को हमें इस प्रकार बदलना होगा कि जनता की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

हम पहले से ही खचाखच भरी हुई कक्षाओं में और बालकों को नहीं बैठा सकते। अतः हम अधिक से अधिक छात्रों को शिक्षित करने के लिए कुछ नवीन

विधियों को अपनाना पड़ेगा ताकि बढ़ती हुई जनसंख्या और सबके लिए शिक्षा की माँग की पूर्ति की जा सके।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ने औद्योगीकरण की प्रक्रिया को बहुत त्वरित गति से बढ़ाया है। जनसंचार एवं यातायात के साधनों ने जनसंख्या की गतिशीलता को बढ़ावा दिया है। गाँव उजड़ते जा रहे हैं। शिक्षा और रोजगार की तलाश में हजारों की संख्या में लोग शहरों की ओर दौड़ते चले आ रहे हैं। आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण और जनसंख्या की गतिशीलता ने स्कूलों के लिए नयी समस्याओं को जन्म दिया है। गाँवों के सुविधाविहीन एवं साहित्यिक दृष्टि से वंचित बालक शहरों की मलिन बस्तियों को आबाद कर रहे हैं। बदलते हुए इस सामाजिक एवं सामुदायिक संरचना की आवश्यकताओं के अनुरूप शैक्षिक कार्यक्रमों को अनुकूलित करने के लिए हमें शैक्षिक नवाचारों का अपनाना के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है।

जन आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए पाठ्यक्रमों एवं शिक्षण की तकनीकी में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। इस हेतु हमें प्रत्येक विषय के शिक्षकों को विशेषकर विज्ञान, गणित एवं तकनीकी विषय के शिक्षकों को एक नया दिशा बोध कराना होगा। ज्ञान का विस्फोट पुराने शिक्षकों को बहुत पीछे छोड़ चुका है। भावी नागरिकों की शैक्षिक प्रगति के लिए नवीन ज्ञान एवं नवीन शैक्षिक तकनीकी के ज्ञान की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए शिक्षकों को प्रशिक्षित करना एक अनिवार्यता बन गयी है। शिक्षकों के प्रशिक्षण में नवाचारों का समावेश ही इस समस्या का समाधान कर सकता है।

ज्ञान के विस्फोट एवं औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने 'विशिष्टीकरण (specia lization) की माँग को जन्म दिया है। नवीन यन्त्रों एवं तकनीकी का संचालन विशिष्ट शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति ही कर सकते हैं। यह काम पुराने साँचे में नयी पीढ़ी को ढालकर सम्भव नहीं होगा। शिक्षण व प्रशिक्षण की तकनीकी को नित्य नवीन रूप लेने वाले ज्ञान और उससे उत्पन्न माँगों के अनुरूप बदलना होगा।

परिवर्तन की प्रक्रिया का सबसे अधिक नाटकीय आयाम दिक्काल (space) के सम्प्रत्यय और ज्ञान में सम्बन्धित है। अन्तरिक्ष में सतत् खोज और संचार के नवीन प्रयोगों ने उद्योगों, व्यावसायिक व्यवहारों और सामान्य जनजीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित किया है। स्वचालित यन्त्रों और इलेक्ट्रानिक के विकास ने व्यापार, उद्योग तथा अन्य व्यवसायों को रूपान्तरित कर दिया है। विभिन्न क्षेत्रों में कम्प्यूटर के प्रयोग ने परिवर्तन की गति को अत्यधिक तीव्रगामी बना दिया है। आज कम्प्यूटर केवल अन्तरिक्ष यान को ही नहीं अपितु हमारे समग्र आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को नियन्त्रित करने की ओर कदम बढ़ा रहा है। शैक्षिक तकनीकी में कम्प्यूटर का प्रयोग एक ऐसा समाचार है जो कक्षा में चलने वाले शिक्षण को भी सुधारने की चुनौती को स्वीकार करने में सक्षम है।

हम एक नवीन और बेहतर समाज की रचना तथा एक कल्याणकारी एव जन आकाक्षाओ की पूर्ति करने वाले राज्य की रचना मे लगे हुए हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमे सबके लिए शिक्षा की सुविधाएँ उपलब्ध करानी होगी क्योकि शिक्षा उत्कृष्ट समाज रचना का सशक्त उपकरण या माध्यम है। शिक्षा मे सुधार लाने के निमित्त राष्ट्रीय एव राज्य स्तर पर अनेक सस्थाएँ एव शिक्षा आयोगो ने काय किये हैं। इस प्रक्रिया मे गति लाने के लिए भारत सरकार ने 'नयी शिक्षा नीति' को अपनाया है। यदि हमें एक समाज और राष्ट्र के रूप मे जीवित रहना है तो शैक्षिक परिवतन की गति को तेज करना होगा। यही कारण है कि हमे शैक्षिक नवाचारो को समझने और उनके प्रचार एव प्रसार मे मनोयोग एव दृढ़ निश्चय के साथ लगना होगा।

मनचाहे परिवतन, राष्ट्रीय पुनरुत्थान और विकास के लिए सबसे पहली आवश्यकता है—मानव ससाधन का विकास। मानव के विकास का एक मात्र साधन है—शिक्षा का समुचित प्रचार और प्रसार। परिवतन की चर्चा करते समय हमे इसकी प्रकृति को समझना होगा, क्योकि परिवतन का सीधा सम्बन्ध नवाचार (Innovation) से है। नवाचार और परिवतन की प्रक्रिया के परस्पर घात-प्रतिघात से नवीन सम्भावनाएँ जन्म लेती है विकसित होती हैं और मानव जीवन को सुखी एव समृद्ध बनाती है।

परिवतन की प्रकृति (Nature of Change)

परिवतन की प्रक्रिया एव उसकी प्रकृति पर विस्तृत चर्चा करत हुए प्रो गुबा ने परिवतन' (change) को तीन वर्गों मे वर्गीकृत किया है

(1) **विकासवादी परिवतन (Evolutionary Change)**—इस वग म वे सभी परिवतन आते हैं जो काल के प्रवाह मे निरन्तर चलते रहते हैं चाहे इनका अनुभव या ज्ञान हमें हो या न हो। इस प्रकार का परिवतन मुख्यतया अचेतन स्तर पर होता है। यह परिवतन काल के लम्बे अन्तराल मे घटित होता है और इसके प्रभाव को जानना व पहचानना एक समकालीन निरीक्षक के लिए भी कठिन होता है। प्राकृतिक परिवेश मे होने वाले मन्द परिवतन इसके अच्छे उदाहरण है। जैसे—पहाडो मे परिवतन हो रहा है, सागर की सीमाएँ घट बढ रही हैं किन्तु वतमान काल खण्ड मे रहने वाला व्यक्ति उन्हे नही जान पाता। ऐसे ही एक ही परिवार म नित्य साथ रहने वाले व्यक्ति एक दूसरे के शक्ल और सूरत मे होने वाले परिवतन से अनभिज्ञ रहते हैं किन्तु कई वर्षों के बाद मिलने वाले मित्र या सम्बन्धी इन व्यक्तियो को देखकर बोल पडते हैं, 'अरे! तुम इतने बदल गये हो कि पहचानना मुश्किल है।' विकासात्मक परिवर्तन सामाजिक, शैक्षिक एव सास्कृतिक आयामो म भी सदा चलता रहता है। भले ही हम उसे अनुभव न कर पायें किन्तु इतिहासकार को इन्हें समझने और आलेखित करने मे कोई कठिनाई नहीं होती।

(ii) स तुलनात्मक परिवतन (Homeostatic Change)—इस वग म आने वाले परिवतन चेतन और अचेतन अथवा ज्ञात और अज्ञात दोनो ही स्तर पर होते हैं। ऐसे परिवतनो की अनिवाय विशिष्टता यह है कि य तभी घटित होते हैं जब इनको प्रेरित या चालू करने वाला कारण या उद्दीपन या इनकी कोई आवश्यकता हो। यह परिवतन अनुक्रियात्मक या प्रतिक्रियात्मक होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से हम कह सकते हैं कि ऐसा परिवतन मानव की उन आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए होता है जो आवश्यकताओ से निर्मित तनाव या असन्तुलन को अपने आप दूर कर मानव को सन्तुलन की स्थिति म लाता है। सन्तुलनात्मक परिवतन, जसा कि इसके शाब्दिक अथ स ही स्पष्ट है, मुख्यतया स्वचालित एव मूल प्रवृत्यात्मक होता है। इसम वचारिक निर्देशन या मागदशन का अभाव रहता है। उदाहरण क लिए, व्यक्ति को भूख लगती है। इसका तात्पय यह है कि उसके शरीर म भोजन स प्राप्त होन वाले तत्वो का अभाव निर्मित हो गया। अभाव या भोजन की आवश्यकता की यह स्थिति उसके शरीर म तनाव एव अस तुलन को जन्म देती है और व्यक्ति मे एक एसा परिवतन आता है जो उस भूख को मिटाने वाले खाद्य पदार्थों की ओर ले जाता है। उन पदार्थों को खाने के पश्चात् व्यक्ति का शरीर पुन स तुलन की स्थिति मे आ जाता है। इस प्रकार हमने देखा की सन्तुलनात्मक विकास स्वचालित और मूल-प्रवृत्यात्मक है।

(iii) नवगतिमानात्मक परिवतन (Neomobilistic Change)—इस प्रकार का परिवतन हमेशा चेतन या ज्ञात स्तर पर होता है। इसमे सवदा नियोजन (plan ning) या कम स कम सचेतन हस्तक्षेप (intervention) के तत्व विद्यमान रहत हैं। प्रो गुबा ने इस नवीन पद (term) की रचना इसलिए की है कि ऐसा परिवतन हमेशा नवीनता की दिशा म होता है। व्यक्ति समाज मे रहता है और वह अपना सामाजिक एव व्यक्तिगत विकास करना चाहता है। इस हेतु वह नये विचार व नये कदम उठाता है और नयी दिशा की ओर गतिमान होता है। उसका प्रयास योजना बद्ध एव उसके कदम जानबूझकर सूझ बूझ के साथ सुनिश्चित उद्देश्य की ओर बढते हैं। उदाहरण के लिए किसी एक विद्यालय म पहली घण्टी म हाजिरी ली जाती थी। प्रधानाचाय को यह सूचना मिली कि अन्तिम घण्टी के पहले ही अधिकाश छात्र विद्यालय छोडकर चले जाते हैं। प्रधानाचाय ने इस स्थिति म सुधार लाने हेतु हाजिरी की प्रक्रिया म परिवतन किया। हाजिरी पहली और अन्तिम दोनो घण्टियां में ली जाने लगी। फलस्वरूप अन्तिम घण्टी मे भी छात्र उपस्थित रहने लगे। इस प्रकार का परिवतन नवगतिमानात्मक परिवतन कहा जायेगा।

शैक्षिक परिवेश म दखे तो ये तीनो ही प्रकार के परिवतनो की अपनी भूमिकाएँ हैं। किन्तु अधिकाश नवाचार जिन्हें शिक्षा जगत म अपनाया गया है वे सभी नव गतिमानात्मक श्रेणी मे आते हैं। कक्षाओ म बढती हुई सख्या, ज्ञान का विस्फोट, प्रगति की दौड की चुनौती आदि न शिक्षा को ऐसे मोड पर लाकर खडा कर दिया

है जहाँ भविष्य मे व्यक्ति समाज एव राष्ट्र के नाते जीवित व विकसित होने के लिए उपलब्ध सर्वोत्तम बुद्धि, सजनशीलता और उससे उत्पन्न नवाचारो के समुचित प्रयोग की आवश्यकता है।

नवाचार अर्थ एव प्रकृति (Innovation Meaning and Nature)

नवाचार (Innovation) का अर्थ आक्सफोड डिक्शनरी के अनुसार किसी नवीनता को लागू करना, किसी स्थापित वस्तु मे परिवतन लाना, एक नवीन प्रचलन, स्थापित विधियो मे परिवतन लाना इत्यादि है।

हिन्दी भाषा मे नवाचार का अर्थ स्वत स्पष्ट है। यह पद दो शब्दो 'नव' एव 'आचार' के संयोग से बना है। 'नव' शब्द नवीनता का द्योतक है तथा 'आचार' परिवतन का। अत ऐसा परिवतन जो स्थापित विधियो, परम्पराओ वस्तुओ आदि मे नवीनता का समावेश करे, वही नवाचार है।

नवाचार के अर्थ एव प्रकृति को भली भाँति समझने के लिए कुछ प्रख्यात समाजशास्त्रियो द्वारा दी गयी परिभाषाओ का यहाँ उल्लेख करना समीचीन होगा।

(1) "कोई विचार, व्यवहार या वस्तु जो नया है एव वतमान अवस्थित प्रारूप से जो गुणात्मक दृष्टि मे भिन्न है उसे नवाचार कहते हैं।"[1]

—एच जी बार्नेट

(2) "नवाचार एक ऐसा विचार है जिसमे व्यक्ति नवीनता का अनुभव करता है।"[2]

—ई एम रोजर्स

(3) "एक नवाचार जानबूझ कर किया जाने वाला नवीन और विशिष्ट परिवतन है, जिसे किसी प्रणाली के उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए अधिक प्रभावकारी माना जाता है"[3]

—एम बी माइल्स

(4) "नवाचार सम्प्रत्यय, एक अभिवत्ति, कौशलयुक्त एक उपकरण या इनमे से दो या दो से अधिक तथ्य जिन्हे एक व्यक्ति या संस्कृति द्वारा इसके पहले व्यावहारिक दृष्टि से न अपनाया गया हो।"[4]

—एच एस भोला

उपर्युक्त परिभाषाओ पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न शिक्षाशास्त्रियो एव समाजशास्त्रियो द्वारा दी गयी परिभाषाओ मे कुछ समताएँ एव

---

[1] 'Any thought behaviour or thing that is new is qualitatively different from the existing form —H G Barnett, 1953

[2] 'An innovation is an idea perceived as new by the individual" —E M Rogers 1962

[3] 'An innovation is deliberate novel specific change which is thought to be more efficacious in accomplishing the goals of a system" —M B Mikes, 1964

[4] A concept, an attitude, a tool with accompanying skills or two or more of these together introduced to an individual or culture that have not functionally incorporated it before' —H S Bhola, 1965

विषमताएँ भी हैं। नवाचार के सम्प्रत्यय को बडे ही सहज ढग से यह कहकर स्पष्ट किया जा सकता है कि नवाचार एक ऐसा विचार है जिसे उसको अपनाने वाला या इसका अगीकारी (adopter) इसे एक नयी चीज के रूप में देखता और अनुभव करता है। वसे यह विचार अन्य लोगों के लिए पुराना भी हो सकता है। नवाचार की परिभाषाओ का गहराई से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि नवाचार मे निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं

नवाचार की विशेषताएँ

(1) नवाचार को एक नवीन विचार माना जाता है।

(2) गुणात्मक दृष्टि से वतमान परिस्थितियो की तुलना मे नवाचार उन्नत या श्रेष्ठ होता है।

(3) नवाचार जानबूझ कर किया जाने वाला एक नियोजित प्रयास है।

(4) नवाचार मे हमेशा विशिष्टता के तत्व विद्यमान रहते हैं।

(5) कोई भी व्यक्ति नवाचार जान बूझकर अपनाता है अत इसकी उपयोगिता स्वय सिद्ध है।

(6) नवाचार वतमान परिस्थितियो मे सुधार का नवीन प्रयास है।

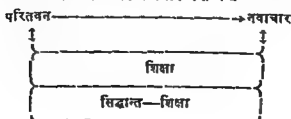
अत इसे मूलत एक नवीन विचार मात्र न मानकर विचारो का समुच्चय मानना चाहिए, क्योंकि जब भी कोई नवाचार घटित होता है तब इसका सयोग या मिलन दो चार ऐसे तत्वो से होता है जो पहले से ही विद्यमान हो। अत नवाचार नूतन और पुरातन का एक ऐसा सम्मिलन है जो एक नवीन इकाई के रूप मे अपनी निराली विशेषताओं के साथ प्रकट होता है।

अन्तत हम कह सकते हैं कि किसी विधि, तौर-तरीके या सामग्री जिनका उपयोग पहले किया जाता था, उनमे सुधार की प्रक्रिया ही नवाचार है। नवाचार कुछ ऐसा लागू करना है जो नया और पहले से भिन्न हो।

परिवतन और नवाचार में सम्बन्ध (Relationship between Change and Innovation)

परिवतन और नवाचारो के सम्बन्धो की व्याख्या करते हुए प्रो डी सी जोशी ने इसे स्पष्ट करने के लिए निम्न आरेख (diagram) को प्रस्तुत किया है

परिवतन और नवाचार में सम्बन्ध



शिक्षा के सन्दभ मे परिवतन और नवाचार का सम्बन्ध परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करने वाला है। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो छात्रो के व्यवहार मे पूव नियोजित परिवतन करने का प्रयास करती है। परिवर्तन का अथ है कि समय के अन्तराल के दो छोरो मे स्पष्ट अतर दिखायी देना। दूसरे शब्दो मे, परिवतन का अथ होगा—(i) परिवतन की आवश्यकता का अनुभव एव निदान करना, (ii) क्रिया कलापो मे वैकल्पिक या ऐच्छिक परिवर्तन लाने के लिए वतमान मे पाये जाने वाले नवाचारो मे से किसी एक का चुनाव करना, (iii) परिवर्तन की दिशा मे काय करने के लिए उपलब्ध साधन और स्रोतो का पता लगाना। अत शैक्षिक परिवतन मे सुधार की कामना, उसके लिए नवाचार का चुनाव और नवाचार को कार्यान्वित करने के लिए ससाधनो की व्यवस्था ये तीनो ही बातें सम्मिलित हैं।

इससे यह स्पष्ट होता है कि शैक्षिक परिवतन एव नवाचार मे अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। शिक्षा मे नवाचार को गुणात्मक सुधार के लिए अपनाया जाता है। शैक्षिक परिवतन हेतु नवाचार आधारशिला का काय करता है। अत इन दोनो ही सम्प्रत्ययो का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध स्वय सिद्ध है।

नवाचारों के प्रकार (Types of Innovation)

शिक्षा के क्षेत्र मे नियोजित परिवतन का सम्प्रत्यय बहुत पुराना नही है। अपने देश के कुछ विद्यालयों में नवाचारो को यदा-कदा अपनाया जाता है। भारतीय विद्यालयो मे शैक्षिक लक्ष्यो की प्राप्ति के लिए सुनियोजित ढग से नवाचारो का सतत उपयोग नहीं हो रहा है। इसके पीछे प्रमुख कारण है कि सतत परिवतन को बनाये रखने मे हम सक्षम नही हैं। देश के विद्यालयो मे यह धारणा है कि विद्यालयो मे सुधार या परिवर्तन स्कूली प्रणाली के बाहर के दबावों पर निर्भर करती है न कि प्रणाली के भीतर से जन्म लेती है। कुछ लोग तो यहाँ तक सोचते हैं कि भारत मे शैक्षिक परिवर्तन निहित स्वार्थों के कारण होता है न कि सुनियोजित समुचित योजना के आधार पर। अत इन सभी कारणो पर विचार करते हुए हमे यह सोचना पड़ेगा कि नवचारो को विद्यालयो मे लागू करने के लिए सुसगठित प्रयास किस विधि के द्वारा किया जा सकता है।

किसी भी शैक्षिक सस्था का प्रमुख जब विद्यालय या सस्था मे सुधार लाने के लिए किसी नवाचार की योजना बनाता है तब वह कई मूलभूत प्रश्नो की ओर ध्यान देता है जैसे—उसे अपनी सस्था के लिए किस प्रकार के नवाचार की आवश्यकता है या उसे किसी नवाचार का चुनाव किन कसौटियो के आधार पर करना चाहिए?

एक प्राचार्य किसी नवाचार को केवल इसलिए ही अपना सकता है कि नवाचार म स्वय ही ऐसे गुण हो जिनकी उपयोगिता के बारे मे वह पूरी तरह निश्चिन्त हो तथा वह अच्छी तरह जानता हो कि नवाचार अपनाने का क्या प्रतिफल होगा। नवाचार के चुनाव का यह एक तरीका है।

नवाचार के चुनाव का दूसरा तरीका यह हो सकता है कि प्राचार्य विद्यालय व विद्यार्थियों की कठिनाइयों व समस्याओं का निदान करे और इन कठिनाइयों या समस्याओं का समाधान करने हेतु वह किसी समुचित नवाचार को चुने।

नवाचारों के चुनाव की उपर्युक्त प्रक्रियाओं के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि नवाचार दो प्रकार के होते हैं

1 सामाजिक अन्तःक्रियात्मक प्रकार (Social interaction type),

2 समस्या समाधानात्मक प्रकार (Problem solving type)।

किसी नवाचार को उसके गुणों व विशेषताओं के आधार पर चुनकर स्कूल में तभी अपनाया जा सकता है जब उसके विषय में हमें जानकारी किसी पड़ोसी स्कूल या किसी दूसरे स्कूल के अध्यापक या अपने ही स्कूल के अध्यापक द्वारा मिले। अत एक नवाचार विभिन्न लोगों, संस्थाओं एवं अभिकरणों के परस्पर सामाजिक अन्त क्रिया द्वारा फलता है। इसीलिए इस प्रकार के नवाचारों को सामाजिक अन्त क्रियात्मक प्रकार के नवाचारों की संज्ञा दी गयी है। नवाचार की इस प्रक्रिया को कुछ विद्वानों ने सामाजिक अन्त क्रिया प्रतिमान (Social interaction model) का नाम दिया है।

किसी समस्या के समाधान एवं वांछित परिवर्तन के लिए जब किसी नवाचार को चुनकर अपनाया जाता है तब ऐसे नवाचारों को समस्या समाधानात्मक नवाचार कहते हैं। नवाचार के अंगीकार की इस प्रक्रिया को विद्वानों ने समस्या समाधान प्रतिमान (Problem solving model) कहा है।

नवाचार अंगीकरण प्रक्रिया की अवस्थाएँ (Stages of Innovation Adoption Process)

नवाचार को अपनाने या उसके अंगीकरण की प्रक्रिया कई अवस्थाओं से गुजरती है। नवाचार अंगीकरण की पाँच अवस्थाओं का उल्लेख ई एम रोजर्स ने किया है—(i) बोध या जानकारी, (ii) रुचि, (iii) मूल्यांकन, (iv) परीक्षण और (v) अंगीकरण।

(i) बोध (Awareness)—सर्वप्रथम शिक्षक, शैक्षिक कार्यकर्त्ता या छात्र किसी नवाचार के विषय में जानकारी या ज्ञान प्राप्त करते हैं। नवाचार से उनका परिचय होता है। वे जान जाते हैं कि कहाँ पर कैसे किसी नवाचार का प्रयोग किया जा रहा है। नवाचार के विषय में किसी भी व्यक्ति को जानकारी नवाचारों के उपयोग या प्रचार एवं प्रसार करने वाले किसी स्रोत के सम्पर्क में आने से होता है। व्यावहारिक दृष्टि से शैक्षिक नवाचारों के जानने के प्रमुख स्रोत हैं—प्रसार सेवा विभाग (Extension Service Department), सेवारत प्रशिक्षण पाठ्यक्रम (Inservice Training Course) शैक्षिक पत्र पत्रिकाएँ या शोध पत्रिकाएँ (Educational Magazines or Journals), पास पड़ोस के विद्यालय और उनके शिक्षक, प्राचार्य

आदि। यह तथ सगत है कि नवाचार अगीकरण का प्रथम चरण नवाचार की जानकारी प्राप्त करना या 'बोध' ही है।

(ii) रुचि (Interest)—रुचि से हमारा तात्पय नवाचार के अगीकारी या अपनाने वाले मे नवाचार के विषय मे और अधिक जानकारी प्राप्त करने की लालसा से है। इस अवस्था मे शैक्षिक नेतत्व या प्राचाय की भूमिका अत्यन्त महत्वपूण होती है। उसे अपने कार्यकर्त्ताओ और शिक्षको को नवाचार के विषय मे विशद जानकारी देनी चाहिए। नवाचार के विषय मे अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए उसे सूचनाओं के सभी स्रोतों से व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाना चाहिए। कायकर्त्ताओ या शिक्षको के मन मे उसे अपनी साधन-सम्पन्नता एव ज्ञान की धाक जमानी पड़ेगी। कायकर्त्ताओ के मन में एक सन्तोष जगाना पडेगा कि वे नवाचार के विषय मे काफी जान गये हैं और उन्हे आगे भी जानकारी मिलती रहेगी।

(iii) मूल्यांकन (Evaluation)—इस अवस्था मे नवाचार को अधिग्रहण करने वाला व्यक्ति यह सोचता है कि नवाचार अपनाने से उसे क्या लाभ या हानि हो सकती है? उसे अपनाने मे कौन सी कठिनाइयाँ आयेंगी, इन कठिनाइयो को वह कैसे दूर कर सकता है? मूल्याकन का यह काय मानसिक स्तर पर चलता है और इसकी प्रभावकारिता प्रथम दो अवस्थाओ मे प्राप्त जानकारियो पर निभर करती है।

(iv) परीक्षण (Trial)—परीक्षण की यह अवस्था भी मानसिक स्तर पर ही चलती है। किन्तु इस अवस्था म अगीकारी (adopter) नवाचार को अपनाने के बहुत निकट होता है। सवेगात्मक दृष्टि से अब वह नवाचार के साथ एक प्रकार का लगाव अनुभव करता है। वह इस लगाव के कारण ही मानसिक स्तर पर नवाचार को अपनाने का निणय कर बठता है। निणय की इस घडी मे अगीकारी के मन मे अनेक शकायें उठ सकती हैं। यह स्थिति वसी ही है जसे कि रथ पर सवार युद्ध के लिए तैयार अर्जुन अनेक शकाओ से ग्रसित होकर युद्ध करने से डरता है। इस अवस्था मे नेता या प्राचाय को श्रीकृष्ण के समान सभी शकाओ का समाधान करने मे सक्षम होना चाहिए। स्कूली परिवेश मे इस अवस्था मे शिक्षको की बैठक बुलाकर प्राचाय शिक्षको की समस्याओ का समाधान कर सकता है और नवाचार को अपनाने मे उनकी हिचक को दूर कर सकता है। इस प्रकार की बठक या मीटिंग नवाचार के अगीकरण मे प्रेरणादायक होती है।

(v) अगीकरण (Adoption)—उपरोक्त सभी अवस्थाओ को सफलतापूवक पार करने के पश्चात अन्तिम चरण है, नवाचार का अगीकरण। किन्तु यह आवश्यक नही है कि विद्यालय के सभी शिक्षक या कायकर्त्ता अगीकरण की इस अवस्था पर पहुच गये हो। कुछ शिक्षक या व्यक्ति ऐसे भी हो सकते हैं जो अगीकरण प्रक्रिया की प्राथमिक अवस्थाओ पर ही हो। एक नेता या प्राचाय को यह भली भांति जानना

चाहिए कि अंगीकरण की प्रक्रिया मे वयक्तिक भिन्नता होती है। कुछ लोग नवाचारो को बहुत जल्दी अपनाते हैं तो कुछ लोग देर से और कुछ और तो परिवतन के नाम से इतना घबराते हैं कि हमेशा परम्परावादी ही बने रहते हैं। प्राचार्य या नेता की कुशलता इसी बात मे है कि वह अधिकाश लोगो द्वारा जल्दी से जल्दी नवाचार को अंगीकृत करवा ले।

अंगीकारियों का वर्गीकरण (Adopter Categories)

प्रत्येक व्यक्ति नवाचार को अपनाने या अंगीकार करने मे समान तत्परता नही प्रदर्शित करता। कुछ लोग परिवतन और परिवतन के लिए नवाचार को अपनाने मे बहुत तेज होते हैं और कुछ लोग एकदम सुस्त। नवाचार के विषय मे जानकारी मिलने और उसे अंगीकार करने म जो समय लगता है, उसके आधार पर अंगीकारियो का वर्गीकरण किया जा सकता है। किसी भी सस्था या प्रणाली में सदस्या के परिवतनीयता के आधार पर उनका वर्गीकरण किया जा सकता है। अंगीकारियो को पाँच वर्गों में विभाजित किया गया है

(i) प्रवतक (Innovator)—इस वग मे ऐसे व्यक्ति आते हैं जो परिवतन एव सुधार की उत्कट अभिलाषा से युक्त होते हैं। वे इस बात के लिए उत्सुक रहते हैं कि उन्हें कोई नवाचार मिल जाय या वे स्वय किसी नवाचार को जन्म दें। वे नवाचार को बहुत ललक के साथ गले लगाते हैं और उसे अंगीकृत कर लेते हैं।

(ii) प्रारम्भिक अंगीकारी (Early Adopter)—इस वग मे ऐसे लोग आते हैं जो जल्दी ही नवाचार को अपनाते हैं। किसी सस्था या प्रणाली मे ऐसे लोग आदर पाते हैं और कार्य प्रणाली मे तुलनात्मक दृष्टि से अधिक, अभिन्न एव उपयोगी अग या घटक होते हैं।

(iii) प्रारम्भिक बहुसख्यक (Early Majority)—इस वग मे ऐसे व्यक्ति या किसी सस्था के सदस्य आते हैं जो प्रारम्भिक अंगीकारियो को देखकर और अपनी तरफ से सोच समझकर नवाचार को अपनाते हैं। वे किसी भी नवाचार को अपनाने से पहले थोडी देर तक इतजार करते हैं।

(iv) विलम्बित बहुसख्यक (Late Majority)—इस वग मे ऐसे सन्देही या शक्की लोग आते हैं जो नवाचार को अंगीकार करने वाले लोगो पर उसका कैसा प्रभाव पडा यह पहले देखते हैं। सम्भवतः वे नवाचार को तभी अपनाते हैं जब वे ऐसा करने के लिए एक प्रकार के सामाजिक दबाव का अनुभव करने लगते हैं। इस दबाव के कारण ही वे नवाचार को अपनाना शुरू करते हैं।

(v) फिसड्डी (Laggards)—ये ऐसे लोग होते हैं जिनका मन और मस्तिष्क रूढ़िग्रस्त एव परम्परावादी होता है। ऐसे लोग किसी नवाचार को अपनाने वाले लोगो की पक्ति मे अन्तिम व्यक्ति होते हैं। जमाने की रफ्तार से उन्हें कुछ लेना देना नही रहता और समाज मे ऐसे लोग अलग अलग पडे रहते हैं।

किसी शैक्षिक प्रणाली में नेतत्व या प्राचाय के लिए प्रवर्तको एव फिसडिडयो को पहचानना व्यावहारिक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी होता है। नवाचार को सभी लोग अपनायें और सुधार की दिशा मे आगे बढें, इसके लिए आवश्यक है कि प्रत्येक वग के लिए परिवर्तन की विभिन्न व्यूह रचनाओ (strategies) को अपनाया जाय। व्यक्तिगत सम्पर्क एव निर्देशन वांछित परिवतन को लाने और उसके लिए नवाचार अपनाने हेतु सर्वोत्तम विधि है।

नवाचार—सम्प्रेषण एव निर्णय (Innovation—Communication & Decision)

नवाचार अपने स्रोत से उसे अपनाने वाले तक किसी न किसी सचार माध्यम द्वारा पहुँचता है। शैक्षिक परिवेश मे सामान्यतया नवाचार का स्रोत प्राचाय होता है और प्राप्तकर्त्ता शिक्षक अथवा छात्र होते हैं। नवाचार की प्रभावकारिता सचार माध्यम की प्रभावकारिता पर निभर करती है। यदि कोई प्रधानाचाय किसी नवाचार का प्रचलन अपने विद्यालय मे करना चाहता है तो उसे सचार माध्यमो के चुनाव मे बहुत सावधानी बरतनी चाहिए। नवाचार के प्रवाह का सर्वोत्तम माध्यम है अन्तर्वैयक्तिक माध्यम (inter personal medium) क्योकि इसमे सम्प्रेषण स्रोत और प्राप्तकर्त्ता दोनो के मध्य चलता रहता है। नवाचार को शिक्षकों एव छात्रो द्वारा अच्छी तरह अपनाया जाय इसके लिए प्राचाय को बहुत सोच विचारकर योजना बनानी चाहिए। इस प्रक्रिया मे वह जनससार प्रणालियो जैसे रेडियो, वीडियो और टी वी का भी प्रयोग सहायक सामग्रियो के रूप मे कर सकता है।

नवाचार के विषय मे निणय लेने की दो मुख्य विधियाँ हैं—(1) प्राधिकारी नवाचार निणय (authority innovation decision), और (2) सामूहिक नवाचार निणय (collective innovation decision)।

प्राधिकारी नवाचार निणय का तात्पय यह है कि कौन सा नवाचार अपनाया जाय, इस सम्बन्ध मे निणय विद्यालय, सस्था या किसी प्रणाली का अधिकारी स्वय लेता है और इस निणय को अन्य लोगो द्वारा अपनाये जाने के लिए बाध्य करता है।

सामूहिक नवाचार निर्णय के अन्तगत नवाचार को चुनने और अपनाने का निणय विद्यालय के सभी शिक्षक, सस्था के सभी सदस्य अथवा प्रणाली के सभी अग मिल जुलकर परस्पर-विचार-विमश करने के पश्चात करते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सामूहिक निणय मे इसी प्रणाली के अधिकतम सदस्य सहभागी होते हैं और प्राधिकारी निणय मे बहुत ही कम सदस्यो की सहभागिता होती है। नवाचार के क्षेत्र मे किये गये अनुसन्धानो के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सामूहिक निणय प्रणाली, प्राधिकारी निणय प्रणाली की तुलना म अधिक प्रभावकारी सिद्ध होती है। सामूहिक निर्णय म अधिकांश सदस्यो का सहभाग रहता है अत नवाचार को अपनाने की प्रक्रिया शीघ्रता के साथ सम्पन्न होती है।

अपने देश मे नवाचार अपनाने की गति धीमी होने का और अपनाये गये नवाचारो को उद्देश्य पूर्ति से पहले ही छोड देने का सम्भवत यही कारण है कि शिक्षा जगत में कौन से नवाचार अपनाये जाएँ, इस सम्बन्ध मे निर्णय अधिकारी लेते हैं और वे चाहते हैं कि उनके आदेश का पालन सभी शिक्षक या अधीनस्थ कर्मचारी करें । शिक्षक इन निर्णयो को अपने ऊपर लादा हुआ निर्णय समझते हैं अत उनके निर्णय एव सहभागिता के अभाव मे भारतीय विद्यालयो मे नवाचारो का अभाव दिखायी देता है । यदि इसके स्थान पर प्राचार्य एव शिक्षक किसी नवाचार के सम्बन्ध मे सामूहिक निर्णय लेने के लिए प्रेरित किये जाते तो भारतीय शिक्षा जगत का आज कुछ दूसरा ही स्वरूप होता ।

परिवर्तन अभिकर्त्ता की भूमिका (*Change-agent's role*)

परिवर्तन के अभिकर्त्ता ऐसे व्यावसायिक व्यक्ति हैं जो किसी सामाजिक प्रणाली मे वांछित परिवर्तन लाने के लिए नवाचार अपनाने के निर्णय को प्रभावित करते हैं ।

शिक्षा मे विशेषकर स्कूलो मे परिवर्तन का सर्वोत्तम अभिकर्त्ता प्राचार्य के अतिरिक्त और कोई नही हो सकता । विद्यालयो मे परिवर्तन लाने हेतु प्राचार्य को एक कुशल परिवर्तन अभिकर्त्ता की भूमिका प्रभावी ढग से निभानी होगी ।

समाजशास्त्रियो ने परिवर्तन अभिकर्त्ता को सफल बनाने हेतु निम्नलिखित सात कार्य करने के सुझाव दिये हैं

(i) नवाचार को ग्रहण करने वालो मे परिवर्तन की आवश्यकता का बीजारोपण कर उसे विकसित करना ।

(ii) परिवर्तन के लिए ग्रहणकर्ताओ के साथ पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करना ।

(iii) ग्रहणकर्ताओ की समस्याओ का निदान करना ।

(iv) ग्रहणकर्ताओ मे परिवर्तन के लिए उत्सुकता एव सकल्प निर्मित करना ।

(v) ग्रहणकर्ताओ के सकल्प को व्यवहार मे परिवर्तित करना ।

(vi) परिवर्तन एव नवाचार को स्थापित करना । अपनाया गया नवाचार बीच मे ही रुक न जाये इसकी रोकथाम करना, तथा

(vii) परिवर्तन के पूर्व निर्धारित उद्देश्यो तक ग्रहणकर्ताओ के साथ पहुँच जाना ।

परिवर्तन अभिकर्त्ता के विशेषक (Change-agent's traits)

किसी परिवर्तन अभिकर्त्ता की प्रभावकारिता एव सफलता उसके निम्नलिखित विशेषको पर निर्भर करती है

(i) निरन्तर प्रयत्नशीलता ।

(ii) ग्रहणकर्ताओ की ओर उन्मुखता ।

(iii) उसके कार्यक्रमों की ग्रहणकर्ताओं की आवश्यकताओं के लिए उपयुक्तता।

(iv) ग्रहणकर्ताओं से सहानुभूति अर्थात दूसरों को समझने की क्षमता।

(v) ग्रहणकर्ताओं से विशेषता व समरूपता।

(vi) नेतृत्व के साथ मिलकर काय करने की क्षमता।

(vii) एक विश्वसनीय व्यक्ति के रूप म ख्याति।

(viii) ग्रहणकर्ताओं मे नवाचार का मूल्यांकन करने की क्षमता को विकसित करने की योग्यता।

परिवर्तन की शर्तें या परिस्थितियाँ (Conditions of Change)

सामाजिक और शैक्षिक परिवर्तन के लिए समाजशास्त्रियों एवं शिक्षाशास्त्रियों ने निम्नलिखित शर्तों अथवा परिस्थितियों का उल्लेख किया है

(i) नवाचार तभी जल्दी से अपनाये जाते हैं जब—

(अ) ग्रहणकर्ताओं द्वारा वे भली भाँति समझे जा सकें।

(ब) ग्रहणकर्ताओं द्वारा नवाचारों को निजी परिस्थितियों के सन्दर्भ मे उपयुक्त एवं प्रासंगिक समझे जा सकें।

(स) ग्रहणकर्ताओं को स्वयं योजना बनाने म सहायता प्रदान करें।

(ii) परिवर्तन की प्रक्रिया की गति और बढ़ती है यदि सामूहिक एकता का प्रयोग एक उत्प्रेरक (catalyst) के रूप मे किया जावे।

(iii) यदि नवाचार को अपनाने का निर्णय सामूहिक निर्णय प्रणाली द्वारा लिया जाये तो नवाचार का अंगीकरण सरल और शक्तिशाली बनता है।

(iv) नीति निर्धारण मे सदस्यों अथवा शिक्षकों की सहभागिता परिवर्तन की ग्राह्यता को बहुत अधिक बढ़ा देती है।

(v) शिक्षकों के बीच प्रवर्तक न तो अकेले और न ही बहुत बड़े समूह के साथ काय करते हैं। वे दो या तीन समान पृष्ठभूमि वाले सदस्यों के साथ काय करते हैं।

(vi) किसी स्कूली प्रणाली मे शिक्षकों को स्वतन्त्र रूप से अकेले नये प्रयोग करने का अवसर प्रदान करने से वे और अधिक नवाचारोन्मुख हो जाते हैं।

(vii) स्वतन्त्र परिवेश मे विचारों के आदान प्रदान की सुविधा बढ़ाने से एक दूसरे व्यक्ति को वस्तुनिष्ठ ढंग से देखने और समझने की क्षमता बढ़ती है।

परिवर्तन एवं नवाचार के मार्ग में आने वाली बाधाएँ (Resistance to Change and Innovation)

सुधार एवं परिवर्तन का मार्ग बाधाओं से भरा रहता है। परिवर्तन की प्रक्रिया प्रतिरोध का सामना किये बगैर पूरी नहीं हो सकती। मानव विज्ञानियों का निश्चित मत है कि परिवर्तन का उतनी ही मात्रा मे प्रतिरोध या विरोध होगा जितनी मात्रा मे हम परिवर्तन लाना चाहते हैं। अर्थात् किसी छोटे मोटे परिवर्तन का व्यापक परिवर्तन की अपेक्षा थोड़ा ही विरोध होगा।

शिक्षा मे परिवतन लाने के लिए नवाचारो को अपनाना अति आवश्यक है। नवाचार निर्विघ्न लागू हो और उद्देश्यो तक हमे सफलतापूर्वक पहुचा सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि हम परिवतन के मार्ग मे आने वाली बाधाओ के कारणो को पहचान और समझ सकें।

जी वाटसन के अनुसार, परिवतन के माग मे आने वाले प्रतिरोध दो प्रकार के कारणो से उत्पन्न होते हैं

(1) व्यक्तित्व के कारको द्वारा उत्पन्न प्रतिरोध।

(2) अज्ञानता एव समाज द्वारा उत्पन्न प्रतिरोध अथवा क्रियात्मक प्रतिरोध।

1 व्यक्तित्व कारक जनित प्रतिरोध (Personality factors of resistance)

परिवतन लाने की बात कही पर भी किसी के भी मुख से सुनी जा सकती है। पुरानी कहावत है 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' किन्तु जब परिवतन की बात की जाती है तब अधिकाश लोग बगलें झाँकने लगते हैं। परिवतन के माग मे आने वाला सबसे बडा अवरोध व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व ही होता है। व्यक्तित्व के निम्नलिखित कारक परिवतन के माग मे सबसे बडे रोडे सिद्ध होते हैं

(i) सन्तुलन (Homeostasis)—प्राणी मे सन्तुलित रहने की प्रवृत्ति होती है। यह प्राणी की जन्मजात प्रवृत्ति है। परिवतन की अवस्था को झेलकर वह पुन स्थिर अथवा सन्तुलित अवस्था मे आना चाहता है। मनुष्य की इस प्रवृत्ति को नवाचार और परिवतन के प्रतिपादको का सामना करने के लिए मनोवैज्ञानिक विधियो जैसे संवेदनशीलता प्रशिक्षण (sensitivity training) का सहारा लेना चाहिए।

(ii) आदत (Habit)—व्यक्ति की आदतें भी परिवतन के माग मे बाधा बनकर आती हैं। इस अवरोध का सामना मनोविज्ञान के प्रनियम 'परिचित व्यवहार से अपरिचित व्यवहार की ओर बढना' (performance from familiar to un familiar) का अनुसरण कर किया जा सकता है। विद्यालय वातावरण म सउद्देश्य लाये जाने वाल परिवतन एसी आदतो म वाछित परिवतन ला सकते हैं।

(iii) प्राथमिकता (Primacy)—मानव मन पर प्राथमिक प्रभावों का गहरा एव दूरगामी प्रभाव पडता है। इन प्राथमिक प्रभावो के कारण व्यक्ति बाद मे किसी नवीन अनुभव का स्वीकार करने मे हिचकता है। नवाचारो द्वारा प्राप्त होन वाले लाभो को प्रभावशाली ढग से बताकर इस हिचक को धीरे-धीरे दूर किया जा सकता है।

(iv) पराश्रितता (Dependence)—व्यक्ति किसी न किसी समूह का सदस्य होता है। वह समूह के मानदण्डों तथा परम्पराओं का आदर करता है। उसको तोडने मे वह घबराता है क्योंकि उसे भय रहता है कि समाज उसे अलग कर देगा तथा उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडेगा। समाज से बहिष्कृत होने का भय परिवतन के माग में बहुत बडा प्रतिरोध खड़ा करता है। इस प्रतिरोध को दूर

करने के लिए परिवतन के इच्छुक नेताओ या प्राचार्यों को सबसे पहले उन लोगो को चुनना पडेगा जो समाज की पराश्रितता के बन्धन को तोडकर नवाचार को सबसे पहले अपनाते हैं। ऐसे लोगो को आदश के रूप मे सामने रखकर उन्हे सम्मानित कर अन्य व्यक्तियो मे भी पराश्रितता के अवरोध को दूर किया जा सकता है।

(v) नैतिक मन (Super ego)—व्यक्ति की ऐसी प्रवृत्ति जो पुरातन श्रद्धा बिन्दुओ, मान्यताओ एव नैतिकता के कारण किसी नवीनता अथवा परिवतन से बचने के लिए उसे बाध्य करती है। परिवतन चाहने वालो को इस अवरोध को तोडने के लिए विश्वासोत्पादक आकषक विधियो (persuasive method) का प्रयोग करना चाहिए।

(vi) आत्म विश्वासहीनता (Self distrust)—प्राय व्यक्तियो मे स्वय अपनी ही क्षमताओ पर विश्वास नहीं रहता। वे सोचते हैं कि उनमे इतनी ताकत कहाँ जो वे पुरातन परम्पराओं का तोड सकें। इस आत्म-विश्वासहीनता को नेतृत्व द्वारा धीरे धीरे मनोवैज्ञानिक उपायों से पुरस्कार एव सम्मान देने की विधि द्वारा परिवतन की प्रक्रिया को पुनबलित (reinforce) कर दूर किया जा सकता है।

(vii) असुरक्षा एव प्रतिगमन (Insecurity and regression)—नयी चीज को अपनाने के कुछ समय बाद ही उसे छोडकर पुन पुरानी चीजो या व्यवहारों की ओर वापस आ जाने की प्रवृत्ति को प्रतिगमन कहते हैं। नवाचारो को अपनाने के बाद थोडी-सी कठिनाई के आते ही व्यक्तियों मे असुरक्षा की भावना उत्पन्न हो जाती है। घबराकर वे पुन अपनी पुरानी चाल ढाल पर लौट आते हैं। इस प्रवृत्ति का निराकरण नेतृत्व या प्राचार्य को नवाचार अपनाने वालो को पूण सरक्षण प्रदान कर दूर किया जा सकता है।

(viii) आत्म परितोषी भविष्यवाणी (Self fullfeeling prophecies)—व्यक्ति की सफलता एव विफलता के पूव अनुभव भविष्य के लिए उसकी आशाओं, आकाक्षाओ और व्यवहारा के प्रारूप को निर्धारित करते है। मनुष्य जितनी ही मात्रा म सफलता के प्रति आशावान होता है, उतनी ही मात्रा में वह नये कदम उठाता है। असफलता की आशका किसी नये काय को करने के लिए व्यक्ति का रोकती है। नवाचार को अपनाते ही यदि व्यक्ति को सुखद अनुभव प्रदान किये जायें और उसे सफलता की अनुभूति हो तो आशा की जा सकती है कि व्यक्ति आत्म-परितोष के लिए नवाचार को ओर दढ़ता से अपना लेगा। अग्रेजी कहावत है—'सफलता के समान अन्य कोई चीज सफल नही होती' (Nothing succeeds like success)

2 क्रियात्मक प्रतिरोध (Resistance in Action)

परिवतन एव नवाचार को व्यक्ति कई बार अज्ञानता, भूल चूक, सामाजिक प्रतिक्रिया और अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धो के कारण परिवतन एव नवाचार को अस्वीकृत कर देता है।

यहा हम देखते हैं कि ये सभी प्रतिक्रियात्मक अवरोध नवाचार के विषय म अज्ञान अथवा पर्याप्त ज्ञान के अभाव म जन्म लेते हैं। नवाचारा का क्रियात्मक प्रतिरोध इसलिए भी होता है कि बहुत से सहकर्मी या मित्र उसे नही अपनाते। व्यक्ति सोचता है कि जब हमारे सगी-साथी परिवतन या नवाचार को नही अपना रहे हैं ता मैं ही क्यो मुसीबत मोल लू।

इन सभी प्रकार के प्रतिरोधो को नेताओ अथवा स्कूली परिवेश मे प्राचार्यों के द्वारा आसानी स दूर किया जा सकता है। उन्हें इन प्रतिरोधो की प्रकृति, इनसे ग्रसित व्यक्तियो एव सामाजिक अन्त क्रिया काय प्रणाली को समझकर बुद्धिमत्ता-पूवक स्नेह और सहभागिता के द्वारा धीरे धीरे दूर करना होगा।

परिवतन के लिए सहायक सगठनात्मक वातावरण और नेतृत्व व्यवहार (Organisational climatic and leadership behaviour helpful for change)

किसी भी प्रणाली म वाछित परिवतन लाने के लिए निम्नलिखित व्यावहारिक विशेषताए प्रणाली मे एसे वातावरण की सरचना करती हैं जो नवाचार एव परिवतन के लिए सहायक सिद्ध होती है। एसी व्यावहारिक विशेषताएँ उन व्यक्तियो मे होना आवश्यक है जो वाछित परिवतन लाने के लिए कटिबद्ध एव प्रयत्नशील हैं

(1) व्यक्ति को अपने औपचारिक, अवयक्तिक नियम नियमावली से ग्रसित अभिवत्ति को छोडकर अनौपचारिक, वयक्तिक और लचीले अभिवत्तियो का अनुसरण करते हुए परिवतन का अपनाने हेतु कायरत होना चाहिए।

(2) व्यक्ति यह सोचना आरम्भ कर दे कि उसके नेतत्व म काय करन वाल सदस्य भी उसी के समान उत्तरदायित्व की भावना से परिपूण हैं और उसे उनके हर क्रिया कलाप का निरीक्षण एव पयवेक्षण हमेशा करना ही है।

(3) व्यक्ति को अपने अधीनस्थ सदस्यो या कमचारियो के साथ मानवीय व्यवहार और स्नेह सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।

(4) व्यक्ति को अपने और अपन कमचारियो क बीच स्वतन्त्र रूप स एक-दूसरे स बातचीत और चर्चा करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। साथ ही साथ इस बात पर बल देना चाहिए कि बातचीत के बाद सभी लोग काय करने मे जुट जाएँ और उत्पादन को बढायें।

(5) व्यक्ति स्वय नवाचार को मनोयोगपूवक अपनाये और उसे लागू करन के लिए दृढ प्रतिज्ञ बने। वह नवाचार के सम्बन्ध म जानकारी और उससे सम्बन्धित बारीकियो के ज्ञाता विशेषज्ञ एव स्रोत बने। यदि मानसिक दृष्टि से वह स्वय नवाचार के प्रतिपालक और पूण जानकार बन गया है तो यह समझ लेना चाहिए कि उसन आधी सफलता बठे ही बठे प्राप्त कर ली है।

परिवर्तन की व्यूह रचना (Strategies of Change)

स्मिथ के अनुसार व्यूह रचना (Strategies) कार्यों के उस प्रारूप को कहते हैं जो कुछ निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने तथा कुछ अन्य से हमारी रक्षा करने में सहायता प्रदान करती है। व्यावहारिक दृष्टि से, नवाचार एवं परिवर्तन के संदर्भ में व्यूह रचना से हमारा तात्पर्य नीतियों के उस समूह से है जो किसी विशेष नवाचार को स्थायी रूप से स्थापित करने में सहायक और उपयोगी सिद्ध होती है। इस प्रकार की नीतियों के समूह या व्यूह रचना का निर्माण करते समय हमें नवाचार एवं परिवर्तन की समग्र प्रक्रिया को समझना होगा।

जिन लोगों या समूहों में नवाचार को लागू कराना है, उनकी विशेषताओं को ज्ञात करना होगा और उस प्रणाली की प्रकृति की ओर भी ध्यान देना होगा जिसके द्वारा नवाचार की प्रक्रिया को अंगीकार करना है।

यदि हम चाहते हैं कि नवाचार प्रभावकारी ढंग से लागू हो और निरन्तर प्रगति करे तो हमें उसके लिए कुछ खास शर्तों का पालन करना अति आवश्यक है। जी० वाटसन ने ऐसी शर्तों की एक सूची प्रस्तुत की है जो किसी भी संस्था में सफलतापूर्वक परिवर्तन लाने के लिए आवश्यक है

(1) परिवर्तन की प्रक्रिया में भाग लेने वाले (शिक्षा में ये शिक्षक और छात्र होंगे) लोगों को यह अनुभव होना चाहिए कि नवाचार को अपनाने का प्रकल्प (project) स्वयं उनका अपना है और उसे उन पर बाहर से लादा या थोपा हुआ नहीं गया है।

(2) प्रणाली या संस्था के सदस्यों (छात्रों एवं शिक्षकों) को यह स्पष्ट अनुभव होना चाहिए कि नवाचार को लागू कराने वाला (प्राचार्य) वास्तव में अन्तःकरण से नवाचार को लागू कराने में गहरी रुचि रखता है।

(3) नवाचार को लागू कराने का प्रकल्प सदस्यों के आदर्शों एवं जीवन-मूल्यों के अनुरूप होना चाहिए।

(4) नवाचार के प्रकल्प में सम्मिलित सभी सदस्यों को एक दूसरे के प्रति भरोसा एवं विश्वास रखना चाहिए और उन्हें यह अनुभव होना चाहिए कि हर कोई एक-दूसरे को सहयोग, अवलम्बन एवं विश्वास देने के लिए तत्पर है।

(5) प्रत्येक सदस्य को यह अनुभव होने देना चाहिए कि उनकी स्वायत्तता (autonomy) और सुरक्षा पर किसी भी प्रकार की आँच नहीं आने वाली है।

उपर्युक्त शर्तों का पालन करते हुए परिवर्तन के लिए बनायी गयी व्यूह रचना सफलता के शिखर पर पहुँचेगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

नवाचार की सफलता की कसौटी (Criteria of Innovative Success)

किसी भी नवाचार को अपनाने की सफलता की कोई प्रत्यक्ष वैज्ञानिक कसौटी नहीं है। नवाचार अपनाने की सफलता की जाँच शैक्षिक सन्दर्भ में इसी बात से सम्भव है कि नवाचार के कारण पहले की अपेक्षा और अधिक प्रभावी अधिगम हो रहा है या नहीं। नवाचार के मूल्यांकन की सबसे प्रमुख कसौटी है कि विद्यालय या संस्था में पहले की अपेक्षा परिवर्तन के लिए और अधिक क्षमता का उत्पन्न होना। एम० बी० माइल्स ने इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए नवाचार की सफलता की कसौटियों की अग्रलिखित सूची प्रदान की है।

(1) मूलत जिस बात या उद्देश्य को ध्यान मे रखकर नवाचार का उपयोग किया गया था, उन उद्देश्यो के अतिरिक्त और विशद उद्देश्यो के लिए नवचार का प्रयोग होने लगे।

(2) पहले की अपेक्षा और विस्तृत एव बडे समुदायो तक नवाचार की सूचना पहुचे तथा नवाचार और अधिक लोगो का ध्यान आकर्षित कर सके इस हेतु इसका प्रकाशन करना।

(3) इस बात के लिए प्रयास करना कि पहले की अपेक्षा और अधिक सुधरे हुये अभिवृत्ति एव कौशल प्रवतको (innovators) द्वारा अर्जित किये जाएँ ताकि भविष्य म आने वाले नवाचारो को उससे सहायता मिले।

(4) नवाचार का प्रसार (diffusion) अन्य प्रणालियो तक हो।

(5) जहाँ पर नवाचार अपनाया गया है, उसी के समान अन्य क्षेत्रों म भी नवाचार उद्दीप्त हो अर्थात अन्य स्थानो पर भी उस नवाचार को अपनाने की इच्छा लोगो म जाग्रत हो।

(6) नवाचार को अगीकृत करने वाले व्यक्तियो की प्रगति एव प्रोन्नति हो।

अन्तत हम कह सकते हैं कि परिवतन एव सुधार शिक्षा जगत मे लाने के लिए नववारो को अपनाना एक अनिवाय आवश्यकता है। शिक्षण सस्थाओ का मूल्याकन सस्था एव प्रणाली के क्रिया-कलापो के आधार पर ही सम्भव है। ऐसी कल्पना की जाती है कि वे स्कूली प्रणालियाँ जिनका लक्ष्य पूणतया परिभाषित है, जिनमे सम्प्रेषण की पर्याप्तता, शक्ति एव अधिकारो का समान वितरण, सुव्यवस्था सुसंगठन एव एकजुटता की भावना है, वे प्रणालियाँ ही अक्सर नवाचार को अपनाती हैं तथा प्रभावकारी परिवतन करने मे सक्षम हैं।

अभ्यास के प्रश्न

1 नवाचार का अथ स्पष्ट कीजिए। इसकी शिक्षा मे भूमिका का विवेचन कीजिए। (गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

2 शैक्षिक नवाचार से क्या तात्पय है ? अध्ययन अध्यापन परिस्थिति मे शक्षिक नवाचार की आवश्यकता एव महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

3 नवाचार एव परिवतन म क्या अन्तर है ? परिवतन अभिकर्ता की भूमिका एव विशेषता के आधार पर नवाचार सम्प्रेषण को स्पष्ट कीजिए।

4 नवाचार के प्रयोग मे बाधक तत्व कौन से हैं ? इन्हे दूर करने के लिए अनुकूल सगठनात्मक वातावरण एव व्यवहारो के निर्माण के लिए अपने सुझाव दीजिए।

5 नवाचार को कब सफल माना जा सकता है ? नवाचार का सफल प्रयोग शक्षिक परिस्थितियो मे क्या सुधार ला सकता है ?

6 नवाचार अगीकरण क्रिया की अवस्थाओ की विवेचना कीजिए।

7 अगीकारियों का एक वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए और प्रत्येक वग की प्रमुख विशेषताओ का वणन कीजिए।

8 प्रवृत्तियो का अथ स्पष्ट कीजिए। शिक्षा मे आधुनिक प्रवृत्तिया के दो उदाहरण दीजिए। (गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

□□

2

शैक्षिक तकनीकी आन्दोलन

[EDUCATIONAL TECHNOLOGY MOVEMENT]

"शैक्षिक तकनीकी' शिक्षा जगत मे विशेषकर भारत मे एक नवीन सप्रत्यय एव नवाचार है । इसके वतमान स्वरूप के पीछे एक इतिहास है । शैक्षिक तकनीकी का आन्दोलन, जैसा कि सभी आन्दोलनो के साथ होता है, बहुत ही छोटे पैमाने पर शुरू हुआ । इस आन्दोलन को प्रभावित करने वाली अनेक परम्पराएँ थी । आज यह आन्दोलन बहुत व्यापक एव शक्तिशाली बन चुका है । अपनी अनेक उपयोगिताओ के फलस्वरूप शिक्षा जगत के प्रत्येक आयाम पर इसका प्रभाव पड रहा है । इस आन्दोलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करने के पूव हम इसके अथ एव स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे ।

शैक्षिक तकनीकी : अथ एव परिभाषा (Educational Technology Meaning and Definition)

शैक्षिक तकनीकी का आधुनिक अर्थों मे सवप्रथम प्रयोग 1967 मे ब्रिनमोर जोन्स रिपोट मे किया गया । ब्रिटेन की 'नेशनल कौसिल ऑफ एडूकेशनल टेक्नालाजी' (NCET) ने 1967 मे शैक्षिक तकनीकी की एक कायपरक परिभाषा प्रदान की ।" "शैक्षिक तकनीकी मानव अधिगम के प्रक्रम को सुधारने एव उन्नत करने के लिए प्रणालियो, तकनीकियो और सहायक उपकरणो का विकास, प्रयोग एव मूल्याकन है ।"[1]

ब्रिटेन के नेशनल सेन्टर फॉर प्रोग्राम्ड लर्निंग के जी० ओ० एम० लीथ (Leith, 1967) ने शैक्षिक तकनीकी की एक व्यापक एव व्यवहारपरक परिभाषा दी है "शिक्षण तथा प्रशिक्षण को सुधारने और उसकी प्रभावकारिता एव दक्षता को

---

[1] "The development, application and evaluation of systems, techniques and aids to improve the process of human learning "
—*National Council of Educational Technology*, 1967

बढाने के लिए अधिगम तथा अधिगम की परिस्थितिया से सम्बन्धित वैज्ञानिक ज्ञान के प्रयोग को शैक्षिक तकनीकी कहते हैं।"[1]

शैक्षिक तकनीकी और श्रव्य दृश्य उपकरण एक दूसरे से भिन्न हैं। शैक्षिक तकनीकी और श्रव्य दृश्य उपकरणो से भिन्नता इस बात म है कि वह शिक्षण की प्रत्येक विधि और माध्यम का अधिगम म प्रभावकारी देन एव उपादेयता की तलाश करती है। इस अन्तर को और अधिक स्पष्ट करते हुए रिचमड (Richmond, 1970) ने शैक्षिक तकनीकी की एक विस्तृत एव व्यापक परिभाषा देने का प्रयास किया है—"शैक्षिक तकनीकी शिक्षण एव प्रशिक्षण के उद्देश्यो को ध्यान म रखते हुये समुचित रूप से अभिकल्पित अधिगम की उन परिस्थितियो को प्रदान करने से सम्बन्धित है जो अनुदेशन के सर्वोत्तम साधन को जन्म देती है।"[2] इसके अन्तर्गत अनुदेशन के साधन, अधिगमकर्ता के वातावरण को परिवर्तित करने से सम्बन्धित हैं और यह परिवर्तन प्रस्तुतीकरण की तकनीक, अधिगम क्रियाकलाप की व्यवस्था और सामाजिक तथा भौतिक परिवेश की व्यवस्था एव सगठन के द्वारा होता है।

आल इण्डिया कान्फ्रेंस आन प्रोग्राम्ड इन्सट्रक्सन टेकनालाजी (1969) के अवसर पर एस० पर एस० कुलकर्णी महोदय ने उस कान्फ्रेंस के लिये शैक्षिक तकनीकी की परिभाषा इन शब्दो मे दी है—*'शैक्षिक तकनीकी उन सभी प्रणालियो, विधियो* एव माध्यमो का विज्ञान है जिसके द्वारा शिक्षा के उद्देश्यो की प्राप्ति की जा सकती है।"[3]

अन्तत यह कहा जा सकता है कि शैक्षिक तकनीकी एक व्यावहारिक एव प्रयोगात्मक विज्ञान है। इसका लक्ष्य शैक्षिक प्रभाव एव दक्षता को अधिक से अधिक बढाना है। शैक्षिक उद्देश्यो, शैक्षिक विषय वस्तु, शिक्षण सामग्री, शैक्षिक वातावरण, छात्र व्यवहार, शिक्षक व्यवहार, शिक्षक छात्र परस्पर क्रिया एव सम्बन्ध आदि सम्बन्धित कारको को नियन्त्रित करके शैक्षिक तकनीकी अपने मूल लक्ष्य को प्राप्त करती है। यह अध्ययन का वह क्षेत्र है जिसमे अभियन्त्रण तकनीकी सूचना एव सचार विज्ञान, प्राकृतिक विज्ञान, व्यवहार विज्ञान और मानव तकनीकी आदि शास्त्रो के निष्कर्षों का प्रयोग शिक्षा की प्रभावकारिता एव दक्षता की वृद्धि के लिए किया

---

1 "The application of scientific knowledge about learning, and the conditions of learning to improve the effectiveness and efficiency of teaching and training " —*G O M Leith* 1967

2 "Educational technology is concerned to provide appropriately designed learning situations which holding in view the objectives of the teaching or training bring to bear the best means of instructions —*W Kenneth Richmond* 1970

3 Educational technology may be defined as the science of all those systems methods and mediums through which educational objectives can be achieved —*S S Kulkarni* 1969

जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से विद्यालय के प्रबन्ध एव प्रशासन, कक्षा-प्रबन्ध एव अनुदेशनात्मक कार्य आदि सभी क्षेत्रों में शैक्षिक तकनीकी का प्रयोगकर लाभ उठाया जा सकता है।

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन से शैक्षिक तकनीकी के स्वरूप एव प्रकृति से सम्बन्धित निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं

(i) शैक्षिक तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में एक व्यावहारिक प्रयोगात्मक विज्ञान है।

(ii) शैक्षिक तकनीकी एक अति व्यापक सम्प्रत्यय है। इसमे व्यावहारिक तकनीकी अनुदेशनात्मक तकनीकी तथा प्रणाली उपागम सम्मिलित है।

(iii) शैक्षिक तकनीकी शिक्षा की प्रभावकारिता एव दक्षता को बढाने के लिए विज्ञान अभियन्त्रण, व्यावहारिक विज्ञान, मनोविज्ञान आदि वैज्ञानिक एव तकनीकी क्षेत्रों के आविष्कारों, उपलब्धियो एव निष्कर्षों को प्रयुक्त करता है।

(iv) शिक्षण, प्रशिक्षण तथा अधिगम को अधिक से अधिक प्रभावकारी बनाने के लिये शैक्षिक तकनीकी सर्वोत्तम एव प्रभावशाली पद्धतियो, प्रविधियो तथा प्रणालियो का विकास करता है।

(v) शैक्षिक तकनीकी में शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सुनियोजित प्रणालियों, प्रविधियो, सचार के साधनो एव माध्यमो का चयन, प्रयोग एव विकास किया जाता है।

(vi) शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत मशीनी उपकरण (जैसे—फिल्म प्रोजेक्टर, टेपरेकार्डर, शिक्षण मशीन, टेलीविजन इत्यादि) तथा व्यवहार परिवर्तन के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त दोनों ही आते हैं।

शैक्षिक तकनीकी को प्रभावित करने वाली परम्पराएँ (Traditions Influencing Educational Technology)

शैक्षिक तकनीकी के अर्थ एव परिभाषा को स्पष्ट करने के पश्चात् हम उनकी शैक्षिक परम्पराओं की तरफ दृष्टिपात करेंगे, जिन्होंने शैक्षिक तकनीकी के आन्दोलन को प्रभावित किया है और इसके वर्तमान स्वरूप को दिशा देने में सहायता की है। इन परम्पराओं में तीन प्रमुख हैं जिनका विवेचन हम कर रहे हैं

(1) **दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री परम्परा (Audio visual Aids Tradition)**—यह परम्परा अन्य परम्पराओं से सबसे अधिक प्रयोजनवादी एव सबसे पुरानी है। इस तरह की सामग्रियो का प्रयोग ज्ञान प्रदान करने की क्रिया को सहज एव बोधगम्य बनाने के लिये किया जाता रहा है। केवल भाषण शाब्दिक कथन अथवा वाचिक सम्प्रेषण, सचार या सूचना देना मात्र छात्रों को समझाने के लिए पर्याप्त नही होता। इस बात का अनुभव शिक्षक पुरातनकाल से ही करते आए हैं और अपने शिक्षण को बोधगम्य एव आकर्षक बनाने के लिये उपलब्ध सहायक

सामग्रियो का प्रयोग करते रहे हैं। ज्ञान के विस्फोट के साथ ज्ञान की जटिलता बढती गई फलस्वरूप सहायक-सामग्रियो का उपयोग भी। नई-नई सहायक सामग्रियो का प्रवेश कक्षाओ एव शिक्षा जगत मे होता गया। उदाहरण के तौर पर श्यामपट्ट से चलकर शिक्षक एक डायस्कोप एव ओवरहेड प्रोजेक्टर के प्रयोग तक पहुँचा और अब तो स्वचालित सहायक सामग्रियो जैसे शैक्षिक टेलीविजन, टाकिंग टाइपराइटर एव कम्प्यूटर के प्रयोग की ओर बढ रहा है।

वेट (Waite 1971) का कहना है कि आधुनिक सहायक सामग्रियो को केवल सहायक सामग्री मानना भी उचित नही होगा। क्योकि शैक्षिक टेलीविजन, टाकिंग टाइपराइटर और शैक्षिक कम्प्यूटर खुद ही शिक्षण अधिगम के अनेक महत्वपूर्ण अनुभव देने वाले बन गये हैं। इसलिए अब इन्हें मात्र दृश्य श्रव्य सामग्री कहना उचित नही होगा जितना इन्हे शैक्षिक तकनीकी का अभिन्न अग अथवा उसकी एक महत्वपूर्ण शाखा कहना।

क्लीयरी एव सहयोगियो (Cleary et al, 1976) का कहना है कि 'दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री' शब्दावली का अब भी प्रयोग करना बहुत से लोगो के मन मे यह भ्रम पदा करता है और कर सकता है कि 'दृश्य श्रव्य सामग्री' अधिगम और शिक्षण को बाहर से छूने वाली या उसके बाहर की वस्तु है। फिर भी ऐतिहासिक दृष्टि से शैक्षिक तकनीकी से एक भिन्न अग के रूप मे इसका वणन करने के लिए हमने इस पुराने पड गये शब्दावली का प्रयोग यहाँ किया है जबकि दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री शैक्षिक तकनीकी मे अब विलीन हो चुका है।

(2) मानव अभियान्त्रिकी परम्परा (Cybernetics traditions)—इस परम्परा का आधार एव स्रोत अधिगम की परम्परा मे आने वाली त्रुटियाँ हैं। अध्ययन के इस क्षेत्र के उद्गम का सही पता नहीं है किन्तु ऐसा लगता है कि इसका उद्गम जीवित प्राणियो मे प्रकृति प्रदत्त नियन्त्रण प्रणाली (control system) और निर्जीव क्षेत्रो के नियन्त्रण प्रणालियो की तुलना मे है। शायद इस प्रकार के तुलनात्मक अध्ययन की शुरूआत द्वितीय विश्वयुद्ध के समय से हुई।

मानव अभियान्त्रिकी या साइबरनेटिक' पद ग्रीक भाषा के एक शब्द से लिया गया है जिसका शाब्दिक अथ 'परिचालक (steerman) है और जिसका सम्बन्ध उन तरीकों से है जिनका प्रयोग कर परिचालक जहाज को अपनी निश्चित दिशा या पथ पर चलाता है। इस विधि अथवा पथ-सचालन क्रिया को प्रतिपुष्टि सिद्धान्त (feedback principle) की सज्ञा दी गई है।

एक प्रतिपुष्टि नियन्त्रण प्रणाली (feedback control system) म मुख्यत तीन काय होते हैं

(1) यह प्रणाली के कुछ अगो या पक्षो को नियन्त्रित करता है जिनका सम्बन्ध उस प्रणाली के वातावरण से है।

(ii) यह 'प्रदा' (output) की अवस्था की तुलना लक्ष्य या उद्देश्य से करता है ताकि सकेतो या त्रुटियो का पता लगाया जा सके।

(iii) यह त्रुटियो का उपयोग कर प्रदा को पुन सही दिशा मे मोडता है।

यदि 'प्रदा' को इस तरह से मोड दिया जाए कि वह लक्ष्य की तरफ बढ़े त्रुटियाँ कम हो जायेंगी और प्रतिपुष्टि को ऋणात्मक कहा जाएगा।

अभिक्रमित अनुदेशन का आधार प्रतिपुष्टि नियन्त्रण का सिद्धान्त था, अर्थात् इसमे इस बात पर बल दिया गया था कि त्रुटियो से प्राप्त सूचनाओ का प्रयोग गलत अनुक्रियाओ को समाप्त करने के लिये किया जाए न कि ऐसी प्रणाली का निर्माण किया जाए जिसमे सभी अनुक्रिया ही हो और उसे प्रतिपुष्टि दी जाय। शैक्षिक तकनीकी मे प्रतिपुष्टि (feedback) का प्राय उसी अर्थ मे प्रयोग नही किया जा सकता है जिस अर्थ मे इसका प्रयोग साइबरनेटिक्स में किया जाता है। शैक्षिक तकनीकी मे इसका प्रयोग दो प्रकार से कुछ ढीले-ढाले ढग से किया जाता है—

(i) अधिगम के फल का ज्ञान देकर अनुक्रिया को पुनर्बलित करने के प्रभाव के रूप मे, (जैसाकि रेखीय अभिक्रम में होता है)।

(ii) प्रत्येक पद के शीर्ष स्थान पर यह बताना कि छात्र द्वारा पहले की गई अनुक्रिया सही थी अथवा गलत (जैसाकि शाखीय अभिक्रम मे होता है)।

साइबरनेटिक्स परम्परा मे दूसरी प्रमुख धारा सगणना (computing) की है। सगणना, अपने वर्तमान अर्थ मे इस शताब्दी के पाँचवें दशक से कम्प्यूटर के निर्माण से प्रयुक्त होने लगा। अपनी विस्तृत उपयोगिता के कारण कम्प्यूटर ने शैक्षिक तकनीकी मे भी प्रवेश किया और शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत एक नई शाखा का जन्म हुआ जिसे हम कम्प्यूटर सह अनुदेशन (Computer assisted instruction CAI) कहते हैं।

कम्प्यूटर आधारित प्रभावो मे एक और क्षेत्र भी आता है जिसे 'कृत्रिम बुद्धि' (Artificial Intelligence) का क्षेत्र कहते हैं। यदि एक स्वचालित शिक्षण प्रणाली को प्रभावकारी बनाना है तो निश्चित रूप से इस प्रणाली मे वे विशेषताएँ होनी चाहिए जो कि एक मानव शिक्षक मे होती हैं। यदि हम इस प्रकार के स्वचालित प्रणाली को सचालित करने मे सफल होते हैं, तब हम टूरिंग महोदय (Turing 1950) के अनुसार कृत्रिम-बुद्धि का सृजन करते हैं। इस दृष्टिकोण से शिक्षक और छात्र सम्बन्ध प्रणाली को सहजीवी (symbiotic) रूप मे देखा गया है अर्थात शिक्षण प्रणाली मे छात्र को उसी प्रकार समझने की चेष्टा की जाती है, जिस प्रकार शिक्षक को। इस प्रकार शिक्षक और छात्र का जोडा बहुत ही प्रभावशाली ढग से बनाना चाहिए। इस प्रक्रिया ने पुन एक नवीन और सार्थक अध्ययन क्षेत्र को जन्म दिया जिसे (argonomics) कहते हैं। इसमे मानव मशीन प्रणाली का अध्ययन किया

जाता है। इस शास्त्र का जन्म मनोविज्ञान और अभियान्त्रिकी के सम्मिलन से हुआ है। इसका मुख्य क्षेत्र मानव परिचालको (human operators) के लिए नियन्त्रण प्रणाली का प्रारूप तैयार करना और उसका प्रभावकारी प्रदर्शन करना है अत अध्ययन का यह क्षेत्र भी शैक्षिक तकनीकी के लिए बहुत ही साधक एव महत्वपूर्ण है किन्तु अभी तक स्वचालित शिक्षण प्रणाली अपनी शैशवावस्था म ही है।

साइबरनेटिक्स परम्परा के प्रभाव म बहने वाली एक और धारा का सम्बन्ध क्रीडा (gaming) और अनुरूपण (simulation) से है। क्रीडा और अनुरूपण शैक्षिक तकनीकी के प्रणाली उपागम (systems approach) की मुख्य गतिविधियाँ हैं। अनुरूपण का सम्बन्ध क्रियाकलापो के उस समूह स है, जिनका वास्तविक परिस्थितियो मे निरीक्षण करना कठिन अथवा खतरनाक होता है। इसीलिए अनुरूपण मे उन वास्तविक परिस्थितियो की कृत्रिम रूप से रचना की जाती है अर्थात वास्तविक परिस्थिति की सही सही नकल करने की चेष्टा की जाती है। क्रीडा अथवा खेलो का महत्व परम्परागत शिक्षण म भी था और है, किन्तु उच्च स्तर के कौशलो के प्रशिक्षण मे जैसे व्यापार प्रबन्ध म इसका उपयोग बहुत ही नवीन है। कम्प्यूटर की सहायता से एक ऐसे वातावरण का अनुरूपण किया जाता है जिसमे प्रशिक्षण म भाग लेने वाले को काय करना पडता है। इस प्रकार खेल की प्रक्रिया मे भी छात्र या प्रशिक्षार्थी इन कौशलो का विकास कर लेते हैं। साइबरनेटिक्स की परम्परा से शैक्षिक तकनीकी की इन धाराओ का उल्लेख एव विवेचन विस्तृत रूप से पुस्तक के अगले अध्यायो मे किया गया है।

(3) मनोविज्ञान परम्परा (Psychology Tradition)—अभी हाल तक मनोवैज्ञानिक प्रयोग और इसके निष्कर्ष प्रयोगशालाओं की चहारदीवारी म ही बन्द थे और उनका उपयोग शैक्षिक आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए नही किया जा रहा था किन्तु नियन्त्रित प्रयोगो के आधार पर अधिगम, अनुदेशन और प्रशिक्षण के विषय मे बहुत ही प्रभावोत्पादक वैज्ञानिक आँकडे और निष्कर्ष प्राप्त हुए है। इन निष्कर्षों का प्रयोग अथवा उपयोग शिक्षा के क्षेत्र म किया जाय अथवा नही इसके विषय मे परस्पर विरोधी विचारधारायें है। कुछ शिक्षाशास्त्रियो का मत है कि प्रयोगशालाओ के पूर्ण नियन्त्रित वातावरण में प्राप्त आँकडे एव निष्कर्ष वास्तविक कक्षाओ एव अन्य शैक्षिक परिस्थितियों मे लागू नही किये जा सकते हैं। उनके विरोध का दूसरा मुख्य बिन्दु यह है कि क्या मानव व्यवहार को इतना नियन्त्रित करना उचित है। मनोवैज्ञानिको ने विरोधियो के इन तर्कों का उत्तर देने के लिए भी अनेक प्रयोग किये हैं। मनोविज्ञान और विशेषतः अधिगम के मनोविज्ञान का प्रयोग शिक्षा जगत म विरोध के बावजूद भी नित्य प्रति बढता ही जा रहा है। यह दूसरी बात है कि प्रयोग का सिलसिला बहुत ही नियोजित एव क्रमबद्ध ढग से विकसित नही हुआ। समय समय पर कुछ लोगों और मनोवैज्ञानिको ने अपनी जिज्ञासा,

आवश्यकता और सुविधा के अनुसार जहाँ तहाँ मनोविज्ञान का प्रयोग शिक्षा के क्षेत्र मे किया। अभिक्रमित अनुदेशन का इतिहास इस तथ्य का अच्छा उदाहरण है। हम सब जानते है कि थॉर्नडाइक (Thorndike) ने सन 1913 मे ही रेखीय शिक्षण मशीन (Linear Teaching Machine) के सिद्धान्तो का प्रतिपादन कर दिया था किन्तु इसके तेरह वर्ष बाद सन 1926 मे प्रसी (Pressy) ने अभिक्रमित अनुदेशन की आधुनिक परम्परा को परिचालित करने की कोशिश की। प्रेसी ने इस कार्य म भी किसी सुव्यवस्थित अधिगमा सिद्धा त को आधार नही बनाया गया था। सन् 1953 मे स्किनर (Skinner) ने प्रसी द्वारा निर्मित 'स्वय परीक्षण मशीन' (Self Testing Machine) की आलोचना की और अपनी प्रयोगशाला मे क्रिया प्रसूत अनुबन्धन (operant conditioning) पर किये गये प्रयोगा के निष्कर्षों के आधार पर एक नवीन अभिक्रम शैली एव शक्षिक तकनीकी का प्रारम्भ करने का सफल प्रयास किया।

स्किनर द्वारा विकसित रेखीय अभिक्रम शली ने शिक्षा जगत मे एक हल चल उत्पन्न किया और इस हलचल ने शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे अभिक्रमित अनुदेशन की अनेक शैलियो को जन्म दिया जसे शाखीय (branching) रेखीय शाखीय (linear branching), मैथेटिक्स (mathetics) शैली आदि। इन शलिया के प्रयोग द्वारा निम्नलिखित लाभ होते हैं

(i) अधिगम की परिस्थिति पर एक अच्छा नियन्त्रण सम्भव हो पाता है।

(ii) छात्रो को सक्रिय होकर सीखना पड़ता है, और उन्हें अपनी अनुक्रियायें स्वय करनी पड़ती है या चुननी पड़ती हैं।

(iii) छात्रो को अपनी गति से सीखने का अवसर मिलता है और इस तरह अनुदेशन को वैयक्तिक बनाना सम्भव हो पाता है।

(iv) छात्रा क समक्ष वही ज्ञान अथवा जानकारी प्रस्तुत की जाती है, जिनको सीखने के लिए उनके पास आवश्यक पूर्व ज्ञान एव कौशल होता है।

हम देखते हैं कि अभिक्रमित अनुदेशन मे जसे ही अभिक्रम तयार हो जाता है वसे ही शिक्षक के कार्य को सम्पन्न हुआ मान लिया जाता है। उसके बाद तो छात्र को स्वय ही उस अभिक्रम की सहायता से सीखना पड़ता है। अत मानव अनुदेशक अथवा शिक्षक की भूमिका का एक सीमित अश शिक्षण मशीन या अभिक्रमित सामग्री के प्रयोग द्वारा पूरा किया जाता है।

मनोवैज्ञानिक परम्परा का प्रभाव शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे अभिक्रमित अनुदेशन को जन्म देने मात्र तक ही सीमित नही है। स्किनर के कार्यों का सीधा सम्बन्ध व्यवहार परिवर्तन (behaviour modification) के नये क्षेत्र स है। प्रारम्भ मे क्रिया प्रसूत अनुबन्धन का प्रयोगशाला की परिस्थितियों मे प्रयोग करके पशुओ के व्यवहारो म मनचाहा परिवर्तन लाने की चेष्टा की गई। इसी परम्परा म आगे

चलकर शिशुओ एव मन्दबुद्धि बालको मे व्यवहारों म परिवतन लाने के लिए उद्दीपन नियन्त्रण (stimulus control) के लिए भी क्रिया प्रसूत अनुबन्धन का प्रयोग किया गया। क्रिया प्रसूत तकनीक (operant technique) का प्रयोगशाला मे शिशुओं की औपचारिक शिक्षा के लिए भी किया जाने लगा है। इस तकनीकी का मुख्य उद्देश्य वातावरण को नियन्त्रित एव सरचित करना है।

समग्र वातावरण (total environment) को सोद्देश्य नियन्त्रित करने का सबसे महत्वाकाक्षी प्रोजेक्ट सन् 1971 म अलरिच, एलेसी और वुल्फे (Ulrich, Alesse and Wolfe 1971) ने अमेरिका के मिशीगन राज्य मे कला मजू (Kala Mazoo) नामक गाँव मे लिया था। यह एक प्रकार का प्रायोगिक शक्षिक कायक्रम था, जिसके निम्नलिखित घोषित उद्देश्य थे—

(i) शिक्षा अपने विस्तृत अर्थों मे एक सुसगठित अनुभव है जिसका आरम्भ शिशु क जन्म से ही किया जा सकता है।

(ii) जब बालक स्कूल मे अनुत्तीण होता है, तब गलती स्कूल प्रणाली की है न कि छात्र की। बीसवी शताब्दी मे यदि शिक्षा को प्रभावशाली बनाना है तो उसके अन्दर परम्परागत लिखना, पढना और हिसाब लगाना अर्थात् अग्रेजी के थ्री आर (3 R, S) के अतिरिक्त और बहुत कुछ सम्मिलित करना होगा, हमे अपने बच्चो को दूसरे के प्रति सहानुभूति वातावरण के प्रति सम्मान मानव व्यवहार की समझ, सामाजिक परिवतन की आवश्यकता का ज्ञान सीखने के प्रति और आत्म सम्मान की भावना अवश्य सिखानी होगी।

शिक्षा मे शारीरिक दड निरन्तर डराना डाँट फटकार आदि सामान्य दुखदायी अनुभवो से स्कूल और घर को मुक्त होना चाहिए अर्थात इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए। अधिगम एक आमोद प्रमोद (fun) बन सकता है यदि शक्षिक प्रणाली को ऐसा बना दिया जाय कि बच्चे प्राय सफलता का अनुभव करें और उन्हे सफल होने का अनुभव मिलता रहे।

भावी मानव जाति की भलाई के लिए इस पीढ़ी के लोग अपनी रचनात्मक भूमिका तभी निभा सकते हैं जब बालको एव युवकों की शिक्षा पर समुचित बल दिया जाय। मनोवैज्ञानिक परम्परा से प्रभावित व्यवहार परिवर्तन की यह शाखा भावी शैक्षिक तकनीकी की भी एक प्रबल धारा बन सकती है।

शक्षिक तकनीकी विगत और वतमान (Educational Technology Past and Present)

पिछले पृष्ठो मे हमने परम्पराओ का उल्लेख किया है जिन्होंने शक्षिक तकनीकी को प्रभावित किया है। शिक्षा जगत म इन परम्पराओं द्वारा उत्पन्न परिवतनो की छोटी छोटी लहरें आगे चलकर शायद विशाल तरंगो में बदल जायें

वर्तमान शिक्षा के आधार तथा प्रणाली को अपनी धारा मे बहाकर उसमे एक नया परिवर्तन प्रस्तुत कर दें। इन परम्पराओ की छोटी छोटी धारायें शैक्षिक तकनीकी के रूप में प्रगट हुई हैं। शैक्षिक तकनीकी शब्द का प्रयोग बहुत पुराना नही है जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है। वस्तुत इसके विकास का बीजारोपण तो थॉनडाइक और उनके सहयोगियों के कार्यों के रूप म लगभग आज से पचास साठ वर्ष पूर्व हुआ था। इस *बीजारोपण का प्रत्यक्ष अकुरण हमे ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी के सिडनी* प्रेसी द्वारा निर्मित शिक्षण मशीन मे दिखाई देता है।

सिडनी के इस कार्य का उल्लेख हम पिछले पष्ठो म कर चुके हैं। लुम्सडेन और ग्लेसर (Lumsdaine and Glasser, 1960) ने इस शताब्दी के तीसरे और चौथे दशक मे हुए ऐसे अनेक प्रयासो का वर्णन किया है जिनमे शिक्षण का मशीनीकरण करने का छिटपुट प्रयत्न किया गया। उदाहरण के लिए रसायन पुस्तक (chemical book) को *लिया जा सकता है। छात्रो से इस पुस्तक मे बार बार* प्रश्न पूछे जाते हैं और उसको पानी से भरे हुए फाउन्टेन पेन से निश्चित स्थान पर सही उत्तरो *पर चिह्न लगाने के लिए कहा जाता है। जिस जगह से चिह्न लगाते हैं* धीरे धीरे चिह्न के सूखते ही रासायनिक क्रिया से वह रग बदलकर स्पष्ट हो जाता है और यह पता लग जाता है कि उत्तर गलत था अथवा सही।

दूसरी प्रचलित प्रणाली पचबोर्ड' (punch board) की है। इसमे छात्र अपने सही उत्तर के लिये दिये गए अनेक स्थानो मे से किसी एक को तीखी लोहे की पेंसिल से छेद करना है। यदि वह सही उत्तर के लिए दिये गए स्थान मे छेद करता है तब तो पूरा का पूरा छेद पच हो जाता है या खुल जाता है गलत उत्तर देने पर ऐसा नही हो पाता है।

शैक्षिक तकनीकी के प्रगति पथ पर सबसे प्रमुख और प्रभावकारी कार्य बी० एफ० स्किनर (1954–58) का है। उन्होंने पशुओ के अधिगम और प्रशिक्षण के क्षेत्र में बहुत कार्य किया और उनसे प्राप्त निष्कर्षों को मानव शिक्षा के क्षेत्र मे प्रयुक्त करने का साहसिक निर्णय लिया, फलस्वरूप बहुचर्चित अभिक्रमित अनुदेशन का जन्म हुआ।

स्किनर द्वारा प्रतिपादित यह छोटा सा आन्दोलन शिक्षा जगत मे अब एक शक्तिशाली स्तम्भ बन गया है। वर्तमान शिक्षा जगत मे शैक्षिक तकनीकी के प्रभाव को सर्वत्र देखा जा सकता है। अब शिक्षण और प्रशिक्षण को और प्रभावकारी बनाने के लिए टेपरेकार्डर, विडियोटेप एव क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन (CCTV) आदि का प्रयोग एक साधारण सी बात बन गई है किन्तु अभी भी शैक्षिक तकनीकी ने शिक्षा-जगत के विशाल शरीर की अगुली मात्र को पकडा है। अभी भी अधिकाश विद्यालय पुरानी विधियो के सहारे ही अपनी बेढगी चाल से चल रहे हैं। शैक्षिक तकनीकी के प्रचार प्रसार के लिए अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

सर विनमोर जी स ने शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र म उल्लेखनीय कार्य किया है। उनके सुझावो एव प्रस्तावों के आधार पर ब्रिटेन म दृश्य-श्रव्य सहायक उपकरणो की सेवाओ के विस्तार के लिए अनेक विश्वविद्यालयों मे सन्ट्रल सर्विस यूनिट (Central Service Unit) की स्थापना हुई जिनम शिक्षण सस्थाओ क लिये दृश्य श्रव्य उपकरणो जैसे फोटोग्राफ, स्लाइड चॉक बोड और अन्य प्रदशनात्मक तकनीकी के प्रयोग और निर्माण के लिए प्रशिक्षण तथा विशेषज्ञो की सेवायें उपलब्ध कराई गइ।

आजकल सचल सी० सी० टी० वी० (Mobile C C T V Studio) का प्रचलन भी विभिन्न पाश्चात्य विद्यालयो म किया जा रहा है। टेपरिकाडर तथा विडियो टेपरिकाडस का प्रयोग तो एक आम बात हो गई है।

अभिक्रमित अनुदेशन के बहुचर्चित लाभो को ध्यान मे रखते हुए तत्काल प्रति पुष्टि के लिए अनेक प्रकार की तकनीकी का प्रयोग किया जा रहा है। हौलिग (Holling 1969) महोदय न ब्रिटन के चेस्टरफील्ड कॉलेज ऑफ टेक्नोलाजी (Chesterfield College of Technology) म 'प्रतिपुष्टि कक्षा' का प्रारूप तैयार कर उसकी स्थापना की है। प्रणाली बहुत लचीली है और इसमे सीधे भाषण करने, अभिक्रम प्रस्तुत करने और परीक्षा लेने की व्यवस्था है।

शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे आजकल भाषा प्रयोगशालाओं (language laboratories) का महत्व दिन पर दिन बढता जा रहा है। बेनेट (Bennett, 1969) न इसके महत्व एव उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए इसके कई नवीन उपयोगो की ओर सकेत किया है। उनके अनुसार इन प्रयोगशालाओ को भाषा प्रयोगशाला न कहकर अधिगम प्रयोगशाला (learning laboratories) कहना अधिक उपयुक्त होगा।

द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त प्रचलित हुए प्रणाली उपागम (systems approach) का व्यापार एव औद्योगिक प्रब ध के क्षेत्र मे प्रचलन बढता ही गया। और अब शिक्षा जगत भी इससे अछूता नही है। प्रणाली विश्लेषण (systems analysis) हमारे शैक्षिक त त्र के परिचालन मे दिन प्रतिदिन अपना प्रभाव बढाता जा रहा है।

शक्षिक तकनीकी के अ तगत आने वाले उपकरणो एव उपागमो में धन अधिक खच होता है। अत कुछ लोग इसके पक्ष मे नही है। उनका यह कहना है कि साधारण विद्यालयो मे इसका प्रचार प्रसार धन के अभाव मे नही हो सकता। अमेरिका एव अन्य देशो मे इस समस्या के निराकरण की चेष्टा की गई है। उन दशो मे शिक्षण सस्थाओ के लिए शक्षिक उपकरण जैसे टेपरिकाडर विडियोटेप सी० सी० टी० वी० फिल्म प्रोजेक्टर आदि बाजार भाव से कम मूल्य पर शैक्षिक छूट (educational discount) पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था है।

शक्षिक तकनीकी की वतमान स्थिति पर विहगम दृष्टि डालने के पश्चात् हमे इतना ही कहना है कि शिक्षको एव शिक्षाशास्त्रियो को शिक्षा और अधिगम को

प्रभावकारी बनाने के लिए शक्षिव तकनीकी के नवीन एव समन्वित दृष्टिकोण को अपनाना होगा।

भारत मे शैक्षिक तकनीकी (Educational Technology in India)

भारत मे शैक्षिक तकनीकी की वतमान स्थिति का विवेचन किए बिना इस विवरण को समाप्त कर देना उचित नही होगा। भारत मे शैक्षिक तकनीकी का प्रवेश अभिक्रमित अनुदेशन की गाडी पर चढकर हुआ है। सन 1963 मे अभिक्रमित अनुदेशन पर सवप्रथम एक विचारगोष्ठी इलाहाबाद के सेन्ट्रल पेडागाजिकल इन्स्टीट्यूट' (Central Pedagogical Institute) मे आयोजित की गई। इस आयोजन के पश्चात गुजरात, महाराष्ट्र एव पजाब के प्रशिक्षण महाविद्यालयो म अभिक्रमित अनुदेशन क स्वरूप एव भारतीय परिवेश मे उसकी उपयोगिता और उसके प्रचार एव प्रसार पर विचार किया गया। सन् 1965 म शैक्षिक तकनीकी एव अभिक्रमित अनुदेशन मे रुचि रखने वाले कुछ उत्साही शिक्षाशास्त्रियो एव मनोवज्ञानिको ने मिलकर भारत म 'इण्डियन एसोसियेशन ऑफ प्रोग्राम्ड लर्निंग' (IAPL) नामक सस्था का गठन किया। सस्था ने अपने कायक्षेत्र और सदस्यता का विस्तार करने के लिए अभी हाल मे अपने नाम मे परिवतन किया है। अब इस सस्था का नाम ऑल इण्डिया एसोसियेशन फार एजूकेशन टेकनालॉजी (All India Association for Educational Technology) है। सस्था की ओर से एक शक्षिक तकनीकी समाचार पत्र (Educational Technology Newsletter) तथा शोध पत्रिका (Media and Technology in Human Resource Development)[1] का प्रकाशन किया जाता है। सस्था ने जनवरी 1980 मे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय म आयोजित अपने बारहवें वार्षिक अधिवेशन मे अपने काय क्षेत्र को और विस्तृत बनाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रस्तावो को पारित किया है—

(i) राष्ट्रीय प्रौढ शिक्षा कायक्रम (National Adult Education Programme) को और प्रभावशाली बनाने के लिए जन सम्पर्क के साधना रेडियो एव टेलीविजन आदि के प्रयोग को पूर्वापेक्षा अधिक प्रोत्साहन दिया जाय।

(ii) शैक्षिक तकनीकी के विशेषज्ञो की सेवाएँ रेडियो तथा टेलीविजन के कायक्रमों को शैक्षिक तकनीकी के सिद्धान्तो पर निर्मित करने के लिए उपलब्ध कराना चाहिए।

(iii) शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र म कार्य करने वाले शोध छात्रो के लिए कायशाला (workshop) का आयोजन करना चाहिए।

(iv) शिक्षा मन्त्रालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एव प्रशिक्षण एव भारतीय प्रौढ शिक्षा सगठन आदि को प्रौढ शिक्षा के

---

[1] Available with Bhargava Book House Raja Mandi, Agra-282 002 *Vol* 1 (Jan & July Issues) Institutional Subs—Rs 80/

कार्यक्रमो और शैक्षिक तकनीकी म परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने के लिए सतत काय करना चाहिए ।

भारत मे शैक्षिक तकनीकी के विकास के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण परिषद (NCERT) ने महत्वपूण भूमिका अदा की है । परिषद ने अपने अन्तगत एक शैक्षिक तकनीकी केन्द्र (Centre for Educational Technology) स्थापित किया है । इस केन्द्र का काय शिक्षण तकनीकी के क्षेत्र मे अनुसन्धान करना और तकनीकी के ज्ञान का प्रसार एव प्रचार कर शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना है ।

शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र म भारतीय विश्वविद्यालयो के शिक्षा विभागो की भूमिका महत्वपूण है । इसम उच्च शिक्षा सस्थान (CASE) बडौदा, मेरठ, शिमला, इन्दौर, सूरत काशी हिन्दू विश्वविद्यालय आगरा आदि के शिक्षा विभागो म शैक्षिक तकनीकी को बी० एड एव एम० एड० के पाठ्यक्रमो म महत्वपूण स्थान दिया गया है ।

शैक्षिक तकनीकी के उद्देश्य (Aims of Educational Technology)

शैक्षिक तकनीकी को प्रभावित करने वाली परम्पराओ और उसके इतिहास के सिंहावलोकन करने के पश्चात हम इस स्थिति म हैं कि शैक्षिक तकनीकी के उद्देश्यो की एक सक्षिप्त सूची बना सकें । इन उद्देश्यो मे से कुछ तो शैक्षिक तकनीकी के सामान्य उद्देश्य कहे जा सकते हैं तथा अन्य कुछ अधिगम एव शिक्षण से सम्बन्धित विशिष्ट उद्देश्य ।

सामान्य उद्देश्य (General Aims)—(i) बदलते हुए युग की आवश्यकताओं के अनुरूप अधिगम की विधियाँ तथा गतिविधियो का आधुनिकीकरण करना ।

(ii) शिक्षक अधिगम तथा परीक्षण को वतमान स्थिति मे सुधार करना जिससे विद्यार्थियो तथा शिक्षको के व्यवहारो मे अपेक्षित परिवतन हो सकें ।

(iii) मानवीय जीवन को निरन्तर विकसित करन के लिए जीवन की जटिल समस्याओ को सुलझाने के निमित्त तरह तरह की प्रणालियो एव उपागमो मे विधियो की रचना करना ।

विशिष्ट उद्देश्य (Specific Aims)—(i) शैक्षिक तकनीकी का विशिष्ट उद्देश्य कक्षागत शिक्षण एव प्रशिक्षण को सरल, स्पष्ट, बोधगम्य, रुचिकर एव प्रभावकारी बनाना है ।

(ii) शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करना तथा उन्हे व्यवहार परक शब्दावली प्रस्तुत करना ।

(iii) छात्रो के गुणों क्षमताओ उपलब्धियो तथा कौशलो का विश्लेषण करना ।

(iv) पाठ्यवस्तु का विश्लेषण कर उसके तत्वो अथवा घटको को क्रमबद्ध रूप से व्यवस्थित करना ।

(v) व्यवस्थित पाठ्य वस्तु के प्रस्तुतीकरण के लिए शिक्षण की व्यूह रचना करना ताकि निर्धारित उद्देश्यों को शिक्षण की प्रक्रिया, सहायक सामग्रियों तथा प्रतिपुष्टि एवं पुनर्बलन के सहारे प्राप्त किया जा सके।

(vi) छात्रों की उपलब्धियों का निर्धारित उद्देश्यों के सम्बन्ध में मूल्यांकन कर शिक्षण अधिगम में सुधार लाना।

शैक्षिक तकनीकी के विभिन्न रूप एवं उपागम (Types of Educational Technology and its Approaches)

शैक्षिक तकनीकी आज जिन रूपों में हमारे सामने उपस्थित है, उसका विवेचन लूम्सडेन (Lumsdeine, 1964) ने तीन रूपों में वर्गीकृत किया है

(1) **शैक्षिक तकनीकी प्रथम अथवा हार्डवेयर उपागम (Educational Technology I or Hardware Approach)**—शैक्षिक तकनीकी के इस रूप के मूल में भौतिक विज्ञान तथा अभियन्त्रण तकनीकी है। शिक्षण में अभियन्त्रण के सिद्धान्तों और विद्युत चालित यन्त्रों के प्रयोग से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। उदाहरण के लिए चलचित्रों, टेपरिकार्डरों, शिक्षण मशीनों, कम्प्यूटरों, विडियोटेप, क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन का कक्षाओं में प्रयोग। हार्डवेयर उपागम बीसवीं शताब्दी में हुए वैज्ञानिक और तकनीकी विकास का प्रतिफल है।

(2) **शैक्षिक तकनीकी द्वितीय अथवा सॉफ्टवेयर उपागम (Educational Technology II or Software Approach)**—शैक्षिक तकनीकी द्वितीय अथवा सॉफ्टवेयर उपागम सामाजिक विज्ञान, मनोविज्ञान और विशेषकर अधिगम के मनोविज्ञान की आधारशिला पर खड़ा है। मेल्टन (Melton, 1959) के अनुसार शैक्षिक तकनीकी इस मान्यता पर आधारित है कि अधिगम का मनोविज्ञान अनुभव के फलस्वरूप व्यवहार में हर प्रकार के स्थायी परिवर्तन (जिसमें बच्चों का स्कूली अनुभव आदि भी सम्मिलित है) को अन्तर्निहित करता है। अतः इसे अनुदेशन तकनीकी (instructional technology), व्यवहार तकनीकी (behavioural technology) या शिक्षण तकनीकी (teaching technology) भी कहते हैं।

(3) **शैक्षिक तकनीकी तृतीय अथवा प्रणाली उपागम (Education Technology III or System Approach)**—शैक्षिक तकनीकी तृतीय को प्रणाली उपागम कहा गया है। इस तकनीकी का जन्म द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एक नवीन प्रबन्ध तकनीकी (management technology) के रूप में हुआ। प्रबन्ध, प्रशासन, व्यापार, उद्योग एवं सेना से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान के लिए इस उपागम ने वैज्ञानिक, वस्तुनिष्ठ एवं गणितीय आधार प्रदान किया। प्रणाली अथवा सिस्टम्स (systems) समग्रता परस्पर सम्बन्ध और स्वनियन्त्रण एवं संचालन का द्योतक है। प्रणाली को एक गत्यात्मक, जटिल, समन्वित समग्र के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसके परस्पर सम्बन्धित एवं आश्रित अंगों एवं उपांगों को एक स्वनियन्त्रित रचना द्वारा पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

प्रणाली उपागम शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत नवीनतम उपागम है। इस नवाचार की विस्तृत चर्चा अगले अध्याय म की गयी है।

शैक्षिक तकनीकी की शाखायें (Branches of Educational Technology E T)

शैक्षिक तकनीकी आन्दोलन का क्षेत्र दिन प्रतिदिन विस्तृत होता जा रहा है और इसके अन्तर्गत अनेक तकनीकी का विकास हो रहा है। उनमे से कुछ प्रमुख शाखाओ का परिचयात्मक उल्लेख मात्र यहाँ प्रस्तुत किया जायगा।

(1) शिक्षण तकनीकी (Teaching Technology)—शिक्षा के क्षेत्र म शिक्षण सबसे प्रमुख है। यही कारण है कि सामान्य लोग तो शिक्षण और शिक्षा का पर्याय वाची ही समझते हैं। शिक्षण की प्रक्रिया मानव व्यवहार को परिवर्तित करने की तकनीक है अर्थात् शिक्षण का उद्देश्य व्यवहार परिवर्तन है। शिक्षक और प्रभावकारी ढग से पढा सके तथा छात्र और प्रभावकारी ढग से सीख सकें, इसके लिए सामाजिक विज्ञान, मनोविज्ञान एव अभियन्त्रण के सिद्धान्तो एव नियमो का शिक्षण में प्रयोग करना ही शिक्षण तकनीकी कहलाता है।

(2) अनुदेशन तकनीकी (Instructional Technology)—अनुदेशन तकनीकी का क्षेत्र शिक्षण तकनीकी की तुलना म अधिक विस्तृत है क्योंकि इसम कक्षा और कक्षा के बाहर दोनो ही क्षेत्रो म पाठ्य वस्तु को प्रस्तुत करने की प्रक्रिया सम्मिलित है। मानव के जीवन म जहाँ कही भी अधिगम सम्भव है वहाँ अनुदेशन के लिए स्थान है। पैटरसन (Patterson 1977) के अनुसार अनुदेशन शिक्षण से अधिक विस्तृत सम्प्रत्यय है। इसकी सीमा रेखा उन सभी बातो को घेर लेती है जो अधिगम कर्ता को प्रभावित करती हैं।

इसमे अन्तर्गत ऐसे पाठ्यक्रम और अनुदेशन आते है जिन्हे छपी हुई सामग्रियो, शिक्षण मशीनो और कम्प्यूटरो द्वारा दिया जाता है। शिक्षण इस प्रकार का अनुदेशन है जिसे शिक्षक छात्र अन्त क्रिया द्वारा सम्पन्न किया जाता है। अनुदेशन शिक्षक की अनुपस्थिति म भी चल सकता है किन्तु शिक्षण नही। अनुदेशन मे मुख्य कार्य सूचना एव ज्ञान को सम्प्रेषित करना है।

(3) व्यवहार तकनीकी (Behavioural Technology)—जहाँ कही भी व्यवहार परिवर्तन का प्रयास किया जाता है, वहाँ व्यवहार तकनीकी अपना काम करती है या कर सकती है। इसके अन्तर्गत कई प्रकार की तकनीकियो को जन्म दिया गया है जैसे—उद्योग, वाणिज्य, स्वास्थ्य, सम्प्रेषण, शिक्षा, शिक्षण, प्रशिक्षण अनुदेशन और अभिप्रेरण आदि की तकनीकी। इन सभी तकनीकियो का सम्बन्ध मानव व्यवहार मे अपेक्षित परिवर्तन लाने से है। अत ये सभी व्यवहार तकनीकी के ही अग हैं।

शैक्षिक तकनीकी का महत्व (Importance of Educational Technology)

शैक्षिक तकनीकी ने शिक्षा जगत मे एक नवीन क्रान्ति का सूत्रपात किया है। इसने शिक्षण की पुरानी और घिसी-पिटी पद्धतियो म आमूल परिवर्तन करने का सराहनीय प्रयास किया है।

शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया मे शैक्षिक तकनीकी अपेक्षित सुधार एवं विकास कर इसे अधिकाधिक प्रभावकारी बनाती है। इसके द्वारा अधिगमकर्ता के ज्ञानात्मक (cognitive), भावात्मक (affective) और क्रियात्मक (conative) तीनो ही पक्षो का विकास सम्भव है।

शैक्षिक तकनीकी ने शिक्षा जगत मे एक अभूतपूर्व योगदान दिया है। एक ओर तो यह वैयक्तिक विभिन्नता को ध्यान मे रखते हुए प्रत्येक छात्र को व्यक्तिश शिक्षण प्रदान करने मे सक्षम है तो दूसरी ओर अपने हार्डवेयर उपागमो के सहारे अनेक छात्रो को एक साथ प्रभावकारी ढग से शिक्षण प्रदान करने मे भी समर्थ है। शैक्षिक तकनीकी के सहारे एक प्रभावशाली और अति कुशल विशेषज्ञ शिक्षक के ज्ञान एव शिक्षण का लाभ हजारों लोग रेडियो, टेलीविजन, फिल्म आदि के माध्यम से उठा सकते हैं।

शैक्षिक तकनीकी शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र मे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। प्रशिक्षण की नवीन प्रविधियाँ—सूक्ष्म शिक्षण, ठोस शिक्षण, टीम ग्रुप तकनीकी आदि शिक्षण तकनीकी की ही देन है। इन प्रविधियो के प्रयोग द्वारा शिक्षको मे शिक्षण कौशलों के विकास मे बहुत सहायता मिलती है।

भारत एक विकासशील देश है जहाँ साधनों एव धन की अपर्याप्तता है। शैक्षिक तकनीकी के द्वारा कम खर्च मे शिक्षा की ज्योति अनौपचारिक एव औपचारिक रीति से देश के कोने कोने तक पहुँचायी जा सकती है। काल के प्रवाह को कोई रोक नहीं सका है। जन जीवन के प्रत्येक पहलू में अब तकनीकी की घुसपठ हो चुकी है। विरोधो के बावजूद वर्तमान युग मे एक देश को उन्नतशील बनाने के लिए जिस प्रकार हमे मिल, कारखाने, बड़े-बड़े उद्योग खोलने ही पड़े, उसी प्रकार अब शिक्षा और शिक्षण की समस्याओं को सुलझाने के लिए शैक्षिक तकनीकी का सहारा लेना भी अनिवार्य हो गया है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि शैक्षिक तकनीकी के इस रूप को हम ग्रहण कर या उसे इस प्रकार रूपान्तरित कर दें कि वह हमारे देश काल के ढाँचे मे ढलकर देश की आवश्यकताओ की पूर्ति कर सके।

अभ्यास के प्रश्न

1 शैक्षिक तकनीकी को परिभाषित कीजिए एव इस आन्दोलन को प्रभावित करने वाली परम्पराओ की विवेचना कीजिए।
2 शैक्षिक तकनीकी के विकास मे दृश्य-श्रव्य परम्परा के योगदान की समीक्षा कीजिए।
3 मानव अभियान्त्रिकी का शैक्षिक तकनीकी के विकास एव प्रगति पर पड़ने वाले प्रभाव की विवेचना कीजिए।
4 मनोवैज्ञानिक प्रयोगो के निष्कर्षों का उपयोग शैक्षिक तकनीकी के विभिन्न क्षेत्रो मे कैसे किया जा रहा है?
5 शैक्षिक तकनीकी के प्रमुख उद्देश्य एव उपागमो पर एक समालोचनात्मक समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।
6 वर्तमान शैक्षिक परिस्थितियो के परिप्रेक्ष्य मे शैक्षिक तकनीकी की उपयोगिता एव महत्व पर प्रकाश डालिए।
7 भारत मे शैक्षिक तकनीकी के इतिहास और भावी सम्भावनाओ की समीक्षा कीजिए।
8 शैक्षिक तकनीकी क्या है? शैक्षिक तकनीकी के दो उदाहरण दीजिए।
(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

□□

3

शिक्षा मे प्रणाली उपागम

[SYSTEMS APPROACH IN EDUCATION]

भूमिका

प्रणाली उपागम (systems approach) के सम्प्रत्यय का सवप्रथम प्रयोग एव विकास अभिय त्रण और सं प्रविनार मे हुआ। प्रणाली उपागम ने मानव विज्ञानो की चितन धारा म भी क्रान्तिकारी परिवतन किया है। इस उपागम न चिन्तन को एक ऐसी विधि का ज म दिया है जिसका मूलभूत सिद्धान्त यह है कि यदि चिंतन या विचार करना है तो छोटे छोटे अगो म नही अपितु समग्र रूप मे करना चाहिए। यह उपागम समस्या तथा उसके समाधान का एक अति विस्तृत और प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत करता है। इसी कारण अभिय त्रण एव सुरक्षा विज्ञान क क्षेत्र से निकली यह वेगवती धारा अब भाषा विज्ञान मानव विज्ञान मनोविज्ञान एव शिक्षा विज्ञान के विशाल क्षेत्र को अभिसिचित कर रही है।

प्रणाली (systems) शब्द से एक समग्र का बोध होता है जिसके सभी घटक या अग परस्पर सम्बन्धित एव स्वनियन्त्रित होते है। प्रत्येक घटक अपने लिए निर्धारित एव सुनिश्चित काम को अपनी विशिष्ट विधियो स एक पूव नियोजित लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति के लिए करता है। 'प्रणाली' एक विस्तृत एव अनेक सम्प्रत्ययो को व्यवस्थित रूप म समाहित करने वाला एक पद (term) है जो अव्यवस्था एव कुव्यवस्था का विरोधी है।

'प्रणाली' (systems) का शाब्दिक अथ है—ऐसी वस्तुओ का योग या समुच्चय जो किसी सतत चलने वाली व त क्रिया या परस्पर आश्रित क्रियाओं द्वारा नियन्त्रित एव सचालित होती है।

ऐंग्याल (Angyal 1941) ने प्रणाली को समष्टिज सगठन के रूप मे परिभाषित करते हुए प्रणाली एव योग' मे मूलभूत अन्तर को स्पष्ट किया है। एक प्रणाली जिन घटको से मिलकर बनती है, वे इस प्रकार व्यवस्थित, सगठित और परस्पर सम्बद्ध किय जा सकत हैं कि ये घटको का एकत्रीकरण या योग मात्र न रह कर एक नवीन समग्र का रूप धारण कर लेते हैं। इस प्रकार छ व्यक्ति जो एक समिति क रूप म काय करते हैं एक प्रणाली कहे जा सकते हैं किन्तु टेलीफोन डाइरेक्टरी स चुने हुए 6 नामो की सूची को प्रणाली नही कहा जा सकता है।

बटलैनफी (Bertlanffy 1951) ने भी प्रणाली को घटको या तत्वो की एक ऐसी व्यवस्था या समन्वय के रूप मे परिभाषित किया है जो एक समग्र या समष्टि के रूप म होता है।

ऑलपोट (Allport, 1955) के अनुसार प्रणाली एक ऐसी वस्तु है जो किसी प्रकार की क्रिया से सम्बंधित होती है और वह उस क्रिया मे एक प्रकार का समन्वय और एकता बनाये रखती है।

एकॉफ (Ackoff 1977) ने प्रणाली की अति सक्षिप्त एव सरल परिभाषा इन शब्दो मे दी है— एक प्रणाली परस्पर सम्बंधित तत्वो का समुच्चय है।'

रॉब (Robb, 1973) ने इस परिभाषा को थोडा और विस्तृत करते हुए लिखा है— 'एक प्रणाली तत्वो की क्रमबद्ध व्यवस्था है, जो एक विशिष्ट रीति से काय करती है।'

उपर्युक्त परिभाषाओ के आधार पर एक प्रणाली म निम्नलिखित तीन विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं

(अ) प्रणाली एक समन्वित एव गत्यात्मक समग्र है।

(आ) इसमे परस्पर अन्त क्रिया करने वाले तथा परस्पर आश्रित तत्व समाहित हैं।

(इ) वे सभी तत्व प्रणाली के मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए परस्पर सहयोग के साथ कार्यरत होते हैं।

(ई) समग्र प्रणाली का प्रभाव विभिन्न घटको की देन से सवदा अधिक होता है।

इन विशेषताओ को दृष्टि मे रखते हुए अन्तत हम कह सकते है कि प्रणाली एक सम्प्रत्ययात्मक या भौतिक सत्ता (entity) है जिसम परस्पर-सम्बंधित आश्रित एव अन्त क्रियारत तत्व अन्तर्निहित होते हुए भी मुख्य प्रणाली के अन्तगत कायरत रहते हैं तथा सभी तत्व समग्र प्रणाली के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक दूसरे के पूरक होते हैं।

प्रणाली के मूलभूत समष्टिज (Basic Parameters of Systems)

सभी प्रणालियो का वणन इन चार समष्टिजो के द्वारा किया जा सकता है

(i) अदा (input) (ii) प्रक्रम (process) (iii) प्रदा (output) और (iv) पर्यावरणीय सन्दभ (environmental context)।

'अदा' के अन्तगत वे सभी वस्तुएँ आती हैं जिन्हें हम एक प्रणाली मे डालते या समाविष्ट करते हैं। प्रक्रम' वह सभी कुछ है जो एक प्रणाली के अन्तगत होता है। 'प्रदा' प्रणाली का उत्पादन है। प्रणाली के अन्तगत सभी प्रकार के अदा वातावरण या पर्यावरण से ही प्राप्त होते हैं। इसके साथ ही साथ एक प्रणाली उत्पादन को वातावरण मे ही प्रस्तुत करती है। अतः एक प्रणाली को अपने पर्यावरणीय

सन्दर्भ में ही सीमित रहना पड़ता है। एक प्रणाली अपने पर्यावरणीय सन्दर्भ एवं सीमाओं के विरुद्ध विद्रोह नहीं कर सकती। प्रणाली के इन चारों ही समष्टिजा को चित्र संख्या 3 1 में प्रदर्शित किया गया है।



चित्र 3 1—प्रणाली के समष्टिज

उदाहरणस्वरूप चीनी का एक कारखाना 'मानव मशीन' प्रणाली है। इसका लक्ष्य चीनी उत्पादन है। इसमें कार्य करने वाले सभी मजदूर कर्मचारी एवं मशीन आदि इस प्रणाली के घटक एवं तत्व हैं। इस प्रणाली में चीनी उत्पादन के कार्य में आने वाले सभी रसायन, व्यक्ति आदि 'अदा' के अन्तर्गत आयेंगे। कारखाने के अन्दर चलने वाले कार्य 'प्रक्रम' के अन्तर्गत आयेंगे और चीनी का उत्पादन 'प्रदा' कहलायेगा। यह मानव मशीन प्रणाली एक सामाजिक, आर्थिक एवं भौतिक पर्यावरण में कार्य करती है। इसके अन्दर प्रयुक्त 'अदा' इसी पर्यावरण से प्राप्त होते हैं और इससे उत्पादित 'प्रदा' चीनी भी पर्यावरण में ही जाती है।

प्रणाली के तत्व (Elements of System)

प्रणाली में निम्नलिखित तीन प्रमुख तत्व होते हैं

(1) उप प्रणाली (Sub-system)—प्रणाली की परिभाषा करते समय प्रायः विभिन्न लेखक 'तत्वों' (elements) एवं 'चरों' (variables) का प्रयोग करते हैं। लेकिन इन दोनों पदों को पर्यायवाची समझना एक भूल होगी। प्रणाली के तत्वों से हमारा तात्पर्य उस सत्ता (entity) से है जो अपने आप में मूर्त एवं सुनिश्चित सामग्री और गुणों तथा विशेषताओं से सम्पन्न होती है। जबकि चर इन तत्वों की उपयुक्त विशेषताओं और किसी खास समय पर उनमें होने वाले परिवर्तन एवं प्रभावों का प्रतिनिधित्व करता है। उदाहरणार्थ प्राकृतिक सौरमण्डलीय प्रणाली में नक्षत्र, ग्रह तथा उपग्रह तत्व हैं किन्तु इन ग्रहों की स्थिति, उनकी गति तथा आकर्षण शक्ति ... 'चर' कहे जायेंगे। इसी प्रकार मानव मशीन प्रणाली चीनी के कारखाने में

मजदूर, कर्मचारी वर्ग, रसायन, मशीन आदि तत्व हैं किन्तु इन तत्वों के गुण, कार्य प्रणाली, कार्यक्षमता, विरलता एवं सघनता गन्ने मे चीनी का प्रतिशत आदि 'पूरी...' की श्रेणी मे आते हैं। किसी प्रणाली के ये तत्व ही उस प्रणाली के लिए उप-प्रणाली का कार्य करते हैं।

पहले ही कहा जा चुका है कि एक समग्र प्रणाली अपने अन्तर्गत आने वाले घटको एवं उप प्रणालियो का एक समुच्चय है। अर्थात् उप प्रणालियाँ अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखते हुए, अपना कार्य सम्पन्न करते हुए, अन्य उप प्रणालियों के साथ तालमेल एवं सहयोग रखते हुए, समग्र प्रणाली उद्देश्यों की प्राप्ति मे अपना योगदान करती रहती हैं। अतः एक उप प्रणाली अपने आप मे स्वतन्त्र अस्तित्व रखती हैं, लेकिन अपने क्रिया कलापो के लिए अन्य उप-प्रणालियो पर आश्रित होती है। सभी उप प्रणालियों के कार्य 'प्रदा' के लिए एक दूसरे से सम्बन्धित एवं परस्पर अन्तःक्रिया करने वाली होती है क्योंकि इन सभी का कार्य मुख्य प्रणाली के उद्देश्य एवं लक्ष्यो की प्राप्ति मे सहायक होता है। उदाहरणस्वरूप चीनी के कारखाने वाली प्रणाली मे मजदूरो का समूह, कर्मचारियो का वर्ग, मिल की मशीन, सभी उप प्रणालियाँ अपने मे प्रणाली के सभी तत्व, विशेषताएँ एवं समष्टियो से युक्त हैं, किन्तु इन्हें हम चीनी के कारखाने की उप प्रणाली इसलिए कहते हैं कि ये स्वतन्त्र रूप से अपना निर्धारित कार्य करते हुए भी चीनी उत्पादन (लक्ष्य) द्वारा परस्पर सम्बद्ध हैं। इनमे से एक की भी कार्य-दक्षता मे थोड़ी-सी कमी चीनी के उत्पादन (लक्ष्य) को प्रभावित कर सकती है। उत्पादन के लिए इन सभी मे परस्पर-सहयोग एवं लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निष्ठापूर्वक कार्य करना अनिवार्य है।

(ii) **प्रणाली का पर्यावरण (Environment of system)**—प्रत्येक प्रणाली एक पर्यावरण मे कार्य करती है। पर्यावरण के अन्तर्गत वे सभी बातें या चीजें आती हैं जो प्रणाली के बाहर स्थित होती हैं। यहाँ 'बाहर' शब्द से तात्पर्य केवल इतना ही है कि प्रणाली स्वयं वातावरण की विशेषताओ एवं व्यवहारो को सापेक्षिक रीति से बहुत कम प्रभावित करती है अर्थात् प्रणाली वातावरण पर पूर्ण नियन्त्रण नहीं रखती, किन्तु वातावरण, प्रणाली तथा उसकी उप प्रणालियो के कार्यों को अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित करता है, साथ ही साथ पर्यावरण प्रणाली की कार्यक्रम-सम्बन्धी आवश्यकताओ को भी नियन्त्रित करता है। हॉल और फैगेन (Hall and Fagen, 1956) ने प्रणाली के पर्यावरण को परिभाषित करते हुए लिखा है कि एक प्रणाली के लिए उसका वातावरण उन सभी वस्तुओं का समुच्चय है, जिनकी विशेषताओ मे तनिक भी परिवर्तन प्रणाली को प्रभावित करता है। प्रणाली के पर्यावरण के अन्तर्गत वे वस्तुएँ भी आती हैं जिन्हें प्रणाली अपने क्रियाकलापो के द्वारा प्रभावित एवं परिवर्तित करती है। अतः किसी प्रणाली का पर्यावरण उन सभी चरों एवं तत्वो का समुच्चय है जो प्रणाली को प्रभावित करता है या प्रणाली के क्रियाकलापो से प्रभावित होता है।

(iii) लक्ष्य स्थिति (Goal state)—किसी भी प्रणाली में तत्वों में सबसे प्रमुख तत्व उसका लक्ष्य होता है। इसका सम्बन्ध समग्र प्रणाली के व्यवहार और कार्य के मापन से है। अतः जब प्रणाली निर्माता प्रणाली के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को निर्धारित एवं परिभाषित करता है, तब वह भी निश्चित करता है कि प्रणाली के कार्यक्रमों एवं क्रियाकलापों को किस प्रकार मापा जाना चाहिए। साथ ही साथ वह उन साधन परिणामों को भी ज्ञात करना चाहता है जो प्रणाली के क्रियाकलापों को ज्ञात करने एवं मापने में प्रणाली निर्माता त्रुटियाँ कर सकता है किन्तु प्राप्त आँकड़ों तथा साक्ष्यों के प्रकाश में वह अपने विचारों में एवं प्रणाली के क्रियाकलापों में परिवर्तन कर सकता है। उसकी सतर्कता उसका अध्यवसाय एवं वस्तुनिष्ठ बनने की उसकी लालसा उन त्रुटियों को न्यूनतम स्तर पर लाने में सहायक होती है।

व्यवहारपरक शब्दावली में उल्लिखित, पूर्ण परिभाषित एवं मापन-योग्य उद्देश्यों के समुच्चय को किसी प्रणाली की 'लक्ष्य स्थिति' कहते हैं। लक्ष्य स्थिति वह स्थिति है जिसकी ओर समस्त प्रणाली अग्रसर होती है। इसे हम किसी प्रणाली का अंत्य व्यवहार (terminal behaviour) कह सकते हैं। लक्ष्य स्थिति वह तत्व है जो समग्र प्रणाली एवं उसकी उप प्रणालियों के क्रियाकलापों को दिशा प्रदान करता है और उनमें एक संगठन एवं एकात्मकता का सूत्रपात करता है।

प्रणाली उपागम (Systems Approach)

प्रणाली उपागम में प्रणाली सम्प्रत्यय एवं चिन्तन का प्रयोग किया जाता है। यह इस प्रकार की चिंतनधारा है जिसमें किसी एक समस्या को समग्र रूप में देखा, समझा और समझाया जाता है। इस उपागम में एक पूर्व निश्चित लक्ष्य प्रणाली के अंगों उपांगों की परस्पर क्रिया तथा विशिष्ट वातावरण में उनका संगठित रूप में परस्पर सहयोग के साथ कार्य अन्तर्निहित है। इस उपागम में प्रत्येक उप प्रणाली एक पूर्व निश्चित प्रारूप या डिजाइन में इस प्रकार परस्पर सम्बन्धित की जाती है कि वह एक समग्र प्रणाली के रूप में एक साथ काम कर सके और प्रणाली के उद्देश्यों को अत्यन्त प्रभावकारी रीति से प्राप्त कर सके। जब प्रणाली अपने पूर्व निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त कर लेती है तभी उसे एक सफल प्रणाली उपागम कहा जाता है अन्यथा इसमें अथवा इसके अंगों उपांगों में समुचित परिवर्तन कर इसके स्वरूप में परिवर्तन एवं परिमार्जन किया जाता है।

प्रणाली उपागम के पद (Steps in Systems Approach)

प्रणाली उपागम के अन्तर्गत निम्नलिखित मुख्य पद आते हैं

(i) प्रणाली विश्लेषण (Systems analysis)—प्रणाली उपागम के प्रथम पद पर प्रणाली की आवश्यकताओं, उपलब्ध साधनों और उपस्थित बाधाओं का सूक्ष्म एवं विस्तृत विश्लेषण किया जाता है। यह विश्लेषण प्रदा प्रदा, प्रक्रम और पर्यावरणीय सन्दर्भ इन चारों ही समष्टियों के क्षेत्र में किया जाता है। विश्लेषण के इस सोपान

पर प्रणाली से सम्बन्धित इन प्रश्नो, कहाँ, कब, किसके साथ किसके लिए किसके साथ क्या करना है—का समाधान ढूढा जाता है। इन प्रश्नो के सहारे सूक्ष्म विश्लेषण के आधार पर प्रणाली के उद्देश्यो की सीमाओ को परिभाषित किया जाता है। दूसरे शब्दो मे हम यह सकते हैं कि प्रणाली विश्लेषण मे समस्या को प्रणाली के उद्देश्यो के रूप मे व्यक्त किया जाता है। प्रणाली विश्लेषण मे मुख्यतया दो काय किये जाते हैं—पहला, यह निर्धारित करना कि प्रणाली किन उद्देश्यो की पूर्ति के लिए काय करेगी इन उद्देश्यो के निर्धारण के लिए प्रणाली-निर्माता को दो प्रश्नो का उत्तर ढूढना पडता है। प्रश्न ये हैं—क्या है '' और किस चीज की आवश्यकता है ? इन दो प्रश्नो के उत्तर मे जो अ तर या दूरी होती है, वह प्रणाली के उद्देश्यों एव उन्हे परिभाषित करने म सहायता प्रदान करती है। इस पद पर प्रणाली निर्माता समस्या और वातावरण की आवश्यकताओ का पर्यावरणीय सन्दर्भों मे उद्देश्यो के रूप मे अनूदित करता है। प्रणाली विश्लेषण का दूसरा मुख्य काय प्रणाली के अगो उपागो की परस्पर अ त -क्रिया के जटिल ताने-बाने को पर्यावरणीय स दभ म विश्लेषित करना है। प्रत्येक उद्देश्य की खास खास आवश्यकताओ को समझना और प्रणाली के विभिन्न घटको द्वारा उन्हें किस प्रकार पूण किया जाये, इसको भी समझते हुए प्रत्येक अग एव उपाग की कायविधि को विश्लेषित करना है।

अन्तत यह कहा जा सकता है कि प्रणाली विश्लेषण के इस पद पर प्रणाली विशषज्ञ, प्रणाली की समस्या और उसके वातावरण का वणन करता है। साथ ही साथ वह प्रणाली एव उपप्रणाली के बीच वातावरण के सन्दभ मे चलने वाली परस्पर अन्त क्रियाओ की व्याख्या करता है। प्रणाली की वतमान सरचना, उसके कार्यों उसकी भूमिका एव उद्देश्य प्राप्ति म आने वाली बाधाओ का वणन भी इसी पद पर किया जाता है।

(ii) प्रणाली सरचना एव विकास (System Design and Development)— प्रणाली उपागम का दूसरा पद प्रणाली सरचना का निर्धारण तथा उसका विकास होता है। रोमिस्जोव्स्की (Romiszowski 1969) के अनुसार यह पद संश्लेषण (synthesis) की अवस्था है। इस पद पर एक प्रणाली को सश्लेषित करते समय जिस तथ्य को सर्वदा सामने रखा जाता है वह है—प्रणाली का लक्ष्य। यदि प्रणाली शिक्षण या अनुदेशन से सम्बन्धित है, तब उद्देश्यो के विश्लेषण, निर्धारण एव उल्लेखन के लिए गायने (Gagne), ब्लूम (Bloom) आदि के प्रतिमानो का सहारा लिया जाता है।

उद्देश्या का निर्धारण करने के पश्चात प्रणाली विशेषज्ञ उन युक्तियो व्यूह रचनाओ उपागमो एव विधियो का चयन करता है, जिनके सहारे निर्धारित उद्दश्यो को प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा करन से प्रणाली विशेषज्ञ के सम त प्रणाली के उद्देश्य उद्दश्यो की समस्त आवश्यकताएँ, इन आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए साधन एव विधि सभी कुछ स्पष्ट हो जाते हैं। इन्ही तत्वो के आधार पर वह एक समन्वित

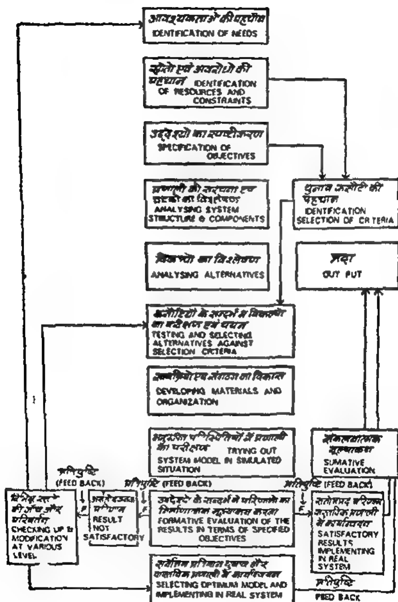
कार्य योजना या प्रणाली प्रारूप तैयार करता है। इस प्रारूप मे प्रदा, प्रक्रम, प्रदा एव प्रणाली के पर्यावरण का समावेश एव स्पष्टीकरण होता है। इस प्रकार इस पद पर प्रणाली के उद्देश्यो के अनुरूप सभी अगो एव उपांगों और उप प्रणालियो के कार्य निर्धारित हो जाते हैं।

(iii) प्रणाली-सचालन एव मूल्यांकन (Systems operation and evaluation)—विकासात्मक एव सरचनात्मक कार्य के पश्चात् प्रणाली संचालन की बारी आती है। प्रणाली की सरचना, अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सक्षम है अथवा नहीं, यह ज्ञात करना अत्यावश्यक है। अत प्रणाली के वृहद एव वास्तविक सचालन के पूर्व प्रणाली की सरचना का पूर्व-परीक्षण छोटे पैमाने पर अनुरूपित परिस्थितियों (simulated condition) मे किया जाता है। इससे प्रणाली की प्रमाणिकता की जाँच हो जाती है। इस अवस्था मे प्रणाली का मूल्यांकन निर्माणात्मक मूल्यांकन (formative evaluation) कहलाता है क्योंकि इस मूल्यांकन के द्वारा प्रणाली विशेषज्ञ को प्रणाली के उद्देश्यो तथा कार्य पद्धति की न्यूनताओं का ज्ञान हो जाता है। प्रतिपुष्टि (feedback) का सहारा लेकर प्रणाली विशेषज्ञ अपनी योजना, उद्देश्य, प्रणाली की विधियों एव प्रारूप आदि मे समुचित परिवर्तन एव परिमार्जन करता है। इससे प्रणाली का प्रारूप सुधर जाता है एव उद्देश्यो की प्राप्ति मे वह पहले से अधिक सक्षम बन जाती है।

सशोधित एव परिवर्द्धित प्रणाली सरचना को वृहद् रूप से वास्तविक परिस्थितियो मे कार्यान्वित एव परीक्षित किया जाता है, अर्थात् सचालित प्रणाली के प्रदा या उत्पादन या अन्य व्यवहार का मूल्यांकन किया जाता है। इस अवस्था पर किया गया मूल्यांकन सकलनात्मक मूल्यांकन (summative evaluation) कहलाता है। इस मूल्यांकन के द्वारा प्रणाली की दक्षता उपादेयता और समस्या के समाधान की क्षमता का वस्तुनिष्ठ ज्ञान प्राप्त होता है। इसके द्वारा ही आवश्यकता पड़ने पर उद्देश्यो को और अच्छी तरह प्राप्त करने के लिए प्रणाली विशेषज्ञ प्रणाली की सरचना मे यथासाध्य परिवर्तन करने की चेष्टा कर सकता है। प्रणाली की सरचना में परिवर्तन एव परिमार्जन की यह प्रक्रिया उस समय तक चलती रहती है जब तक उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए उसमें सुधार की गुंजाइश रहती है। प्रणाली उपागम का एक विहगम दृश्य चित्र 3 2 में प्रस्तुत किया गया है।

अनुदेशन मे प्रणाली उपागम का प्रयोग (Application of Systems Approach in Instruction)

अभी तक प्रणाली-उपागम अपनी सफलता के कारण दिन प्रतिदिन शिक्षा के क्षेत्र में भी लोकप्रिय होता जा रहा है। अनुदेशनात्मक प्रणाली का वर्णन प्रस्तुत करते समय सामान्यतया इन तीनों पदों का प्रयोग किया जाता है—(i) शिक्षा, (ii) स्कूली शिक्षा एव (iii) अनुदेशन। इन तीनों पदों के अपने विशिष्ट अर्थ हैं।



चित्र 3.2—प्रणाली उपागम का विहंगम दृश्य

शिक्षा' का तात्पर्य व्यक्ति के सर्वांगीण एवं वांछित विकास से है। 'स्कूली शिक्षा' का अर्थ है एक व्यक्ति के लिए संस्थागत शिक्षा प्रक्रिया। स्कूली शिक्षा एक व्यापक पद है जिसके अन्तर्गत अनुदेशनात्मक एवं सह अनुदेशनात्मक सभी प्रकार की क्रियाएँ आती हैं। 'अनुदेशन' का तात्पर्य ऐसी शिक्षण अधिगम स्थिति से है जिसमें अनुदेशनात्मक वातावरण को नियन्त्रित एवं वांछित रीति से परिवर्तित भी किया जाता है। प्रमुख रूप से अनुदेशन का सम्बन्ध छात्रों के ज्ञानात्मक विकास से है। भावात्मक एवं अन्य विकास अनुदेशनात्मक प्रक्रिया के उप उत्पाद (by product) हैं।

अनुदेशनात्मक प्रणाली को भली भाँति समझने के लिए शिक्षा प्रणाली और स्कूल प्रणाली के विषय में यहाँ कुछ पंक्तियाँ लिखनी उचित होगी।

1 शिक्षा प्रणाली (Education System)

शिक्षा भी मानव निर्मित प्रणाली है जो विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कार्य करती है। इसके उद्देश्य एक महत् सामाजिक प्रणाली (Supra Social System) से प्रभावित होते हैं। समाज में ही शिक्षा अपनी समस्त अदा सम्बन्धित तत्वों को प्राप्त करती है। समाज के वृहत ढाँचे से शिक्षा के सभी साधन तथा अवरोध भी प्राप्त होते हैं। सामाजिक प्रणाली के सन्दर्भ में ही शिक्षा प्रणाली की उपयुक्तता एवं सार्थकता का मूल्यांकन किया जाता है। इसकी अपनी अनेक उप प्रणालियाँ हैं, जैसे—शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक प्रबन्ध, शैक्षिक मार्गदर्शन इत्यादि। प्रत्येक उप प्रणाली का अपना निजी उद्देश्य, कार्य एवं उत्तरदायित्व होता है किन्तु वे सभी महत् प्रणाली के वृहत उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मिलकर कार्य करते हैं।'

शिक्षा में प्रणाली उपागम के प्रयोग (Uses of Systems Approach in Education)—प्रणाली उपागम का उपयोग शिक्षा में निम्नलिखित विशिष्ट उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है

(i) स्कूली कार्यक्रमों की प्रभावकारी योजना बनाने के लिए—वर्तमान परिस्थितियों में हमें शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सुव्यवस्थित योजनाओं का अभाव दिखाई पड़ता है। प्रणाली उपागम की सहायता से हम शैक्षिक उद्देश्यों को वास्तविक क्रियाकलापों में परिभाषित एवं निर्धारित कर शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त कर सकते हैं।

(ii) नियन्त्रण और समन्वय की वृद्धि के लिए—प्रणाली उपागम में स्कूल व्यवस्था की प्रभावकारी विधियों का प्रयोग किया जाता है। इसके द्वारा अनुदेशनात्मक प्रक्रम के विभिन्न घटकों को नियन्त्रित कर उनके कार्यों को इस प्रकार समन्वित किया जाता है कि अनुदेशन के उद्देश्यों की प्राप्ति का स्तर बढ़ाया जा सके।

(iii) स्कूल में कर्मचारियों एवं शिक्षकों के अधिकतम उपयोग के लिए—वर्तमान स्कूल प्रणाली में ऐसा देखा जाता है कि अनेक शैक्षिक कर्मचारी एवं शिक्षक

एक ही प्रकार के काय को बार बार दुहराते रहते हैं। जिस काय को कुछ लोग करते हैं उसी काय को दूसरे लोग भी करते हुए पाये जाते हैं। यह इसलिए होता है कि उद्देश्यो और प्रत्येक शिक्षक एव कमचारी के कार्यों को भली भाँति परिभाषित कर उन्हे अलग कार्यों मे लगाया जाता है। इस प्रकार प्रणाली उपागम स्कूल को काय कुशलता एव कमचारियो की दक्षता के स्तर को ऊँचा उठाने मे सहायक होती हैं।

(iv) **उन्नत प्रशिक्षण एव विकासात्मक योजना के लिए**—प्रणाली उपागम शिक्षको एव छात्रो के प्रशिक्षणो और उनके विकास के लिए कायक्रमो के आयोजन एव निर्धारण हेतु एक अत्य त महत्वपूण साधन है।

(v) **व्यवहारो के मूल्यांकन को और प्रभावकारी बनाना**—परम्परागत मूल्याकन प्रणाली बहुत हद तक आत्मनिष्ठ होती है, अत व्यवहारो का मूल्याकन समुचित रीति स नही हो पाता। कि तु प्रणाली उपागम म उद्देश्यो को भली भाँति परिभाषित किया जाता है, अत मूल्याकन वस्तुनिष्ठ बन जाता है। प्रणाली से सम्बधित सभी कायकर्त्ता मिलकर उद्देश्या का निर्धारण करत हैं और उन उद्देश्या की प्राप्ति के लिए कायक्रम की योजना बनाते हैं, अत उपलब्धि का मूल्याकन अधिक प्रभावकारी बन जाता है।

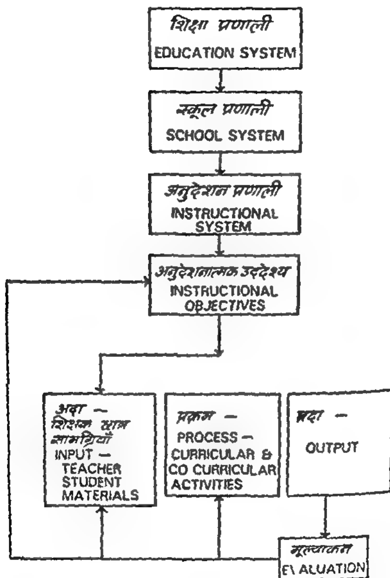
(vi) **गुणात्मक निय त्रण प्रणाली उपागम का मुख्य उपयोग शिक्षा मे गुणात्मक उन्नयन करना है**—शिक्षा के व्यापक प्रचार और प्रसार के कारण इसमे परिमाणात्मक विकास बहुत हुआ है, कि तु इसकी गुणात्मकता म बहुत कमी आ गयी है। चारो ओर इस बात का रोना है कि शिक्षा का गुणात्मक स्तर दिन प्रतिदिन नीचे गिरता जा रहा है। गुणात्मक स्तर की वृद्धि मे प्रणाली उपागम का उपयोग सफलतापूवक हो सकता है।

2 स्कूल प्रणाली (School System)

स्कूल प्रणाली एक महत् प्रणाली 'राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली क अन्तगत काय करती है। स्कूली प्रणाली स्कूली शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित शिक्षा के उद्देश्यो को प्राप्त करना चाहती है। इस प्रणाली के उद्देश्य राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित शिक्षा क उद्देश्यो के विरोधी नही हो सकते। स्कूल अपने पाठयक्रम एव सह-पाठयक्रम अनुगामी गतिविधियो द्वारा इन उद्देश्यो को प्राप्त करने का प्रयास करता है। स्कूल के कायक्रमो को हम तभी कायक्षम एव फलोत्पादक कहेंगे जब वे निर्धारित उद्देश्यो की प्राप्ति कर सकें। स्कूली शिक्षा मे प्रणाली उपागम के प्रारूप को चित्र 3 3 मे प्रस्तुत किया गया है।

3 अनुदेशन प्रणाली (Instructional System)

जिस प्रकार का सम्बध स्कूली शिक्षा का शिक्षा के साथ है उसी प्रकार का सम्ब ध अनुदेशन का स्कूली शिक्षा स है। स्कूल के उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए



चित्र 3 3—अनुदेशनात्मक प्रणाली शिक्षा मे प्रणाली उपागम का प्रादर्श

स्कूल म चलने वाले विभि न कार्यक्रमो मे अनुदेशन प्रमुख स्थान रखता है, अत अनुदेशन प्रणाली की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इस प्रणाली के साथ-साथ स्कूल मे चलने वाली अ य प्रणालियो मे कितना तालमेल एव परस्पर सहयोग है। यदि केवल अनुदेशनात्मक प्रणाली को ही लें तो उसकी प्रभावकारिता, उसमे प्रयुक्त अदा तथा उनम चलने वाली परस्पर क्रियाओ पर निर्भर करेगी।

अनुदेशनात्मक प्रणाली विश्लेषण (Analysis of Instructional System)

प्रणाली के समष्टिजो के सन्दभ मे यदि हम अनुदेशनात्मक प्रणाली का विश्लेषण करें तो हमे निम्नलिखित तथ्य प्राप्त होंगे

(i) प्रदा (Output)—अनुदेशनात्मक प्रदा, अनुदेशनात्मक उद्देश्यो के अतिरिक्त और कुछ नही है। एक आदश शैक्षिक परिस्थिति मे अनुदेशन का उत्पादन या प्रतिफल वैसा ही होना चाहिए जैसा कि उसका घोषित उद्देश्य था। किन्तु ऐसी आदश स्थिति कभी-कभी ही उपलब्ध होती है। अनुदेशनात्मक प्रक्रिया मे कुछ ऐसी विसगतियाँ पनप जाती हैं या ऐसे अवरोध खडे हो जाते हैं कि अनुदेशन के प्रतिफलो और निर्धारित उद्देश्यो के मध्य अन्तर रह जाता है। इस प्रकार की विसगतियो मे प्रमुख हैं अनुदेशनात्मक उद्देश्यो का अस्पष्ट होना। अनुदेशनात्मक उद्देश्यो की अस्पष्टता के कारण ही प्रणाली का प्रतिफल जैसा होना चाहिए, वसा नही हो पाता। अनुदेशनात्मक उद्देश्यो को सक्षिप्त, सटीक एव व्यवहारपरक शब्दावली मे परिभाषित एव उल्लेखित करना कोई सरल काय नही। कि तु ऐसा करना असम्भव भी नही है। अनुदेशन की प्रभावकारिता को अधिक स अधिक बढाने के लिए यह कार्य सर्वाधिक महत्व का है एव अनुदेशनात्मक प्रक्रिया का प्रथम पद है।

अनुदेशन म प्रणाली उपागम की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि अनुदेशनात्मक उद्देश्यो या अनुदेशनात्मक प्रदा को सटीक एव स्पष्ट रीति से परिभाषित एव उल्लिखित किया जाय।

(ii) अदा (Inputs)—जब अनुदेशनात्मक प्रणाली के उद्देश्यों, कार्यों एव उत्पादनो को स्पष्टतया घोषित कर दिया जाता है, तब अनुदेशनात्मक प्रणाली-विशेषज्ञ या शिक्षक उन तत्वो एव चरो के विषय मे विचार करते हैं जिनका प्रयोग इसम अदा के रूप मे किया जायेगा। अनुदेशनात्मक प्रणाली मे मुख्यत तीन प्रकार के अदा कायरत होते हैं (अ) शिक्षक, (ब) छात्र, (स) शिक्षण अधिगम सामग्रियाँ।

(अ) शिक्षक—अनुदेशनात्मक प्रणाली के अदा समष्टिजो मे शिक्षक प्रमुख तत्व है। शिक्षक को शैक्षिक योग्यता, विषयवस्तु का ज्ञान, शिक्षण-विधियों मे सिद्धहस्तता, शिक्षण काय के लिए आ तरिक प्रेरणा, छात्रों के प्रति सहानुभूति एव प्रेम आदि ऐसे चर हैं जो अदा के रूप मे शिक्षक की प्रभावकारिता को निर्धारित करते हैं।

(ब) छात्र—अदा-समष्टिज का दूसरा तत्व है छात्र, छात्रो की बुद्धि का स्तर। उनकी प्रेरणा का स्तर, उनका पूर्वानुभव एव ज्ञान, उनकी प्रत्यक्षीकरणात्मक तैयारी,

कक्षा म बढनी हुई उनकी सख्या, उनक अभिभावको की आकाक्षाए आदि ऐसे घट हैं जो छात्रो की प्रभावकारिता को प्रभावित करत हुए अनुदेशनात्मक प्रणाली क प्रतिफल को प्रभावित करत हैं।

(स) शिक्षण अधिगम सामग्रियाँ—अनुदेशनात्मक प्रणाली क प्रदा समष्टिज क अ तगत आन वाला तीसरा महत्वपूण तत्व है शिक्षक-अधिगम सामग्रियाँ। उदाहरण स्वरूप कक्षा का आकार एव उसकी सज्जा, कक्षा की भौतिक विशेषताएँ, कक्षा का मनोवैज्ञानिक वातावरण, कक्षा मे अपनाई जाने वाली विधियाँ, शिक्षण-सहायक सामग्रियो की उपलब्धि और प्रयोग, शिक्षक-छात्र परस्पर-क्रिया, शिक्षक छात्र सम्बन्ध, कक्षा म छात्रो की सक्रियता का स्तर छात्रो को दिया जान वाला पुनर्बलन एव प्रतिपुष्टि आदि शिक्षण अधिगम तत्व के प्रमुख अग हैं।

(iii) प्रक्रम (Process)—अनुदेशनात्मक प्रणाली का तीसरा समष्टिज अनुदेशनात्मक प्रक्रिया है। अनुदेशनात्मक प्रक्रिया स हमारा तात्पय उस सक्रिय प्रक्रम से है जो शिक्षक और छात्रो के बीच अधिगम परिस्थितियो मे चलती है। इस अन्त क्रिया के अ तगत निम्नलिखित तत्व एव घट समाविष्ट हैं।

—उद्दीपन या प्रस्तुतीकरण जिसमे विषय-वस्तु और उसके सप्रेषण के सभी साधन सम्मिलित हैं,
—छात्र सहभाग एव सक्रियता,
—विषय वस्तु के प्रस्तुतीकरण की गति,
—पुनर्बलन की प्रकृति एव उसकी बारम्बारता,
—अधिगम मे अभ्यास का स्थान एव उसकी मात्रा,
—कक्षा म शिक्षण कौशलो का समुचित प्रयोग,
—शिक्षक छात्र परस्पर क्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न कक्षा का वातावरण।

(iv) पर्यावरणीय सन्दभ (Environmental context)—अनुदेशनात्मक प्रक्रिया स्कूल के वातावरण म चलती है। प्रशासनिक प्रणाली विद्यालय की व्यवस्था प्रणाली प्राचाय शिक्षक सम्बन्ध प्रणाली विद्यालय समाज सम्बन्ध प्रणाली आदि अनुदेशनात्मक प्रणाली क लिए वहत वातावरण का काय करती है।

अनुदेशन एक अद्ध नियतिवादी (semi deterministic) प्रणाली है। इस प्रणाली के चारो समष्टिजों के अ तगत आने वाले तत्व एव घटक परस्पर अ त क्रिया करते हैं और शक्षिक उद्देश्यो अर्थात शक्षिक प्रदा को प्राप्त करने के लिए सक्रिय सहयोग के साथ कायरत रहते है। दूसरे शब्दो मे अनुदेशनात्मक प्रणाली छात्रो के व्यवहार मे (विशेषकर ज्ञानात्मक म) वाछित परिवतन उत्पन्न करने क लिए सक्रिय रहती है। यदि शक्षिक उद्देश्य सुस्पष्ट हो और प्रणाली के अगो एव तत्वो के काय का विभाजन भी सुनिश्चित एव नियन्त्रित हो, तब अनुदेशनात्मक प्रणाली की प्रदा के विषय म भविष्यवाणी की जा सकती है।

अनुदेशन मे प्रणाली उपागम प्रयोग के पद (Steps in the Application of Systems Approach to Instruction)

यदि कोई शिक्षक किसी कक्षा मे अनुदेशन प्रदान करने के लिए प्रणाली उपागम का प्रयोग करना चाहता है तो उस प्रणाली के विकास, कार्यान्वयन मूल्याकन सशोधन एव परिमाजन के लिए एक बहुत ही सुव्यवस्थित कार्यप्रणाली अपनानी होगी। अनुदेशन प्रणाली की सुव्यवस्थित सरचना मे निम्नलिखित आठ पदो का क्रमश अनुसरण किया जाता है।

पद 1 **उद्देश्यों को परिभाषित करना**—अनुदेशन मे प्रणाली उपागम के प्रयोग का प्रथम पद है प्रणाली के उद्देश्यो को परिभाषित करना। हमे स्पष्ट एव सटीक होना होगा कि हम क्या पढना चाहते हैं, किस प्रकार का अधिगम अनुभव छात्रो को देना चाहते हैं तथा छात्रो मे कौन सा व्यावहारिक परिवर्तन लाना चाहते हैं। हम इस बात का भी स्पष्ट ज्ञान होना चाहिए कि अनुदेशन के अन्त मे छात्रो को किन किन कौशलो का सफल प्रदर्शन करना होगा।

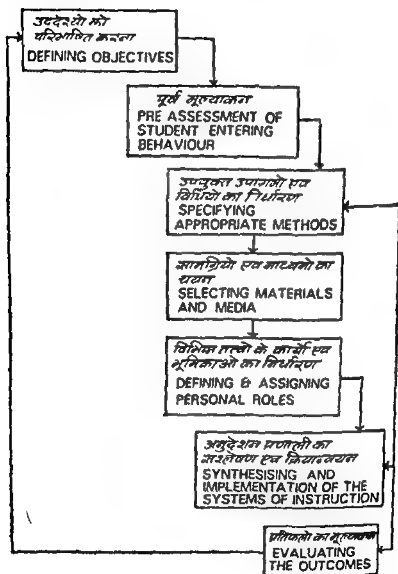
पद 2 : **पूर्व मूल्यांकन**—इस पद पर छात्रो के पूर्वज्ञान और कौशलो की पहचान की जाती है और यह चेष्टा की जाती है कि छात्र का प्रारम्भिक व्यवहार (entering behaviour) किस स्तर का है ?

पद 3 **उपयुक्त उपागमों एव विधियों का निर्धारण**—छात्रा की योग्यता, अभिप्रेरणा एव व्यक्तित्व और विषयवस्तु की प्रकृति के अनुरूप उपयुक्त अनुदेशनात्मक उपागमो, विधियो एव व्यूहरचनाओं का चयन करना प्रणाली के उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए अत्यावश्यक पद है।

पद 4 **सामग्रियो एव माध्यमो का चयन**—शैक्षिक सामग्रियो और माध्यमो का चयन अनुदेशनात्मक विधियो एव व्यूहरचनाओ की और आवश्यकताओ के अनुरूप किया जाता है क्योकि इन्ही के द्वारा अधिगम अनुभवो का प्रस्तुतीकरण एव विकास सम्भव होता है। अधिगम सामग्रियो और माध्यमो के प्रभावशाली प्रयोग के निमित्त छात्रो को शैक्षिक वातावरण भी प्रदान करना नितान्त आवश्यक है।

पद 5 **विभिन्न तत्वों के कार्यों एव भूमिकाओं को परिभाषित एव निर्धारित करना**—*इस पद पर अनुदेशन प्रणाली के सभी तत्वो जैसे शिक्षक* छात्र एव शिक्षण अधिगम सामग्रियो के कार्यों एव उत्तरदायित्वो को निर्धारित एव परिभाषित किया जाता है।

पद 6 **अनुदेशन प्रणाली का सश्लेषण और कार्यान्वयन**—प्रणाली के विभिन्न तत्वो, अगो उपागो के उत्तरदायित्व एव कार्यों को अलग अलग निर्धारित एव परिभाषित करने के पश्चात अनुदेशन प्रणाली मे इन सभी को उद्देश्यो के सन्दर्भ मे परस्पर आबद्ध एव सश्लेषित किया जाता है। सश्लेषण के पश्चात ही प्रणाली उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए कार्यरत हो जाती है। प्रत्येक तत्व अपने लिए निर्धारित



चित्र 3.4—अनुदेशन में प्रणाली उपागम के पद

काय को एक-दूसरे तत्व के सहयोग के साथ सम्पन्न करता है । प्रणाली के वृहत स्तर पर प्रयोग के पहले उसे लघु स्तर पर छात्रो के छोटे समूह मे परीक्षित किया जाता है ताकि यह ज्ञात हो सके कि यह प्रणाली पूव निर्धारित उद्देश्यो को सफलता पूवक प्राप्त कर सकती है, अथवा नही ।

पद 7 प्रतिफलो का मूल्याकन—प्रणाली की प्रामाणिकता या वैधता की जांच करने के लिए इस पद पर प्रदा या प्रतिफला का मूल्याकन किया जाता है । दूसरे शब्दा मे इस पद पर यह देखा जाता है कि व्यवहार या उनकी दक्षता पूव निर्धारित एव लिखित उद्देश्यो से कितनी निकट या दूर है ।

पद 8 परिणामो का विश्लेषण और प्रणाली का परिमाजन—प्रणाली के मूल्याकन द्वारा प्राप्त आंकडो एव परिणामो के विश्लेषण द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि प्रणाली मे कौन कौन सी न्यूनताएँ रह गयी थी । न्यूनताओ के ज्ञात होने पर प्रणाली विशेषज्ञ या शिक्षक आदि प्रभावकारिता की वृद्धि के लिए उसमे समुचित सशोधन, परिमाजन एव परिवतन करता है ।

अनुदेशन मे प्रणाली उपागम के पदो और उनके परस्पर सम्बधो को चित्र 3 4 मे प्रदर्शित किया गया है ।

अभ्यास के प्रश्न

1 प्रणाली से आपका क्या तात्पय है ? प्रणाली के मूलभूत समष्टिजो की विवेचना कीजिए ।
2 प्रणाली उपागम को परिभाषित करते हुए इसक अ तगत आने वाले मुख्य पदो की विवचना कीजिए ।
3 शिक्षा म प्रणाली उपागम के प्रयोग पर प्रकाश डालिए ।
4 प्रणाली उपागम क्या है ? इसक शक्षिक आशय क्या है ?
(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)
5 अनुदेशनात्मक प्रणाली का प्रणाली के समष्टिजो के स दभ मे विश्लेषण करते हुए प्रत्येक समष्टिज का सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कीजिए ।
6 वतमान शक्षिक समस्याओ के समाधान मे प्रणाली उपागम का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है ?

□□

4

वैयक्तिक अनुदेशन-प्रणाली

[PERSONALISED SYSTEM OF INSTRUCTION]

शिक्षाशास्त्री एव मनोवैज्ञानिक बहुत पहले से यह अनुभव करते आये है कि व्यक्तिगत अनुदेशन सामूहिक अनुदेशन की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी होता है। किन्तु सामूहिक शिक्षण की अनुदेशनात्मक सुगमता मितव्ययता तथा अन्य लाभो के कारण व्यक्तिगत अनुदेशन का प्रचलन अधिक नही हो पाया है। फिर भी व्यक्तिगत अनुदेशन की उपादेयता एव लाभो का पलडा इतना भारी पडता है कि इसको लागू करने का मोह शिक्षाशास्त्री नही छोड पाते।

सम्प्रत्यय एव परिभाषा (Concept and Definition)

एफ० एस० केलर ने 1963 म अपने तीन अन्य सहयोगियो जे० जी० शर मैन, आर० ए० जई और सी० एम० बोरी के सहयोग से एक ऐसी वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को जन्म दिया जिसमे सामूहिक अनुदेशन की उपादेयता एव लाभो को अपनाते हुए छात्रो को व्यक्तिश अनुदेशन प्रदान किया जा सकता है। इसी प्रणाली को वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली (Personalised System of Instruction PSI) कहते है। इस प्रणाली के प्रतिपादक के नाम पर इसे केलर योजना (Keller Plan) भी कहते हैं। इस प्रणाली का सवप्रथम प्रयोग केलर और उनके सहयोगियो ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय मे सन 1963 मे किया।

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली (PSI) व्यक्ति उन्मुख अनुदेशन है। इसमे अन्य शिक्षण विधियों एव प्रणालियो की तुलना मे अनुदेशन का वैयक्तिकरण करने पर अधिक बल दिया जाता है। अनुदेशन को अधिगमकर्ता की व्यक्तिगत योग्यता, रुचि एव आवश्यकता के अनुरूप बनाने की चेष्टा की जाती है। ग्रीन (Green 1974) ने वयक्तिक अनुदेशन प्रणाली का वणन इन शब्दो मे किया है

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को यह नाम इसलिए दिया गया है कि इसमे प्रत्येक छात्र को एक व्यक्ति के रूप मे दूसरे व्यक्ति अपनाते हैं। एक छात्र और एक शिक्षक आमने-सामने बठकर शिक्षण एव अनुदेशन की प्रक्रिया मे भाग लेते हैं, चाहे

कक्षा मे छात्रो की सख्या 100 क्यो न हो। यह प्रणाली ऐसी पाठ्यचर्या के लिए उपयुक्त है जिसमे छात्र से यह आशा की जाती है कि वह एक सुपरिभाषित ज्ञान के अश या कौशल को अर्जित करेगा । वयक्तिक-अनुदेशन प्रणाली का शिक्षक प्रत्येक छात्र से यह आशा करता है कि वह अपनी अधिगम सामग्री को भली भाँति सीखेगा। वह शिक्षक ऐसा करने वाले छात्रो को उच्च अक एव श्रेणी प्रदान करने के लिए तैयार रहता है। वह इस बात की चि ता नही करता कि छात्र का कक्षा मे सापेक्षिक स्थान क्या है तथा क्या था। वह इस उद्देश्य की प्राप्ति का उत्तरदायित्व स्थान, उपकरण और व्यक्तिगत मानव शक्ति की सामा य सीमाओ के अ तगत स्वीकार करता है।"

उद्देश्य (Objectives of PSI)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली म अनुदेशन निम्नलिखित उद्देश्यो की पूर्ति के लिए प्रयुक्त होती है

(i) उत्तम वैयक्तिक सामाजिक सम्ब ध की स्थापना—वतमान परम्परागत अनुदेशन प्रणाली म शिक्षक और छात्रो के बीच वैयक्तिक सामाजिक सम्ब धो का अभाव रहता है। कि तु इस अनुदेशन-प्रणाली मे शिक्षक और छात्र के बीच की दूरी को दूर कर प्रत्येक छात्र का शिक्षक के साथ व्यक्तिगत सम्ब ध स्थापित करने की चेष्टा की जाती है। अधिगम और शिक्षण क अ तगत आने वाली समस्याओ को व्यक्तिगत आधार पर सुलझाया जाता है।

(ii) प्रतिपुष्टि की बारम्बारता की वद्धि करना—इस प्रणाली मे शिक्षक प्रत्यक छात्र को उसके शैक्षिक क्रियाकलापो, अधिगम प्रयासो एव उपलब्धि पर व्यक्तिगत रूप मे बार-बार प्रतिपुष्टि प्रदान करता है और प्रत्येक छात्र से उसी उपलब्धि की विशेषताओ एव यूनताओ पर चर्चा करता है।

(iii) अधिगम मे पुनर्बलन की बारम्बारता मे वृद्धि करना—वतमान परम्परा गत शिक्षण पद्धति मे कक्षाओ म पुनबलन का अभाव सवविदित है। छात्रो को थोडा बहुत पुनबलन प्रदान किया जाता है, वह भी अव्यवस्थित रीति स। किन्तु इस प्रणाली म प्रत्येक छात्र को समयानुकूल प्रतिपुष्टि प्रदान करन के कारण पुनबलन की बारम्बारता स्वय बढ जाती है। प्रत्येक छात्र को उसके अधिगम की कमियों को देखते हुए उपचारात्मक सुझाव देने से भी उन्हें उच्चकोटि का पुनबलन प्राप्त होता है।

(iv) शिक्षण मे व्याख्यान के प्रति आस्था को कमी करना—इस विधि म छात्रों को जानकारी एव ज्ञान प्रदान करने क निमित्त व्याख्यान विधि पर कम भरोसा किया जाता है और सम्प्रेषण का अ य य विधियो क उपयोग पर अधिक बल दिया जाता है।

(v) वैयक्तिक मूल्यांकन पर बल देना—वर्तमान मूल्यांकन प्रणाली में छात्रों की उपलब्धि एवं कार्यों का मूल्यांकन दूसरे छात्रों की तुलना में एक सुनिश्चित कालावधि में पढ़ाई गई सामग्री पर प्रतियोगितात्मक वातावरण में किया जाता है, किन्तु इस प्रणाली में मूल्यांकन एक सुनिश्चित स्तर एवं उद्देश्य पर आधारित होता है तथा प्रत्येक छात्र के लिए समय की एक ही पाबन्दी नहीं रहती। नपुण्य के निर्धारित स्तर तक पहुँचने के लिए उसको अपनी योग्यता और गति के अनुसार सीखने और दक्षता प्राप्त करने के लिए समय दिया जाता है। इस प्रकार के मूल्यांकन में व्यक्ति की पूर्व प्रगति से वर्तमान प्रगति की तुलना की जाती है न कि दूसरे छात्रों की प्रगति से।

क्रियाविधि (*Process of PSI*)

इस प्रणाली में पूरे पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु को ऐसी छोटी छोटी इकाइयों में विभाजित कर लिया जाता है जिन्हें छात्र लगभग एक सप्ताह में भली भाँति सीख लें। इस अवधि में सीखे गये विषय या कौशल को उनके सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के सन्दर्भ में बीस पच्चीस मिनट में ही मापन एवं मूल्यांकन किया जाता है। इस मापन का अंकन भी पाँच मिनट में सम्पन्न कर लिया जाता है। इस प्रणाली में अधिगम सामग्री के अन्तर्गत सभी छात्रों के लिए एक पाठ्य पुस्तक और प्रत्येक विषय वस्तु की प्रत्येक इकाई के लिए अध्ययन निर्देशिका रहती है। प्रत्येक अध्ययन निर्देशिका में चार बातें अवश्य रहनी हैं

(i) इकाई की भूमिका
(ii) इकाई के व्यवहारपरक उद्देश्य
(iii) इकाई की अध्ययन प्रक्रिया
(iv) पाठ्य पुस्तक के अतिरिक्त सहायक सामग्री और परीक्षण के प्रश्न।

इकाई की अध्ययन प्रक्रिया में यह स्पष्ट शब्दों में लिखा रहता है कि क्या पढ़ना है? कहाँ से अध्ययन सामग्री प्राप्त करनी है। कितनी बातें कण्ठस्थ करनी आवश्यक हैं। विषय के किन किन बिन्दुओं को समझना आवश्यक है। विषय वस्तु की प्रत्येक इकाई के लिए लगभग चार समान्तर तत्परता परीक्षण (readiness test) होते हैं।

इन प्राथमिक तैयारियों के पश्चात् इस प्रणाली की नीति और रीति छात्रों को समझायी जाती है। प्राथमिक निर्देश देने के पश्चात् प्रथम इकाई निर्देश पुस्तिका प्रत्येक छात्र को दी जाती है और छात्र अध्ययन प्रारम्भ कर देते हैं। निर्देशक या शिक्षक बारी बारी से प्रत्येक छात्र के पास जाता है और उनकी कठिनाई को दूर करता है। जब कोई छात्र यह अनुभव करता है कि उसने व्यावहारिक उद्देश्यों की पूर्ति कर ली है तब वह तत्परता परीक्षण लेता है। परीक्षण की समाप्ति के पश्चात् उत्तर पत्र । अंकन छात्र की उपस्थिति में शिक्षक करता है। परीक्षण पर अंक प्रदान करते

समय शिक्षक मौखिक रूप से छात्र को समझाता रहता है कि उसे इतने अंक क्यो दिये जा रहे हैं। छात्र जब परीक्षण को बिना किसी सम्प्रत्ययात्मक त्रुटि के पूरा कर लेता है, तब उसे अगली इकाई की निर्देश पुस्तिका अध्ययन के लिए दी जाती है। यदि छात्र परीक्षण को पूर्ण सफलतापूर्वक नहीं कर पाता तो उसे उसी इकाई को दोहराने, पढने और समझने के लिए कहा जाता है। उसका ध्यान उन अधिगम-बिन्दुओ या विषय बिन्दुओ की ओर आकृष्ट किया जाता है जिनको समझना परीक्षण मे सफल होने के लिए आवश्यक है। पुन अध्ययन और शिक्षक द्वारा प्राप्त वैयक्तिक सहायता के आधार पर छात्र इकाई की विषय वस्तु पर अधिकार प्राप्त कर लेता है। उसे पुन परीक्षण देना पडता है। इस बार उसी विषय वस्तु पर उसे वही पुराना परीक्षण या नवीन परीक्षण या उसी समय निर्मित कर कोई दूसरा परीक्षण दिया जाता है। जसे ही वह इकाई परीक्षण मे निर्धारित स्तर के अको के साथ उत्तीर्ण होता है, उसे दूसरी इकाई का अध्ययन करने की अनुमति प्रदान कर दी जाती है।

एक या दो इकाइयों के समाप्त हो जाने पर या थोडी प्रगति कर लेने पर शीघ्र सीखने वाले कुछ छात्रो को अनुकर्त्ता (proctor) के रूप मे चुन लिया जाता है। ये अनुकर्त्ता, शिक्षक को अध्ययनरत प्रत्येक छात्र के साथ वैयक्तिक सम्पर्क स्थापित करने और परीक्षण प्रशासन एव अकन करने मे भी सहायता प्रदान करते हैं। अनुकर्त्ताओ को अनुकर्त्ता निर्देश पत्र (proctor's guide sheet) दिये जाते हैं, जिनमे उनके कर्त्तव्यो और अतिरिक्त अध्ययन सामग्रियो का उल्लेख रहता है। अनुकर्त्ताओ को इनके अतिरिक्त परिश्रम, अध्ययन मे रुचि एव नियमितता के लिए पुरस्कृत किया जाता है। प्रत्येक अनुकर्त्ता को छात्रो के एक छोटे समूह का दायित्व दिया जाता है।

इस प्रणाली मे अधिगम एव उपलब्धि मे दक्षता की कसौटियाँ प्रारम्भ मे ही सुनिश्चित कर दी जाती हैं। सामान्यत यह कसौटी 80/80 स्तर की होती है। इसका तात्पर्य यह है कि इस प्रणाली मे 80% छात्रो को कम से कम 80% अधिगम उद्देश्यो को अवश्य ही प्राप्त करना चाहिए। प्रत्येक छात्र को उसकी उपलब्धि के आधार पर ही अक या श्रेणियाँ प्रदान की जाती हैं। छात्रो ने अधिगम करने के पश्चात् उसे किस सीमा तक धारण किया है, उसका मूल्याकन करन के लिए ही बीच बीच मे पुर्नानिरीक्षण परीक्षणो (Review Tests) का प्रयोग किया जाता है। छात्रो को प्रेरणा देने या उनके अधिगम का सवर्धन करने के लिए इस प्रणाली मे कुछ अन्य कार्यक्रमो जैसे—बाह्य विद्वानो के व्याख्यान, औद्योगिक प्रतिष्ठानो का भ्रमण, प्रयोगात्मक कार्यों आदि का प्रयोग किया जाता है।

विशेषताएँ (Characteristics of PSI)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के उद्देश्यो एव कार्यविधि के वर्णन से इस प्रणाली

की कुछ विशेषताएँ साफ साफ झलकती हैं। इसमें प्रत्येक छात्र को अपनी अपनी गति से सीखने का अवसर मिलता है। शिक्षण अधिगम व्यवस्था की आवश्यकता के अनुसार अनेक माध्यमों एवं अनेक शिक्षण सहायक सामग्रियों का प्रयोग सरलता से किया जा सकता है। शीघ्र सीखने वाले छात्रों को अनुवर्त्ता के रूप में अतिरिक्त उत्तरदायित्व प्रदान कर उन्हें सीखने और सिखाने का अवसर प्रदान किया जाता है। प्रत्येक छात्र को अधिगम की दक्षता के स्तर तक पहुंचाने का प्रयास इस प्रणाली की अपनी प्रमुख विशेषता है। जब तक छात्र दी गयी शिक्षण अधिगम इकाई में दक्षता प्राप्त नहीं कर लेता, उसे दूसरी इकाई सीखने की अनुमति नहीं दी जाती। शिक्षक छात्र के बीच चलने वाले संवाद सम्प्रेषण तथा मौखिक कार्य के स्थान पर लिखित कार्यों को प्राथमिकता देना इस प्रणाली की एक अतिरिक्त विशेषता है।

लाभ (Advantages of PSI)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के अनेक लाभ हैं। उनमें से कुछ प्रमुख का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है—

(i) प्रत्येक छात्र अपनी मनोवैज्ञानिक बौद्धिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थिति रुचि एवं अभिक्षमता के अनुसार इस प्रणाली की कक्षा का अंग बन जाता है।

(ii) प्रत्येक छात्र अपनी योग्यता और अधिगम गति के अनुसार विषय वस्तु को सीखता है, न कि शिक्षक की गति के अनुसार। इस प्रणाली में अधिगम में स्वगति के सिद्धान्त (self pacing) को सबसे अधिक महत्व दिया गया है।

(iii) शैक्षिक तकनीकी एवं मनोविज्ञान की परीक्षित विधियों जैसे—दक्षता स्तर अधिगम (mastery learning), धनात्मक पुनर्बलन (positive reinforcement) परिणामों की जानकारी (knowledge of results) तत्काल प्रतिपुष्टि (immediate feedback) तथा सतत रचनात्मक मूल्यांकन (continuous formative evaluation) आदि का प्रयोग बहुमूल्य रहता है।

(iv) शैक्षिक तकनीकी के जटिल एवं बहुमूल्य माध्यम या उपकरणों की इसमें आवश्यकता नहीं पड़ती।

(v) अनुवर्त्ताओं एवं शिक्षकों के सहयोग एवं निर्देश के कारण प्रणाली का शैक्षिक वातावरण सहयोग एवं सहकारिता से परिपूर्ण रहता है।

(vi) दण्ड और नकारात्मक पुनर्बलकों का प्रयोग नहीं किया जाता और धनात्मक पुनर्बलकों एवं पुरस्कारों का समुचित प्रयोग होता है, जिसके फलस्वरूप छात्रों की अभिप्रेरणा का स्तर सदैव ऊँचा रहता है।

(vii) इस प्रणाली में लिखित कार्य, लिखित निर्देशों तथा तत्परता परीक्षणों पर अधिक बल दिये जाने के कारण छात्रों के लिखने पढ़ने की क्षमता में वृद्धि होती है।

(viii) प्रत्येक छात्र की अधिकतम तत्परता के आधार पर ही इस प्रणाली मे उसके भावी अधिगम की व्यवस्था की जाती है।

(ix) छात्रो का अधिगम या उसमे हुए व्यावहारिक परिवतन स्पष्टतया दिखायी पडते हैं। शिक्षक, अधिगम को सरल एव सुगम बनाने वाले साधन के रूप में काय करता है, न कि एक अधिनायक के रूप मे जिसका कथन ब्रह्म वाक्य माना जाता हो।

(x) इस प्रणाली का सर्वाधिक महत्वपूण लाभ यह है कि छात्र सीखने की विधि को ही सीख लेता है और इस प्रकार वह अधिगम के क्षेत्र मे स्वावलम्बी बन जाता है।

कुछ सावधानियाँ (Some Precautions of PSI)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की विशेषताओ एव लाभो को देखते हुए शिक्षक एव सस्थाएँ इसे अपनाने की बात सोचते हैं, किन्तु इसका प्रयोग करने के पूव हम उन सावधानियो को ध्यान मे रखना चाहिए जिनके अभाव मे यह प्रणाली विफल हो जायेगी

(i) यदि शिक्षण का उद्देश्य दक्षता के स्तर तक पहुचना न हो तब इस प्रणाली का प्रयोग नही करना चाहिए।

(ii) पर्याप्त पाठय पुस्तको या सहायक सामग्रियो के अभाव मे इसका प्रयोग व्यर्थ हो जायेगा।

(iii) त्वरित गति से परिवर्तित होने वाले विषयो के शिक्षण के लिए यह अनुपयुक्त है।

(iv) कक्षाओ मे छात्रो की सख्या अधिक होने पर तथा सहायको एव समय के अभाव मे भी इसका प्रयोग अनुचित होगा।

(v) पढ लिख न सकने वाले नासमझ छात्रो के लिए इसका प्रयोग अनुचित होगा।

(vi) शिक्षको मे इसके प्रयोग के लिए उत्साह और शक्ति के अभाव की स्थिति मे भी यह व्यथ सिद्ध होगा।

(vii) यदि शिक्षक विषयवस्तु के शिक्षण उद्देश्यो को व्यावहारिक सटीक उद्देश्यो के रूप मे नही लिख सकते हो, तो उनके लिए इस प्रणाली का प्रयोग लाभप्रद नही होगा।

(viii) यदि शिक्षक अपनी वतमान शिक्षण विधि से सन्तुष्ट हैं, और किसी नये प्रयोग से घबडाते हैं, तब इस प्रणाली का प्रयोग अहितकर होगा क्योकि वे इसे अपनी सुविधानुसार परिवर्तित कर लेंगे और PSI के स्थान पर यह SLI (something like it) बनकर रह जायेगा।

वर्तमान स्थिति (Current Status of PSI)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली शैक्षिक नवाचारों में नवीनतम है। इसकी सफलता और लोकप्रियता पाश्चात्य जगत में दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। इसकी प्रभावकारिता, व्यावहारिकता एवं वैधता को ज्ञात करने के लिए अनेक अनुसंधान भी हुए हैं। रस्किन (Ruskin, 1974) ने इससे सम्बन्धित प्रकाशित दो सौ से अधिक अनुसंधान पत्रों की समीक्षा करते हुए यह दर्शाया कि इस प्रणाली का छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि, अधिगम धारणा, अधिगम स्थानान्तरण आदि पर धनात्मक प्रभाव पड़ता है। उन्होंने इस प्रणाली को अधिगम की एक प्रभावकारी विधि कहकर सम्बोधित किया है। इसके अतिरिक्त अनुदेशन की यह प्रणाली छात्रों में अनुदेशन, शिक्षण, अधिगम आदि के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति का विकास करती है। अनुदेशन की यह प्रणाली आज कल महाविद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले सभी विषयों के शिक्षण के लिए अपनायी जा रही है। इसकी सफलता को देखते हुए स्कूल स्तर पर भी इसके प्रयोग में निरन्तर वृद्धि हो रही है। बहुत सी संस्थाएँ इस प्रणाली को संस्थागत स्तर पर अपना रही हैं।

अभ्यास के प्रश्न

1. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के सम्प्रत्यय को स्पष्ट करते हुये उसके उद्देश्यों की विवेचना कीजिए।
2. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की क्रियाविधि को स्पष्ट कीजिए।
3. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए इससे प्राप्त होने वाले लाभों की एक सूची प्रस्तुत कीजिए।
4. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के नवाचार को किसी विद्यालय में अपनाते समय किन सावधानियों की ओर विशेष ध्यान देना होगा और क्यों?
5. वैयक्तिक अनुदेशन क्या है? वैयक्तिक अनुदेशन की विभिन्न तकनीकियों को स्पष्ट कीजिए। (गोरखपुर विश्वविद्यालय 1989)

□□

5

अभिक्रमित अनुदेशन तथा शिक्षण-मशीन

[PROGRAMMED INSTRUCTION AND TEACHING MACHINE]

अभिक्रमित अनुदेशन
(Programmed Instruction)

शिक्षा का स्वरूप दिन पर दिन बदलता जा रहा है। ज्ञान के विस्फोट, जनसंख्या में वृद्धि औद्योगिक एवं तकनीकी विकास और उससे उत्पन्न सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक मान्यताओं ने सामाजिक परिवर्तन को और भी गतिशील बना दिया है। इन परिस्थितियों ने शैक्षिक नीतियों और रीतियों को अत्यधिक प्रभावित किया है। जन-जन तक शिक्षा को प्रभावकारी ढंग से पहुँचाने में औपचारिक एवं घिसी पिटी शिक्षा प्रणाली असफल रही है। औपचारिक शिक्षा की परिधि से जो वृहद जनसंख्या बाहर रह गई है उनकी बात छोड़ दें तो भी औपचारिक शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत कक्षाओं में 40–50 छात्रों को एक शिक्षक सही अर्थों में शिक्षा प्रदान नहीं कर सकता। ज्ञान के विस्फोट के कारण पाठ्य सामग्रियों का बढ़ता हुआ बोझ तथा कक्षा में दिन प्रतिदिन बढ़ने वाली संख्या शिक्षाशास्त्रियों को इस बात के लिए मजबूर करती है कि वे एक ऐसे विकल्प को ढूँढें जो छात्रों को स्वयं सीखने में सहायता कर सके। अभिक्रमित अनुदेशन इसी प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति करने वाला स्व अनुदेशन (self instruction) की एक नवीन विधि है। अभिक्रमित अनुदेशन में शिक्षक या अभिक्रामक ज्ञान का चयन, संचय, उसे बोधगम्य इकाइयों में विश्लेषित कर एक तारतम्य में सजाने का, अथवा अभिक्रमिक पाठ्य सामग्रियों के निर्माण का कार्य करता है। किन्तु पाठ को छात्रों के सामने प्रस्तुत करने, उन्हें सही उत्तर का तत्काल ज्ञान कराने एवं पुनर्बलन का सहारा लेते हुये अनुदेशन के उद्देश्यों तक पहुँचाने का कार्य अभिक्रमित पुस्तकों अथवा शिक्षण मशीनों द्वारा किया जाता है। अभिक्रमित अनुदेशन की प्रणाली में शिक्षक का कार्य पाठ अथवा अभिक्रम की रचना या चयन करना है। तथा छात्र का काम इन अभिक्रमित सामग्रियों की सहायता से स्वतः विषय वस्तु को सीखना है।

शैक्षिक तकनीकी की भाषा में कहा जाय तो शिक्षक, छात्रों के कोमल मन मस्तिष्क और अधिगम को नियन्त्रित रूप से विकसित करने वाला नम्र तकनीकी विशेषज्ञ (software technical experts) हैं जो कि अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कठोर यांत्रिक तकनीकी विशेषज्ञों (hardware technical experts) एवं यन्त्रों का सहारा लेता है। शिक्षक अभिक्रम का रचनाकार निर्माता अथवा परिचालक है। शिक्षण मशीन या अभिक्रमित पुस्तक ऐसी कृति है जो शिक्षण कार्य के उत्तर दायित्व के वहन में उसकी सहायता करती है। ये एक दूसरे के विरोधी नहीं अपितु परस्पर पूरक हैं।

अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ एवं परिभाषा (Programmed Instruction Its Meaning and Definition)

अभिक्रमित अनुदेशन पाठ्य सामग्री को छोटे छोटे पदों में विभाजित कर उसे इस प्रकार तारतम्य युक्त अथवा शृंखलाबद्ध करने की प्रक्रिया है जिसके सहारे अधिगमकर्त्ता जहाँ तक जानता है उसके आगे का अज्ञात नवीन एवं जटिल विषय वस्तु स्वयं ही सीख सके। अभिक्रमित अनुदेशन शिक्षण अधिगम की एक विधि है जिसमें अधिगम के स्रोतों साधनों एवं सामग्रियों को नियोजित तथा संगठित करने का प्रयास किया जाता है ताकि अधिगमकर्त्ता सुपरिभाषित एवं सुनिश्चित शिक्षण उद्देश्यों तक अपनी गति से पहुँच सके। शिक्षण उद्देश्यों तक छात्रों को पहुँचाने के लिए शिक्षण मशीन अथवा किसी अन्य उपयुक्त साधन के द्वारा दिये जाने वाले अनुदेशन को ही अभिक्रमित अधिगम या अनुदेशन अथवा स्व अनुदेशन की संज्ञा दी जाती है।

स्मिथ और मूर (1962) के अनुसार, 'अभिक्रमित अनुदेशन या स्वयं शिक्षण सामग्री जिसे क्रमवश शिक्षण मशीन की संज्ञा दी जाती है मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित शीघ्रता से विकसित होने वाला शिक्षण तकनीकी के क्षेत्र का आन्दोलन है। इसका उद्गम प्राचीनकाल के अध्यापकों की शिक्षण प्रणाली में है तथा इसका विकास आधुनिक काल में मानव तथा पशु अधिगम के प्रयोगशाला अध्ययनों द्वारा हुआ है।' रिचमाण्ड (1970) के शब्दों में, अभिक्रमित अनुदेशन उस प्रायोगिक प्रयास का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें शिक्षण कौशल को भावी शिक्षण के सिद्धान्तों एवं व्यवहारों में बदलने की चेष्टा की जा रही है।'

मार्कले (1961) ने अभिक्रमित अनुदेशन की एक व्यापक परिभाषा देते हुए लिखा है—'अभिक्रमित अधिगम शिक्षण क्रियाओं को पुनः पुनः प्रस्तुत करने के लिए तारतम्य युक्त संरचना की रूपरेखा बनाने की एक विधि है जिसकी सहायता से प्रत्येक छात्र में एक मापनीय व्यावहारिक परिवर्तन किया जा सके। सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि अभिक्रमित अनुदेशन व्यक्तिश अनुदेशन की एक ऐसी विधि है जिसमें अधिगम कर्त्ता सक्रिय रहता है तत्काल प्रतिपुष्टि पाता है तथा अपनी गति

से सीखते हुए आगे बढ़ता है। शिक्षक छात्र के सम्मुख उपस्थित रहे या न रहे, शिक्षक का कार्य अभिक्रम ही करना है।

अभिक्रमित सामग्रियों की विशेषताएँ (Characteristics of Programmed Materials)

किसी भी साधन से प्रस्तुत की जाने वाली अभिक्रमित सामग्रियों में निम्न लिखित विशेषताएँ होती हैं

(i) अभिक्रमित सामग्रियों का उपयोग व्यक्तिश ही हो सकता है अर्थात् इसके सहारे एक समय पर एक ही व्यक्ति सीख सकता है।

(ii) अभिक्रम सामग्री के हर पद पर विषय वस्तु के छोटे से छोटे अंश को रखा जाता है अर्थात् विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण न्यूनतम वृद्धि के साथ किया जाता है।

(iii) अभिक्रम का प्रत्येक पद आगे वाले पद से तार्किक रीति एवं स्वाभाविक ढंग से जुड़ा रहता है।

(iv) सीखने वाले को सतत अनुक्रिया करनी पड़ती है तथा उनका व्यवस्थित रैकार्ड रखा जाता है।

(v) प्रत्येक पद पर छात्रों को तत्काल यह जानकारी दी जाती है कि उनकी अनुक्रिया सही थी अथवा गलत। इस प्रकार प्रतिपुष्टि द्वारा उन्हें बराबर पुनर्बलन मिलता रहता है।

(vi) प्रत्येक छात्र को अपनी स्वाभाविक गति से विषय वस्तु सीखने की सुविधा इसमें रहती है।

अभिक्रमित अनुदेशन के मूलभूत सिद्धान्त (Basic Principles of Programmed Instruction)

अभिक्रमित अधिगम के मूलभूत सिद्धान्तों का सूत्रपात मनोवैज्ञानिक प्रयोग-शालाओं में हुए अध्ययनों से हुआ। स्किनर ने अपने प्रयोगों के आधार पर अभि-क्रमित अनुदेशन के पाँच मूलभूत सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है।

(i) लघु पद (Small steps)—इस सिद्धान्त के अनुसार विषय वस्तु को भली-भाँति विश्लेषित किया जाता है। विषय वस्तु के एक ही टुकड़े को अधिगम कर्ता के सम्मुख एक समय में प्रस्तुत किया जाता है। विषय वस्तु के इसी छोटे अंश को अभिक्रम का पद या फ्रेम कहते हैं।

(ii) तात्कालिक प्रतिपुष्टि (Immediate feedback)—छात्र द्वारा दिया गया उत्तर सही है या गलत इसकी तत्काल जानकारी देना अभिक्रमित अनुदेशन का दूसरा सिद्धान्त है। एक पद को पढ़ लेने के पश्चात् उस पर पूछे गये प्रश्न का उत्तर छात्र देता है। उत्तर लिखने के पश्चात छात्र अपने उत्तर को सही उत्तर से मिलाता है। यदि उत्तर सही निकलता है तब वह अगले पद को पढ़ता है। यदि उत्तर गलत होता है तो वह पाठ को पुन पढ़ता है और सही उत्तर तक पहुंचने की चेष्टा करता

है। इस प्रकार तत्काल प्रतिपुष्टि पाने से छात्र को पुनर्बलन मिलता रहता है और वह एक पद से दूसरे पद पर बढते हुए अभिक्रम के अ त तक पहुच जाता है।

(iii) सक्रिय अनुक्रिया सिद्धान्त (Active responding)—सीखने के लिए अधिगम की प्रक्रिया मे सक्रिय भाग लेना अत्यन्त आवश्यक है। अभिक्रम म ऐसा ही किया जाना है। इसम केवल विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण ही नही होता अपितु अधिगमकर्त्ता को सतत काय करने अथवा सक्रिय रहन के लिए बाध्य किया जाता है। अधिगमकर्त्ता पूरे अभिक्रम म सतत सक्रिय रहता है।

(iv) स्वगति सिद्धा त (Self pacing)—अधिगमकर्त्ता अपनी स्वाभाविक गति से अभिक्रम म आगे बढता है। उसको दूसरे छात्रो की गति से आगे बढने के लिए बाध्य नही किया जाता है। इस प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन म वयतिक विभिन्नता का ध्यान रखा जाता है।

(v) छात्र परीक्षण सिद्धान्त (Student testing)—इस सिद्धान्त के अनुसार नियमित रूप स छात्रो की प्रगति का मूल्याकन किया जाता है। यह सरलता से जाना जा सकता है कि छात्र की कमजोरियाँ या गलतियाँ क्या और कहाँ है। छात्र अपने अधिगम का मूल्याकन स्वय भी कर सकता है।

अनिवाय एव वकल्पिक सिद्धान्त (Mandatory and Optional Principles)

एडवड (1971) ने स्किनर द्वारा दिये गये सिद्धान्ता म कुछ सशोधन करके अभिक्रमित अधिगम के सिद्धान्तो की एक विस्तृत सूची दी है। इन सिद्धान्तो को उसने दो भागो मे विभाजित किया है—पहला अनिवार्य सिद्धान्तो को सूची तथा द्वितीय वैकल्पिक सिद्धान्तो की सूची।

1 अनिवाय सिद्धान्त (Mandatory Principles)

(i) उद्देश्य स्पष्टीकरण (Objective specification)—अभिक्रम का निर्माण उद्देश्य स्पष्टीकरण पर ही निभर है। अभिक्रमक को अभिक्रम निर्माण के लिए उसके उद्देश्यो को व्यवहारिक शब्दावली मे पूणतया स्पष्ट कर लेना चाहिए। उसे उन व्यवहारो को भली भाँति पहचान लेना चाहिये जिन्हे अभिक्रम के अन्त मे अधिगमकर्त्ताओं मे वह देखना चाहता है। अर्थात उसे अन्त्य व्यवहार (terminal behaviour) के विषय मे स्पष्ट होना चाहिए। अन्त्य व्यवहार किन परिस्थितियो मे होगा और किस स्तर का होना चाहिए इस सम्बन्ध म अभिक्रमक को पूणत स्पष्ट विवरण देना चाहिए।

(ii) प्रयोगाश्रित परीक्षण (Empirical Testing)—अभिक्रमित सामग्री को हमेशा प्रयोगाश्रित परीक्षण पर आधारित विकसित और सशोधित होना चाहिए। अभिक्रम विकसित कर लेने के बाद विभिन्न चरणो म अभिक्रम का परीक्षण किया जाता है। व्यक्तिगत परीक्षण लघु समूह परीक्षण तथा विस्तृत क्षेत्र परीक्षण। इन तीन परीक्षणों के आधार पर अभिक्रम को परिष्कृत तथा सशोधित किया जाता है।

(iii) स्वगति (Self pacing)—अधिगमकर्त्ता अभिक्रम के सहारे सीखने की गति अपनी इच्छानुसार स्वय निर्धारित करता है। सीखने की गति उसकी योग्यता और अभिप्रेरणा के स्तर के अनुरूप होती है। इस सिद्धा त के अनुसार वैयक्तिक विभिन्नता को ध्यान म रखत हुये व्यक्तिश शिक्षा देने की कल्पना साकार होती है।

2 वैकल्पिक सिद्धा त (Optional Principles)

(i) वाह्य अनुक्रिया (Overt response)—अभिक्रमित सामग्री की रचना इस प्रकार होनी चाहिए कि अधिगमकर्त्ता को सतत बाह्य अनुक्रिया करनी पडे। अभिक्रमित अधिगम की यह आवश्यकता अधिगमकर्त्ता को सदा सक्रिय बनाय रखती है जिसके फलस्वरूप उसकी अभिप्रेरणा के स्तर मे वृद्धि होती रहती है।

(ii) तत्काल प्रतिपुष्टि (Immediate feedback)—सीखना सही हो रहा है या गलत इसका तत्काल ज्ञान अधिगमकर्त्ता अपने उत्तर को सही उत्तर से मिलाकर प्रतिपुष्टि प्राप्त करता है।

(iii) लघु पद आकार (Small step size)—विषय वस्तु को छोटे छोटे पदो मे विभाजित कर एक बार मे केवल एक पद को प्रस्तुत करना चाहिए।

उपरोक्त सिद्धान्तो को अभिक्रमक अपनी आवश्यकतानुसार उपयोग मे लाता है। अत इन्हे वैकल्पिक सिद्धा त कहा गया है।

इन सिद्धान्तों के अतिरिक्त कुछ और ऐसी विशेषताएँ अथवा शर्तें हैं जिन्हे अभिक्रमक अभिक्रम निर्माण के समय ध्यान रखते हैं।

(i) त्रुटि दर (Error rate)—सामान्य रेखीय अभिक्रमो (linear pro grammes) मे त्रुटि दर 5% से अधिक नहीं होनी चाहिए और शाखात्मक अभिक्रमों मे त्रुटि दर 20% से अधिक नही होनी चाहिए।

(ii) अनुबोधन और पुष्टि (Prompting and confirmation)—रेखीय अभिक्रमो मे कुछ अतिरिक्त उद्दीपन रखे जाते हैं जो अधिगमकर्त्ता को सीखने मे सहायता प्रदान करते हैं और सही उत्तर के बोध मे सहायक होते हैं। इस क्रिया विधि को अनुबोधन कहते हैं। अधिगमकर्त्ता सरलता से पद सीख ले और त्रुटि दर कम हो इस उद्देश्य से अनुबोधन का प्रयोग अभिक्रम मे किया जाता है।

अभिक्रमित अनुदेशन का मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological Bases of Pro grammed Instruction)

अभिक्रमित अनुदेशन के मूल मे व्यवहारवादी मनोविज्ञान (behavioural psychology) है। मनोविज्ञान की यह शाखा मनुष्य को एक मशीन मानती है और मानव के समस्त व्यवहार को उद्दीपन (stimulus) और अनुक्रिया (response) का सम्बन्ध मात्र उद्दीपन अनुक्रिया सम्बन्धो की प्रकृति की खोज करना और उसे नियन्त्रित कर प्राणी के व्यवहार को नियन्त्रित करना इसका मुख्य उद्देश्य है।

अभिक्रमित अधिगम व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक बी० एफ० स्किनर द्वारा प्रयोगशाला मे पशुओ पर अधिगम के क्षेत्र मे किये गये प्रयोगो की देन है। स्किनर

ने अपने प्रयोगो के आधार पर अधिगम के नये सिद्धा त का प्रतिपादन किया जिसे क्रिया प्रसूत अनुब धन का सिद्धा त (Theory of Operant Conditioning) कहते हैं । अभिक्रमित अधिगम को भली भाँति समझने के लिए इस सिद्धात से परिचित होना आवश्यक है । अत यहाँ क्रिया प्रसूत अनुबन्धन के मूलभूत सिद्धान्तो का वर्णन प्रस्तुत है ।

क्रिया प्रसूत अनुब धन का सिद्धा त (Theory of Operant Conditioning)—इस सिद्धान्त को समझने के लिए हम स्किनर के एक विशिष्ट प्रयोग का संक्षिप्त विवरण देंगे ।

स्किनर का प्रयोग—स्किनर ने अपने प्रयोग म सीखे जाने वाले व्यवहार के विश्लेषण के आधार पर प्राणी को क्रमबद्ध ढग से उस व्यवहार को सीखने के लिए प्रोत्साहित किया । स्किनर इस प्रयोग म यह चाहता था कि कबूतर दाहिनी तरफ पूरा एक चक्कर लगाए और सुनिश्चित स्थान पर चोच मारे । उसने कबूतर को (जो भूखा था) एक बोक्स (learning box) म रखा । शुरू म कबूतर हक्का-बक्का था फिर उसने इधर उधर चोच मारना शुरू किया । दाहिनी ओर घूमकर सुनिश्चित स्थान पर चोच मारने पर उसे अनाज का एक दाना मिला । कबूतर दाने को लेता है और उसी प्रकार दाने के लिए सचेष्ट रहता है । इस प्रकार धीरे धीरे कबूतर दाहिनी ओर घूमकर चोच मारकर दाना प्राप्त करना सीख लेता है । स्किनर ने इसे क्रिया प्रसूत सिद्धा त कहा क्योकि इसम खाद्य पदार्थ अर्थात उद्दीपन (stimulus) अथवा पुनर्बलन (reinforcement) को प्राप्त करने म लिए अनुक्रिया अथवा कार्य करना पडता है जबकि शास्त्रीय अनुब धन (classical conditioning) म उद्दीपन अथवा पुनर्बलन अनुक्रिया उत्पन्न करता है ।

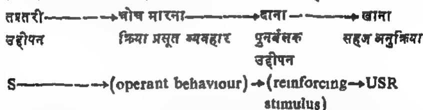
इस प्रयोग के आधार पर स्किनर ने उद्दीपन नही तो अनुक्रिया नही (no stimulus no response) सिद्धा त के विरुद्ध आवाज उठायी । उसका विश्वास है कि बहुत सी अनुक्रियाए ऐसी होती हैं जिनको कि हम किसी ज्ञात उद्दीपन से नही जोड सकते । उनके अनुसार दो प्रकार की अनुक्रियाएँ होती हैं । प्रथम वे अनुक्रियाए जो किसी ज्ञात उद्दीपन के कारण होती हैं इनको वह सहज अनुक्रिया या व्यवहार (reflexive response or behaviour) कहता है । द्वितीय वे अनुक्रियाए जो किसी ज्ञात उद्दीपन के कारण नही होती इन्हे वह क्रिया प्रसूत व्यवहार (operant behaviour) कहता है ।

पहले प्रकार का व्यवहार 'S type अनुब धन के द्वारा होता है जिसे सामान्य भाषा मे शास्त्रीय अनुब धन (classical conditioning कहते हैं । शास्त्रीय अनुबन्धन अथवा पावलव द्वारा प्रतिपादित अनुबन्धन मे अधिगम के प्रक्रम के स्वरूप को इस प्रकार से चित्रित कर सकते हैं

1 भोजन (अ-अनुबंधित उद्दीपन) UCS	——→लार टपकना (अ-अनुबंधित अनुक्रिया) UCR
2 घण्टी + भोजन (अनुबंधित उद्दीपन + अ-अनुबंधित उद्दीपन) CS + UCS	——→लार टपकना (अ अनुबंधित अनुक्रिया) UCR
3 घण्टी (अनुबंधित उद्दीपन, CS	——→लार टपकना अनुबंधित अनुक्रिया) CR

उद्दीपन प्रकार (S type) अनुबन्धन मे इच्छित अनुक्रिया उत्पन्न करने मे उद्दीपन को महत्व दिया गया है। इसलिए इसमे अधिगम का स्वरूप उ→अ (S–R) सूत्र से प्रदर्शित करते हैं।

अनुक्रिया प्रकार (R type) का अनुबन्धन क्रिया प्रसूत अनुबन्धन कहलाता है। इसमे अधिगम के प्रक्रम को इस प्रकार चित्रित कर सकते हैं



क्रिया प्रसूत अनुबन्धन मे अनुक्रिया को अधिक महत्व दिया गया है। इसमे पहले कुछ क्रियाएँ या व्यवहार करना पड़ता है। उसके फलस्वरूप उद्दीपन प्रकट होता है। इसलिए इसमे अधिगम का स्वरूप अ→उ (R—S) सूत्र से प्रदर्शित करते हैं।

स्किनर के उपरोक्त प्रयोग स निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती है

(i) प्रयोग मे प्रारम्भ से सही अनुक्रिया के बीच कबूतर मनचाहा व्यवहार (जैसे घूमना इधर-उधर चोंच मारना, बाएँ सर घुमाना आदि) करने के लिए स्वतन्त्र है किन्तु उसको दाना (पुनर्बलक) तभी दिया जाता है जब वह प्रयोगकर्त्ता द्वारा निर्धारित अन्त्य व्यवहार (terminal behaviour) को करता है।

(ii) इस प्रकार पूर्व नियोजित कौशल को सिखाने मे अधिक समय नहीं लगता।

(iii) प्रयोगकर्त्ता इच्छित व्यवहार होने पर कबूतर को हर बार दाना देता है। मनोवैज्ञानिक शब्दावली मे इस इच्छित अनुक्रिया को पुनर्बलित करना कहा जाता है। जब भी सही अनुक्रिया होती है तब उसे पुनर्बलित किया जाता है किन्तु गलत अनुक्रिया होने पर उसे दण्ड नहीं दिया जाता।

क्रिया प्रसूत अनुबन्धन का यह सिद्धान्त अभिक्रमित अनुदेशन की आधारशिला है। इन्ही सिद्धान्तो की पृष्ठभूमि पर अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्त (जिनका वर्णन पहले किया जा चुका है) आधित हैं।

अभिक्रम शैली के प्रकार (Styles of Programming)

अभिक्रमित अनुदेशन अथवा अधिगम का प्रयोग विश्व में तेजी से फैल रहा है। शिक्षको, शोधकर्ताओं, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों ने अनेक प्रकार के अभिक्रमो की रचना की है। आज अभिक्रम निर्माण की इतनी शैलियों का जन्म हो चुका है कि उनका वर्गीकरण एवं विस्तृत वर्णन करना यहाँ सम्भव नहीं। यहाँ केवल निम्न लिखित शैलियों का वर्णन ही प्रस्तुत है

(1) रेखीय अथवा बाह्य अभिक्रम शैली
(Linear or Extrinsic Style of Programming)

(2) शाखात्मक अथवा आन्तरिक अभिक्रम शैली
(Branching or Intrinsic Programming)

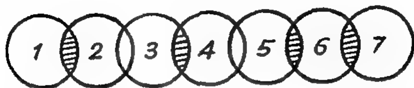
(3) रूपान्तरित एवं मिश्रित शैलियाँ
(Modified and Mixed Style)

1 रेखीय अथवा बाह्य अभिक्रम शैली (Linear or Extrinsic Style of Programming)

रेखीय शैली के प्रतिपादक स्किनर हैं। इसीलिए इसे 'स्किनर शैली' भी कहते हैं। स्किनर का 'क्रिया प्रसूत अनुबन्धन सिद्धान्त' इस शैली की आधारशिला है। स्किनर का विश्वास है कि अधिगमकर्ता को एक पूर्व निश्चित एवं इच्छित व्यवहार सिखाया जा सकता है। इसके लिए उस इच्छित व्यवहार अथवा अन्त्य व्यवहार (terminal behaviour) तक पहुँचने के मार्ग मे आने वाली क्रियाओं को अत्यन्त छोटे छोटे साधक अशो मे विश्लेषित करना होगा। इन छोटे छोटे पदो का सहारा लेकर तथा प्रत्येक पद पर पुनर्बलन देकर अधिगमकर्ता को वांछित व्यवहार अथवा कौशल सिखाया जा सकता है। उद्दीपन अनुक्रिया की एक सुनियोजित एवं सुसबद्ध श्रृंखला अधिगम के लिए आवश्यक है। ऐसा करने से प्रत्येक अनुक्रिया दूसरी अनुक्रिया के लिए उद्दीपन का कार्य करने लगती है। इस प्रकार जटिल-से जटिल व्यवहार का रूपण (shaping) उद्दीपन अनुक्रिया श्रृंखला के सहारे किया जा सकता है।

जब श्रृंखलन (chaining) के सिद्धान्त को हम मानव-अधिगम के क्षेत्र मे प्रयुक्त करते है तब रेखीय अभिक्रम शैली का स्वरूप प्रकट होता है। रेखीय अभिक्रम मे अधिगमकर्ता के सम्मुख विषय-वस्तु का एक छोटा अश एक फ्रेम या पद के रूप मे प्रस्तुत किया जाता है (उद्दीपन)। तत्पश्चात् अधिगमकर्ता को उस अश पर आधारित प्रश्न का उत्तर देने के लिए कहा जाता है (अनुक्रिया)। उत्तर देने के पश्चात उसे सही उत्तर दिखाया जाता है, इससे उसे पुनर्बलन मिलता है। एक पद

के पश्चात प्रश्न, प्रश्नोत्तर के पश्चात पुनर्बलन, पुनर्बलन के पश्चात पुन दूसरा पद। इस प्रकार क्रमानुसार अधिगमकर्त्ता अन्त्य व्यवहार तक पहुँच जाता है। रेखीय अभिक्रम के स्वरूप को चित्र संख्या 5 1 मे प्रदर्शित किया गया है।



चित्र 5 1—रेखीय अधिगम विन्यास

संक्षेप मे हम कह सकते हैं कि एक रेखीय अभिक्रम म निम्नलिखित बातें आती हैं

(क) ज्ञान या विषय वस्तु का एक अत्यन्त छोटा अंश एक समय पर प्रस्तुत किया जाता है।

(ख) छात्र अनुक्रिया करता या उत्तर देता है। उत्तर छात्र स्वय निर्मित करता है।

(ग) छात्र अपने उत्तर को सही उत्तर से मिलाता है तथा पुनर्बलन प्राप्त करता है।

(घ) उसे आगे क्या करना है, इस सम्बन्ध मे निर्देश मिलता है।

रेखीय अभिक्रम की विशेषताएँ—रेखीय अभिक्रम की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं

(i) रेखीय विन्यास (Linear arrangement)—अधिगम के लिए सभी छात्रो को एक ही रेखा या मार्ग का अनुसरण करना पडता है। इसीलिए इसे रेखीय अभिक्रम कहते हैं।

(ii) अनुक्रिया केन्द्रित (Response centred)—इसम अनुक्रिया पर अधिक बल दिया जाता है। अधिगमकर्त्ता को प्रत्येक पद पर अनुक्रिया करनी पडती है। अनुक्रिया के बिना अधिगम सम्भव नही है।

(iii) अनुक्रिया नियन्त्रण (Controlled response)—अधिगमकर्त्ता को अपनी इच्छानुसार अनुक्रिया करने की छूट नही रहती। अनुक्रिया और उनका क्रम अभिक्रमक द्वारा नियन्त्रित होता है।

(iv) स्वनिर्मित अनुक्रिया (Self constructed response)—इस शैली मे अधिगमकर्त्ता को स्वय उत्तरो का निर्माण करना पडता है। इसमें प्रश्न पुन स्मरण प्रकार (recall type) के होते हैं।

(v) तत्काल प्रतिपुष्टि (Immediate feedback)—रेखीय अभिक्रम की रचना इस प्रकार की जाती है कि अनुक्रिया के तुरन्त बाद अधिगमकर्त्ता को प्रतिपुष्टि मिल जाय।

(vi) अनुबोधन (Prompting)—फ्रेम में अतिरिक्त अनुबोधक (prompt) या संकेत का प्रयोग किया जाता है। इनसे अधिगमकर्ता को सही उत्तर देने में सहायता मिलती है।

(vii) सक्रिय सहभाग (Active participation)—रेखीय अभिक्रम में चूंकि अधिगमकर्त्ता को प्रत्येक पद के अन्त में अपने उत्तर की रचना करनी पड़ती है, अत इसमें प्रारम्भ से अन्त तक उसे सक्रिय रहना पड़ता है।

(viii) स्वगति (Self pacing)—प्रत्येक अधिगमकर्ता को अपनी गति से अभिक्रम पर आगे बढ़ने की स्वतन्त्रता रहती है। उसे अन्य सहपाठियों की गति से सीखने के लिए बाध्य नहीं किया जाता।

(ix) प्रवचन नियन्त्रण (Cheating Control)—रेखीय अभिक्रम में बेईमानी या प्रवचन पर नियन्त्रण रखने के लिए सही उत्तरों को छिपा या ढक दिया जाता है। प्रवचन मुक्त (cheat proof) शिक्षण मशीनों का भी निर्माण किया गया है, इनमें छात्र का उत्तर छिपा रहता है और सही उत्तर दिये बिना वह अगले पद पर नहीं जा सकता। बेईमानी करने पर मशीन में अपने आप ताला लग जाता है तथा अगला पद छात्र नहीं देख सकता।

(x) उद्दीपन विभेदीकरण (Stimulus discrimination)—रेखीय अभिक्रम में उद्दीपन विभेदीकरण पर अधिक बल दिया जाता है। अर्थात उसमें एस अधिगम अवसरों का निर्माण किया जाता है जिसमें अनुक्रिया करने में प्रतिपुष्टि मिलती है।

रेखीय अभिक्रम शैली की न्यूनताएँ (Limitations of linear programming)—रेखीय शैली पर अनेक अभिक्रम निर्मित हुए हैं और अनुसन्धान भी हुए हैं। इन अनुसन्धानों के आधार पर सामान्यत इस शैली की निम्नलिखित न्यूनताओं का उल्लेख किया जाता है

(i) अभिप्रेरणा एवं रुचि का अभाव (Lack of motivation and interest)—अधिकांश छात्र और शिक्षक इस शैली को नीरस प्रक्रम मानते हैं क्योंकि एक छोटी सी बात का समझाना या सिखाने के लिए इसमें विषय वस्तु की अत्यधिक पुनरावृत्ति की जाती है तथा अधिक समय लिया जाता है। औसत से ऊपर की बुद्धि वाले विद्यार्थियों के लिए तो यह और भी अधिक नीरस और उबाने वाली सिद्ध हुई है।

(ii) अनुक्रिया की स्वतन्त्रता का अभाव (Lack of freedom of response)—अधिगमकर्त्ता को मनचाही अनुक्रिया करने की छूट नहीं रहती। उसे वही अनुक्रिया करने के लिए बाध्य किया जाता है जिसे शिक्षक अथवा अभिक्रमक चाहता है।

(iii) सीमित विषय वस्तु के लिए उपयोगी (Useful for limited subject matter)—इस शैली का प्रभावकारी उपयोग कुछ सीमित प्रकार की विषय

वस्तुओं के लिए (जिन्हें समुचित ढंग से श्रृंखलाबद्ध किया जा सके) ही सम्भव है जैसे विज्ञान, गणित, भाषा में शब्द भण्डार विकास आदि।

(iv) समारतन्त्रीय समस्या (Logistic problems)—क्लास एवं लुम्सडन (Klaus and Lumsdaine, 1962) के अनुसार रेखीय अभिक्रम की सबसे बड़ी न्यूनता उससे उत्पन्न समारतन्त्रीय समस्या है। उन्होंने लिखा है कि हाईस्कूल भौतिकी के 20 प्रतिशत कोर्स पर 500 छात्रों के लिए अभिक्रम छपवाने में $3\frac{1}{2}$ टन कागज 1440 खुले पन्ने (नोट के लिए) चाहिए और 16,000 पद की रचना करनी पड़ेगी।

(v) थेलेन (Thelen 1963) ने रेखीय शैली की आलोचना इन बिन्दुओं पर की है

(क) अधिगमकर्त्ता को प्रत्येक पद पर पुनर्बलन मिलना चाहिए यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सिद्ध तथ्य नहीं है। अधिगम पर किये गये अनेक प्रयोगों से यह प्रकट हुआ है कि प्रच्छन्न, अनिर्देशित एवं अपुरस्कृत अधिगम भी होते हैं।

(ख) यदि यह मान लें कि प्रत्येक पद पर पुनर्बलन की आवश्यकता है तब प्रश्न यह उठता है कि पुनर्बलन कैसे दिया जाय? क्या प्रत्येक पद को इतना सरल बना देना कि सभी अधिगमकर्त्ता उस पर सफलता प्राप्त कर लें उचित है? यह सरलीकरण अभिक्रम को अधिकांश छात्रों के लिए उबाने वाला बना देता है।

(ग) अच्छे रेखीय अभिक्रम की कसौटी उसका त्रुटि मुक्त (error free) होना है अर्थात् छात्र उस पर कम से कम गलती करें। किन्तु इस कसौटी तथा अन्य शैक्षिक कसौटियों में क्या सम्बन्ध है, इसके विषय में हम अनभिज्ञ हैं।

(घ) इस शैली में अभिक्रम निर्मित करते समय सारी योग्यता और शक्ति पदों के प्रभावकारी तारतम्य की रचना में लगाया जाता है। किन्तु अधिगम पर हुए नवीन प्रयोगों से यह ज्ञात हुआ है कि बेतरतीब एवं मनचाहे रीति से विषय वस्तु प्रस्तुत करने पर भी अधिगम उतना ही प्रभावी होता है जितना तारतम्य में प्रस्तुत करने पर। यदि अभिक्रम का उद्देश्य केवल जानकारी प्रदान करना है, तब तारतम्य महत्वपूर्ण नहीं है।

(ङ) इसमें शिक्षक की भूमिका भी अस्पष्ट है।

(च) रेखीय अभिक्रम शैली का यह दावा है कि वह अधिगमकर्त्ताओं की वैयक्तिक विभिन्नताओं का ध्यान रखती है, थोथा है क्योंकि यहाँ सभी छात्रों को विषय-वस्तु एक विधि से सीखने के लिए बाध्य किया जाता है।

(छ) यह मान्यता कि शिक्षण मशीन छात्रों को सक्रिय रखती है तथा सक्रियता से अधिगम अधिक प्रभावकारी होता है भी सन्देहास्पद है। कई एक प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकला है कि अनुक्रिया करने तथा केवल पढ़ लेने मात्र से हुए अधिगम में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

(ज) छात्रो के उद्देश्यो एव अभिप्रेरणाओं पर इसमे कोई नियन्त्रण नहीं है। छात्र को अत्यन्त सीधा सादा विनम्र अधिगमकर्त्ता मान लिया गया है। छात्रा के उद्देश्यो के निर्धारण मे कोई सहयोग नही लिया जाता।

(झ) रेखीय अभिक्रम को शिक्षक मुक्त (teacher proof) एव अपने आप मे पूर्ण बनाया गया है। अत अधिगम के दौरान अधिगमकर्त्ता मे उठने वाले भावों, उद्देश्यो एव विचारों के लिए इसमे कोई स्थान नहीं।

(vi) प्रसी (Pressey 1964) ने रेखीय अभिक्रम शैली की आलोचना निम्न लिखित बिन्दुओ पर की है

(क) रेखीय अभिक्रमा मे पदो को क्रमानुसार प्रस्तुत किया जाता है तथा अधिगम भी क्रमानुसार होता है किन्तु वास्तविक जीवन मे अधिगम हमेशा क्रमानुसार नही होता।

(ख) इस शैली मे विषय वस्तु को इतने छोटे छोटे पदों में विभक्त कर दिया जाता है कि अधिगमकर्त्ता को कुछ ढूढने या चिन्तन करने की आवश्यकता नहीं होती। अत यह छात्रो की सर्जन शक्ति (creative ability) को अवरूद्ध करता है।

(ग) रेखीय अभिक्रम अनुक्रियाओ मे विभेदीकरण का अवसर प्रदान नहीं करता।

(vii) राथकॉफ (Rothkopf, 1965) का विचार है कि बहुत से अभिक्रमो मे अधिगमकर्त्ता का यह सकेत मिल जाता है कि उसे रिक्त स्थान मे क्या भरना है। उत्तरो को भाँप लेने मे अधिगमकर्त्ता मे अटकलबाजी की आदत लग जाती है।

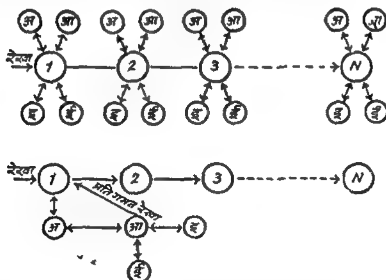
(viii) रेखीय अभिक्रम का प्रारूप छात्रों के पूर्वज्ञान अथवा प्रारम्भिक व्यवहार (entering behaviour) पर आधारित रहता है। किन्तु प्रत्येक अधिगमकर्त्ता के पूर्वज्ञान एव पृष्ठभूमि का ज्ञात करना अत्यन्त कठिन काय है।

(ix) जब रेखीय शैली मे अभिक्रमित पाठ्य पुस्तक का निर्माण किया जाता है तब यह मान लिया जाता है कि सभी छात्र ईमानदार है, वे पन्नो को नही उलटेंगे एव उत्तरो को नहीं देखेंगे। पर सभी छात्रो से ऐसी आशा नही की जा सकती है।

शाखात्मक या आन्तरिक अभिक्रम शैली (Branching or Intrinsic Programming)

शाखात्मक शैली के विकास का श्रेय एन० ए० क्राउडर को है। क्राउडर ने अपनी शैली को व्यावहारिक स्वरूप दिया है। इसमे परम्परागत ट्यूटोरियल शैली को अपनाया गया है। जिस प्रकार एक अनुभवी शिक्षक अपने छात्र को पढाते समय उसकी कठिनाइयों और त्रुटियों को समझकर उन्हें दूर करते हुए पाठ को क्रमश पढाता है उसी प्रकार शाखात्मक अभिक्रम मे छात्रो की कठिनाइयों एव त्रुटियो को ध्यान में रखते हुए विभिन्न पद दिये जाते हैं।

रेखीय अभिक्रम की तुलना मे इस शैली के पदो का आकार बडा होता है और इनमे विषय वस्तु का अधिक अश रहता है। पद या क्रम को पद लेने के पश्चात् 'बहु विकल्प प्रकार' (multiple choice type) के प्रश्न पूछे जाते हैं। तीन या चार उत्तरो मे से केवल एक ही उत्तर सही है। सही उत्तर चुनने पर छात्र अगले पद पर जा सकता है। यदि अनुक्रिया गलत हुई तब अधिगमकर्त्ता को उपचारात्मक अनुदेश दिये जाते हैं। इसके लिए उसे मूल परीक्षण पद या विशिष्ट रूप से तैयार किये गये उपचारात्मक पदो की शृखला की ओर जाने का निर्देश दिया जाता है। कभी कभी इस शैली मे परीक्षण पदो को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि प्रतिभाशाली छात्र एक आलोचनात्मक परीक्षण पद (critical frame) से तुरन्त ही दूसरे आलोचनात्मक पद पर बीच के सामान्य पदों को जोडते हुए आगे बढ़ जाय। रेखीय शैली के समान ही इस शैली मे भी छात्रो को बाह्य अनुक्रिया करनी पडती है। किन्तु इसमे पदो का आकार बडा होता है और केवल बहु विकल्प प्रकार के ही परीक्षण रहते हैं। छात्रो को अनुक्रिया की रचना नही करनी पडती क्योंकि इस शैली मे परीक्षण पदो का उद्देश्य शिक्षा देना नही अपितु यह जानना मात्र है कि छात्र ने पाठ्य-वस्तु को सही-सही समझा है या नही। अत यह कहा



चित्र 5 2—शाखात्मक अभिक्रम की मुख्य रेखा एव शाखाओ का चित्रण

जा सकता है कि यह शैली सचार प्रणाली या मॉडल पर आधारित है, रेखीय शैली की भाँति पुनबलन प्रणाली या मॉडल पर नही। इस शैली मे अर्थ अनुबोधको (thematic prompt) का ही प्रयोग होता है, रूप अनुबोधको (formal prompt) का नही। अत हम देखते हैं कि इस शैली मे छात्रो की कठिनाइयो को ध्यान मे

रखकर उन्हें शाखात्मक पदों के सहारे सिखाने की चेष्टा की जाती है। एक छात्र जो एक भी प्रश्न का गलत उत्तर नहीं चुनता, पद 1 से 2, 2 से 3 और इसी क्रम से वह अंतिम पद तक पहुँच जाता है। किन्तु गलत उत्तर का चुनाव करने पर वह शाखाओं से होते हुए पुनः मुख्य रेखा पर आएगा और अभिक्रम के अन्त तक पहुँचेगा। शाखात्मक शैली के अभिक्रम को यदि एक चित्र द्वारा प्रदर्शित करें तो उसका स्वरूप चित्र 5 2 के अनुरूप होगा।

शाखात्मक अभिक्रम के स्वरूप को हम संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त कर सकते हैं

(i) विषय वस्तु के अंश को एक पद में प्रस्तुत करना।

(ii) विषय वस्तु पर आधारित बहु विकल्प प्रश्न देना।

(iii) दिये हुये उत्तरों में से छात्र द्वारा एक उत्तर को चुनना।

(iv) चुने हुए उत्तर पर दिये गये निर्देश का अनुसरण करना।

(v) सही उत्तर चुनने पर मुख्य रेखा पर आगे दूसरे पद पर जाना।

अथवा

गलत उत्तर चुनने पर अतिरिक्त जानकारी प्राप्त करने के लिए उप शाखाओं की ओर जाना और अपनी गलती को समझना तथा सही जानकारी प्राप्त करना।

(vi) छात्र को पुनः मुख्य रेखा पर वापस लाना और प्रश्न पूछना। यदि छात्र पुनः गलती करता है तब उसे दूसरी उप शाखाओं के सहारे समझाने का प्रयास करना।

(vii) सही उत्तर आने पर मुख्य रेखा पर नया पद देना।

शाखात्मक शैली की विशेषताएँ (Characteristics of Branching Programme)

शाखात्मक शैली में निम्नलिखित विशेषताएं हैं

(i) इसमें पद लम्बे और अधिक विषय वस्तु प्रस्तुत करने वाले होते हैं। एक पद एक या अधिक अनुच्छेदों वाला या एक पृष्ठ का भी हो सकता है। इससे लाभ यह होता है कि अभिक्रम अच्छी भाषा शैली विषय वस्तु को प्रस्तुत कर सकता है और पद को रोचक एवं सुपाठ्य बना सकता है।

(ii) इस शैली में बहु विकल्प प्रश्न पूछे जाते हैं।

(iii) अधिगमकर्त्ता को इस सम्बन्ध में अधिक मार्गदर्शन नहीं दिया जाता कि पद में कौन सी बात अधिक महत्वपूर्ण है। सक्रिय अनुक्रिया को इसमें उतना महत्व नहीं दिया जाता है जितना कि रेखीय शैली में।

(iv) इस शैली की विशिष्टता इस बात में है कि छात्र स्वयं अपने अधिगम का रास्ता चुनता है।

(v) अधिगमकर्त्ता के लिए यह शैली अधिक रुचिकर तथा चुनौती पूर्ण है।

(vi) गलतियों का अधिगम मे सहायक समझकर इस शैली मे 20% त्रुटि दर की गुंजाइश क्राउडर ने रखी है।

(vii) इस शैली मे अभिक्रमित सामग्री को शिक्षण मशीनो और पुस्तको दोनो की ही सहायता से प्रस्तुत शाखात्मक अभिक्रम को **'प्रकीर्ण पुस्तक'** (Scrambled book) की संज्ञा दी जाती है। 'प्रकीर्ण पुस्तक' से हमारा तात्पर्य यह है कि इस पुस्तक को पढ़ते समय एक के बाद एक पृष्ठो को नही पढा जाता अपितु चुने गये उत्तरो के आधार पर किस पृष्ठ को पढ़ना है, इसका निर्देश मिलता है। अधिगमकर्त्ता को अगले पदो या पिछले पदों की ओर जाने का निर्देश दिया जा सकता है। इस प्रकार छात्रों को एक साथ कई पृष्ठो को पलटना पड सकता है। प्रकीर्ण पुस्तका द्वारा प्रस्तुत शाखात्मक अभिक्रम को सीखने मे मशीन द्वारा प्रस्तुत अभिक्रम की अपेक्षा अधिक समय लगता है जबकि रेखीय शैली मे इसके विपरीत मशीन अधिक समय लेती है और पुस्तक कम।

(viii) समस्या समाधान सम्प्रत्ययो की व्याख्या और लम्बी इकाई वाली सामग्रियो से सम्बन्धित अधिगम के लिए यह शैली अधिक उपयुक्त सिद्ध हुई है।

शाखात्मक अभिक्रम शैली की न्यूनताएँ (Limitations of Branching Programmes)

(i) इस शैली के अभिक्रमो मे बहु विकल्प की वजह से अधिगमकर्त्ता विषय-वस्तु को समझे बगैर सही उत्तर का अनुमान लगा सकता है।

(ii) इस शैली के अभिक्रम प्रत्येक अधिगमकर्त्ता की आवश्यकताओ की पूर्ति नही कर सकते, क्योकि एक व्यक्ति के लिए कितनी शाखाओ की आवश्यकता पडेगी यह ज्ञात करना अत्यन्त कठिन है।

(iii) इस शैली मे अभिक्रम का निर्माण अभिक्रमक अपने अनुभव, बुद्धि एवं कल्पना के आधार पर करता है वह स्वय ही निदानात्मक प्रश्नो की रचना और विषय वस्तु के स्तर का निर्धारण करता है अतः अभिक्रम सभी छात्रो के लिए उपयुक्त नही भी हो सकता है।

(iv) इस शैली मे पद लम्बे और अधिक विषय वस्तु वाले होते है। अतः पूरे विषय वस्तु की समझ की परख करने के लिये प्रश्न पूछना बहुत कठिन होता है। कई एक मुख्य बिन्दु बिना प्रश्न के ही छूट जाते हैं।

(v) इस शैली के अभिक्रम छोटे बच्चो के लिए उपयुक्त नही होते।

(vi) इसके द्वारा छात्रो के व्यवहारो का नियन्त्रण करना सम्भव नही हो पाता। एक अभिक्रम द्वारा व्यवहारो का जैसा वांछित रूपेण होना चाहिए वैसा यह शैली नही कर पाती।

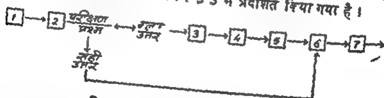
(vii) कुछ मनोवैज्ञानिको के अनुसार यह शैली उच्चस्तरीय अधिगम के लिए अनुपयुक्त है।

(viii) इस शैली में अभिक्रमों के निर्माण में अधिक खर्च लगता है। अतः बार बार वांछित संशोधन और परिवर्तन में कठिनाई होती है।

रूपान्तरित एवं मिश्रित शैलियाँ (Modified and Mixed Styles)

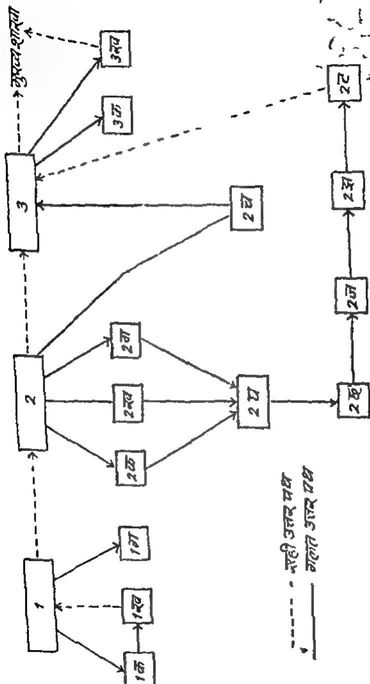
रेखीय एवं शाखात्मक अभिक्रमों की विशेषताओं एवं न्यूनताओं का ध्यान में रखते हुए शिक्षकों और मनोवैज्ञानिकों ने इन शैलियों में कुछ नवीन रूपान्तर किये हैं जिनमें से दो प्रमुख रूपान्तरों का वर्णन यहाँ प्रस्तुत है।

(i) उड्डीयन रेखीय अभिक्रम (Skip linear programme)—रेखीय अभिक्रम की नीरसता एवं उबान की न्यूनतम को दूर करने के लिए इस शैली की रचना हुई है। मूलतः इसमें और रेखीय शैली में कोई अन्तर नहीं है। एक मात्र अन्तर यह है कि अभिक्रम की रेखा पर किसी एक पद के पश्चात एक या एक से अधिक प्रश्न परीक्षण के लिए प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि अधिगमकर्त्ता सही उत्तर देता है तब उसे कुछ पद छोड़कर अभिक्रम पर आगे बढ़ने का निर्देश अथवा अनुमति दी जाती है। इसीलिए इसे उड्डीयन रेखीय अभिक्रम कहा गया है अर्थात अधिगमकर्त्ता को आगे उड़ान भरने की छूट रहती है। यदि अधिगमकर्त्ता का उत्तर सही नहीं रहता तब उसे सामान्य रेखा पर एक पद के बाद दूसरे पद से होते हुए ही आगे बढ़ना होता है। उड्डीन रेखीय अभिक्रम का प्रारूप चित्र 5 3 में प्रदर्शित किया गया है।



चित्र 5 3—उड्डीयन रेखीय अभिक्रम

(ii) रेखीय शाखात्मक अभिक्रम (Linear-cum branching programme)—गत कुछ वर्षों में विभिन्न शैलियों के उपयोग में लचीलापन आ गया है। शिक्षक उद्देश्यों, विषय वस्तु एवं छात्रों की रुचि एवं योग्यता को ध्यान में रखते हुए अभिक्रमक दोनों शैलियों का आवश्यकतानुसार मिश्रण करते हैं। रेखीय एवं शाखात्मक शैलियों का मिश्रण अभिक्रमित पाठ्य पुस्तकों के लिए अधिक उपयोगी एवं प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। इसका कारण यह है कि पुस्तकाकार अभिक्रम अधिक लचीला होता है। शिक्षण मशीन एक यन्त्र होने के कारण कम लचीली होती है। इसमें वांछित हेर फेर अथवा परिवर्तन करना आसान नहीं होता। रेखीय अभिक्रम प्रस्तुत करने वाली शिक्षण मशीन को शाखात्मक अभिक्रम के लिए उपयुक्त बनाना कठिन होता है। शाखात्मक अभिक्रम प्रस्तुत करने वाली शिक्षण मशीन इस दृष्टि से अधिक उपयुक्त है क्योंकि इसमें रेखीय अभिक्रम के छोटे पदों को समायोजित करने में उतनी कठिनाई नहीं होती। रेखीय शाखात्मक अभिक्रम की रूपरेखा को चित्र 5 4 में प्रदर्शित किया है।



चित्र 5 4—रेखीय शाखात्मक अभिक्रम का अंश

सोपान 3 छात्रों के पूवज्ञान एव कौशलों का व्यावहारिक शब्दों मे लेखन (Writing Pre requisite knowledge and skills in behavioural terms)

अन्त्य व्यवहार (terminal behaviour) तक पहुचने के लिए हमे छात्रो के प्रारम्भिक व्यवहार अथवा पूवज्ञान को समझना और परिभाषित करना अति आवश्यक है क्योंकि अभिक्रम का प्रारम्भ इसी आधार पर होता है। अभिक्रमक को छात्रों के पूवज्ञान के विषय मे जानने के लिए किसी वस्तुनिष्ठ प्रणाली का प्रयोग उचित है। छात्रो के पूवज्ञान एव कौशलो की सूची तैयार करने के लिए उसे छात्रो के समुचित न्यादश का चयन कर उसका अध्ययन करना होगा। इस प्रकार का अध्ययन करने के लिए अभिक्रमक पूर्व परीक्षण (pre test) का सहारा ले सकता है।

सोपान 4 मानदण्ड परीक्षा का निर्माण (Preparing a criterion test)

अन्त्य व्यवहार के मूल्याकन के लिए जिन परीक्षणो का प्रयोग किया जाता है, उन्हे मानदण्ड परीक्षण कहा जाता है। इन परीक्षणो मे उन सभी व्यवहारो एव कौशलो की जाँच की व्यवस्था की जाती है जिन्हे सिखाने के लिए अभिक्रम का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार के परीक्षणो को 'मानदण्ड सन्दर्भित परीक्षण' (criterion referenced tests) कहते है। इनका उद्देश्य इतना ही जानना है कि छात्र अधिगम के उद्देश्यो अथवा मानदण्डो तक पहुचे है कि नही अर्थात् उद्देश्यो के सदर्भ मे अधिगमकर्त्ता की क्या स्थिति है। मानदण्ड परीक्षण का उद्देश्य एक छात्र की दूसरे छात्र से तुलना कर छात्र की उपलब्धि का स्तर निर्धारित करना नही है। हर अन्त्य व्यवहार के परीक्षण के लिए कम से कम चार प्रश्न मानदण्ड परीक्षण मे रखना चाहिए।

सोपान 5 अभिक्रमित की जाने वाली विषय वस्तु की विशिष्ट रूपरेखा का निर्माण (Developing specific outline of content to be Programmed)

अभिक्रमित के आयोजन मे अतिम पद अभिक्रमित की जाने वाली विषय वस्तु की विशिष्ट रूपरेखा का निर्माण करना है। अधिगमकर्त्ता मे वाछित व्यावहारिक परिवतन लाने के लिए विषय वस्तु की विस्तृत सूची तैयार करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि विषय वस्तु छात्रो के मानसिक स्तर के अनुरूप होनी चाहिए। विषय वस्तु की विस्तृत सूची विकसित करने और उसे विश्लेपित करने के लिए अभिक्रमक विषय वस्तु विशेषज्ञ की सहायता ले सकता है। निरीक्षण तथा पाठ्यक्रम विश्लेपण भी पाठ्य वस्तु विश्लेपण की प्रक्रिया मे सहायक होता है। इन सोपानों के आधार पर अभिक्रम निर्माण की दूसरी अवस्था अर्थात अभिक्रम लेखन (programme writing) का प्रारम्भ होता है।

2 अभिक्रम लेखन (Programme writing)

प्रारम्भिक व्यवहार की सीमा रेखा से चलकर अन्त्य व्यवहार तक पहुचाने वाली पाठ्य सामग्री का अभिक्रमित अनुदेशन मे आने वाले अधिगम के सिद्धान्तो के

अभिक्रम विकास की गतिविधियाँ (Dynamics of Programme Development)

अभिक्रम का विकास अभिक्रमक के लिए एक चुनौती है। यह एक गतिशील प्रक्रिया है। विषय वस्तु के ज्ञान के अभाव म किसी विषय विशेष से सम्बन्धित अभिक्रम निर्माण असम्भव है किन्तु यही पर्याप्त नही। अभिक्रम निर्माण की दूसरी अनिवाय शर्तें है अभिक्रम निर्माण शैली और उसकी गतिविधि का ज्ञान होना। एक अभिक्रम के निर्माण एव विकास की तीन अवस्थाए हैं

प्रथम अवस्था —आयोजन (Preparation)
द्वितीय अवस्था —रचना या अभिक्रम लेखन (writing the programme)
तृतीय अवस्था —मूल्याकन (evaluation)

1 आयोजन (Preparation)

अभिक्रम निर्माण की गतिविधियो म आयोजन की अवस्था सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह अभिक्रम के लिए नीव का काय करती है। अभिक्रम के आयोजन पर निर्माण के लिए निर्धारित समय मे से 25% समय देना उचित होगा। आयोजन मे निम्नलिखित सोपानो से गुजरना पडता है

सोपान 1 अभिक्रम रचना के लिए विषय वस्तु का चयन (Selection of a unit to be programmed)

अभिक्रम रचना के लिए इकाई का चयन विषय वस्तु के स्वरूप उसकी जटिलता, अभिक्रम की शैली एव शैक्षिक उद्देश्यो और छात्रो के स्तर पर निभर करता है। अभिक्रमक को ऐसी विषय-वस्तु चुननी चाहिए जिसे वह अच्छी तरह जानता हो, जिसमे स्वत ही एक तार्किक तारतम्य हो जो सरल हो तथा अधिक लम्बा न हो।

सोपान 2 व्यावहारिक शब्दो मे शैक्षिक उद्देश्य लेखन (Writing objectives in behavioural terms)

अभिक्रम के आयोजन मे सबसे महत्वपूर्ण पद है उन शैक्षिक उद्देश्यो को निश्चित करना एव व्यावहारिक शब्दो म उन्हे परिभाषित करना जिन्हे प्राप्त करने के लिए अभिक्रम का निर्माण किया जा रहा है। इन उद्देश्यो के आधार पर ही अभिक्रम की रचना शैली एव प्रारूप का निर्धारण होता है। व्यावहारिक शब्दो मे उल्लिखित शैक्षिक उद्देश्य अधिगमकर्त्ता को लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अभिप्रेरित करते हैं और उन्हे लक्ष्य की प्राप्ति तक सक्रिय रखने मे सहायक होते हैं।

सुस्पष्ट एव समुचित रूप से व्यावहारिक शब्दो मे लिखे गये उद्देश्य शिक्षक को विषय वस्तु के चुनाव और उसके सगठन मे सहायक होते हैं तथा उनके काय मे अनिश्चितता एव अस्पष्टता को दूर करते है। शिक्षक इनके सहारे समुचित शिक्षण अधिगम नीति एव रीति का निर्धारण कर लेता है और छात्रो के मूल्यांकन म सहायक होते हैं।

सोपान 3 छात्रों के पूर्वज्ञान एवं कौशलों का व्यावहारिक शब्दों में लेखन (Writing Pre requisite knowledge and skills in behavioural terms)

अन्त्य व्यवहार (terminal behaviour) तक पहुँचने के लिए हमें छात्रों के प्रारम्भिक व्यवहार अथवा पूर्वज्ञान को समझना और परिभाषित करना अति आवश्यक है क्योंकि अभिक्रम का प्रारम्भ इसी आधार पर होता है। अभिक्रमक को छात्रों के पूर्वज्ञान के विषय मे जानने के लिए किसी वस्तुनिष्ठ प्रणाली का प्रयोग उचित है। छात्रो के पूर्वज्ञान एव कौशलो की सूची तैयार करने के लिए उसे छात्रो के समुचित न्यादर्श का चयन कर उसका अध्ययन करना होगा। इस प्रकार का अध्ययन करने के लिए अभिक्रमक पूर्व परीक्षण (pre test) का सहारा ले सकता है।

सोपान 4 मानदण्ड परीक्षा का निर्माण (Preparing a criterion test)

अन्त्य व्यवहार के मूल्यांकन के लिए जिन परीक्षणो का प्रयोग किया जाता है, उन्हे मानदण्ड परीक्षण कहा जाता है। इन परीक्षणो मे उन सभी व्यवहारो एव कौशलो की जाँच की व्यवस्था की जाती है जिन्हे सिखाने के लिए अभिक्रम का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार के परीक्षणो को 'मानदण्ड सन्दर्भित परीक्षण' (criterion referenced tests) कहते है। इनका उद्देश्य इतना ही जानना है कि छात्र अधिगम के उद्देश्यो अथवा मानदण्डो तक पहुचे है कि नही अर्थात् उद्देश्यो के सन्दर्भ म अधिगमकर्त्ता की क्या स्थिति है। मानदण्ड परीक्षण का उद्देश्य एक छात्र की दूसरे छात्र से तुलना कर छात्र की उपलब्धि का स्तर निर्धारित करना नही है। हर अन्त्य व्यवहार के परीक्षण के लिए कम से कम चार प्रश्न मानदण्ड परीक्षण मे रखना चाहिए।

सोपान 5 अभिक्रमित की जाने वाली विषय वस्तु की विशिष्ट रूपरेखा का निर्माण (Developing specific outline of content to be Programmed)

अभिक्रमित के आयोजन म अन्तिम पद अभिक्रमित की जाने वाली विषय वस्तु की विशिष्ट रूपरेखा का निर्माण करना है। अधिगमकर्त्ता मे वांछित व्यावहारिक परिवर्तन लाने के लिए विषय वस्तु की विस्तृत सूची तैयार करना बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि विषय वस्तु छात्रो के मानसिक स्तर के अनुरूप होनी चाहिए। विषय-वस्तु की विस्तृत सूची विकसित करने और उसे विश्लेषित करने के लिए अभिक्रमक विषय वस्तु विशेषज्ञ की सहायता ले सकता है। निरीक्षण तथा पाठ्यक्रम विश्लेषण भी पाठ्य वस्तु विश्लेषण की प्रक्रिया मे सहायक होता है। इन सोपानो के आधार पर अभिक्रम निर्माण की दूसरी अवस्था अर्थात् अभिक्रम लेखन (programme writing) का प्रारम्भ होता है।

2 अभिक्रम लेखन (Programme writing)

प्रारम्भिक व्यवहार की सीमा रेखा से चलकर अन्त्य व्यवहार तक पहुचाने वाली पाठ्य सामग्री को अभिक्रमित अनुदेशन मे आने वाले अधिगम के सिद्धान्तो के

अभिक्रम विकास की गतिविधियाँ (Dynamics of Programme Development)

अभिक्रम का विकास अभिक्रमक के लिए एक चुनौती है। यह एक गतिशील प्रक्रिया है। विषय-वस्तु के ज्ञान के अभाव म किसी विषय विशेष से सम्बन्धित अभिक्रम निर्माण असम्भव है किन्तु यही पर्याप्त नही। अभिक्रम निर्माण की दूसरी अनिवार्य शर्तें है अभिक्रम निर्माण शैली और उसकी गतिविधि का ज्ञान होना। एक अभिक्रम के निर्माण एव विकास की तीन अवस्थाए हैं

प्रथम अवस्था —आयोजन (Preparation)
द्वितीय अवस्था —रचना या अभिक्रम लेखन (writing the programme)
तृतीय अवस्था —मूल्यांकन (evaluation)

1 आयोजन (Preparation)

अभिक्रम निर्माण की गतिविधियो म आयोजन की अवस्था सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह अभिक्रम के लिए नींव का कार्य करती है। अभिक्रम के आयोजन पर निर्माण के लिए निर्धारित समय मे से 25% समय देना उचित होगा। आयोजन म निम्नलिखित सोपानो से गुजरना पडता है

सोपान 1 अभिक्रम रचना के लिए विषय वस्तु का चयन (Selection of a un to be programmed)

अभिक्रम रचना के लिए इकाई का चयन विषय वस्तु के स्वरूप, उसकी लता अभिक्रम की शैली एव शैक्षिक उद्देश्यो और छात्रों के स्तर पर निर्भर है। अभिक्रमक को ऐसी विषय-वस्तु चुननी चाहिए जिसे वह अच्छी तरह जा जिसम स्वत ही एक तार्किक तारतम्य हो जो सरल हो तथा अधिक लम्बा

सोपान 2 व्यावहारिक शब्दों मे शैक्षिक उद्देश्य लेखन (Writing obje behavioural terms)

अभिक्रम के आयोजन मे सबसे महत्वपूर्ण पद है उन शैक्षि निश्चित करना एव व्यावहारिक शब्दो म उ हे परिभाषित करना जि के लिए अभिक्रम का निर्माण किया जा रहा है। इन उद्देश्यो से अभिक्रम की रचना शैली एव प्रारूप का निर्धारण होता है। व्याव उल्लिखित शैक्षिक उद्देश्य अधिगमकर्त्ता को लक्ष्य तक पहुँचने के करते हैं और उ हे लक्ष्य की प्राप्ति तक सक्रिय रखन मे सहायक

सुस्पष्ट एव समुचित रूप से व्यावहारिक शब्दो म लि को विषय वस्तु के चुनाव और उसक सगठन म सहायक हो मे अनिश्चितता एव अस्पष्टता को दूर करते है। शिक्षक शिक्षण अधिगम नीति एव रीति का निर्धारण कर लेता है अ म सहायक होते हैं।

पदों की सहायता से सीखे हुए ज्ञान को बार-बार प्रयुक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है। इन पदो मे अर्ध अनुबोधकों (half prompts) का प्रयोग अधिक किया जाता है किन्तु धीरे धीरे अनुबोधको का प्रयोग कम करते जाते हैं। अभिक्रम मे इस प्रकार के पदो की संख्या 20% से 25% तक होती है।

(घ) परीक्षण पद (Testing frames)—इन पदो का उपयोग छात्रो के परीक्षण के लिए किया जाता है। इनमे अनुबोधको का प्रयोग बिल्कुल ही नही किया जाता। इनका उद्देश्य सीखे ज्ञान की जाँच करना है। अभिक्रम मे ऐसे पद 10% से 15% तक होते हैं।

(ii) छात्रों के उत्तरों को निर्देशित करने के लिए उपक्रामकों तथा अनुबोधकों का प्रयोग (Using primes and prompts to guide student's responses)—अभिक्रमण के न्यूनतम त्रुटिदर के अधिनियम का पालन करने के लिए अभिक्रमक पदो की रचना इस प्रकार करता है कि अधिक से अधिक छात्र सही अनुक्रिया ही करें। छात्र वांछित सही अनुक्रिया ही करें इसके लिए जिन युक्तियो का प्रयोग होता है वे हैं उपक्रामक तथा अनुबोधक। 'उपक्रमण' (priming) का प्रयोग अभिक्रमित अधिगम के क्षेत्र मे साहित्य से लिया गया है। उपक्रमण की प्रक्रिया को समझने के लिए पानी के सूखे हुए पम्प का उदाहरण बहुत पुराना है। पम्प मे जब पानी नही रहता तब उसे चालू करने के लिए उसमे ऊपर से पानी डालते है तत्पश्चात पम्प चलाने से उसमे पानी आने लगता है। ठीक उसी प्रकार जब अभिक्रमक यह समझता है कि छात्र सही अनुक्रिया नही कर पायेंगे तब वह पदो मे कुछ सहायक तथ्यो, शब्दो या उपक्रामको का प्रयोग करता है। स्किनर के अनुसार 'उपक्रामक' वह युक्ति है जिसके प्रयोग से प्रारम्भिक व्यवहार से अन्त्य व्यवहार तक पहुँचने के लिए अनुक्रिया करने मे सहायता मिलती है। उपक्रामको का प्रयोग प्रस्तावना पदो म अधिक मात्रा मे किया जाता है।

'अनुबोधक' किसी पद मे प्रयुक्त होने वाला सहायक उद्दीपन है। यह सही अनुक्रिया करने की सम्भावना बढाने वाली युक्ति है। त्रुटिदर को कम करने के अतिरिक्त, अनुबोधक उद्दीपन नियन्त्रण और व्यवहार परिवर्तन मे सहायक होते हैं। अनुबोधक छात्रो को गलत अनुक्रिया की खोज करने मे सहायक बन छात्रो के ज्ञान की वृद्धि म सहायक होते हैं। स्किनर के अनुसार अनुबोधक दो प्रकार के होते हैं—रूप अनुबोधक (formal prompt) तथा अर्थ अनुबोधक (thematic prompt)। रूप अनुबोधकों का सम्बन्ध अनुक्रिया के आधार एवं स्वरूप से ह। इनके द्वारा इस बात का सकेत मिलता है कि अनुक्रिया का आकार या स्वरूप कैसा होगा। अर्थ अनुबोधकों का सम्बन्ध विषय वस्तु के वर्णन, उपयुक्तता और संकेतो से सम्बन्धित है। इस वर्ग के अनुबोधक छात्रों का ध्यान पाठ्यवस्तु और विषय वस्तु की ओर निर्देशित करते हैं। वांछित अनुक्रिया के अर्थ के सम्बन्ध म ये सूचना प्रदान करते हैं अर्थात् इसमें केवल अर्थ बोध द्वारा छात्रों को सही अनुक्रिया करने के लिए सहायता प्रदान

आधार पर बोधगम्य पदों (frames) में विभाजित कर उन्हें शृंखलित करने का कार्य अभिक्रमक इस अवस्था में करता है। अभिक्रमित अनुदेशन का लक्ष्य ऐसे पदों का निर्माण करना होता है जिनको छात्र सुगमता से सीखकर सही अनुक्रिया कर सकें और बिना गलती किये हुए अगले पद पर बढ़ सकें। निम्नलिखित बातों के आधार पर लेखन का कार्य किया जाता है

(1) पदों के रूप में विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण (Presentation of the material in frames)—वस्तुतः अभिक्रम लेखन का अर्थ पद लेखन ही है। एक पद पाठ्य वस्तु का वह अंश है जिसे अधिगमकर्त्ता के सम्मुख एक समय में प्रस्तुत किया जाता है। इसे पढ़ने के पश्चात छात्र को अनुक्रिया करनी पड़ती है। अनुक्रिया करने में उसे नया ज्ञान प्राप्त होता है और यह ज्ञान उसने सही या गलत रूप में सीखा है। इसकी पुष्टि भी की जाती है। इस प्रकार 'पद' अभिक्रम की मूलभूत एवं सबसे छोटी इकाई होती है जिसके तीन अंग होते हैं

(क) उद्दीपन (Stimulus)—पद का वह अंग जो सूचना या पाठ्य वस्तु को प्रस्तुत करता है तथा छात्र को ऐसी परिस्थिति में डालता है जिसके कारण उसे अनुक्रिया करने की प्रेरणा मिलती है।

(ख) अनुक्रिया (Response)—पद को पढ़ने के पश्चात प्रत्येक उद्दीपन के लिए छात्र को कोई न कोई अनुक्रिया करनी पड़ती है।

(ग) पुनर्बलन अथवा प्रतिपुष्टि (Reinforcement or feedback)—छात्र अपनी अनुक्रिया को अभिक्रमक द्वारा दी गयी सही अनुक्रिया से मिलाता है और इस प्रकार उसे प्रतिपुष्टि एवं पुनर्बलन प्राप्त होता है।

सामान्यतः अभिक्रम में चार प्रकार के पदों की रचना की जाती है।

(क) प्रस्तावना पद (Introductory frame)—इन पदों का उपयोग अभिक्रम के प्रारम्भ में नये ज्ञान अथवा सम्प्रत्यय को प्रस्तावित करने के लिए किया जाता है। इनकी रचना करना कठिन कार्य है क्योंकि इन पदों को छात्रों के पूर्वज्ञान से जोड़ना पड़ता है और साथ ही साथ इनकी सहायता से नवीन ज्ञान को प्रस्तावित करना पड़ता है। यही कारण है कि इस प्रकार के पदों में उपक्रामकों (prime) एवं अनुबोधकों (prompts) का प्रयोग बाहुल्य रहता है। किसी अभिक्रम में इस प्रकार के पद 10% या 15% से अधिक नहीं होने चाहिए।

(ख) शिक्षण पद (Teaching frame)—इन पदों के द्वारा अभिक्रमक छात्रों के सम्मुख नयी सूचनाओं अथवा नये ज्ञान को प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के पदों में पूर्ण अनुबोधकों (full prompts) का प्रयोग किया जाता है। अभिक्रम में इस प्रकार के पदों की संख्या 60% से 70% तक होती है।

(ग) अभ्यास पद (Practice frame)—सम्प्रत्यय के प्रस्तुतीकरण के पश्चात ज्ञान को स्थायी बनाने के लिए अभ्यास पदों की नितान्त आवश्यकता होती है। अभ्यास

पदो की सहायता से सीखे हुए ज्ञान को बार-बार प्रयुक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है। इन पदो मे अध अनुबोधकों (half prompts) का प्रयोग अधिक किया जाता है किन्तु धीरे धीरे अनुबोधको का प्रयोग कम करते जाते हैं। अभिक्रम मे इस प्रकार के पदो की सख्या 20% से 25% तक होती है।

(घ) परीक्षण पद (Testing frames)—इन पदो का उपयोग छात्रों के परीक्षण के लिए किया जाता है। इनमे अनुबोधको का प्रयोग बिल्कुल ही नही किया जाता। इनका उद्देश्य सीखे ज्ञान की जाँच करना है। अभिक्रम मे ऐसे पद 10% से 15% तक होते हैं।

(ii) छात्रों के उत्तरों को निर्देशित करने के लिए उपक्रामकों तथा अनुबोधकों का प्रयोग (Using primes and prompts to guide student's responses)—अभिक्रमण के न्यूनतम त्रुटिदर के अधिनियम का पालन करने के लिए अभिक्रमक पदो की रचना इस प्रकार करता है कि अधिक से अधिक छात्र सही अनुक्रिया ही करें। छात्र वांछित सही अनुक्रिया ही करें इसके लिए जिन युक्तियो का प्रयोग होता है वे हैं उपक्रामक तथा अनुबोधक। 'उपक्रमण' (priming) का प्रयोग अभिक्रमित अधिगम के क्षेत्र में साहित्य से लिया गया है। उपक्रमण की प्रक्रिया को समझने के लिए पानी के सूखे हुए पम्प का उदाहरण बहुत पुराना है। पम्प मे जब पानी नही रहता तब उसे चालू करने के लिए उसमे ऊपर से पानी डालते हैं तत्पश्चात् पम्प चलाने से उसमे पानी आने लगता है। ठीक उसी प्रकार जब अभिक्रमक यह समझता है कि छात्र सही अनुक्रिया नहीं कर पायेंगे तब वह पदो मे कुछ सहायक तथ्यों, शब्दो या उपक्रामकों का प्रयोग करता है। स्किनर के अनुसार 'उपक्रामक' वह युक्ति है जिसके प्रयोग से प्रारम्भिक व्यवहार से अन्तय व्यवहार तक पहुँचने के लिए अनुक्रिया करने मे सहायता मिलती है। उपक्रामको का प्रयोग प्रस्तावना पदो मे अधिक मात्रा मे किया जाता है।

अनुबोधक किसी पद मे प्रयुक्त होने वाला सहायक उद्दीपन है। यह सही अनुक्रिया करने की सभावना बढ़ाने वाली युक्ति है। त्रुटिदर को कम करने के अतिरिक्त, अनुबोधक उद्दीपन नियन्त्रण और व्यवहार परिवर्तन में सहायक होते हैं। अनुबोधक छात्रो को गलत अनुक्रिया को रोकने मे सहायक बन छात्रो के ज्ञान की वृद्धि मे सहायक होते हैं। स्किनर के अनुसार अनुबोधक दो प्रकार के होते हैं—रूप अनुबोधक (formal prompt) तथा अर्थ अनुबोधक (thematic prompt)। रूप अनुबोधको का सम्बन्ध अनुक्रिया के आधार एव स्वरूप से है। इनके द्वारा इस बात का सकेत मिलता है कि अनुक्रिया का आकार या स्वरूप कैसा होगा। अर्थ अनुबोधकों का सम्बन्ध विषय वस्तु के वर्णन, उपयुक्तता और सकेतो से सम्बन्धित है। इस वर्ग के अनुबोधक छात्रो का ध्यान पाठयवस्तु और विषय वस्तु की ओर निर्देशित करते हैं। वांछित अनुक्रिया के अर्थ के सम्बन्ध मे ये सूचना प्रदान करते हैं अर्थात् इसमे केवल अर्थ बोध द्वारा छात्रों को सही अनुक्रिया करने के लिए सहायता प्रदान

की जाती है। अभिक्रम के अंतिम भाग में धीरे-धीरे अनुबोधकों को हटा लिया जाता है। इस क्रिया को विलीनीकरण (vanishing) या विलुप्तीकरण (fading) कहा जाता है।

(iii) पदों की उपयुक्त तारतम्य व्यवस्था करना (Providing for careful sequencing of frames)—पद लेखन के पश्चात् अभिक्रमक उन्हें सुनिश्चित तारतम्य में व्यवस्थित करने का प्रयास करता है। तार्किक एवं विकासात्मक इन दो क्रमों में पदों का शृंखलन किया जाता है। तार्किक क्रम में अभिक्रमक आगमन (inductive) अथवा निगमन (deductive) तर्क क्रम में पदों को शृंखलित करता है। विकासात्मक क्रम में छात्र पाठ्यवस्तु को सुगमता तथा सरलता से सीख सकें इसलिए उनके विकास क्रम को ध्यान में रख पदों को व्यवस्थित किया जाता है। इसी लिए इसे मनोवैज्ञानिक क्रम भी कहते हैं। अभिक्रम अधिक प्रभावशाली हो इसके लिए पदों का क्रम तर्क एवं मनोविज्ञान दोनों ही कसौटियों पर खरा उतरना चाहिए।

3 अभिक्रम का परीक्षण एवं मूल्यांकन (Testing and Evaluation of the Programme)

यह अभिक्रम विकास की अंतिम अवस्था है। इसका परीक्षण एवं मूल्यांकन अभिक्रम के प्रथम आलेख लेखन तथा उसके पुनर्निरीक्षण एवं सम्पादन (reviewing and editing) के पश्चात उसकी प्रामाणिकता निर्धारित की जाती है। अभिक्रम के प्रत्येक पद को दुहराना, मानदण्डों के आधार पर इसकी उपयुक्तता की जाँच करना, अनुक्रिया को सुधारना और उसकी प्रभावकारिता की जाँच करना इस अवस्था के प्रमुख उद्देश्य हैं। इन कार्यों को निम्नलिखित तीन प्रकार के परीक्षणों द्वारा किया जाता है

(i) व्यक्तिगत परीक्षण (Individual try out)—इसके द्वारा अभिक्रमक छात्रों की अभिक्रम सम्बन्धी कठिनाइयों एवं प्रतिक्रियाओं का अध्ययन कर अभिक्रम का परिमार्जन करता है। इसमें व्यक्तिशः चार पाँच छात्रों के सम्मुख अभिक्रम के हर पद को प्रस्तुत किया जाता है। इसके आधार पर पद आकार, भाषा सम्बन्धी उपचारक तथा अनुबोधक एवं अनुक्रिया सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर किया जाता है।

(ii) लघु समूह परीक्षण (Small group try out—परिमार्जित अभिक्रम को 15 से 40 छात्रों के समूह में दिया जाता है। आँकड़ों के विश्लेषण तथा छात्रों की अनुक्रियाओं के आधार पर अभिक्रम का पुनः परिमार्जन किया जाता है।

(iii) क्षेत्र परीक्षण एवं प्रामाणिकता निर्धारण (Field testing and validation)—अभिक्रम को अंतिम रूप देने के लिए एक प्रतिनिधि न्यादर्श (sample) पर उसे प्रयुक्त किया जाता है। क्षेत्र परीक्षण के लिए कक्षा की सामान्य परिस्थितियों में ही अभिक्रम छात्रों को दिया जाता है। प्राप्त आँकड़ों के आधार पर अभिक्रम का त्रुटिदर (error rate), अभिक्रम घनत्व (programme density), तथा तारतम्य प्रवाह (sequence progression) का निर्धारण किया जाता है।

अभिक्रम मे छात्रो द्वारा की गई अनुक्रियाओ के आधार पर त्रुटि दर का निर्धारण निम्नलिखित सूत्र के अनुसार किया जाता है—

$$\text{अभिक्रम त्रुटि दर} = \frac{\text{त्रुटियो का सम्पूर्ण योग} \times 100}{\text{पदो की सख्या} \times \text{छात्रो की सख्या}}$$

त्रुटि दर के विषय मे स्किनर का मत है कि रेखीय अभिक्रम का त्रुटि दर 5%–10% से अधिक नही होना चाहिए । क्राउडर ने शाखात्मक शैली के अभिक्रमो के लिय 20% त्रुटि दर की छूट दी है। रेखीय शैली के अभिक्रमो का त्रुटि दर अधिक होने पर तथा शाखात्मक शैली के अभिक्रमो का त्रुटि दर बहुत कम होने पर अभिक्रम मे अत्यधिक सुधार की आवश्यकता होती है।

अभिक्रम का मूल्याकन करने का दूसरा उपाय है अभिक्रम के घनत्व का निर्धारण। अभिक्रम घनत्व, अभिक्रम की कठिनाई के स्तर को ज्ञात करने का एक स्वतन्त्र साधन है। अभिक्रम घनत्व के निर्धारण के लिए टाइप टोकेन अनुपात' (type token ratio TTR) का प्रयोग किया जाता है। इसकी गणना के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है—

$$TTR = \frac{\text{विभिन्न प्रकार की अनुक्रियाओ की सख्या}}{\text{कुल अनुक्रियाओ की सख्या}}$$

तारतम्य प्रवाह अभिक्रम की प्रामाणिकता का एक और महत्वपूण सकेत है। इसके द्वारा अभिक्रम के पदो तथा उसके खण्डो के तार्किक तारतम्य का मूल्याकन किया जाता ह। तारतम्य प्रवाह विश्लेषण एक तालिका की सहायता से किया जाता है जिस स्केलोग्राम (scalogram) कहते हैं। मानदण्ड परीक्षण के प्रश्नो के प्राप्ताको के आधार पर स्केलोग्राम की रचना की जाती है। इसके लिए मापदण्ड परीक्षण के प्राप्ताको के आधार पर उत्तरपत्रो को अधिकतम से न्यूनतम प्राप्ताको के क्रम मे सजा लिया जाता है। इन उत्तर पत्रो मे से अवरोही क्रम मे सात उत्तर पत्रो का चयन किया जाता है। इन आकडो की सहायता से 'प्रवाह क्रम विश्लेपण तालिका' तयार की जाती है जिसमे चुने गये उत्तर पत्रो की सहायता से अभिक्रम के प्रत्यक भाग के प्रश्नो पर सही व गलत दिये गये उत्तर का चिन्ह लगा दिया जाता है। इस प्रकार की तालिका से यह स्पष्ट होता है कि जब छात्र प्रथम भाग को ठीक समझ लेते हैं और उस पर दिये गये प्रश्नो का सही उत्तर देते हैं तो उसके आग के भाग से सम्बन्धित प्रश्नो का उत्तर भी ठीक देते हैं। गलतियाँ अन्तिम भाग म ही होती हैं। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि पाठ्यवस्तु मे तार्किक एव मनोवैज्ञानिक तारतम्य प्रवाह है और उसे 'सरल से कठिन' क्रम म श्रखलित किया गया है। यदि तालिका से यह ज्ञात होता है कि पाठ्यवस्तु मे क्रम व्यवस्था ठीक नही है तो अभिक्रम मे सुधार के लिए प्रयास करना पडेगा।

अधिगम अथवा सीखने मे साधारणत दो व्यक्ति कार्यरत होते हैं—

(i) सिखाने वाला (प्रशिक्षक) और (ii) सीखने वाला (छात्र)। किन्तु आज शिक्षा तकनीकी ने शिक्षा प्रणाली में ऐसी विधियों को जन्म दिया है जिनमें शिक्षक को सिखाने या पढ़ाने के समय छात्र के सम्मुख भौतिक दृष्टि से उपस्थित रहने की आवश्यकता नहीं है। शिक्षण मशीन और अभिक्रमित अनुदेशन इसी प्रकार के नवाचार हैं जिनमें शिक्षक की उपस्थिति के बगैर छात्र स्वयं सीखने में सक्षम है। अभिक्रमित अनुदेशन की चर्चा के पश्चात शिक्षण मशीन की जानकारी भी आवश्यक है क्योंकि छात्र के सम्मुख अभिक्रम का उपस्थापन शिक्षण मशीन की सहायता से भी किया जाता है। शिक्षण मशीन के निर्माण में ओहाइयो विश्वविद्यालय के सीडनी एल० प्रेसी का प्रमुख योगदान रहा है।

शिक्षण-मशीन
(Teaching Machine)

शिक्षण मशीन छात्र द्वारा संचालित किया जा सकने वाला एक यान्त्रिक उपकरण है। यह छात्र के साथ परस्पर क्रिया करने में सक्षम है। शिक्षण मशीन की मुख्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं—

(i) सर्वप्रथम छात्र के सम्मुख कोई प्रश्न या समस्या मशीन प्रस्तुत करती है।

(ii) छात्र से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इन प्रश्नों या समस्याओं के प्रति अनुक्रिया करे। छात्र को कुछ न कुछ करना पड़ता है—या तो उसे लिखित उत्तर देना होगा अथवा उत्तर दर्शाने वाला बटन दबाना होगा।

(iii) मशीन तत्काल यह सूचना देती है कि छात्र द्वारा दिया हुआ उत्तर सही था अथवा गलत। यह कार्य मशीन सही उत्तर के प्रदर्शन द्वारा करती है अथवा नये पाठ्यवस्तु या फ्रेम की ओर आगे बढ़कर यह बताती है कि दिया हुआ उत्तर सही था। गलत उत्तर देने पर मशीन अगले फ्रेम पर नहीं जाती अपितु छात्र को पुनः सीखने का निर्देश देती है।

(iv) मशीन में छात्र द्वारा दी गई अनुक्रियाओं का विवरण अथवा हिसाब रखा जाता है। यह छात्रों का परीक्षण लेने के लिए नहीं बल्कि उन्हें और अच्छी तरह शिक्षण दिया जा सके इसलिए किया जाता है।

शिक्षण मशीन विषय वस्तु को बहुत छोटे किन्तु एक दूसरे से शृंखलित अंशों में क्रमशः छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करती है। जब छात्र सही अनुक्रिया करता है और सही बटन दबाता है तब मशीन सही उत्तर को प्रदर्शित कर यह जता देती है कि छात्र ने सही लिखा था अथवा गलत। छात्र दिये हुए उत्तरों में कोई भी फेर बदल नहीं कर सकते हैं।

अधिकांश शिक्षण मशीन रेखीय अभिक्रम प्रस्तुत करती हैं वैसे कुछ शाखीय अभिक्रम वाली शिक्षण मशीन भी उपलब्ध हैं। शिक्षण मशीन एक समय पर

एक ही छात्र को सिखाने मे प्रयुक्त होती है अर्थात् इसका प्रयोग व्यक्तिश ही होना है।

शिक्षण मशीन के प्रकार (Types of Teaching Machine)

शिक्षण मशीन स्वअनुदेशात्मक उपकरण है जिसम आधुनिक यांत्रिक एव इलेक्ट्रानिक्स का प्रयोग होता है। शिक्षण-मशीनो के दो प्रमुख प्रकार है—

(1) निर्मित अनुक्रिया मशीन (Constructed response)

(2) बहुविकल्प मशीन (Multiple choice)

पहले प्रकार की मशीन स्किनर के अधिगम सिद्धान्तो पर आधारित है। बहु विकल्प मशीन मे छात्र द्वारा गलत अनुक्रिया करने के पश्चात् विभिन्न शाखाओं की तरफ उनको मोड देने की सुविधा रहती है।

1 निर्मित अनुक्रिया मशीनें

निर्मित अनुक्रिया मशीनें भी कई प्रकार की होती हैं जिनम निम्नलिखित प्रमुख हैं—

(i) ग्लाइडर मशीन (Glider machine)—यह मशीन सवप्रथम स्किनर के द्वारा निर्मित की गयी, इसमे एक छोटी खिडकी होती है। उसी खिडकी मे छात्रो को फ्रेम दिखाई पडते हैं। छात्र अनुक्रिया करने के लिए बगल मे लगे ग्लाइडर को घुमाकर अपने उत्तर देता है।

(ii) डिस्क टाइप मशीन (Disc type machine)—इस मशीन मे एक बहुत बडे कागज पर प्रश्न और अभिक्रमित सामग्री छपी रहती है। डिस्क या तश्तरी को घुमाया जा सकता है। घुमाने पर एक एक करके उस पर छपे हुये प्रश्न दिखाई पडते हैं। छात्र प्रत्येक प्रश्न का उत्तर टेप पेपर पर लिखता है जो मशीन से ही निकलता है। छात्र का उत्तर लिख जाने के बाद एक लीवर दबाने पर मशीन सही उत्तर को दिखाती है। इस प्रकार छात्र को यह पता चलता है कि उसका उत्तर सही है या नहीं।

(iii) टाइपराइटर इनपुट कम्प्यूटिंग मशीन (Typewriter input Computing Machine)—इस मशीन मे अभिक्रम कम्प्यूटर म सग्रहित रहता है। कम्प्यूटर छात्रो के सम्मुख पूव निर्धारित क्रम मे अभिक्रम को प्रस्तुत करता है। छात्र अपने उत्तर कम्प्यूटर से सम्बंधित टाइपराइटर के प्रयोग द्वारा देता है। कम्प्यूटर छात्रो के उत्तरों की जाँच करता है और उन्हें सूचित करता है कि उत्तर सही था या गलत। सही होन पर कम्प्यूटर छात्र को आगे बढने की अनुमति प्रदान करता है।

(iv) श्रव्य दृश्य मिश्रित मशीन (Audio Visual Combination Machine)—स्किनर ने यह सुझाव दिया है कि मशीन को श्रव्य और दृश्य दोना ही प्रकार से प्रस्तुतीकरण करने चाहिए। टेपरिकाडर का प्रयोग प्रोग्राम के फ्रेमो को

प्रस्तुत करने के लिये किया जा सकता है। एक टेलीविजन सेट इस प्रकार के शिक्षण मशीन का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है।

2 बहु विकल्प मशीन

(i) प्रेसी की मशीन (Pressy's Machine)—प्रेसी की मशीन में चक्कर लगाने वाला एक ड्रम था जिस पर अभिक्रम छपा होता था। जैसे जैसे ड्रम घूमता था वैसे वैसे मशीन में लगी खिड़की से अभिक्रम दिखाई पड़ता था। छात्र अपना उत्तर देने के लिये चार बटनों में से किसी एक को दबाकर अनुक्रिया करता था। अगर छात्र सही उत्तर वाला बटन दबाता था तब मशीन पुन आगे घूमती थी और अगला फ्रेम खिड़की से दिखाई देने लगता था। गलत बटन दबाने पर ड्रम आगे नहीं बढ़ता।

(ii) श्रव्य दृश्य मशीन (Audio Visual Machine)—शक्षिक टी वी को शिक्षण कार्यक्रम के साथ जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार के उपकरण में बहुविकल्प रेकार्डिंग उपकरण किसी भी टेलीविजन सेट के साथ संलग्न किया जा सकता है। अभिक्रम के पद टी वी स्क्रीन पर दिखाई देते हैं। छात्र अपनी अनुक्रिया रेकार्डिंग उपकरण के किसी एक बटन को दबाकर पंच करता है। छात्र की अनुक्रिया एक कार्ड पर अभिलिखित हो जाती है। शिक्षक इन कार्डों के माध्यम से यह जान जाते हैं कि छात्र की अनुक्रिया सही थी या गलत।

(iii) इलैक्ट्रानिक कम्प्यूटर्स और बहुविकल्प अभिक्रम (Electronic Computers and Multiple Choice Programme)—मशीन छात्रों के सम्मुख फ्रेम को प्रस्तुत करती है। छात्र फ्रेम का अध्ययन करते हैं और फ्रेम पर दिये प्रश्नों का उत्तर देते हैं। इन उत्तरों को मशीन जाँचती है और उत्तरों के आधार पर छात्र को आदेश देती है कि वह अब अभिक्रम के किस पृष्ठ पर जाए। अभिक्रम के विभिन्न पेज पहले से ही माइक्रोफिल्म पर अंकित कर कम्प्यूटर में संचित रहते हैं।

(iv) अयान्त्रिक बहुविकल्प मशीन (Non Mechanical Multiple Choice Machine)—छोटे छोटे पंच कार्डों पर बहुविकल्प पद अंकित रहते हैं। छात्र अपनी अनुक्रियाएँ विशेष प्रकार की स्याही वाले कलमों से पंचकार्ड पर अंकित करते हैं। यदि उत्तर सही हुआ तो कार्ड पर एक रासायनिक परिवर्तन होता है और स्याही के रंग में सही उत्तर झलकता है। अगर उत्तर या अनुक्रिया गलत हुई तब कोई रासायनिक परिवर्तन नहीं होता। हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार की शिक्षण मशीन उपलब्ध हैं जिनके द्वारा अभिक्रमित सामग्रियाँ सीखी जा सकती हैं किन्तु अभी तक इन मशीनों की डिजाइन एवं यान्त्रिकी का मानकीकरण नहीं हो पाया है।

शिक्षण मशीन एवं अभिक्रमित पाठ्य पुस्तक (Teaching Machine and Programmed Text)

अभिक्रमित सामग्रियाँ मुख्यत शिक्षण मशीन अथवा अभिक्रमित पाठ्य

पुस्तकों के माध्यम से प्रस्तुत की जाती हैं। दोनो ही माध्यमो की अपनी अपनी विशेषताएँ एव न्यूनताएँ हैं—

(i) शिक्षण मशीन मे अधिगमकर्त्ता के व्यवहार पर अधिक नियन्त्रण रखने की सुविधा रहती है। गलत उत्तर या धोखा देने पर मशीन मे ताला लग जाता है। सही उत्तर देने पर ही मशीन पाठय सामग्री का अगला अंश प्रस्तुत करती है। अभिक्रमित पुस्तको मे इस प्रकार के नियन्त्रण का अभाव रहता है। छात्र बिना सही उत्तर दिये भी सही पन्ने पलट सकते हैं।

(ii) मशीन द्वारा एक समय पर एक ही पद (frame) प्रस्तुत किया जाय इसकी नियन्त्रित व्यवस्था रहती है किन्तु अभिक्रमित पुस्तक मे छात्र चाहें तो एक साथ कई पद देख सकते हैं या कुछ पदों को छोडकर आगे बढ़ सकते हैं।

(iii) मशीन मे छात्रो के उत्तर को टेपकर मशीन के भीतर ही रिकार्ड करने की व्यवस्था रहती है। इससे तीन उद्देश्यो की प्राप्ति होती है—छात्रों को व्यक्तिगत मार्गदर्शन मे सहायता, अभिक्रम को संशोधित करने मे सहायता तथा अभिक्रम की प्रक्रिया पर शोध कार्य के लिए वस्तुनिष्ठ आँकडो की प्राप्ति। अभिक्रमित पुस्तको द्वारा विश्वसनीय रिकार्ड तथा वस्तुनिष्ठ आँकडे प्राप्त करना इतना सरल नही होता।

(iv) मशीन खासकर छोटे बच्चो के लिए एक ऐसी वस्तु है जिसमे उन्हे कई प्रकार की मनोकायिक (psychomotor) क्रियाएँ करने का अवसर मिलता है। अत सीखने मे छोटे बच्चो की रुचि बनी रहती है और आगे कार्य करने की प्रेरणा भी उन्हे मिलती रहती है। अभिक्रमित पुस्तको मे एक ही प्रकार की क्रिया करने से बच्चो की रुचि व प्रेरणा मे कमी आ जाती है और वे जल्दी ऊब जाते हैं।

(v) मशीन के अभिक्रमो को माइक्रो फिल्म के रूप मे रखा जा सकता है। इस विधि से अभिक्रमो के संग्रह मे सुगमता होती है क्योंकि यह कम स्थान घेरती है। पाठय पुस्तकों म संग्रह की यह सुविधा नही रहती।

उपरोक्त तुलना से शिक्षण मशीनों के लाभ स्पष्ट हैं किन्तु इनमें कुछ न्यूनताएँ भी हैं जैसे

(i) शिक्षण मशीन के मूल्य का अधिक होना।

(ii) मशीन बिगड जाने अथवा बिजली चले जाने मे शिक्षण म व्यवधान पडना।

(iii) मशीन खराब होने पर सुधार म भी बहुत खर्च होता है, तथा

(iv) मरम्मत करने वाले तकनीकी लोगो का अभाव।

अभिक्रमित अनुदेशन के लाभ (Advantages of Programmed Instruction)

परम्परागत शिक्षण की तुलना मे अभिक्रमित अनुदेशन की श्रेष्ठता प्रयोगो एव अनुसंधानो के आधार पर स्वीकार की जाने लगी है। इसके द्वारा छात्र शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति प्रभावकारी रीति से अधिक मात्रा में कर सकते हैं। इसम छात्रों

शिक्षको एव प्रशासको की दृष्टि से अनेक लाभ निहित हैं जिसकी वजह से कक्षाओ मे इसके प्रयोग की सम्भावना बढती जा रही है।

छात्रों की दृष्टि से लाभ

(i) अभिक्रमित अधिगम व्यक्तिश शिक्षण की एक विधि है। अत छात्रों को ऐसा अनुभव होता है कि उसके सामने उसके लिए ही एक शिक्षक पढाने का कार्य कर रहा है। छात्र अपनी गति से तल्लीनता के साथ पाठ को सीखते हैं।

(ii) छात्रो मे आत्मनिर्भरता एव आत्मविश्वास की भावना विकसित होती है। छात्रो को अनुभव होता है कि वे अपने आप कुछ सीख सकते हैं। उनकी अभिप्रेरणा का स्तर शत प्रतिशत प्रतिपुष्टि के कारण ऊँचा रहता है।

(iii) अभिक्रमित अनुदेशन म छात्र सतत सक्रिय रहता है। यह अधिगम को रुचिपूर्ण, सरल, प्रभावकारी और स्थायी बनाता है।

(iv) इससे छात्र में स्वाध्याय की अच्छी आदत बनती है।

(v) सामूहिक विधि म होने वाले समय के अपव्यय से यह छात्रों को बचाता है।

(vi) कक्षाओ में अभिक्रमित सामग्री के प्रयोग से कक्षाओ के सामाजिक परिवेश एव माहौल म क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। स्वचालित स्व शिक्षण विधि होने के कारण इसस कक्षा म उठने वाले संवेगात्मक, सामाजिक एव अनुशासनात्मक समस्याओ का अपने आप समाधान हो जाता है।

(vii) अभिक्रमित अनुदेशन द्वारा छात्र विभिन्न विषयो का तार्किक विश्लेषण सुगमता से सीख सकते हैं और उनम रचनात्मक चिन्तन का विकास हो सकता है।

शिक्षक एव प्रशासकों की दृष्टि से लाभ

(i) इसके प्रयोग से शिक्षको को कक्षा के लिए घिस पिटे दैनिक कार्यों से छुटकारा मिल जाता है। बचे हुये समय को वे छात्रो के हितार्थ उत्तम कार्यों म लगा सकते हैं। छात्रो क व्यक्तित्व एव नागरिकता के विकास के लिए मार्गदर्शन करने का समय शिक्षको को मिल जाता है।

(ii) इस विधि मे छात्रों की अनुक्रियाओ का वस्तुनिष्ठ रिकार्ड स्वय ही बनता जाता है। अत शिक्षको को छात्रो का सतत् मूल्यांकन करने की सुविधा मिल जाती है।

(iii) इसकी सहायता म छात्रो की कठिनाइयों का निदान भी आसानी स हो जाता है। अत शिक्षक औपचारिक शिक्षण देकर छात्रों की कठिनाइयों को आसानी स दूर कर सकता है।

(iv) अभिक्रमित अनुदेशन निश्चित रूप से उद्देश्याश्रित रहता है। अत शिक्षण और अधिगम का स्तर ऊँचा एव प्रभावकारी होता है।

(v) अभिक्रमो का निर्माण और मानकीकरण विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है अत अनेक छात्रो को उच्च स्तर के शिक्षण अधिगम अनुभव का अवसर प्राप्त होता है।

(vi) जटिल विषयो को पढाने मे इससे बहुत सहायता मिलती है क्योंकि पाठय सामग्री को विश्लेषित कर छोटे-छोटे सार्थक एव ग्राह्य पदो मे प्रस्तुत किया जाता है।

(vii) अभिक्रम निर्माण की प्रक्रिया सीखने से शिक्षको को अधिगम और शिक्षण दोनो ही का सैद्धान्तिक एव व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है तथा उनकी प्रभावकारिता बढती है।

शिक्षण-अधिगम की विधि के रूप मे अभिक्रमित अनुदेशन के लाभ को देखते हुए इसके स्वरूप को अपने देश और सस्कृति के अनुकूल रूपान्तरित और परिष्कृत कर इसका उपयोग करने की आवश्यकता है।

अभ्यास के प्रश्न

1 अभिक्रमित अनुदेशन से आप क्या समझते हैं? इसके मूलभूत सिद्धान्तो की विवेचना कीजिए।

2 अभिक्रमित अनुदेशन के मनोवज्ञानिक आधार की समीक्षा कीजिए।

3 अभिक्रम की विभिन्न शलियो पर सक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

4 अभिक्रमित वस्तु क्या है? रेखीय एव शाखीय अभिक्रम के उदाहरण दीजिए। (गोरखपुर विश्वविद्यालय 1989)

5 रेखीय एव शाखात्मक शैलियो की तुलनात्मक समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।

6 अभिक्रम निर्माण के पदो की सोदाहरण विवेचना कीजिए।

7 किसी अभिक्रम का मूल्यान्कन आप किस प्रकार करेंगे?

8 विभिन्न प्रकार की शिक्षण मशीनो का सक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करते हुये शिक्षण मशीन के लाभो एव न्यूनताओ को स्पष्ट कीजिए।

9 शिक्षण मशीन और अभिक्रमित पाठ्य पुस्तक की विशेषताओ एव न्यूनताओ की तुलनात्मक समीक्षा कीजिए।

10 शिक्षको एव छात्रो की दृष्टि से अभिक्रमित अनुदेशन के लाभो की विवेचना कीजिए।



6

शिक्षा मे कम्प्यूटर

[COMPUTER IN EDUCATION]

शिक्षा मे सगणक अथवा कम्प्यूटर का प्रयोग अपनी शैशवावस्था मे है किन्तु अपनी भावी सम्भावनाओ और चमत्कृत करने वाली क्रियाओ के द्वारा यह जनमानस पर छाता जा रहा है। दैनिक जीवन के अनेक पहलुओ जैसे रेल, डाक, उद्योग एव सरकारी कार्यालयो आदि मे इसका प्रयोग इस दशक के प्रारम्भ मे ही हो गया था। शिक्षा मे भी इस नवाचार का प्रयोग प्रारम्भ हो गया है। शिक्षको एव शिक्षाशास्त्रियो को कम्प्यूटर निम्नलिखित क्षेत्रो मे सहायता एव लाभ प्रदान करता है—

(i) स्कूलो मे ऊबाने वाले कार्यों जैसे छात्रो को उनकी योग्यतानुसार वर्गीकृत करना, टाइम टेबुल बनाना आदि कार्यों का उत्तरदायित्व कम्प्यूटर को सौंपा जा सकता है।

(ii) व्यक्तिगत छात्रो और छात्र समूहो के लिए कम्प्यूटर अधिगम ससाधन एव सामग्रियो का आवटन और प्रस्तुतीकरण कर सकता है अर्थात् कम्प्यूटर के माध्यम से अनुदेशन की व्यवस्था की जा सकती है।

(iii) कम्प्यूटर छात्रो के प्रगति पत्रो (progress cards) का रख रखाव अति गोपनीय रीति से कर सकता है। इस प्रकार छात्रो के वस्तुनिष्ठ मूल्याकन में सहायक होता है।

(iv) छात्रो के मार्गदर्शन के लिए उनसे सम्बन्धित सूचनाओ की फाइल बहुत सरलतापूर्वक शिक्षको एव परामर्शदाताओ को प्रदान कर सकता है।

(v) छात्र और विषयवस्तु से सम्बन्धित सीखी जा सकने वाली सामग्रियों के मध्य सीधी परस्पर क्रिया का अवसर प्रदान कर सकता है।

(vi) छात्रो को ट्यूटोरियल वार्तालाप और परस्पर क्रिया में लगाये रख सकता है।

कम्प्यूटर का नवाचार शिक्षा जगत में अभूतपूर्व परिवर्तन लाने मे सक्षम है। कम्प्यूटर द्वारा अनुदेशन एव छात्रो को मूल्याकन की व्यवस्था किस प्रकार की जाती है इसको समझने के लिए हमे कम्प्यूटर और उसकी कार्यप्रणाली से परिचित होना चाहिए।

कम्प्यूटर क्या है ?

कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रानिक सयन्त्र है जिसका सचालन विद्युत शक्ति से होता है। 'कम्प्यूटर की बोड' (key board), इलेक्ट्रानिक सरकिट सग्रह कक्ष (storage compartment) और रिकार्डिंग उपकरणो से युक्त एक जटिल सयन्त्र है। यह अति तीव्र गति से गणितीय सगणनायें करता है। यदि जनभाषा मे कहे तो कम्प्यूटर एक सम्मानित महिमायुक्त सगणक (calculator) है किन्तु साधारण कैल्कुलेटर से यह बहुत भिन्न है। इसमे सग्रह की क्षमता या स्मृति की क्षमता होती है। यह अपने भीतर बहुत बडी मात्रा मे सूचनाओ एव आँकडो का सग्रह कर सकता है और आवश्यकता पडने पर सूचनाओ को प्रदान कर सकता है। जिस प्रकार टेपरिकार्डर सूचनाओ को टेप पर सचित कर लेता है उसी प्रकार बहुत बडे पैमाने पर कम्प्यूटर सूचनाओ का सग्रह कर लेता है। कम्प्यूटर सूचनाओ से भरा हुआ एक सन्दूक या बॉक्स है। सूचनाओ और समस्याओ को कम्प्यूटर टेपरिकार्डर की तरह हम लोगो की ही भाषा मे सग्रहित नही करता। इसमे सूचनाओ को सग्रहित करने के लिए सबसे पहले सूचनाओ या समस्याओ को कम्प्यूटर की भाषा मे अनूदित (translate) करना होता है ताकि वह उसे समझ सके और अपने भीतर सग्रहित कर सके। कम्प्यूटर की प्रचलित भाषा बेसिक, कोबाल (cobal) फोरट्रान पी० (Fortran PL/1) ए० पी० एल० (APL) आदि है। सूचनाओ का उपयोग कम्प्यूटर कर सके इसके लिए उसमे आवश्यक सूत्रो एव प्रक्रियात्मक पदो को भी भरा या दिया जाता है। सम्बन्धित सूचनाएँ कम्प्यूटर को दी जाती हैं तब वह सूचनाओ को परिचालित (manipulate) करती है, उसमे सही उत्तर प्राप्त कर उत्तरो को टेलीटाइपराइटर के माध्यम से स्क्रीन पर अथवा कागज पर अकित करता है।

कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली (Working of Computer)

कम्प्यूटर अपना समस्त कार्य निम्नलिखित पाँच बुनियादी अगो द्वारा करता है जसाकि चित्र 6.1 मे दिखाया गया है—

(i) अदा उपकरण (input equipment)

(ii) प्रदा उपकरण (output equipment)

(iii) स्मृति भण्डार (memory store)

(iv) परिकलन इकाई (processing unit)

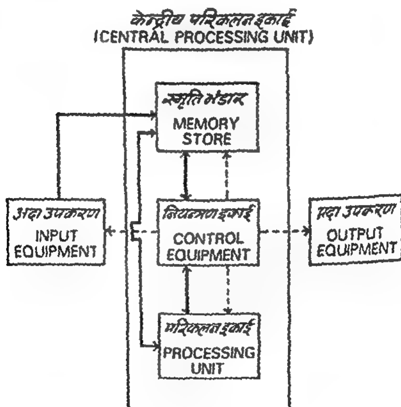
(v) नियन्त्रण इकाई (control unit)

अदा उपकरण दी गयी सूचनाओ को कम्प्यूटर की भाषा मे जिसे वह समझता है, अनूदित करता है। प्रदा उपकरण कम्प्यूटर मे किये गये परिकलन और उससे उपलब्ध उत्तरो को पुन हम सभी द्वारा समझी जाने वाली भाषा मे अनूदित करता है और हमारे सामने मुद्रित रूप मे या स्क्रीन पर चित्रित रूप म प्रस्तुत करता है। स्मृति भडार कक्ष मे कम्प्यूटर मे भरी गयी सभी जानकारियाँ कम्प्यूटर की भाषा मे एकत्रित

रहती है । परिकलन इकाई सूचनाओ का परिकलन करती है । यह इकाई गणित की सभी प्रक्रियाएँ जसे—जोडना, घटाना या गुणा करना आदि कर सकती है । यह इकाई भडारण कक्ष में रखी गयी सूचनाओ मे से वाछित सूचना को चुनकर हमें प्रदान कर सकती है । कम्प्यूटर के समस्त क्रिया कलाप नियत्रण इकाई द्वारा कम्प्यूटर मे दिये गये प्रोग्राम के अनुसार नियत्रित की जाती है । सामान्यत कम्प्यूटर म दो प्रकार की सूचनाएँ भरी जाती हैं—

(i) प्रोग्राम, जिसम वे सभी निर्देश होते हैं जिनके आधार पर कम्प्यूटर को काम करना है ।

(ii) सूचनाएँ एव समस्याएँ जिनको प्रोग्राम के आधार पर परिकलित करना है ।



चित्र 6 1—कम्प्यूटर की बुनियादी सरचना

कम्प्यूटर की विशषताएँ (Characteristics of Computer)

कम्प्यूटर का आविष्कार एक अति गतिमान कैलकुलेटर (high speed calculator) के रूप म हुआ है । इसकी अनेक विशेषताओ म निम्नलिखित प्रमुख हैं—

(i) गति (Speed)—कम्प्यूटर कल्पनातीत गति से काय करने वाला यन्त्र है। अपनी गति के कारण इसने अनेक वैज्ञानिक प्रोजेक्टो को, जो पहले असम्भव थे, सम्भव बनाया है। चन्द्रमा पर मनुष्य के चरण नही पहुँचते यदि कम्प्यूटर नही होता। कम्प्यूटर की सहायता से ही मौसम की भविष्यवाणी जिसे हम पहले कई दिनो और महीनो के अथक परिश्रम के पश्चात कर पाते थे, उसे अब कम्प्यूटर की सहायता से हम नित्य ही कर पाते हैं। कम्प्यूटर म इलेक्ट्रानिक है अत उसमे आन्तरिक गति इतनी तेज है कि वह तत्क्षण बन जाता है। आज हम 'सेकण्ड' की भाषा मे बात नही करते। आज हमारी गति की इकाई है 'माइक्रोसेकण्ड' (micro second—एक सेकण्ड का 10 लाखवाँ भाग) नैनो सेकण्ड (nano second—एक सेकण्ड का हजार दस लाखवाँ भाग) और उससे भी आगे बढकर पाइकोसेकेण्ड (pico second—एक सेकेण्ड का 10 लाख 10 लाखवाँ भाग)। एक शक्तिशाली कम्प्यूटर 18 अक की 2 सख्याओ को 300 से 400 नैनो सेकेण्ड मे जोड देता है अर्थात वह 30 लाख गणनाएँ प्रत्येक सेकेण्ड म करता है।

(ii) भडारण (Storage)—जिस गति से कम्प्यूटर बहुत बडी मात्रा मे सूचनाओ का परिकलन कर सकता है, उसने नयी सूचनाओ को बहुत बडी मात्रा मे निर्मित करने की ओर हमे आगे बढाया है। कहने का तात्पर्य यह है कि कम्प्यूटर ने सूचनाओ के विस्फोट को बाँध लिया है। ज्ञान के विस्फोट का मुकाबला मनुष्य नही कर पाता किन्तु कम्प्यूटर कर सकता है। यह कार्य वह अपने सग्रह इकाई या स्मृति इकाई के द्वारा करता है। ज्ञान का या सूचना का कोई भी अश केन्द्रीय परिकलन इकाई केपइ (Central Processing Unit CPU) के द्वारा बहुत शीघ्र प्राप्त किया जा सकता है। केपइ (CPU) मे आन्तरिक स्मृति। K या K मॉड्यूल्स (modules) निर्मित होते हैं जहाँ K 1024 सग्रह स्थितियो के बराबर होता है छोटे माइक्रो कम्प्यूटर मे 8K या 16K और सुपर कम्प्यूटर में 1024 K (1024 × 1024 स्थितियाँ) होते हैं।

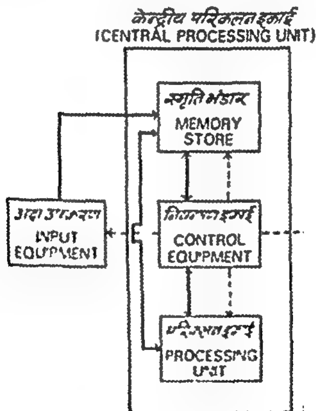
(iii) परिशुद्धि (Accuracy)—कम्प्यूटर की गणना एक दम सही होती है। मशीन होने के कारण इससे त्रुटि हो सकती है। कभी कभी समाचार पत्रो मे इसकी त्रुटियो पर व्यगात्मक समाचार छपते हैं जैसे कम्प्यूटर ने '40 हजार विद्यार्थियो को एक ही विद्यालय का विद्यार्थी बना दिया आदि किन्तु त्रुटि ज्ञात करने की तकनीकी का विकास ज्यो ज्यो बढ रहा है वसे कम्प्यूटर की परिशुद्धता बढ़ती जा रही है। जो भी त्रुटियाँ होती हैं अधिकतर कम्प्यूटर के कारण न होकर प्रोग्रामर एव कम्प्यूटर चालक के कारण होती हैं।

(iv) बहुविज्ञता (Versatility)—कार्यों को यदि तक पूर्ण ढग से पदानुक्रमित कर दिया जाए तब कम्प्यूटर किसी भी प्रकार का काय करने म समर्थ है। वैसे तो कम्प्यूटर बुनियादी तौर पर केवल अग चार कार्यों को करता है।

रहती है। परिकलन इकाई सूचनाओं का परिकलन करती है। यह इकाई सभी प्रक्रियाएँ जैसे—जोड़ना, घटाना या गुणा करना आदि कर सकती है भंडारण कक्ष में रखी गयी सूचनाओं में से वांछित सूचना को चुनकर दे सकती है। कम्प्यूटर के समस्त क्रिया कलाप नियन्त्रण इकाई द्वारा बताए गए प्रोग्राम के अनुसार नियन्त्रित की जाती है। सामान्यतः कम्प्यूटर में दो सूचनाएँ भरी जाती हैं—

(i) प्रोग्राम, जिसमें वे सभी निर्देश होते हैं जिनके आधार पर काम करना है।

(ii) सूचनाएँ एवं समस्याएँ जिनको प्रोग्राम के आधार पर करना है।



(क) यह बाहरी दुनियाँ से सूचनाओं का आदान प्रदान, अदा प्रदा, इकाइयां द्वारा करता है।

(ख) केन्द्रीय परिकलन इकाई के माध्यम से आँकड़ों को भीतर ही भीतर स्थानान्तरित करता है।

(ग) गणितीय कार्य करता है, और

(घ) यह तुलनात्मक क्रियायें करता है।

इस प्रकार यह इन बुनियादी कार्यों के सहारे अनेक प्रकार के कार्य करने में समर्थ है।

(v) स्वचालित (Automation)—कम्प्यूटर एक स्वचालित यन्त्र है। एक बार कम्प्यूटर की स्मृति में प्रोग्राम भर देने के पश्चात् जब उसे व्यक्तिगत आदेश दिया जाता है तब नियन्त्रण इकाई अपना काय करती है। एक बार आदेशानुसार काम शुरू हो जाने पर प्रोग्राम के अन्त तक कम्प्यूटर अपना काय बिना किसी मानवीय या बाहरी सहायता के समाप्त कर लेता है।

(vi) कर्मनिष्ठता (Diligence)—मशीन होने के कारण कम्प्यूटर मनुष्य की तरह न थकता है और न उसका ध्यान ही भंग होता है। यदि उसे लाखों गणनायें करनी हैं तो वह उन गणनाओं को उसी गति के साथ और सही सही करने की क्षमता रखता है जैसाकि उसने पहली गणना के समय किया था।

कम्प्यूटर का शैक्षिक उपयोग (Educational use of Computer)

कम्प्यूटर की स्मृति में बहुत बड़ी सख्या में सूचनाएँ अथवा ज्ञान सग्रहित रहता है। अत वह अनेक शैक्षिक विषयों को सीखने की प्रक्रिया में सहायक हो सकता है। शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर कम्प्यूटर शिक्षण और अधिगम के लिए काय करता है। यह शिक्षण व्यवस्था और शिक्षण के मूल्यांकन के काय करने में समर्थ है।

कम्प्यूटर सहअनुदेशन (Computer Assisted Instruction CAI)

कम्प्यूटर सहअनुदेशन का उद्भव एव विकास (CAI—Its Origin and Development)—कम्प्यूटर सहअनुदेशन के जन्म एव विकास के पीछे दो प्रमुख कारण हैं। पहला, शिक्षाशास्त्रियों द्वारा तकनीकी यन्त्रों का शिक्षा में प्रयोग करने की स्वाभाविक इच्छा दूसरा अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्तों एव विधियों को कम्प्यूटर की सहायता से अधिक प्रभावकारी बनाने की कल्पना। इन्हीं दो मूलभूत इच्छाओं से प्रेरित होकर कम्प्यूटर को इस प्रकार से अभिक्रमित करने का प्रयास किया गया कि वह मानव के साथ अधिगम के प्रक्रम में परस्पर क्रिया (interaction) करने में सक्षम हो। प्रारम्भ में बहुत ही सरल अभिक्रमों को मशीन की सहायता से परखा गया। उदाहरण के लिए सबसे पहले बहु विकल्प प्रश्नों को देकर मशीन से यह जाँच कराया

गया कि क्या अधिगमकर्त्ता द्वारा दिये गये उत्तर सही हैं ? शिक्षा जगत मे कम्प्यूटर सह अनुदेशन का सवप्रथम प्रयास 1961 मे इलिनोयस विश्वविद्यालय मे किया गया। वहाँ पर शिक्षा शास्त्री एव तकनीकी विशेषज्ञो ने स्वत शिक्षण-प्रविधि के लिए अभिक्रम तर्क (Programme logic for automatic teaching operations PLATO) की रचना की। प्रथम प्रयोग के समय से ही आलोचना एव प्रशसा के दौर मे इसकी प्रगति और प्रसार का वेग बढता ही गया। इस शैली के विकास क्रम मे दूसरा मोड स्टेनफोड विश्वविद्यालय के पेट्रिक सपेस (Patrick Suppes) के प्रयास द्वारा आया। उन्होंने 1966 मे प्राथमिक स्कूलो के बच्चो के लिए गणित एव वाचन पर कम्प्यूटर अभिक्रम निर्मित किया।

इसकी सफलता को देखते हुए कम्प्यूटर सहअनुदेशन शैली की धारा और तेज हुई।

कम्प्यूटर सह अनुदेशन की प्रमुख मान्यताएँ (Basic assumptions of CAI)—इस शैली के मूल में बहुत ही महत्वपूर्ण और ठोस शैक्षिक सप्रत्यय एव धारणाएँ हैं। यही कारण है कि शिक्षा जगत मे इस शैली की भावी सम्भावनाएँ बढ़ती जा रही हैं। इससे सम्बन्धित कुछ प्रमुख मान्यताओ का उल्लेख नीचे किया जा रहा है—

(i) पहली मान्यता यह है कि कम्प्यूटर सह-अनुदेशन का प्रयोग एक समय पर हजारो विद्यार्थियो के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार शिक्षा जगत में गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनो ही प्रकार की समस्याओ का समाधान इसके द्वारा किया जा सकता है। इस शैली मे छात्रो के वैयक्तिक विभिन्नताओ के अनुरूप अनेक शाखात्मक अभिक्रम कम्प्यूटर मे रखे जा सकते हैं। छात्र की योग्यता और व्यवहार के स्तर को देखते हुए कम्प्यूटर छात्र के लिए अभिक्रम का चयन कर सकता है। अधिगमकर्त्ता अपनी योग्यता के अनुरूप अभिक्रम प्राप्त कर अपनी गति से अधिगम कर सकता है तथा तत्काल व्यक्तिगत प्रतिपुष्टि (individualised feedback) भी प्राप्त कर सकता है।

(ii) इस शैली की दूसरी प्रमुख मान्यता यह है कि प्रत्येक अधिगमकर्त्ता द्वारा *अधिगम और परीक्षण के समय किये गये व्यवहार को स्वत अभिलेखित* (automatic recording) किया जा सकता है। इस अभिलेख अथवा रेकार्ड का शिक्षक तत्काल अध्ययन कर सकते हैं। इसका मूल्यांकन करने के पश्चात् वे अधिगमकर्त्ता के लिए भावी अधिगम एव शिक्षण योजना का प्रारूप तैयार कर सकते हैं। शिक्षक कम्प्यूटर की सहायता से समय की बचत कर अन्य महत्वपूर्ण सृजनात्मक एव निर्देशनात्मक कार्यों म उसका उपयोग कर सकते है।

(iii) कम्प्यूटर सह अनुदेशन से सम्बन्धित तीसरी मान्यता विभिन्न विषय वस्तुओ को विभिन्न विधियों एव उपागमों के सहारे प्रस्तुत करने की क्षमता से सम्ब

(क) यह बाहरी दुनियाँ से सूचनाओं का आदान प्रदान, अदा प्रदा, इकाइयों द्वारा करता है।

(ख) केन्द्रीय परिकलन इकाई के माध्यम से आँकड़ों को भीतर ही भीतर स्थानान्तरित करता है।

(ग) गणितीय कार्य करता है, और

(घ) यह तुलनात्मक क्रियायें करता है।

इस प्रकार यह इन बुनियादी कार्यों के सहारे अनेक प्रकार के कार्य करने में समर्थ है।

(v) स्वचालित (Automation)—कम्प्यूटर एक स्वचालित यन्त्र है। एक बार कम्प्यूटर की स्मृति में प्रोग्राम भर देने के पश्चात् जब उसे व्यक्तिगत आदेश दिया जाता है तब नियन्त्रण इकाई अपना काय करती है। एक बार आदेशानुसार काम शुरू हो जाने पर प्रोग्राम के अन्त तक कम्प्यूटर अपना काम बिना किसी मानवीय या बाहरी सहायता के समाप्त कर लेता है।

(vi) कर्मनिष्ठता (Diligence)—मशीन होने के कारण कम्प्यूटर मनुष्य की तरह न थकता है और न उसका ध्यान ही भंग होता है। यदि उसे लाखों गणनायें करनी हैं तो वह उन गणनाओं को उसी गति के साथ और सही सही करने की क्षमता रखता है जैसाकि उसने पहली गणना के समय किया था।

कम्प्यूटर का शैक्षिक उपयोग (Educational use of Computer)

कम्प्यूटर की स्मृति में बहुत बड़ी संख्या में सूचनाएँ अथवा ज्ञान संग्रहित रहता है। अतः यह अनेक शैक्षिक विषयों को सीखने की प्रक्रिया में सहायक हो सकता है। शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर कम्प्यूटर शिक्षण और अधिगम के लिए काय करता है। यह शिक्षण व्यवस्था और शिक्षण के मूल्यांकन के काम करने में समर्थ है।

कम्प्यूटर सहअनुदेशन (Computer Assisted Instruction · CAI)

कम्प्यूटर सहअनुदेशन का उद्भव एवं विकास (CAI—Its Origin and Development)—कम्प्यूटर सहअनुदेशन के जन्म एवं विकास के पीछे दो प्रमुख कारण हैं। पहला, शिक्षाशास्त्रियों द्वारा तकनीकी यन्त्रों का शिक्षा में प्रयोग करने की स्वाभाविक इच्छा दूसरा अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्तों एवं विधियों को कम्प्यूटर की सहायता से अधिक प्रभावकारी बनाने की कल्पना। इन्हीं दो मूलभूत इच्छाओं से प्रेरित होकर कम्प्यूटर को इस प्रकार से अभिक्रमित करने का प्रयास किया गया कि वह मानव के साथ अधिगम के प्रक्रम में परस्पर क्रिया (interaction) करने में सक्षम हो। प्रारम्भ में बहुत ही सरल अभिक्रमों को मशीन की सहायता से परखा गया। उदाहरण के लिए सबसे पहले बहु विकल्प प्रश्नों को देकर मशीन से यह जाँच कराया

गया कि क्या अधिगमकर्त्ता द्वारा दिये गये उत्तर सही हैं ? शिक्षा जगत में कम्प्यूटर सह अनुदेशन का सर्वप्रथम प्रयास 1961 में इलियोय विश्वविद्यालय में किया गया। वहाँ पर शिक्षा शास्त्रों एवं तकनीकी विशेषज्ञों ने स्वत शिक्षण-प्रविधि के लिए अभिक्रम तर्क (Programme logic for automatic teaching operations PLATO) की रचना की। प्रथम प्रयोग के समय से ही आलोचना एवं प्रशंसा के दौर में इसकी प्रगति और प्रसार का वेग बढ़ता ही गया। इस शैली के विकास क्रम में दूसरा मोड़ स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के पेट्रिक सपेस (Patrick Suppes) के प्रयास द्वारा आया। उन्होंने 1966 में प्राथमिक स्कूलों के बच्चों के लिए गणित एवं वाचन पर कम्प्यूटर अभिक्रम निर्मित किया।

इसकी सफलता को देखते हुए कम्प्यूटर सहअनुदेशन शैली की धारा और तेज हुई।

कम्प्यूटर सह अनुदेशन की प्रमुख मान्यताएँ (Basic assumptions of CAI)—इस शैली के मूल में बहुत ही महत्त्वपूर्ण और ठोस शैक्षिक सम्प्रत्यय एवं धारणाएँ हैं। यही कारण है कि शिक्षा जगत में इस शैली की भावी सम्भावनाएँ बढ़ती जा रही हैं। इससे सम्बन्धित कुछ प्रमुख मान्यताओं का उल्लेख नीचे किया जा रहा है—

(i) पहली मान्यता यह है कि कम्प्यूटर सह-अनुदेशन का प्रयोग एक समय पर हजारों विद्यार्थियों के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार शिक्षा जगत में गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनों ही प्रकार की समस्याओं का समाधान इसके द्वारा किया जा सकता है। इस शैली में छात्रों के वैयक्तिक विभिन्नताओं के अनुरूप अनेक शाखात्मक अभिक्रम कम्प्यूटर में रखे जा सकते हैं। छात्र की योग्यता और व्यवहार के स्तर को देखते हुए कम्प्यूटर छात्र के लिए अभिक्रम का चयन कर सकता है। अधिगमकर्त्ता अपनी योग्यता के अनुरूप अभिक्रम प्राप्त कर अपनी गति से अधिगम कर सकता है तथा तत्काल व्यक्तिगत प्रतिपुष्टि (individualised feedback) भी प्राप्त कर सकता है।

(ii) इस शैली की दूसरी प्रमुख मान्यता यह है कि प्रत्येक अधिगमकर्त्ता द्वारा अधिगम और परीक्षण के समय किये गये व्यवहार को स्वत अभिलेखित (automatic recording) किया जा सकता है। इस अभिलेख अथवा रेकार्ड का शिक्षक तत्काल अध्ययन कर सकते हैं। इसका मूल्यांकन करने के पश्चात् वे अधिगमकर्त्ता के लिए भावी अधिगम एवं शिक्षण योजना का प्रारूप तैयार कर सकते हैं। शिक्षक कम्प्यूटर की सहायता से समय की बचत कर अन्य महत्त्वपूर्ण सृजनात्मक एवं निर्देशनात्मक कार्यों में उसका उपयोग कर सकते हैं।

(iii) कम्प्यूटर सह अनुदेशन से सम्बन्धित तीसरी मान्यता विभिन्न विषय वस्तुओं को विभिन्न विधियों एवं उपागमों के सहारे प्रस्तुत करने की क्षमता से सम्ब-

षित है। अनेक प्रयोगो द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि इस शैली का प्रयोग हर प्रकार के अभिक्रमो के लिए किया जा सकता है। विषय वस्तु को आवश्यकतानुसार शब्दो, चित्रो या प्रयोगो के माध्यम से छात्रो के लिए स्पष्ट तथा परिभाषित किया जा सकता है।

कम्प्यूटर सह अनुदेशन की कार्य प्रणाली (Mechanism of CAI)—कम्प्यूटर शैक्षिक तकनीकी के लिए 'मशीनी उपागम (hardware) के अन्तर्गत आता है और उसके भीतर संचित अभिक्रम 'नमनीय उपागम' (software) के अन्तर्गत आता है। शैक्षिक तकनीकी मे कम्प्यूटर सहअनुदेशन की शैली मे ही इन दोनो उपागमो का बहुत ही उपयोगी एवं लाभप्रद संयोग हुआ है। अन्य शिक्षण मशीनो मे पाठ्य वस्तु को छोटे छोटे पदों मे अभिक्रमित कर प्रस्तुत किया जाता है किन्तु इन मशीनो मे अपने आप कोई निर्णय लेने की क्षमता नही होती। कम्प्यूटर एक जटिल विद्युत मस्तिष्क है। इसमें छात्रो के प्रारम्भिक व्यवहार एवं पूर्व अनुभव के आधार पर छात्र के अनुकूल अनुदेशन देने की क्षमता रहती है। कम्प्यूटर यह निर्णय लेता है कि कौन सा अभिक्रम किस छात्र के लिए उपयुक्त होगा। अनुदेशन की प्रक्रिया में कम्प्यूटर निम्नलिखित कार्य करता है

(i) कार्डों तथा चुम्बकीय टेप पर सूचनाओ और अभिक्रमो का संग्रह करना।

(ii) संचित सूचनाओ एवं अभिक्रमो में से प्रत्येक छात्र के लिए समुचित प्रदत्ता का चयन करना।

(iii) विद्युत टंकण मशीन (electric typing machine) की सहायता से सूचनाओं का बाह्य सम्प्रेषण करना।

कम्प्यूटर द्वारा प्रदत्त शिक्षण की प्रक्रिया (Computerised teaching process)

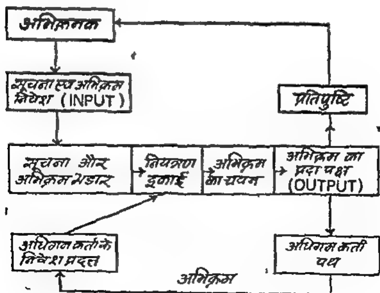
कम्प्यूटर की क्षमताओ और उसके प्रमुख कार्यों के विषय मे ऊपर बताया जा चुका है। छात्रो की वैयक्तिक विभिन्नताओ को ध्यान मे रखते हुए कई प्रकार के अभिक्रमो का निर्माण कर कम्प्यूटर मे संचित कर दिया जाता है। इस व्यवस्था के फलस्वरूप एक कम्प्यूटर तीस छात्रों को अपनी वैयक्तिक विभिन्नताओ के अनुरूप तीस प्रकार के अभिक्रमो का प्रस्तुतीकरण कर सकता है। कम्प्यूटर द्वारा प्रस्तुत अभिक्रम अथवा शिक्षण को दो पक्षों में विभाजित किया जा सकता है। पहला पूर्व अनुवर्ग शिक्षण पक्ष (pre tutorial phase) इस पक्ष म कम्प्यूटर किसी विशिष्ट उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उसी के अनुरूप किसी एक छात्र का चयन करता है। चयन की प्रक्रिया छात्र के पूर्व व्यवहार एवं पूर्व ज्ञान के आधार पर कम्प्यूटर करता है। दूसरा अनुवर्ग पक्ष (tutorial phase) इसमे विशिष्ट उद्देश्य से किसी एक छात्र के लिए चुने गये अभिक्रम को कम्प्यूटर छात्र के सम्मुख प्रस्तुत करता है।

इस प्रस्तुतीकरण के सहारे छात्र सीखता है। अन्त मे कम्प्यूटर छात्र की उपलब्धियो (achievement, का मापन भी करता है।

उपरोक्त दोनो पक्षो का काय कम्प्यूटर निम्नलिखित दो सोपानो के अन्तगत करता है।

(1) अपेक्षित जनसख्या का चयन (Selection of target population)—छात्र की शैक्षिक योग्यता, उसकी शैक्षिक उपलब्धि एव पूव व्यवहार को काड पर अंकित (punch) करके कम्प्यूटर उसे पढकर छात्र के पूव व्यवहार के स्तर की जाँच एव पुष्टि के लिए उसकी पूव परीक्षा (pre test) लेता है। इस परीक्षण मे सफलता के आधार पर कम्प्यूटर छात्र के शक्षिक स्तर अथवा पूव व्यवहार के स्तर को निर्धारित कर लेता है। तत्पश्चात वह पुन एक पूव परीक्षण (pre test) लेता है। इस पूव परीक्षण पर छात्र के व्यवहार का विश्लेषण और मूल्याकन करने के पश्चात कम्प्यूटर यह जान लेता है कि पाठयवस्तु के विषय मे छात्र का पूव ज्ञान कितना है। इस ज्ञान के आधार पर कम्प्यूटर छात्र के स्तर के अनुकूल अभिक्रम का चयन करता है। यदि कम्प्यूटर मे उस विशिष्ट छात्र के स्तर का अभिक्रम सचित नही है तब वह छात्र को अपने लिए अयोग्य घोषित कर देता है।

(ii) अभिक्रम का प्रस्तुतीकरण तथा अधिगम नियन्त्रण (Presentation of programme and learning control)—यदि कम्प्यूटर छात्र को अपने योग्य



चित्र 6 2—कम्प्यूटर सहअनुदेशन मे सूचना प्रवाह

पाता है तब यह छात्र के पूर्व व्यवहार के अनुकूल छात्र के लिए अभिक्रम प्रस्तुत करता है। कम्प्यूटर में विद्युत टंकण मशीन या टेप द्वारा सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता है। गलती करने पर उस गलती के अनुरूप ही कम्प्यूटर अनुदेशन को बदल सकता है। प्रस्तुतीकरण के अतिरिक्त कम्प्यूटर छात्रों के व्यवहारों को भी नियन्त्रित करता है। कम्प्यूटर सह अनुदेशन में अभिक्रम एवं सूचनाओं के प्रवाह को चित्र 6.2 में दिखाया गया है।

कम्प्यूटर सहअनुदेशन के लिए आवश्यक विशेषज्ञ (Experts needed in CAI)

कम्प्यूटर सहअनुदेशन शैली के प्रयोग के लिए किसी भी संस्था को निम्न लिखित प्रकार के विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ेगी

(i) अभिक्रम लेखक (Programmer)—अभिक्रमों का लेखन अत्यन्त कठिन कार्य है। इसके लिए सिद्धहस्त लेखकों की आवश्यकता पड़ती है। किसी शिक्षक को इसमें सिद्धता प्राप्त करने में काफी समय लग जाता है क्योंकि उसे अभिक्रम के सिद्धान्तों को समझना पड़ता है और इसके साथ ही यह भी जानना पड़ता है कि इन सिद्धान्तों को मानव के व्यवहार परिवर्तन के लिए किस प्रकार प्रयोग में लाया जाये। इतना ही नहीं एक अभिक्रमक को छात्रों के मनोवैज्ञानिक विकास और विभिन्न आयु पर विकास के स्तर को भी अच्छी तरह जानना पड़ता है।

(ii) कम्प्यूटर अभियन्ता (Computer Engineer)—कम्प्यूटर अभियन्ता एक ऐसा विशेषज्ञ है जो अभिक्रम के मूलभूत सिद्धान्तों एवं शैलियों को समझने के साथ ही साथ कम्प्यूटर के सिद्धान्तों और उसके विभिन्न अंगों की रचना एवं कार्य प्रणाली को अच्छी तरह समझता है। यह अभिक्रमित पाठ को कम्प्यूटर की भाषा में अनूदित करता है और कम्प्यूटर के लिये निर्देशों की रूपरेखा निश्चित करता है। इस प्रकार के विशेषज्ञ के अभाव में इस शैली का प्रयोग असम्भव है।

(iii) प्रणाली प्रचालक (System Operator)—कम्प्यूटर सहअनुदेशन की प्रणाली में प्रचालक, कम्प्यूटर और अधिगमकर्ता के बीच का मध्यस्थ है। वह इस प्रणाली के समस्त क्रियाकलाप से पूर्णतया परिचित रहता है और वह कम्प्यूटर की गड़बड़ी अथवा अभिक्रम की अन्य सामान्य त्रुटियों को दूर कर सकता है।

तीनों प्रकार के विशेषज्ञों के पारस्परिक सहयोग एवं सह कार्य से ही इस शैली द्वारा प्रदत्त अभिक्रम प्रभावकारी बन सकते हैं।

कम्प्यूटर सह अनुदेशन के लाभ (Advantages of CAI)

अन्य सभी दृश्य श्रव्य सहायक सामग्रियों की तुलना में कम्प्यूटर सह-अनुदेशन अधिक उत्तम सिद्ध हुआ है। यह समय बचाने के अतिरिक्त छात्रों द्वारा की गयी अनुक्रियाओं का परिकलन चमत्कारिक ढंग से करता है। यह छात्रों को यह भी बताता है कि उन्हें विशिष्ट अधिगम परिस्थिति में क्या करना है? कम्प्यूटर के

भण्डारण इकाई मे प्रचुर मात्रा म सूचनाएँ अथवा ज्ञान सग्रहित रहता है और आवश्यकता पड़ने पर उन्हे तत्काल प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रणाली मे छात्र और अनुदेशनात्मक कायक्रम मे अत्य त गत्यात्मक परस्पर क्रिया चलती है, जो अन्य किसी प्रणाली मे सम्भव नही है। कम्प्यूटर सह अनुदेशन द्वारा हम विषय वस्तु के प्रस्तुतीकरण को पूणतया व्यक्ति की आवश्यकताओ के अनुरूप करने मे समथ हो जाते हैं।

कम्प्यूटर सहअनुदेशन की सीमाएँ (Limitations of CAI)

अभिक्रमित अनुदेशन के क्षेत्र म कायरत अनुसधानकर्त्ताओ ने कम्प्यूटर सह-अनुदेशन की कई सीमाओ की ओर सकत किया है। आजकल कम्प्यूटर से अनुदेशन प्राप्त करते समय छात्र यान्त्रिक अनुक्रिया द्वारा अपने उत्तर देता, या तो यह विद्युत टकण पर अनुक्रिया करता है अथवा विद्युत लेखनी से उपयुक्त उत्तर को स्पश करता है। इस प्रकार की अनुक्रियाओ द्वारा छात्रो की वाणी लेखन का विश्लेषण एव सुधार कठिन है। यह शैली शाखात्मक शैली का ही एक विकसित रूप है। अत शाखात्मक शैली की सभी न्यूनताएँ इसम विद्यमान हैं। कुलहैवी (Kulhavy) एव उनके सहलेखको ने भी कम्प्यूटर सहअनुदेशन को शाखात्मक अभिक्रम का परिमार्जित स्वरूप कहा है और इसे 'ज्यादा खर्चीली पन्ना उलटने वाली शली मात्र' की सज्ञा दी है।

इस शली की सबसे तीखी आलोचना इस बात पर की जाती है कि इसम शिक्षक एव छात्र के सौहाद्र पूण एव सवेगात्मक पारस्परिक क्रिया का अभाव रहता है। कम्प्यूटर छात्र को 'कोडिंग काड' मे बदल देता है और शिक्षक को 'लौह मशीन' मे। छात्रो की मनोवैज्ञानिक और शक्षिक समस्याओ का समाधान करने मे कम्प्यूटर सक्षम नहीं है।

'कम्प्यूटर सहअनुदेशन' छात्रो के लिए भाषा सम्ब धी आवश्यकता दक्षता प्रदान करने मे भी असमथ है। भाषा मे दक्षता प्राप्त करने के लिये सार्थक वाक्यो की रचना करन की योग्यता आवश्यक है। इस जटिल योग्यता का विकास कम्प्यूटर नहीं कर पाता, क्योंकि उसम जितनी भी अनुक्रियाएँ होती हैं, वे सूक्ष्म रूप से नियन्त्रित क्रमबद्ध उद्दीपनो और अनुक्रियाओ की पूव नियोजित शृ खला के सहारे होती हैं।

इस शली की एक और प्रमुख समस्या छात्रो के थकान से सम्ब धित है। कुछ अनुसंधानकर्त्ताओ के अनुसार बहुत से छात्र इस शैली से अनुदेशन प्राप्त करते समय ऊब जाते हैं और अनुदेशन के बीच मे ही उसे छोड़ने की सोचने लगते है।

छात्रों से सम्ब धित चौंकाने वाली एक और सीमा इस शली मे है। यह छात्रो मे परस्पर मल जोल अथवा मैत्री भावना बढाने के अवसरो को समाप्त कर दती है। कम्प्यूटर के सामने बठ हुए अनेक छात्र अभिक्रम अथवा अनुदेशन लते

समय य प्रवत बठे रहते हैं। कम्प्यूटर द्वारा प्रदत्त शिक्षण सामग्री को सीखने के प्रयास म वे अपने अगल बगल बठे जीवित जाग्रत सहपाठियो के प्रति उदासीन हो जाते हैं। इस प्रकार कम्प्यूटर छात्रो की मैत्री भावना, पारस्परिक सहयोग आदि के लिए अवसर प्रदान न कर उनके सामाजिक विकास मे बाधा उत्पन्न करता है।

कम्प्यूटर सहअनुदेशन म छात्र कम्प्यूटर के सम्मुख बैठकर अपने लिए सचित पका पकाया पाठ ग्रहण करता है। स्वत त्र चिन्तन एव सृजनात्मक क्रियाओ के लिये उसे कोई अवसर नही मिलता।

अधिगम म इस प्रकार की स्वत त्रता का अभाव मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त अवाछनीय है। शिक्षण अधिगम म अधिगमकर्ता की स्वत त्रता के उदघोषको गांधी, टगौर डीवी, पियाजे, ब्रूनर आदि मनोवैज्ञानिको के सिद्धान्तों की हत्या का आरोप इस शैली पर इसीलिए लगाया जाता है।

इन सीमाओ के होते हुए भी शैक्षिक तकनीकी की यह धारा निरतर बलवती होती जा रही है क्योकि, इसमें शिक्षा जगत मे व्याप्त गुणात्मक एव परिमाणात्मक दोनो ही प्रकार की समस्याओ का समाधान करने की क्षमता है। इसका शिक्षा पर अभूतपूर्व प्रभाव पड़ा है। पाश्चात्य जगत् म इस पर जो अनुसधान हुए हैं, उनक फलस्वरूप इसका प्रचार एव प्रसार उन देशो के जनजीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित कर रहा है। भारत भी इसके प्रभाव स अछूता नहीं रह सकता। कम्प्यूटर का प्रयोग भारत म अपनी प्रारम्भिक अवस्था मे है। जन जीवन और उसकी शैक्षिक आवश्यकताओ को ध्यान म रखते हुए इस शैली का भारतीय अनुकूलन होगा ताकि यहाँ के छात्र, शिक्षक और समाज के अन्य व्यक्ति इस नवाचार से समुचित लाभ उठा सकें।

कम्प्यूटर प्रबंधित अनुदेशन (Computer Managed Instruction CMI)

कम्प्यूटर सहअनुदेशन (CPI) म कम्प्यूटर की भूमिका एक शिक्षक की होती है। किन्तु कम्प्यूटर अनुदेशन के प्रबन्धक के रूप मे भी काम कर सकता है। कम्प्यूटर का प्रयोग जब एक पथप्रदर्शक या प्रबन्धक के रूप म किया जाता है तब अनुदेशन की जो स्थिति उत्पन्न होती है, उस अवस्था म कम्प्यूटर निम्नलिखित काय करता है—

(i) सवप्रथम, कम्प्यूटर मे ऐसे प्रोग्राम सग्रहित रहते हैं जो छात्र के विशिष्ट कौशलों और ज्ञान का परीक्षण करते हैं।

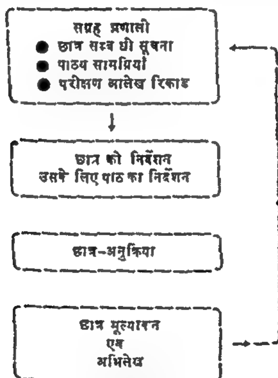
(ii) कम्प्यूटर उपयुक्त परीक्षण के आधार पर यह निर्धारित करता है कि छात्र को कौन सा काय या कार्य शृ खला या कार्य-तालिका प्रदान की जाए।

(iii) कम्प्यूटर छात्र को निर्देश देता है कि वह किस प्रकार काय करे। निर्देश देने का माध्यम हैड फोन (head phone), कथोड रे डिस्प्ले ट्यूब या मुद्रित

प्रणाली हो सकती है। कम्प्यूटर छात्र को अनेक पद आगे जाने या पीछे जाने और पुराने पाठ को दुहराने का आदेश दे सकता है।

(iv) छात्र की प्रगति का ताजा से ताजा अभिलेख और उसकी सफलता या विफलता की सूचना कम्प्यूटर अपनी संग्रह प्रणाली मे रखता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कम्प्यूटर प्रबन्धित अनुदेशन मे छात्रो के लिए कम्प्यूटर यह निर्धारित करता है कि वह यह क्या पढ़े, करे, कैसे पढ़े और कितना पढ़े, पढ़ने के पश्चात उसने कितना सीखा इसकी पूरी जांच कर सारी सूचनाओ को संग्रहित करता है। कम्प्यूटर प्रतिबन्धित अनुदेशन की प्रक्रिया को चित्र 6 3 की सहायता से प्रस्तुत किया जा सकता है।



चित्र 6 3 कम्प्यूटर प्रबन्धित अनुदेशन की प्रक्रिया (Process of CMI)

कम्प्यूटर प्रबन्धित मूल्यांकन (Computer Managed Evaluation)

कम्प्यूटर म भण्डारण की अपूर्व क्षमता के कारण मूल्यांकन की प्रक्रिया में इसका सर्वोत्तम उपयोग सम्भव है। प्रत्येक छात्र के विषय में समग्र जानकारी कम्प्यूटर में संग्रहित की जा सकती है। निश्चित उद्देश्यों की कसौटी पर छात्रो की प्रगति को कम्प्यूटर अविलम्ब परख सकता है। जो कार्य एक शिक्षक संचयी अभिलेख (cumulative record) के आधार पर कई दिनों में कर सकता था उसे कम्प्यूटर

तत्क्षण प्रस्तुत करता है। कम्प्यूटर के भडारण कक्ष म शक्षिक उद्देश्या तथा मूल्याकन की अन्य कसौटियो को सग्रहित किया जाता है। छात्रो की प्रगति का रिकार्ड भी कम्प्यूटर रखता है। कसौटी और प्रगति की तुलना कर कम्प्यूटर यह बताता है कि छात्र शक्षिक उद्देश्यो को प्राप्त कर सका या नही ? वह यह भी बता सकता है कि छात्र किन किन विषयो म कहाँ तक पिछडा हुआ है और इस पिछडेपन को दूर करने के लिए उस आगे क्या करना चाहिए अर्थात उसे कौन सा प्रोग्राम लेना चाहिए। इस प्रकार हम देखते हैं कि कम्प्यूटर सकलनात्मक (summative), निर्माणात्मक (formative) निदानात्मक (diagnostive), और नियोजनात्मक (placement) चारो ही प्रकार के मूल्याकन का प्रबन्ध करने म सक्षम है।

कम्प्यूटर के अन्य अनुदेशनात्मक उपयोग (Other instructional uses of Computer)

शक्षिक कायक्रमो म कम्प्यूटर के अनेक प्रयोगो की सम्भावनाएँ हैं। उनम से कुछ प्रमुख क्षेत्र जिनम इसका उपयोग अनुदेशनात्मक प्रक्रिया मे बहुत प्रभावकारी रहा है निम्नलिखित हैं

(i) ड्रिल और अभ्यास (Drill and practice)—ड्रिल एव अभ्यास के लिए छात्र विशिष्ट प्रकार से निर्मित विद्युत टाइपराइटर के सामने बठते हैं। यह टाइपराइटर कम्प्यूटर मे टेलीफोन लाइन द्वारा जुडा रहता है। छात्र अपने नाम और कोड नम्बर द्वारा अपनी पहचान करता है। कम्प्यूटर पहला प्रश्न मशीन पर टाइप करता है। छात्र उसका उत्तर देता है। इस प्रकार पाठ का अभ्यास प्रारम्भ हो जाता है। कम्प्यूटर प्रत्येक छात्र के क्रियाकलाप का लेखा रखता जाता है। शिक्षक जब चाहे छात्रो के काय के विषय म कम्प्यूटर स यह लेखा प्राप्त कर सकता है। यदि छात्र गलतियाँ करता है तो उसे शाखीय अभिक्रम पर उपचारात्मक अभ्यास के लिए मोड दिया जाता है जिस प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन मे छात्र अपनी गति से आगे बढता है तत्काल प्रतिपुष्टि पाता है और व्यक्तिगत शिक्षण प्राप्त करता है उसी प्रकार कम्प्यूटर भी करता है।

(ii) ट्यूटोरियल और सवाद (Tutorial and dialogue)—कम्प्यूटर प्रोग्राम छात्रा को किसी भी विषय वस्तु को पढ़ाता है। विषय-वस्तु की व्याख्या कम्प्यूटर मौखिक रूप से आडियो टेप द्वारा करता है और आवश्यक दृष्टिगत प्रस्तुतीकरण कैथोड रे ट्यूब द्वारा छात्र कम्प्यूटर से सम्बन्धित टाइपराइटर द्वारा या प्रकाश लेखनी (light pen) द्वारा स्क्रीन पर लिखकर अपनी अनुक्रियाएँ करता है। छात्र की अनुक्रिया पर कम्प्यूटर पुन छात्र से वार्ता करता है। इस प्रकार शक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति तक सवाद चल सकता है।

(iii) अनुरूपण और क्रीडन (Simulation and gaming)—अनुरूपण एव शक्षिक क्रीडन का प्रयोग द्वितीय विश्व युद्ध के समय से प्रारम्भ हुआ है। युद्ध की व्यूह रचना तथा उसकी वास्तविक प्रक्रिया, वास्तविक युद्ध स्थल पर सिखाना अत्यन्त

कठिन एव जोखिम से भरा हुआ काय है। अत आधुनिक युद्ध कौशल के प्रशिक्षण मे अनुरूपित परिस्थितियो का प्रयोग एक प्रकार से अनिवाय आवश्यकता बन गयी। शिक्षा के क्षेत्र मे इस प्रविधि का प्रयोग नवीन है। लगभग 25 वष पूव कश ने 1961 मे ओरेगॉन विश्वविद्यालय मे शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र मे इसका सवप्रथम उपयोग किया। अब तो अनुरूपित शिक्षण का महत्व इतना बढ गया है कि अमेरिका मे 1961 मे 'राष्ट्रीय क्रीडा परिषद' (National Game Council) और जमनी मे 1970 मे 'अन्तर्राष्ट्रीय अनुरूपण एव क्रीडा सस्थान' (International Simulation and Game Assoc ation) की स्थापना की गयी। इस महत्वपूण नवाचार ने कम्प्यूटर की सहायता से और अधिक लोकप्रियता अर्जित कर ली है। कम्प्यूटर की सहायता से अनुरूपण और शक्षिक क्रीडन को प्रस्तुत कर छात्रो को अभिप्रेरित किया जाता है। इससे उनका आत्मविश्वास बढता है। कम्प्यूटर विभिन्न आयु वग और परिपक्वता स्तर के लिए कायक्रम प्रस्तुत कर सकता है। परम्परागत कक्षाओ मे चलने वाले अनुरूपण की तुलना मे कम्प्यूटर द्वारा प्रस्तुत अनुरूपण और क्रीडन वास्तविक परिस्थितियो के बहुत निकट होता है, अत छात्रो को इससे अधिक लाभ मिलता है।

(iv) सूचना प्रबन्धन (Information handling)—कम्प्यूटर की सूचना सग्रह प्रणाली को शक्षिक मापन, मूल्याकन, मागदशन तथा परामश के लिए बहुत प्रभावी ढग से प्रयोग मे लाया जाता है। कम्प्यूटर प्रत्येक छात्र का सम्पूर्ण सबधी अभिलेख अपने सग्रह प्रणाली मे रखता है और आवश्यकता पडने पर किसी भी रोजगार या व्यवसाय के लिए आवश्यक योग्यताओं व क्षमताओ से उसका मिलान कर छात्रो को समुचित मागदशन एव नियोक्ता को व्यावसायिक चुनाव मे सहायता प्रदान करता है।

कम्प्यूटर की न्यूनताएँ (Limitations of Computer)

कम्प्यूटर ने छात्रों के लिए व्यक्तिगत शिक्षण प्रदान करने म पूरी सफलता प्राप्त करन की सम्भावना को बहुत आगे बढा दिया है। फिर भी इसकी सबसे बडी न्यूनता है—इसका बहुत कीमती होना। जिस देश मे विद्यालयो मे 'श्यामपट्ट' तक की व्यवस्था नही हो पायी है वहाँ कम्प्यूटर की व्यवस्था करना एक स्वप्न मात्र है। कम्प्यूटर शक्षिक कायक्रमों में छात्रो को मानव सम्बन्धो, स्नेह और सहानुभूति से वचित करता है। इसके द्वारा शिक्षित बालको म सामाजिक एव मानवीय मूल्यो के समुचित विकास की सम्भावना अति न्यून हो जाएगी। कम्प्यूटर एक मशीन है। सभी छात्रो को एक ही ढर्रे से शिक्षित करने के लिए वह उनकी वयक्तिक विशेषताओ और सजनात्मक क्षमताओ को धीरे धीरे नष्ट करता है।

भारत मे कम्प्यूटर शिक्षा का प्रसार

अनेक शैक्षिक न्यूनताओ के बावजूद भी शिक्षा म कम्प्यूटर के प्रयोग का नवाचार अपनी विशेषताओ और बहुमुखी उपयोगिता एव लाभों के कारण दिन प्रतिदिन

व्यापक बनता जा रहा है। समृद्ध देशो जैसे अमरिका के 62% प्राथमिक स्कूलो, 81% माध्यमिक स्कूलो और 86% उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में कम से कम एक माइक्रो कम्प्यूटर है। इंग्लैण्ड में कम्प्यूटर की शिक्षा सन् 1982 में स्कूल स्तर पर शुरू की गयी और आज यहाँ के प्रत्येक माध्यमिक और प्राथमिक विद्यालय में कम से कम एक माइक्रो कम्प्यूटर है। जापान में तो इससे भी अधिक कम्प्यूटर स्कूलों में उपलब्ध है।

भारत में भी स्कूल एवं कालेज स्तर पर कम्प्यूटर की शिक्षा के लिए प्रयास 1984 से ही प्रारम्भ हो गया है।

छठी पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष (1984 85) में शिक्षण संस्थाओं में कम्प्यूटर की शिक्षा के शुभारम्भ के लिए भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने कम्प्यूटर लिटरेसी एण्ड स्टडीज इन स्कूल्स (Computer Literacy and Studies in Schools CLASS) नामक एक पाइलट प्रोजेक्ट अपने हाथ में लिया। इस प्रोजेक्ट में डिपार्टमेंट आफ इलेक्ट्रानिक इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नालोजी, एन० सी० ई० आर० टी० से दूस बोर्ड ऑफ सेकेण्डरी एजुकेशन और केन्द्रीय विद्यालय संगठन का सहयोग था।

क्लास (CLASS) प्रोजेक्ट के अन्तर्गत 26 और 27 मार्च, 1984 को राष्ट्रीय स्तर पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। देश की 40 संस्थाओं और एजेन्सियों के लगभग 100 प्रतिनिधियों ने इसमें भाग लिया। भारत में कम्प्यूटर शिक्षा को स्कूल और कालेज स्तर पर प्रदान करने हेतु इस कार्यशाला ने निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये

(i) छात्रों को कम्प्यूटर के विषय में सामान्य ज्ञान प्रदान करना और उसकी उपयोगिता के विषय में बताना।

(ii) मानव जीवन के प्रत्येक आयाम में कम्प्यूटर के प्रयोग के क्षेत्र विस्तार से छात्रों को परिचित करना और सूचना परिकलन एवं संसेचन उपकरण (information processing tool) के रूप में इसकी क्षमता की जानकारी देना।

(iii) कम्प्यूटर से सम्बन्धित रहस्यमयता को दूर करना और इससे लोगों को परिचित कराना ताकि वे आसानी से इसका उपयोग कर सकें। इसके द्वारा व्यक्ति की रचनात्मकता का विकास होगा और वह कम्प्यूटर के उन सार्थक प्रयोगों को पहचान सकेगा जो बालकों के समीपस्थ वातावरण से सम्बन्धित हैं।

इस प्रोजेक्ट में देश के 250 स्कूलों को सम्मिलित किया गया जिनमें कम्प्यूटर की शिक्षा प्रदान करने की योजना बनायी गयी। इस योजना में इस बात पर बल दिया गया है कि शिक्षक एवं छात्र कम्प्यूटर संचालन के कौशल को सीख जाएँ। इसमें इस बात पर कम बल दिया गया कि उन्हें कम्प्यूटर विधान के सिद्धान्त सिखाये जाएँ। इसके अन्तर्गत जिन बातों पर विशेष ध्यान दिया गया, वे थीं

(i) कम्प्यूटर शिक्षा को प्रारम्भ में उच्चतर माध्यमिक विद्यालय स्तर पर चलाया जाय और धीरे धीरे इसे माध्यमिक एवं प्राथमिक शिक्षा स्तर तक लाया जाय।

(ii) कम्प्यूटर की शिक्षा पाठ्यक्रम का एक अभिन्न भाग होना चाहिए भले ही बालक किसी भी वैकल्पिक विषय को चुने।

(iii) कम्प्यूटर साक्षरता प्रोग्राम' छात्रों को उसकी बहुमुखी प्रतिभा से परिचित करायेगा और मानव जीवन के सभी पक्षों में उसके प्रयोग की जानकारी देगा।

इस प्रोजेक्ट में ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्रों को लिया गया। उन्हें कम्प्यूटर शिक्षा प्रदान करने के लिए 30 लेक्चर और 30 प्रायोगिक कक्षाओं का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की सफलता के लिए इन 250 विद्यालयों के शिक्षकों को भी प्रशिक्षित करने की योजना बनायी गयी थी। प्रशिक्षण देने का कार्य देश के विभिन्न भागों में स्थित संसाधन केन्द्र (resource centre) कर रहे हैं।

क्लास प्रोजेक्ट का कार्यान्वयन अपनी गति से चुने हुये 250 विद्यालयों में चल रहा है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में नयी शिक्षा नीति के तहत कम्प्यूटर शिक्षा के विस्तार पर बल दिया गया है। किन्तु कम्प्यूटर का विस्तार क्लास प्रोजेक्ट के मूल्यांकन, उसकी सफलता के स्तर एवं कम्प्यूटर की भारत में लोकप्रियता पर निर्भर करेगी।

अभ्यास के प्रश्न

1 कम्प्यूटर की बुनियादी संरचना का विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत कीजिए।
2 मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कम्प्यूटर अपनी किन विशेषताओं के कारण दिन प्रतिदिन अधिक लोकप्रिय होता जा रहा है?
3 कम्प्यूटर सह अनुदेशन क्या है? इसकी कार्य प्रणाली और प्रमुख मान्यताओं को स्पष्ट कीजिए।
4 कम्प्यूटर सह अनुदेशन के लाभों एवं सीमाओं की विवेचना कीजिए।
5 कम्प्यूटर सह अनुदेशन एवं कम्प्यूटर प्रबंधित अनुदेशन में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
6 संगणक व्यवस्थापित निर्देशन का प्रत्यय स्पष्ट कीजिए।
(गोरखपुर विश्वविद्यालय 1989)
7 कम्प्यूटर के विभिन्न अनुदेशनात्मक उपयोगों पर प्रकाश डालिए।
8 भारत में कम्प्यूटर शिक्षा के प्रसार की सम्भावनाओं पर टिप्पणी लिखिए।
9 संगणक व्यवस्थापित मूल्यांकन का प्रत्यय स्पष्ट कीजिए।
(गोरखपुर विश्वविद्यालय 1989)

□□

7

अनुदेशनात्मक मॉड्यूल

[INSTRUCTIONAL MODULE]

सामान्य कक्षाओं में सीखने की प्रक्रिया प्रायः पाठ्य पुस्तकों और मौखिक पाठों या लेक्चर के माध्यम से चलती है। अभिक्रमित अधिगम सामग्रियों (programmed learning materials) के प्रादुर्भाव से अधिगम अनुभव अत्यन्त सरचित और लिखित रूप में छात्रों को मिलने लगे हैं। लेक्चर विधि में अधिगम सामग्रियों को शिक्षक पूर्णतया मनचाहे ढंग से छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। दूसरी ओर अभिक्रमित सामग्रियाँ अधिगम अनुभवों को पूर्णतया सरचित (structured) रूप में प्रस्तुत करती हैं। अनुदेशनात्मक मॉड्यूल एक ऐसा नवाचार है जो इन दोनों के बीच में आता है शिक्षक और छात्र को सिखाने और सीखने में माड्यूल पद्धति के अन्तर्गत स्वतन्त्रता के साथ साथ एक निश्चित क्रमानुक्रम का पालन करते हुए अधिगम उद्देश्यों तक पहुँचने में सहायता मिलती है।

मॉड्यूल की परिभाषा—मॉड्यूल की प्रकृति एवं स्वरूप को समझने के लिए इसकी परिभाषाओं पर हमें ध्यान देना होगा। रॉबर्ट हाउस्टन एवं उनके सहयोगियों ने माड्यूल को इन शब्दों में परिभाषित किया है—"मॉड्यूल अनुभवों का एक ऐसा सेट या समूह है जिसकी रचना अधिगमकर्त्ताओं के द्वारा निर्दिष्ट या विशिष्ट उद्देश्यों को प्रदर्शित करने में सहायता प्रदान करती है।"[1]

एरेन्डस और उनके सहयोगियों ने अनुदेशनात्मक मॉड्यूल को इस प्रकार परिभाषित किया है—"अधिगम क्रियाओं का एक ऐसा सेट या समूह है जो छात्रों को उपलब्धि के एक उद्देश्य या उद्देश्यों के एक समूह को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करता है।"[2]

---

1. Module is a set of experiences designed to facilitate the learner's demonstration of specified objectives (W R Houston et al, *Developing Instructional Module* Houston University of Houston, 1972)
2. 'A set of learning activities intended to facilitate the student's achievement of an objectives or set of objectives (R L Arendset et al *Handbook for the Development of Instructional Modules in Competancy Based Teacher Education Programmes*, (Synacuse, Ny The Centre for the Study of Teaching, 1971)

इसी प्रकार खासनवीस ने लिखा है कि माड्यूल एक ऐसी विधि है "जो छात्र की अधिगम प्रक्रिया को इस प्रकार प्रणालीबद्ध करती है कि छात्रो को अपने अधिगम अनुभवो का उत्तरदायी ठहराया जा सके।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि शिक्षण मे मॉड्यूल एक अत्याधुनिक नवाचार है। इसके द्वारा छात्रों के लिए एक ऐसा अधिगम कायक्रम प्रस्तुत किया जाता है जिसको छात्र अपनी क्षमता और गति के अनुसार पूण करने के लिए स्वतन्त्र हैं। इसके प्रयोग द्वारा शिक्षक यह चाहते हैं कि छात्र निर्धारित अधिगम उद्देश्यों को पूरी तरह प्राप्त कर लें।

माड्यूल का बुनियादी स्वरूप (Basic Feature of Module)

परिभाषाओ की चर्चा करते समय हमने कहा कि एक मॉड्यूल अधिगम अनुगम अनुभवो का एक स्वत पूण समूह या इकाई हैं जो सरचित होती है और जिसके द्वारा छात्रो को पूव निर्धारित अधिगम उद्देश्यो तक पहुचने मे सहायता मिलती है। अतः किसी भी मॉड्यूल का बुनियादी स्वरूप निम्नलिखित विशेषताओ से युक्त होता है

(i) **विवरणिका या मूलाधार (Prospectus or Rationale)**—मॉड्यूल का प्रारम्भ विषय वस्तु की गहन भूमिका से होता है। भूमिका के तुरन्त बाद ही मॉड्यूल मे विवरणिका या मूलधार को प्रस्तुत किया जाता है। इसके द्वारा यह दर्शाया जाता है कि मॉड्यूल छात्र के लिए क्यो आवश्यक है और मॉड्यूल मे अधिगम अनुभवो को किस प्रकार से तारतम्य एव तक के आधार पर सजोया गया है। इसको पढने मात्र से छात्रो को तुरन्त समझ मे आ जाता है कि यह मॉड्यूल उनके लिए उपयुक्त या लाभप्रद है या नही।

(ii) **पूर्वापेक्षा (Pre requisite)**—मूलाधार के प्रस्तुतीकरण के तुरन्त पश्चात एक मॉड्यूल मे उन बातों का उल्लेख कर दिया जाता है जिनको जानना मॉड्यूल मे दी गयी सामग्री को सीखने के लिए आवश्यक है। यदि छात्र के पास पूर्वापेक्षित ज्ञान या कौशल नही है तो उन्हे उस माड्यूल से सीखना सुगम नही होगा। अत मॉड्यूल मे उन स्रोतो का भी उल्लेख कर दिया जाता है जिनको पढकर या समझ कर छात्र मॉड्यूल से सीखने के लिए अपेक्षित पूवज्ञान या कौशल को अर्जित कर सकते हैं।

(iii) **उद्देश्य (Objectives)**—मॉड्यूल का तीसरा प्रमुख अग है—उद्देश्य

[1] "To Systematise the learning process of students and to hold the student accountable for his 'learning experiences' (P K Khasna vis *Teaching of Social Studies Through Instructional Modules The Education Quarterly* Vol 28 No 1 New Delhi, Ministry of Education and Social Welfare, Government of India, 1976)

कथन । इसके अन्तर्गत अधिगम या शिक्षण उद्देश्यों को पहले व्यापक रूप म प्रस्तुत किया जाता है । तत्पश्चात प्रत्येक व्यापक उद्देश्य को छोटे छोटे व्यवहारपरक या विशिष्ट उद्देश्यो के रूप म प्रस्तुत किया जाता है । इससे यह लाभ होता है कि छात्रो के अधिगम को वस्तुनिष्ठ ढग से निरीक्षण करते हुए मापा जा सकता है।

(iv) क्रिया कलाप (Activities)—प्रत्येक व्यावहारिक उद्देश्य के लिए मॉड्यूल मे एक क्रिया-कलापो को करने के लिए सकेत या काय प्रारूप भी दिए जाते हैं जिनको करने मात्र से छात्र शक्षिक उद्देश्यो को प्राप्त कर लेते हैं । ये कार्य पुस्तक पढने, माड्यूल मे दी गयी लिखित सामग्री पढने, एक फिल्म देखने या एक स्लाइड या वीडियो टेप देखने, सामूहिक परिचर्चा करने, प्रयोगशाला म काय करने, कोई दस्तकार्य करने आदि का काय हो सकते हैं । एक अच्छे मॉड्यूल म उद्देश्य तक पहुँचने के लिए कई एक कार्यों का उल्लेख रहता है । अपनी आवश्यकता, योग्यता, रुचि एव सुविधा के अनुसार छात्र अधिगम उद्देश्यो तक पहुचने क लिए इनमे से एक या एक से अधिक क्रिया कलाप को चुन सकते हैं । सामान्यत मॉड्यूल लेखक प्रत्येक क्रिया कलाप क पश्चात छात्रो के लिए स्व-परीक्षण प्रश्नावली या काय का भी लिखना पस द करते है । इसके द्वारा क्रिया कलाप की समाप्ति के पश्चात छात्र यह स्वय जान लेते हैं कि वे अधिगम उद्देश्यो तक किस सीमा तक पहुचते हैं । अत मॉड्यूल मे स्वप्रतिपुष्टि (self feedback) की व्यवस्था रहती है ।

(v) पश्चात् परीक्षण (Post test)—प्रत्येक मॉड्यूल मे अधिगम उद्देश्यों के स दभ मे छात्रो की प्रगति की जाँच करने क लिए पश्चात परीक्षण भी अनिवाय रूप से रहता है । उसके द्वारा छात्र यह ज्ञात कर लेते हैं कि उ होंने प्रत्येक अधिगम उद्देश्य को प्राप्त किया या नहीं । पश्चात् परीक्षण, बुनियादी तौर पर कसौटी-स द र्भित परीक्षण (criterion referenced test) होते हैं ।

मॉड्यूल के इन बुनियादी अगो के अतिरिक्त कुछ मॉड्यूल म पूव परी क्षण (Pre test) का भी समावेश किया जाता है । कुछ मॉड्यूल लेखक पूव और पश्चात परीक्षण एक ही परीक्षण के द्वारा करना पस द करत हैं ।

मॉड्यूल के स्वरूप और अन्य सामान्य शिक्षण माध्यमों में अन्तर (Difference between module and other usual media)—मॉड्यूल के बुनियादी स्वरूप की विवेचना से यह स्पष्ट है कि सामा य प्रचलित शिक्षण माध्यमो और मॉड्यूल मे निम्न अ तर हैं —

(i) मॉड्यूल मे उद्देश्य छात्रो के लिए स्पष्ट और बाहर से साफ-साफ दिखाई देने वाले होत हैं ।

(ii) मॉड्यूल मे दिये गये क्रिया कलाप उद्देश्यो स जुडे और उनको प्राप्त करने के लिए सवथा उपयुक्त होते हैं ।

(iii) मॉड्यूल म दिये गये क्रिया कलाप छात्रो को चुनाव के लिए अनेक वकल्पिक कायक्रम प्रस्तुत करते हैं।

(iv) माड्यूल म अधिगम सामग्री, अधिगम उद्देश्यो, ज्ञान के स्रोतो, क्रिया-कलापों और मूल्याकन मे स्पष्ट सम्बध रहता है। प्रत्येक एक दूसरे से साथक दृष्टि से रहते हैं।

(v) सतत मॉडयूल एक स्वत पूण अधिगम सामग्रियो का ऐसा समूह है जिसके प्रत्येक तत्व एक दूसरे से इस प्रकार जुडे रहते हैं कि अधिगम स्रोतो का उपयोग करते हुए छात्र निश्चित रूप से अधिगम उद्देश्यो तक पहुच जाते हैं।

मॉडयूल निर्माण के पद (Steps in the preparation of the module)

मॉड्यूल के निर्माण अथवा लेखन मे सामान्यत निम्नलिखित पदो का अनुसरण किया जाता है

(i) प्रथम पद मूलाधार लेखन (Rationale)—मॉड्यूल की आवश्यकता महत्व आदि के विषय मे सक्षेप मे लिखना। यह भी लिखा जाता है कि माडयूल को पूरी तरह पढ़ना/समाप्त करना छात्रो के लिए क्यो महत्वपूण है?

(ii) द्वितीय पद : उद्देश्य लेखन (Objective)—उद्देश्यो को व्यवहारपरक शब्दों (behavioural term) मे लिखा जाता है। मॉडयूल को समाप्त करने के पश्चात छात्र क्या कर सकेंगे या उन्हें क्या करके दिखाना होगा यह बात स्पष्ट शब्दो मे लिखी जाती है। किन परिस्थितियो म, किस स्तर का, कितने समय मे, काम करना होगा या अपेक्षित व्यवहार प्रदर्शित करना होगा और व्यवहार का क्या मानदण्ड होगा यह सभी बातें व्यवहारपरक उद्देश्य लेखन म सम्मिलित होती हैं।

(iii) ततीय पद पूव मूल्यांकन या परीक्षण (Pre assessment or Pre test)—मॉडयूल लेखक एक परीक्षण का निर्माण करता है। जिसके द्वारा उसे यह ज्ञात करने मे आसानी होती है कि सीखने वाले के पास माडयूल को सीखने के लिए पूर्व ज्ञान या पूर्वापेक्षायें कितनी मात्रा म है।

(iv) चतुथ पद अधिगम क्रिया कलाप (Learning activities)—अधिगम उद्देश्यो को प्राप्त करने क लिए वकल्पिक क्रिया कलापो की सूची तयार करना और लिखना। साथ ही साथ यह बात भी लिखी जाती है कि किन किन स्रोतो से छात्र वाछित ज्ञान या कौशल को प्राप्त कर सकते हैं।

(v) पचम पद पश्चात् मूल्यांकन अथवा परीक्षण (Post assessment or test)—छात्रो के अधिगम की परीक्षा अन्त म लेने के लिए मॉड्यूल के उद्देश्यो के सन्दभ म परीक्षण का निर्माण करना। इस परीक्षण के उपयोग द्वारा यह ज्ञात होता है कि छात्र ने मॉडयूल को सफलतापूवक सीखा है या नही। क्या छात्र अगले मॉडयूल को सीखने क योग्य हो गया है? यह भी इस परीक्षण द्वारा ज्ञात होता है।

(vi) षष्ठम पद : उपचार (Remediation)—यदि पश्चात् परीक्षण से

यह ज्ञात होता है कि छात्र मॉड्यूल को सफलतापूर्वक पूर्ण नहीं कर सका है तो उसके लिए उपचारात्मक निर्देश देना। सामान्यत छात्रों को ऐसी स्थिति में माड्यूल को पुन प्रारम्भ से पढ़ने के लिए कहा जाता है। यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक छात्र माड्यूल के सभी उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर लेते।

माड्यूल का निर्माण एक सहकारी प्रयास है जिसमें विषय के विशेषज्ञ, माध्यम विशेषज्ञ और विशिष्ट योग्यता प्राप्त शिक्षक मिलकर कार्य करते हैं। माड्यूल को अन्तिम रूप देने के पहले उसका एक छोटे समूह पर प्रयोग करके यह ज्ञात कर लिया जाता है कि यह अधिगम उद्देश्यों तक छात्रों को पहुँचाने में समर्थ है या नहीं। थोड़ी भी कमी होने पर इसको सुधार कर स्वतःपूर्ण बनाने की चेष्टा की जाती है।

मॉड्यूल का उदाहरण (Sample of Module)

विषय (Subject)	मॉड्यूल
मॉड्यूल शीर्षक (Title of Module)	मॉड्यूल लेखन
पूर्वापेक्षाएँ (Pre requisites)	1 स्कीनर के अधिगम मनोविज्ञान का ज्ञान 2 व्यवहारपरक शब्दावली में अधिगम उद्देश्य लिखने का कौशल
स्रोत (Resources)	1 कोई भी भली भाँति लिखा हुआ मॉड्यूल 2 माड्यूल लेखन पर कोई पुस्तक, जैसे— (i) Developing Instructional module by W R Houston (ii) Science and Human Behaviour by B F Skinner
तर्काधार (Rationale)	माड्यूल एक शैक्षिक नवाचार है। यह लेक्चर विधि की स्वतन्त्रता और अभिक्रमित अनुदेशन के संरचनात्मक गुणों से सम्पन्न शिक्षण तकनीकी है। इसके माध्यम से छात्र अपनी गति से विभिन्न क्रिया कलापों द्वारा सक्रिय ढंग से अधिगम करता हुआ शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त कर लेता है। माड्यूल एक स्वत पूर्ण शिक्षण इकाई है जिसमें अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अधिगम सामग्रियों और क्रियाकलापों को इस प्रकार पिरोकर रखा जाता है कि उनके द्वारा छात्र अधिगम उद्देश्यों को आसानी से प्राप्त कर लेते हैं। अत एव शिक्षक होने के नाते अपने मॉड्यूल लेखन की प्रक्रिया का समझ लिया तो

आप विभिन्न विषयो पर अच्छा माडयूल लिखकर छात्रो की बहुत बडी सहायता कर सकते हैं।
(तार्किक पृष्ठभूमि यहां केवल नमूने के तौर पर सक्षेप में दी गयी ह। पूण तार्किक पृष्ठभूमि लिखने के लिए इस अध्याय के प्रारम्भिक पृष्ठो को उदधृत किया जा सकता ह।)

मॉड्यूल के उद्देश्य (Module objectives)

मॉड्यूल लेखन की योग्यता विकसित करना

व्यवहारपरक उद्देश्य (behavioural objectives)—

(1) इसको पढने के पश्चात् मॉड्यूल के सम्प्रत्यय और स्वरूप को समझ सकेंगे।

(2) माडयूल के निर्माण मे आने वाले विभिन्न पदो को समझ सकेंगे।

(3) किसी भी मॉडयूल की आलोचनात्मक समीक्षा कर सकेंगे।

(4) अपनी रुचि के किसी भी विषय के किसी भी इकाई पर मॉडयूल लिख सकेंगे।

पूव परीक्षण (Pre test)—(1) अपनी पसद का कोई विषय लेकर उसकी किसी इकाई को चुनकर उसके पाँच व्यवहारपरक अधिगम उद्देश्यो को लिखिए।

(2) स्कीनर के अधिगम मनोविज्ञान के पाँच मुख्य सम्प्रत्ययो की सूची प्रस्तुत कीजिए।

शिक्षण चिन्हांकन सूची (Teacher's Check List)

1	विपय चुना	हां	नही
2	इकाई चुना	हां	नही
3	व्यवहारपरक उद्देश्य	हां	नही
	लिखे, हां, तो कितन	सख्या	
4	स्कीनर के सम्प्रत्यय	हां	नही
	लिखे, हां तो कितने	सख्या	
	दक्षता स्तर	कम से कम पाँच उद्देश्य और स्कीनर के सम्प्रत्यय लिखना	
	मान्य स्तर	कम से कम तीन उद्देश्य और स्कीनर के सम्प्रत्यय लिखना।	

(यदि मॉडयूल पढने वाले ने तीन से कम सही उत्तर दिये हैं तो इसका अथ है कि इस मॉडयूल से लाभ उठाने की पूर्वापेक्षाएँ या आवश्यक पूव ज्ञान उसके पास नही है अत यह मॉड्यूल उसके योग्य नही है। शिक्षक को चाहिए कि छात्र को आदेश दे कि वह व्यवहारपरक शब्दावली मे उद्देश्य लिखने एव स्कीनर के मनोविज्ञान का अध्ययन कर इन दोनों विषयो मे दक्षता प्राप्त करे। तत्पश्चात् इस मॉड्यूल को पढ़े।)

अधिगम अनुभव या क्रिया कलाप (Learning Experience I)

व्यवहारपरक उद्देश्य — मॉड्यूल के सम्प्रत्यय और उसके आकार को समझ

क्रिया कलाप
1. मॉड्यूल की परिभाषा और उसके बुनियादी तत्त्व के विषय में पृष्ठ पर पढ़िए।
2. पाँच छात्रों की टोली बनाकर मॉड्यूल की परिभा के स्वरूप पर चर्चा कीजिए।
3. पूर्व परीक्षण के प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

प्रतिपुष्टि
1. अपने उत्तरों को 'उत्तर तालिका' से मिलाइए।
2. अपने निष्कर्ष के बारे में निर्देशन प्राप्त कीजिए।

अधिगम अनुभव या क्रिया कलाप II (Learning Experience II)

व्यवहारपरक उद्देश्य — मॉड्यूल निर्माण के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे।

क्रिया कलाप
1. मॉड्यूल निर्माण के विभिन्न चरणों को पृष्ठ पर पढ़िए।
2. पाँच की टोली में बैठकर निर्माण के विभिन्न चरणों और उनके निहितार्थ पर चर्चा करिए।
3. अपने अधिगम को पूर्व परीक्षण परीक्षणों के द्वारा जाँच कीजिए।

प्रतिपुष्टि
1. अपने उत्तरों को उत्तर तालिका से मिलाइये।
2. अपने निष्कर्ष के बारे में निर्देशन प्राप्त कीजिए।

अधिगम अनुभव या क्रिया कलाप III (Learning Experience III)

व्यवहारपरक उद्देश्य
1. एक मॉड्यूल की योजना का मूल्यांकन कर सकेंगे।
2. किसी चुने हुए विषय पर एक मॉड्यूल की [illegible]

पूर्व पश्चात् परीक्षण—

(1) पांच व्यवहारपरक उद्देश्यों को लिखिए।

(2) स्कीनर के अधिगम सम्प्रत्ययो मे से कम से कम पांच की सूची प्रस्तुत कीजिए।

(3) एक मॉड्यूल, एक महत्त्वपूर्ण पाठ्य पुस्तक से किन तीन बिन्दुओ पर भिन्न है ?

(4) एक मॉड्यूल के बुनियादी घटक क्या हैं ?

(5) मॉड्यूल का प्रयोग सामूहिक अधिगम में किस प्रकार किया जा सकता है ?

(6) मॉड्यूल के द्वारा पठन पाठन मे भावात्मक शक्षिक उद्देश्यो को किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है ?

(7) मॉड्यूल निर्माण मे आने वाले विभिन्न पद कौन-कौन से हैं ?

(8) मॉड्यूल मे क्रिया कलापों को क्यो रखा जाता है ?

(9) मॉड्यूल की समीक्षा के लिए कसौटियो का निर्माण कीजिए।

(10) अपने द्वारा चुने हुए किसी विषय पर एक मॉड्यूल की रूपरेखा लिखिए।

उपचार (Remediation)—यदि उपयु क्त परीक्षण मे छात्र सभी प्रश्नो का सही उत्तर नही दे पाते तो उन्हें मॉड्यूल को पुन पढने और अन्य स्रोत सामग्रियो का उपयोग करने का निर्देश दिया जाता है और यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक परीक्षण के सभी प्रश्नो के सही उत्तर छात्र नही दे देते।

मॉड्यूलर सेड्यूलिंग (Modular Scheduling)

आजकल विद्यालय मे समय सारिणी सुनिश्चित एव अपरिवतनीय रूप मे निर्मित की जाती है। इसमे जिस विषय के लिए जितनी घटियां (periods) निश्चित होती हैं, उस विषय मे सभी छात्रा एव शिक्षको को उतनी ही घटियां मिलती हैं। माड्यूलर सेड्यूलिंग् विद्यालयीय समय सारिणी के निर्माण म एक नवाचार हैं। इसे लचीले सेड्यूलिंग या परिवतनीय समय सारिणी आदि नाम से भी जाना जाता है। मॉड्यूल आधार पर समय सारिणी का निर्माण करन मे एक स्कूली दिवस (school day) को विभिन्न कक्षाओ या विभिन्न विषयो के लिए विभिन्न समय अन्तराल (time length) की घटियां निर्धारित की जाती हैं। सामान्यत आजकल विद्यालयो मे एक स्कूली दिवस को 40 या 45 मिनट की 7 या 8 घटियो मे बांटा जाता है। माड्यूल आधारित समय सारिणी मे एक स्कूली दिवस को 20, मिनट के समय मॉड्यूलो (समय इकाई) मे विभाजित किया जाता है। इस प्रकार की समय सारिणी मे प्रत्येक बालक 50 प्रतिशत स्कूली दिवस बडे मध्यम और छोटे छोटे आकार के छात्र अधिगम समूहो मे व्यतीत करता है और शेष 50 प्रतिशत समय व्यक्तिगत स्तर पर अपने स्वाध्याय की योजना और अपने लिए उपयुक्त अधिगम

अधिगम अनुभव या क्रिया कलाप (Learning Experience I)

व्यवहारपरक उद्देश्य — मॉडयूल के सम्प्रत्यय और उसके आकार को समझना

क्रिया कलाप
1 माडयूल की परिभाषा और उसके बुनियादी स्वरूप के विषय मे पृष्ठ पर पढिए।
2 पाँच छात्रो की टोली बनाकर मॉड्यूल की परिभाषा व स्वरूप पर चर्चा कीजिए।
3 पूव परीक्षण के प्रश्नों का उत्तर दीजिए।

प्रतिपुष्टि
1 अपने उत्तरो को 'उत्तर तालिका' से मिलाइए।
2 अपने शिक्षक से बात कर निर्देशन प्राप्त कीजिए।

अधिगम अनुभव या क्रिया कलाप II (Learning Experience II)

व्यवहारपरक उद्देश्य — मॉडयूल निर्माण के विभिन्न पदो को समझ सकेंगे।

क्रिया कलाप
1 माड्यूल निर्माण के विभिन्न पदो को पृष्ठ पर पढिए।
2 पाँच की टोली मे बैठकर निर्माण के विभिन्न पदो और उसके निहितार्थ पर चर्चा करिए।
3 अपने अधिगम को पूव पश्चात परीक्षणो के प्रश्नों द्वारा जाच कीजिए।

प्रतिपुष्टि
1 अपने उत्तरो को 'उत्तर तालिका से मिलाइये।
2 अपने शिक्षक से बात कर निर्देशन प्राप्त कीजिए।

अधिगम अनुभव या क्रिया कलाप III (Learning Experience III)

व्यवहारपरक उद्देश्य
1 एक मॉडयूल की आलोचनात्मक समीक्षा कर सकेंगे।
2 किसी चुने हुए विषय पर एक माडयूल की रूपरेखा तैयार कर सकेंगे।

क्रिया कलाप
1 पाँच की टोली मे बैठकर मॉडयूल की समीक्षा के लिए कसौटियो की सूची बनाइये।
2 कसौटियो की सूची पर माड्यूल की आलोचनात्मक समीक्षा लिखिए।
3 अपने मनोपस द विषय की किसी अधिगम इकाई पर एक मॉडयूल की रूपरेखा तयार करने क पश्चात् अपने शिक्षक को दिखाइए।

प्रतिपुष्टि
1 क्रिया कलाप II और III पर अपने शिक्षक की अभिमति प्राप्त कीजिए।
2 अभिमति के आधार पर शिक्षक से निर्देशन की माँग कीजिए।

पूर्व पश्चात परीक्षण—

(1) पाँच व्यवहारपरक उद्देश्यों को लिखिए।

(2) स्कीनर के अधिगम सम्प्रत्ययो मे से कम से कम पाँच की सूची प्रस्तुत कीजिए।

(3) एक मॉड्यूल, एक महत्त्वपूर्ण पाठ्य पुस्तक से किन तीन बिन्दुओ पर भिन्न है ?

(4) एक मॉड्यूल के बुनियादी घटक क्या हैं ?

(5) माड्यूल का प्रयोग सामूहिक अधिगम मे किस प्रकार किया जा सकता है ?

(6) मॉड्यूल के द्वारा पठन पाठन मे भावात्मक शैक्षिक उद्देश्यो को किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है ?

(7) मॉडयूल निर्माण मे आने वाले विभिन्न पद कौन कौन से हैं ?

(8) मॉड्यूल मे क्रिया कलापों को क्यो रखा जाता है ?

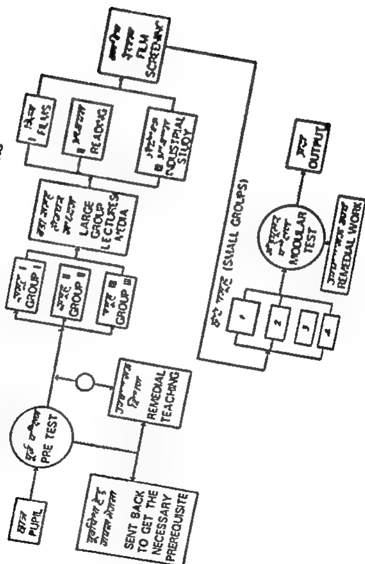
(9) मॉडयूल की समीक्षा के लिए कसौटिया का निर्माण कीजिए।

(10) अपने द्वारा चुने हुए किसी विषय पर एक मॉड्यूल की रूपरेखा लिखिए।

उपचार (Remediation)—यदि उपयुक्त परीक्षण मे छात्र सभी प्रश्नों का सही उत्तर नही दे पाते तो उन्हें मॉडयूल को पुन पढ़ने और अन्य स्रोत सामग्रियो का उपयोग करने का निर्देश दिया जाता है और यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक परीक्षण के सभी प्रश्नो के सही उत्तर छात्र नही दे देते।

मॉड्यूलर सेड्यूलिंग (Modular Scheduling)

आजकल विद्यालय मे समय सारिणी सुनिश्चित एव अपरिवर्तनीय रूप मे निर्मित की जाती है। इसम जिस विषय के लिए जितनी घटियाँ (periods) निश्चित होती हैं, उस विषय म सभी छात्रो एव शिक्षको को उतनी ही घटियाँ मिलती है। माड्यूलर सेड्यूलिंग् विद्यालयीय समय सारिणी के निर्माण मे एक नवाचार हैं। इसे लचीले सेड्यूलिंग या परिवर्तनीय समय सारिणी आदि नाम से भी जाना जाता है। माडयूल आधार पर समय सारिणी का निर्माण करने मे एक स्कूली दिवस (school day) को विभिन्न कक्षाओ या विभिन्न विषयो के लिए विभिन्न समय अन्तराल (time length) की घटियाँ निर्धारित की जाती हैं। सामान्यत आजकल विद्यालयो मे एक स्कूली दिवस को 40 या 45 मिनट की 7 या 8 घटियो मे बाँटा जाता है। मॉड्यूल आधारित समय सारिणी मे एक स्कूली दिवस को 20, मिनट के समय माड्यूलो (समय इकाई) म विभाजित किया जाता है। इस प्रकार की समय सारिणी मे प्रत्येक बालक 50 प्रतिशत स्कूली दिवस बडे मध्यम और छोटे छोटे आकार के छात्र अधिगम समूहों मे व्यतीत करता है और शेष 50 प्रतिशत समय व्यक्तिगत स्तर पर अपने स्वाध्याय की योजना और अपने लिए उपयुक्त अधिगम


PUPIL LEVEL MODULAR SCHEDULING
छात्र
PUPIL
PRE TEST
SENT BACK
TO GET THE
NECESSARY
PREREQUISITE
REMEDIAL
TEACHING
GROUP I
GROUP II
GROUP III
LARGE
GROUP
LECTURES
MEDIA
FILMS
READING
INDUSTRIAL
STUDY
FILM
SCREENING
(SMALL GROUPS)
1
2
3
4
MODULAR
TEST
REMEDIAL WORK
OUTPUT

चित्र : 7.1

सामग्रियो जैसे फिल्म, फिल्म स्ट्रिप, ऑडियो टेप, मानचित्र, पुस्तको, मॉडयूल आदि के अध्ययन मे व्यतीत करता है । इसी समय मे वह स्कूल के अ य कायक्रमो मे भाग लेता है और अपने शिक्षक या टयूटर से व्यक्तिगत स्तर पर वार्तालाप करता है या निर्देशन प्राप्त करता है । ऐसे विद्यालयो मे शिक्षक भी अपने समय के उपयोग की योजना मॉड्यूल समय सारिणी के आधार पर ही बनाते हैं । किसी भी विषय के शिक्षक या शिक्षको का समूह बैठकर यह तय करता है कि वह कितना समय समूह मे शिक्षण के लिए और कितना समय छात्रो के मूल्याकन, मार्गदशन और स्कूल के अ य क्रिया कलापो मे खच करेगा । कभी-कभी किसी विशेष विषय के स दभ मे समय के मॉड्यूल लम्बे और बडे किये जा सकते हैं अर्थात् 2 या 3 समय मॉड्यूल को मिलाया जा सकता है । उदाहरण के लिए विज्ञान को प्रायोगिक काय (practical work) के लिए प्रयोगशाला मे काय करने का पूरा अवसर प्रदान करने के लिए समय के दो-तीन मॉड्यूल को मिलाया जा सकता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि मॉड्यूल आधारित समय सारिणी निर्माण प्रक्रिया एक लचीली प्रक्रिया है ।

वैयक्तिक अनुदेशन प्रदान करने के लिए मॉड्यूल आधारित समय सारिणी निर्माण एक अत्य त उपयोगी नवाचार हैं किन्तु इसका समुचित उपयोग एव कार्या वयन करने के लिए स्कूलो को कम्प्यूटर की तकनीकी का सहारा लेना पडेगा जो अपने आप मे एक बहुत खर्चीला माध्यम है । सम्पन्न विद्यालय इस नवाचार का उपयोग छात्रो के सवागीण विकास के लिए कर सकते हैं । छात्र स्तर पर मॉडयूल आधारित समय सारिणी की योजना को चित्र 7 1 द्वारा समझा जा सकता है ।

अभ्यास के प्रश्न

1 'अनुदेशनात्मक मॉडयूल परम्परागत व्याख्यान (लेक्चर) विधि और सरचित अनुक्रमित विधि दोनो की विशेषताओ से युक्त एक नवाचार है ।' इस कथन की आलोचनात्मक समीक्षा कीजिए ।

2 अनुदेशनात्मक मॉड्यूल के बुनियादी स्वरूप की विवेचना कीजिए ।

3 मॉडयूल निर्माण के विभिन्न पदों का वणन कीजिए ।

4 अपनी पस द के किसी शैक्षिक इकाई पर एक मॉडयूल की रचना कोजिए ।

5 मॉड्यूलर शड्यूलिंग से क्या तात्पय है ? इससे छात्रो एव शिक्षको को क्या लाभ होगा ?

6 मॉड्यूल का प्रत्यय स्पष्ट कीजिए । (गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)



8

सामूहिक अनुदेशन एवं श्रव्य-दृश्य तकनीकी

[GROUP INSTRUCTION AND AUDIO VISUAL TECHNOLOGY]

शिक्षण को सहज एवं बोधगम्य बनाने के लिये श्रव्य दृश्य सामग्रियों का प्रयोग शिक्षक पुरातन काल से करते आये हैं। ज्ञान के विस्फोट के साथ-साथ ज्ञान की जटिलता बढ़ती गयी फलस्वरूप सहायक सामग्रियों का उपयोग भी। नयी नयी सहायक सामग्रियों का प्रयोग कक्षाओं एवं शिक्षा जगत में हो रहा है। शिक्षक, श्यामपट्ट के प्रयोग से आरम्भ कर एपीडायस्कोप एवं ओवरहेड प्रोजेक्टर का प्रयोग करते हुए अब स्वचालित सहायक सामग्रियों जैसे टेलीविजन एवं कम्प्यूटर के प्रयोग की ओर बढ़ रहा है। आधुनिक शिक्षण सहायक सामग्रियों को केवल सहायक सामग्री मात्र मानना उचित नहीं होगा क्योंकि शैक्षिक टेलीविजन और शैक्षिक कम्प्यूटर स्वयं ही शिक्षण अधिगम के अनेक महत्वपूर्ण अनुभव देने वाले माध्यम बन गये हैं। अतः अब श्रव्य दृश्य सामग्रियों को शैक्षिक तकनीकी का अभिन्न अंग अथवा उसकी एक महत्वपूर्ण शाखा कहना उचित होगा। शैक्षिक तकनीकी मानव अधिगम के प्रक्रम को सुधारने एवं उन्नत बनाने के लिए प्रणालियों, तकनीकियों और श्रव्य दृश्य सहायक उपकरणों का विकास, प्रयोग एवं मूल्यांकन है। अतः श्रव्य दृश्य सामग्री अब शिक्षण का बाहर से थोपा जाने वाला या इसके बाहर की वस्तु नहीं रह गयी है।

हम जानते हैं कि अधिकांश विद्यालयों में छात्रों को कक्षाओं में बैठाकर सामूहिक रूप से पढ़ाया जाता है। इन कक्षाओं में प्रवचन या भाषण या मौखिक सम्प्रेषण का सहारा लिया जाता है किन्तु मौखिक पाठ या लेक्चर द्वारा शिक्षण सामग्री का सम्प्रेषण शिक्षकों को भले ही सन्तुष्ट कर दे कि उन्होंने पाठ पढ़ा दिया या कोर्स समाप्त कर दिया किन्तु अधिकांश छात्र इस विधि से पाठ को भली भाँति नहीं समझ पाते। शैक्षिक तकनीकी उन अनेक साधनों, माध्यमों अथवा विधियों का निर्माण करती है जिनके द्वारा अधिकांश छात्र शैक्षिक उद्देश्यों तक पहुँचने में सक्षम होते हैं।

ज्ञानेन्द्रियाँ एवं अधिगम (Sense organs and Learning)

जीवन की शिक्षा ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त अनुभवों द्वारा होती है। अपने अनुभव से हम सब यह जानते हैं कि आँखों के द्वारा अनुभव, कानों से प्राप्त

अनुभवो की तुलना म अधिक प्रभावी होते है। एक दृश्य, बालको के ध्यान को केवल जल्दी आकर्षित ही नही करता अपितु उसको अधिक देर तक उसकी ओर केंद्रित भी रखता है। आज अनुभव एव अनुसधानो के आधार पर हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुचे है—

हम सीखते हैं—
1 0 प्रतिशत स्वाद द्वारा,
1 5 प्रतिशत स्पश द्वारा,
3 5 प्रतिशत सूघने द्वारा,
1 1 प्रतिशत श्रवण द्वारा,
83 प्रतिशत देखने द्वारा।
इसी प्रकार हमे याद होता है—
20 प्रतिशत, जो कुछ हम सुनते हैं।
30 प्रतिशत, जो कुछ हम देखते हैं।
50 प्रतिशत, जो कुछ हम देखते और सुनते हैं।
80 प्रतिशत, जो कुछ हम कहते हैं।
90 प्रतिशत, जो कुछ हम कहते और करते हैं।

इन निष्कर्षों से यह स्पष्ट है कि शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया म श्रव्य दृश्य सहायक सामग्री तकनीकी का कितना महत्वपूण स्थान ह।

श्रव्य दृश्य सामग्री एव उसकी उपयोगिता (Audio visual aids and their uses)

श्रव्य दृश्य सहायक सामग्रियाँ विभि न प्रकार के ऐसे उपकरण हैं जो हमारे श्रवण और दृश्य इन्द्रियो को प्रभावित करते हैं और जिनका उपयोग कक्षाओ मे अमूत ज्ञान अथवा सूचनाओ के प्रभावी प्रस्तुतीकरण के लिए किया जाता है। ये सामग्रियाँ सम्प्रत्ययो को सम्प्रेषित करने के लिए भाषा अथवा पुस्तको पर आश्रित नही होती। इस परिभाषा के अनुसार एक पाठय पुस्तक श्रव्य दृश्य सामग्री की श्रेणी म नही आती किन्तु उस पाठय पुस्तक मे मुद्रित चित्र, चाट इस श्रेणी मे आते हैं। सामान्य बोलचाल की भाषा म श्रव्य-दृश्य सामग्रियो को एक प्रक्रिया और वस्तु के रूप म समझा जाता है। इसके अ तगत 'माध्यम' (media) और 'विधि' (method) दोनो ही सम्मिलित हैं। उदाहरण के लिए फिल्म पटटी, श्रव्य टेप, वीडियो फिल्म आदि 'माध्यम के अ तगत और अभिक्रमित अनुदेशन कम्प्यूटर सह अनुदेशन, शक्षिक टेलीविजन विधि' के अ तगत आते हैं। एक बात और स्पष्ट करना होगा कि श्रव्य दृश्य तकनीकी की भाषा मे श्रव्य टेप, फिल्म पट्टी, वीडियो टेप, प्रोजेक्टर आदि हाडवेयर' (hardware) अथवा अभिय त्रण तकनीकी के अ तगत आते हैं। अभिक्रमित अनुदेशन, कम्प्यूटर सह अनुदेशन शक्षिक टी० वी० कायक्रम आदि 'साफटवेयर' (software) तकनीकी या अनुदेशन व्यवहार अथवा

शिक्षण तकनीकी के अन्तर्गत आते हैं । अतः यह स्पष्ट है कि शिक्षण एवं अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति को सरल, सहज बोधगम्य एवं मनोरंजक बनाने के लिए शिक्षक श्रव्य दृश्य सहायक सामग्रियों का प्रयोग करते हैं । सामान्यतः सहायक उपकरणों के निम्नलिखित गुण होते हैं—

(i) ये प्रत्यक्षीकरण में सहायक होते हैं ।
(ii) ये बोध वृद्धि में सहायक होते हैं ।
(iii) ये अधिगम के स्थानान्तरण में सहायक होते हैं ।
(iv) ये पुनर्बलन अथवा प्रतिपुष्टि प्रदान करते हैं ।
(v) ये सीखी गयी सामग्री के धारण (retention) में सहायक होते हैं ।

यह आवश्यक नहीं है कि सभी दृश्य सामग्रियों में उपर्युक्त सभी गुण समान मात्रा में हों । अतः शिक्षक को सहायक उपकरणों का चयन करते समय शिक्षण उद्देश्यों के सन्दर्भ में ही इनका चयन करना चाहिए ।

शिक्षण सहायक सामग्रियों का वर्गीकरण (Classification of Teaching Aids)

सहायक सामग्रियों का वर्गीकरण विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न आधारों पर किया है

1 **क्रियात्मक पक्ष पर आधारित वर्गीकरण (Classification based on functional aspect)**—कक्षा में प्रयुक्त होने वाली सहायक सामग्रियों को क्रियात्मक पक्ष के आधार पर ग्रापर (Gropper, 1966) ने निम्नलिखित दो वर्गों में विभाजित किया है

(क) **कसौटी माध्यम (Criterion media)**—इस वर्ग के अन्तर्गत वे सभी दृश्य सामग्रियाँ जैसे चित्र, मानचित्र, वास्तविक वस्तु आदि आती हैं जिनके द्वारा छात्र स्वयं वर्णन, रचना, पहचान या निष्कर्ष निकालकर यह प्रदर्शित करते हैं कि उन्होंने किस सीमा तक पढ़ाई गयी वस्तु को समझ लिया है । दूसरे शब्दों में, ये माध्यम वे कसौटियाँ हैं जिन्हें हम व्यावहारिक शब्दों में उद्देश्य लेखन के समय प्रयुक्त करते हैं, छात्र भारत की प्रमुख नदियों को भारत के दिये गये मानचित्र में प्रदर्शित करेंगे ।

(ख) **मध्यस्थ माध्यम (Mediating media)**—इस वर्ग के अन्तर्गत वे सभी श्रव्य दृश्य सहायक सामग्रियाँ आती हैं जिनका प्रयोग शिक्षक किसी घटना, तथ्य, सम्प्रत्यय का बोध कराने या समझाने के लिए करता है, अर्थात् इन सहायक सामग्रियों की सहायता से छात्र को समझाया और सिखाया जाता है ।

उपर्युक्त दोनों ही प्रकार के माध्यमों के अन्तर को भली भाँति समझना नितान्त आवश्यक है । कसौटी माध्यम किसी ज्ञान और मुख्यतः किसी कौशल के अभ्यास में सहायक होते हैं । इस प्रकार वे सीखने के पश्चात् छात्रों को सीखी गयी सामग्री का अभ्यास कराने में सहायता प्रदान करते हैं । जबकि मध्यस्थ माध्यम छात्रों

को ज्ञान या कौशल अजित कराने मे सहायक होते है। इससे यह स्पष्ट है कि दोनो प्रकार के माध्यमो का प्रयोग भिन्न स्थितियो मे भिन्न रीति से करना चाहिए।

2 स्वरूप और काय के आधार पर वर्गीकरण (Classification based on format and work)—स्वरूप और काय के आधार पर श्रव्य-दृश्य सामग्रियो को निम्नलिखित चार वर्गों मे विभाजित किया गया है

(I) श्रव्य सहायक सामग्रिया (Audio aids)

इस वग की सहायक सामग्रियाँ श्रवणेन्द्रिय को उत्तेजित कर छात्रो को सीखने मे सहायता प्रदान करती है। इस वग मे रेडियो, रिकाड प्लेयर और टेप रिकाडर सर्वाधिक प्रचलित है। इनका प्रयोग कक्षा मे दिन प्रतिदिन बढता जा रहा है। विशेषकर टेप रिकाडर पर पाठ या अपन शिक्षक या सहपाठियों या स्वय अपनी आवाज को सुनकर छात्र पाठ मे अधिक रुचि लेते हैं। इससे उन्हे पाठ को समझने मे सहायता मिलती है। सम्पन्न स्कूलो मे कैसेट टेप रिकाडर को पठन पाठन मे महत्वपूण स्थान दिया जा रहा है। कैसेट पर रिकाड किये गये छोटे छोटे पाठो का सग्रह पुस्तकालयो मे बढता जा रहा है।

श्रव्य सामग्रियो को तीनो ही मुख्य प्रकार के शक्षिक उद्देश्यो स निम्नलिखित रीति से जोडा जा सकता है

(अ) ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive Objectives)—ऑडियो टप का प्रयोग शिक्षक श्रव्य उद्दीपनो की पहचान और/या विभेद कराने के लिए कर सकते हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं—

(i) सही ढग से चलने वाली मशीन की आवाज और खराब मशीन की आवाज म भेद करना।

(ii) किसी चेतावनी ध्वनि या अन्य किसी ध्वनि को प्रस्तुत करने हेतु जिसे सुनकर छात्रो को कोई काय करना है। जैसे एक घण्टी बजे तो प्रार्थना' क लिए हाल म एकत्रित होना है, यदि चार घण्टी बज तो 'मध्यान्तर' होगा। यदि एक लम्बा साइरन बजे तो हमे अपने घरो से निकल कर छिपने के स्थान पर जाना होगा।

(iii) किसी विदेशी भाषा की ध्वनिया या अपरिचित शब्दो या मुहावरों को पहचानना,

(iv) बाजार, बस कारखानो आदि मे प्रचलित भाषा की ध्वनियो को समझना,

(v) श्रव्य उपकरणो का प्रयोग नियमो और प्रनियमों को सिखाने और समझाने के लिए करना।

(ब) व्यावहारिक उद्देश्य (Psychomotor objectives)—श्रव्य उपकरणो का प्रयोग शाब्दिक कौशलो को सिखान क लिए किया जा सकता है जस—

(i) छात्रों को किसी ध्वनि को सुनने, नकल उतारने और उस ध्वनि का अभ्यास करने के लिए।

(ii) वाक् दोष या कठिनाइयों को दूर करने के लिए।

(iii) शब्दों को पहचानने और उनका सही सही उच्चारण अभ्यास करने के लिए।

(iv) मौखिक रूप से दिये गये आदेशों को समझने और सुनकर निर्देशों एवं आदेशों का पालन करने हेतु।

(स) भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)—छात्रों के भावों और अभिवृत्तियों को प्रभावित करने के लिए पार्श्व (background) संगीत एवं ध्वनि प्रभावों का प्रयोग किया जाता है, जैसे रेडियो कार्यक्रम या विज्ञापनों में बैक ग्राउण्ड म्यूजिक या ध्वनि का प्रयोग किया जाता है।

श्रव्य सहायक सामग्रियों के लाभ—श्रव्य सहायक सामग्रियों के अनेक लाभ हैं। जैसे—

(i) इस प्रकार के उपकरणों में पाठ्य सामग्री रेकार्ड की हुई रहती है और उसे हूबहू पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है।

(ii) पाठ की रिकार्डिंग और पुनः रिकार्डिंग आसान एवं कम खर्चीली होती है, साथ ही साथ उसका वितरण भी आसान होता है।

(iii) श्रव्य पाठों एवं कार्यक्रमों का प्रयोग करने के लिए जिन उपकरणों की आवश्यकता है वे सस्ते होते हैं।

(iv) अभिक्रमित अनुदेशन और व्यक्तिश अनुदेशन की अनेक सामग्रियों को आडियो टेप द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

(v) छात्रों के मूड, मनोभाव तथा अभिवृत्ति को बैक ग्राउण्ड म्यूजिक या ध्वनि प्रभाव के द्वारा प्रभावित किया जा सकता है।

श्रव्य सहायक सामग्रियों की सीमाएँ—श्रव्य सहायक सामग्रियों के प्रयोग की निम्नलिखित सीमाएँ हैं

(i) यदि केवल श्रव्य उपकरणों का प्रयोग किया जा रहा है तो इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए कि कार्यक्रम या पाठ बहुत लम्बा न हो क्योंकि केवल सुनने मात्र से कुछ देर में ही मन इधर उधर भागने लगता है। अतः टेप 15 मिनट से ज्यादा समय का नहीं होना चाहिए।

(ii) पाठ को बदलने के लिए नये शिक्षकों या नये टेप की आवश्यकता पड़ती है। अतः इस कार्य में समय और धन अधिक लगता है।

(iii) पाठ को दृश्य उपकरणों के साथ जोड़ने में कठिनाई होती है।

(iv) टेप करने के लिए उच्च स्तर के पाठों का निर्माण बहुत समय लेता है और इसके लिए विशिष्ट प्रशिक्षण प्राप्त लोगों की आवश्यकता होती है।

(v) पाठ को सुनकर समझा जाता है। अत कितनी तेजी से और किस गति से बोला जाय यह निश्चित करना कठिन होता है। सभी के लिए समान गति से सुनकर समझना कठिन होता है।

(vi) ऑडियो टेप को दृश्य सामग्रियो से जोडना बहुत ही कठिन काम है।

श्रव्य सहायक सामग्रियाँ केवल श्रवणेंद्रिय को ही प्रभावित करती है अत इनमे अनेक न्यूनताएँ भी हैं। श्रव्य सामग्रियो की उपादेयता और प्रभावकारिता पर गत 50 वर्षों मे किये गये अनुसन्धानो के आधार पर डे और बीच (Day and Beach, 1950) इस निष्कर्ष पर पहुचे हैं कि एक से अधिक ज्ञानेंद्रियो को प्रभावित करने वाली सहायक सामग्रियाँ केवल श्रव्य या दृश्य उपकरणो से अधिक प्रभावकारी होती हैं। हिन्ज (Hinz, 1969) ने भी अपने अनुसन्धानो के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि श्रव्य सामग्रियाँ दृश्य सामग्रियो की तुलना मे कम प्रभावकारी हैं। कुछ अनुसन्धानकर्त्ताओ जैसे पॉफम (Popham, 1962), मेने और उनके सहयोगियो (Menne et al, 1969) ने प्रत्यक्ष भाषण और रिकार्ड किये गये भाषणो की प्रभावकारिता का तुलनात्मक अध्ययन किया, किन्तु उन्हे दोनो म कोई सार्थक अन्तर नही मिला। जो कुछ भी हो इतना सत्य है कि रिकार्ड किये गये भाषणो का प्रयोग छात्र और शिक्षक स्वेच्छानुसार व स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकते हैं।

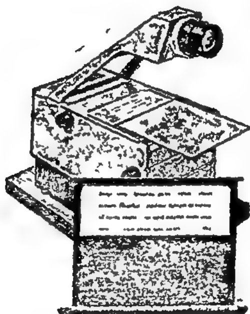
अब तक किये गये अनुसन्धानो के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि श्रव्य सहायक सामग्रियाँ सकेत, शृखला और बहुभेद बोध कार्य तथा अधिगम मे अधिक लाभप्रद सिद्ध होती हैं। इनका विशेष लाभ भाषा एव सगीत के कौशलो के शिक्षण मे होता है।

(II) दृश्य सहायक सामग्रियाँ (Visual aids)

इस वर्ग की सहायक सामग्रियाँ दृश्य इन्द्रिय को प्रभावित करती हैं और अधिगमकर्त्ता को देखने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। इस प्रकार वे सीखने मे सहायक होती हैं। साधारणत दृश्य सामग्रियो मे फोटोग्राफ, चित्र, ग्राफ, डाइग्राम, मानचित्र आदि प्रचलित हैं। इन्हें भित्तिचार्ट, स्लाइड, फिल्म स्ट्रिप, ओवरहेड प्रोजेक्टर आदि माध्यमो से प्रस्तुत किया जाता है।

(अ) ओवरहेड प्रोजेक्टर (Overhead Projector)—ओवरहेड प्रोजेक्टर शिक्षण सहायक सामग्री का एक अच्छा उदाहरण है क्योकि इसका प्रयोग शिक्षक कक्षा मे खुद कर सकता है। यह एक ऐसा माध्यम है जो प्रयोग करने मे आसान और छात्र व शिक्षक दोनो के लिए लाभप्रद हैं। इसका प्रयोग कक्षा मे दृश्य सामग्रियो अथवा ट्रासपेरेन्सी को स्क्रीन पर प्रोजेक्ट करने के लिए किया जाता है। शिक्षक छात्रो की ओर पीठ किए बिना पाठ को पढाता रहता है और प्रोजेक्टर द्वारा दृश्य-सामग्री को प्रदर्शित कर सकता है और जितनी देर तक चाहे वह स्क्रीन पर दृश्य

सामग्री को रख सकता है। प्रोजेक्टर की ट्रांसपेरेंसी पर ही वह संकेतक (pointer) द्वारा चित्रित पाठ्य सामग्री को समझाता है। इस प्रकार वह अपने पाठ की प्रभाव कारिता को बढ़ाता है। ओवरहेड प्रोजेक्टर से प्रक्षेपित करने के लिए पाठ्य सामग्रियों को एक ट्रांसपेरेंसी पर लिखा या चित्रित किया जाता है। यह एक पारदर्शक शीट होती है जो एसीटेट (acetate) की बनी होती है। इस पर फाइबर प्वाइंट कलम या साधारण स्केचपेन से लिखा जा सकता है (देखिये चित्र 8 1, 8 2, और 8 3)।



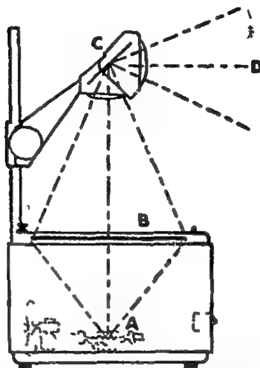
चित्र 8 1—ओवरहेड प्रोजेक्टर और ट्रांसपेरेंसी

ओवरहेड प्रोजेक्टर एवं शैक्षिक उद्देश्य (Overhead Projector and Educational Objectives)—ओवरहेड प्रोजेक्टर के माध्यम से दृश्य सामग्रियों को निम्नलिखित शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रक्षेपित किया जाता है—

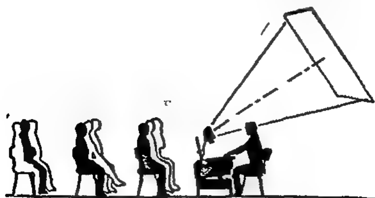
ज्ञानात्मक उद्देश्य—(i) अपरिचित वस्तुओं और सम्प्रदायों की पहचान कराने के लिए चित्रों प्रतीकों, रेखाचित्रों या आकृतियों को प्रोजेक्ट करना।

(ii) दो भिन्न वस्तुओं के आकार या चित्रों में भेद करने हेतु शिक्षक दोनों आकारों को प्रोजेक्टर के माध्यम से दीवाल या स्क्रीन पर प्रोजेक्ट कर सकते हैं

और प्रोजेक्टर की ट्रासपेरेन्सी पर बन चित्र पर प्वाइन्टर की सहायता से सभी अन्तरो को स्पष्ट कर सकते है ।



चित्र 8 2—ओवरहेड प्रोजेक्टर और उसके भाग
(A) प्रकाश स्रोत, (B) ट्रासपेरेन्सी रखने का मच या स्थान
(C) प्रोजेक्टर शीष (D) स्क्रीन की ओर प्रकाश किरण



चित्र,8 3—ओवरहेड,प्रोजेक्टर कक्षा मे उपयोग
शिक्षक प्रोजेक्टर का प्रयोग करते हुए कक्षा की ओर
पीठ किये बिना पढ़ा सकता है ।

(iii) नियमो, प्रनियमो या सम्प्रत्ययो को पढाते समय शिक्षक इसका प्रयोग भेद, विभेद, सम्बन्धों और परस्पर क्रियाओ को समझाने के लिए कर सकत है।

(iv) पाठ के प्रस्तुतीकरण के समय शिक्षक समग्र पाठ की एक रूपरेखा, मुख्य बिंदु या पाठ का साराश लिखित रूप मे छात्रो के सम्मुख खडे-खडे प्रस्तुत कर सकते हैं।

मनोपेशीय उद्देश्य (Psychomotor objectives)—दृश्य सहायक उपकरणों का व्यावहारिक शैक्षिक उद्देश्यों के लिए बहुत ही सीमित उपयोग है। इसका प्रयोग प्रशिक्षक किसी कौशल का प्रदशन करने से पूव वस्तुओ या शारीरिक क्रियाओ की स्थिति मात्र को बताने के लिए कर सकता है।

भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)—इस क्षेत्र मे इसका उपयोग सामा यत नही हो पाता।

ओवरहेड प्रोजेक्टर द्वारा दृश्य सामग्रियों के प्रक्षेपण के लाभ—इनके निम्न लाभ हैं

(i) यह शैक्षिक सामग्रियों को दुहराने, क्रमबद्ध करने और सम्पादित करन की स्वत त्रता शिक्षको को प्रदान करता है।

(ii) शिक्षको को कक्षा का सामना करते हुए प्रकाशित कक्ष मे सहायक सामग्री को प्रक्षेपित कर छात्रो से प्रश्न पूछने, परिचर्चा करत और विचारो का आदान प्रदान करने की स्वत त्रता प्रदान करता है।

(iii) शिक्षक को ओवरहड प्रोजेक्टर पर रखे हुये पारदर्शी पर लिखने, सकेतन का इस्तेमाल करने और लिखी हुई सामग्री का सम्पादन करने का अवसर प्रक्षेपण के समय ही प्रदान करता है।

(iv) काली रेखाओ या रगीन रखाओ या दोनो के सम्मिश्रण का प्रक्षेपण करने का अवसर प्रदान करता है।

शिक्षक को स्वय अपनी इच्छानुसार ट्रासपेरेन्सी तयार करने का अवसर देता है।

(i) प्रक्षपित की जाने वाली सामग्री के आकार को शिक्षक छोटा या बडा कर सकता है।

(ii) छात्रो के मूल्याकन करने के लिए प्रत्येक को छपे हुए प्रश्न पत्र देने के स्थान पर शिक्षक ट्रासपेरेन्सी पर प्रश्नो को लिखकर प्रक्षपित कर सकता है।

ओवरहेड प्रोजेक्टर द्वारा दृश्य सामग्रियों के प्रक्षेपण की न्यूनताएँ—इसकी निम्नलिखित न्यूनताएँ हैं—

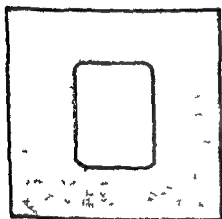
(i) पाठ के प्रस्तुतीकरण मे इसका सीमित उपयोग है।

(ii) ट्रासपेरेन्सी का निर्माण और उसका रख-रखाव तथा कक्षा म इसका उपयोग कम सुविधाजनक है क्योंकि स्लाइड और फिल्म स्ट्रिप इससे कम जगह घरते हैं और अधिक सुविधाजनक हैं।

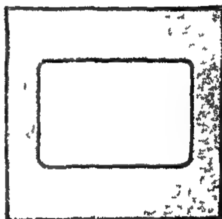
(iii) स्थानीय स्तर पर शिक्षक के द्वारा रगीन ट्रासपेरेसी तैयार करना 35 mm स्लाइड की तुलना मे महँगा पडता है।

(iv) ओवरहेड प्रोजेक्टर से निकली हुई प्रकाश की किरणें बालको का ध्यान भग करती हैं।

(ब) स्लाइड (Slides)—दृश्य सहायक सामग्रियो मे स्लाइड का स्थान महत्त्वपूर्ण है। स्लाइड का मानकीकृत आकार 2" × 2" (35 mm) होता है। यह ट्रासपेरेसी पॉजीटिव कलर/ब्लैक एण्ड वाइट फिल्म की बनी होती है और कीबोर्ड (Key Board) या प्लास्टिक के फ्रेम मे मढी हुई रहती है। जसा कि चित्र 8 4 और 8 5 मे प्रदर्शित है। इस पर अकित चित्रो, रेखाचित्रो, आलेखो, सारिणी आदि को स्लाइड प्रोजेक्टर के माध्यम से स्क्रीन पर प्रोजेक्ट किया जा सकता है। दृश्य सामग्री का फोटोग्राफ लेने के पश्चात स्लाइड बनायी जाती है। स्लाइड का उपयोग शिक्षक पाठ का प्रस्तुतीकरण करते समय कर सकता है या इसका उपयोग स्वय एक अनुदेशनात्मक माध्यम के रूप मे कर सकता है।



चित्र 8 4—स्लाइड 2' × 2' काडबोड के आधे फ्रेम मे



चित्र 8 5—स्लाइड 2" × 2" काडबोड के पूरे फ्रेम मे

स्लाइड एव शक्षिक उद्देश्य

(1) ज्ञानात्मक उद्देश्य स्लाइड का उपयोग दृश्य उद्दीपनो की पहचान और उनमे भेद के लिए किया जाता है, जसे—

(i) अपरिचित चीजो एव वस्तुओ की पहचान कराने के लिए,

(ii) रूप रग मे भिन्न वस्तुओ म भेद समझाने के लिए,

(iii) वस्तुओ की आन्तरिक सरचना और उनके विभिन्न अगो को अलग अलग प्रदर्शित करने हेतु,

(iv) वास्तविक जीवन में छात्र जहाँ काम करेंगे, उन स्थानों की स्थिति और परिस्थितियों से परिचित कराने के लिए

(v) सम्प्रत्ययों, नियमों, प्रनियमों और घटनाओं के तारतम्य को समझाने के लिए।

(2) मनोपेशीय उद्देश्य (Psychomotor objectives)—स्लाइड के उपयोग का सम्बन्ध मनोपेशीय शैक्षिक उद्देश्यों से बहुत ही कम है।

(3) भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)—अकेले स्लाइड का उपयोग भावात्मक उद्देश्यों को प्रभावित नहीं करता किन्तु यदि इसको ऑडियो टेप के साथ मिला दिया जाय तो यह छात्रों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाने में समर्थ है।

स्लाइड के लाभ

(i) रंगीन स्लाइड बनाना कम खर्चीला है।

(ii) एक बार स्लाइड बन जाने पर उसकी अनेक प्रतियाँ आसानी से बनायी जा सकती है।

(iii) स्लाइड आकार में छोटा होता है अतः इसको रखने के लिए कम स्थान की आवश्यकता होती है और इसे कहीं ले जाने में बहुत सुविधा रहती है।

(iv) जब स्लाइड का उपयोग एक शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में किया जाता है तब उसके द्वारा सूचना को क्रमशः छात्रों के सामने उद्घाटित किया जा सकता है। साथ ही साथ शिक्षक चाहे तो चित्र के आकार को छोटा या बड़ा कर सकता है।

(v) यह कम खर्चीला तथा यथार्थ के निकट है। संसार में जिस प्रकार बालक किसी वस्तु को देखता है कि ठीक उसी प्रकार वह स्लाइड के माध्यम से देखता है।

स्लाइड की न्यूनताएँ

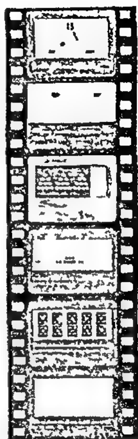
(i) स्लाइड का प्रभावकारी प्रक्षेपण करने के लिए कक्षा में अन्धकार करना पड़ता है। जिससे पढ़ाने में असुविधा होती है।

(ii) स्लाइड का निर्माण विद्यालय में नहीं हो पाता। इसको विद्यालय से बाहर स्टूडियो में बनाने के लिए भेजना पड़ता है। अतः इसके निर्माण में अधिक समय लगता है।

(iii) स्लाइड का प्रतिरूप (duplicate) बनवाने में महीनों का समय लग जाता है।

(ख) फिल्म पट्टी या स्ट्रिप्स (Film strips)—फिल्म पट्टी भी स्लाइड की तरह प्रोजेक्टर द्वारा प्रक्षेपित की जाने वाली एक सहायक सामग्री है। जब इसे सुनने वाले उपकरणों या मुद्रित सामग्रियों से जोड़ दिया जाता है तो यह एक अनुदेशनात्मक माध्यम बन जाती है। फिल्म स्ट्रिप, हाफ फ्रेम या फुल फ्रेम चित्रों की एक शृंखला होती है जो 35 mm फिल्म पर रहती है। चित्र 8 6 इसे फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर के द्वारा स्क्रीन पर प्रक्षेपित किया जा सकता है। इसमें और स्लाइड में बहुत सी बातों में समानता है।

इन दोनों में मुख्य अंतर है—इनके रखने की विधि और इन्हें प्रक्षेपित करने के यन्त्र में। दोनों में किसी का चुनाव इस बात पर निर्भर करता है कि किस प्रकार का प्रोजेक्टर व्यक्ति प्रयोग में लायेगा अथवा उसको कितनी प्रतियों की आवश्यकता है। फिल्म पट्टी की प्रतियाँ बहुत आसानी से बनायी जा सकती हैं। अतः यदि कार्यक्रम या पाठ को बहुत बड़ी जनसंख्या में वितरित करना है तो फिल्म स्ट्रिप की प्रतियाँ सस्ती और आसानी से उपलब्ध होती हैं।



चित्र 16—35 mm चौड़ी फिल्म स्ट्रिप

फिल्म पट्टी और शैक्षिक उद्देश्य

ज्ञानात्मक उद्देश्य—फिल्म स्ट्रिप का प्रयोग दृश्य उद्दीपना की पहचान और/या भेद करना सिखाने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए—

(i) अनजानी वस्तुओं एवं चीजों की पहचान कराने के लिए,

(ii) एक ही समय पर दो वस्तुओं को दिखा कर उनमें अंतर ज्ञात करने का कौशल विकसित करने के लिए,

(iii) भविष्य में बालक जिन काम धन्धों को करेंगे, उसके स्थान, स्थिति और परिस्थितियों के चित्र प्रस्तुत करने के लिए,

(iv) नियमों, प्रनियमों और घटनाओं के पदानुक्रम को समझाने के लिए है।

मनोगत्यात्मक उद्देश्य (Psychomotor objectives)—इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए फिल्म पट्टी का प्रयोग कम किया जाता है। हाँ, यदि आवश्यकता हुई तो किसी यन्त्र आदि की कार्य प्रणाली को समझाने के लिए उसके घटकों का प्रदर्शन इसके माध्यम से हो सकता है।

भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)—इसका उपयोग इन शैक्षिक उद्देश्यों के लिए नहीं के बराबर है।

लाभ (Advantages)—फिल्म पट्टी का प्रयोग एक सहायक उपकरण और एक अनुदेशनात्मक माध्यम दोनों ही रूपों में हो सकता है। एक सहायक उपकरण के रूप में यह शिक्षक की सहायता निम्नलिखित बातों में करता है—

(i) प्रस्तुतीकरण की गति को नियंत्रित करने में।

(ii) किसी विशिष्ट पाठ्य बिन्दु को पुनः दिखाने में।

(iii) किसी विशिष्ट शिक्षण बिन्दु पर विशेष बल देने के लिए उससे सम्बन्धित सामग्री को स्क्रीन पर देर तक दिखाने के लिए या उसका आकार बड़ा करने के लिए,

(iv) इनकी प्रतिलिपियाँ बहुत बड़ी सख्या मे आसानी से प्राप्त की जा सकती हैं।

(v) ये छोटी होती हैं। इन्हे लपेटकर रील में रखा जाता है। इनको पैक करना, इनका सग्रह करना और इन्हे अन्यत्र ले जाना सुविधाजनक है।

(vi) इसी प्रकार इनको दिखाने के लिए वाक एव मूक दोनो ही प्रकार के प्रोजेक्टर मिलते हैं और इनके मूल्य भी वाजिब हैं।

न्यूनताएँ (Disadvantages)

(i) फिल्म पट्टी का अच्छा प्रयोग अँधेरे कमरे मे होता है अत कक्षाओ मे अँधेरा करना पड़ता है।

(ii) यदि पाठ मे कोई सशोधन या सम्पादन या उसको नवीन ज्ञान से युक्त करना है तब यह कार्य ज्यादा समय लेने वाला और अधिक खर्चीला भी बन जाता है।

(iii) चूँकि फिल्म स्ट्रिप म ध्वनि या आवाज का सयोग करने के लिए कई तरह के यन्त्र होते हैं। अत फिल्म स्ट्रिप बनाते समय श्रव्य माध्यम का भी प्रयोग करना पड़ता है।

अनुसन्धानो के आधार पर हम कह सकते हैं कि साधारण रेखाचित्रो के द्वारा सकेतों बहुभेद बोधो, सम्प्रत्ययो और प्रनियमो का सबसे अच्छा प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है। यथार्थ फोटोग्राफ भावात्मक उद्देश्यों की पूर्ति म अधिक सफल होते हैं। न्यून मानसिक स्तर के छात्र मूर्त दृश्य सहायक सामग्रियो को अधिक पसन्द करते हैं जबकि उच्च मानसिक स्तर के छात्र मूर्त एव अमूर्त दोनो प्रकार की सामग्रियो द्वारा समान रूप से लाभ उठा सकते हैं।

त्रि आयामी प्रतिमान (Three dimensional models)

दृश्य सामग्रियो के अन्तर्गत त्रि आयामी प्रतिमानो जैसे प्रतिमूर्तियाँ, कटे हुये चित्र और वास्तविक चीजो के भीमकाय स्वरूप यन्त्रों के नमूने आदि का प्रयोग होता है। ये देखने म आकर्षक होते हैं किन्तु इनका रख रखाव एक कठिन कार्य है और साथ ही साथ ये बहुत खर्चीले होते हैं। इनकी प्रभावकारिता के सम्बन्ध मे बहुत कम प्रमाण उपलब्ध हैं। स्वानसन (Swanson 1954) ने इन्हें किसी वस्तु के अंगो की पहचान मे उपयोगी पाया है। उनके तथा ऐलेन (Allen, 1960) के मतानुसार इन पर जितना व्यय होता है, उसकी तुलना मे लाभ कम होता है। आधुनिक अनुसन्धानो के आधार पर हम इतना कह सकते हैं कि त्रि आयामी प्रतिमान सरेत गूंथला अधिगम के लिए लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं।

(III) श्रव्य दृश्य सहायक सामग्रियाँ (Audio visual aids)

इन सहायक सामग्रियो के अन्तर्गत ऐसी शिक्षण सामग्रिया आती हैं जो श्रव्य एव दृश्य दोनो ही इन्द्रियो को एक साथ प्रभावित करती हैं । अत ये छात्रो के लिए रुचिकर, प्रोत्साहन प्रदान करने वाली और विशेष रूप से ज्ञानवर्धक होती हैं । इनमे निम्नलिखित दो अत्यन्त प्रचलित हैं तथा इन दोनो का ही प्रयोग शैक्षिक माध्यम के रूप म किया जाता है ।

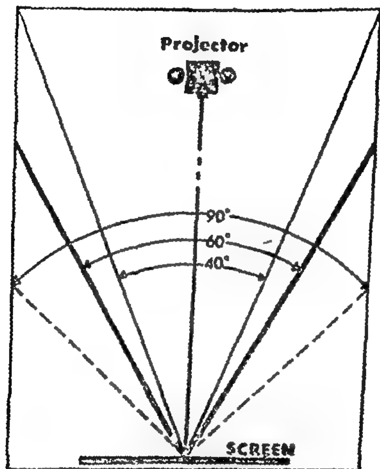
(अ) चलचित्र (Motion film)—चलचित्र स्कूलो मे शिक्षा के माध्यम के रूप म प्रयोग मे लाये जाते हैं। सामान्यत ये 16 M M और 8 M M की चौडाई मे मिलते हैं । इनके प्रक्षेपण के लिए साउण्ड फिल्म प्रोजेक्टर की आवश्यकता होती है । ये फिल्म श्वेत श्याम (black and white) और रगीन (coloured) दो प्रकार के होते हैं । रगीन फिल्मो की प्रभावकारिता अति व्यापक है (चित्र 8 7 और 8 8) ।



चित्र 8 7—नवीन आटोमैटिक फिल्म प्रोजेक्टर

फिल्म और शैक्षिक उद्देश्य (Film and educational objectives)—फिल्म का प्रयोग शैक्षिक माध्यम के रूप मे समृद्ध विद्यालयो मे दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है क्योकि इसका उपयोग प्रत्येक प्रकार के पाठ मे सभी प्रकार की शैक्षिक उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए किया जा सकता है ।

ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive objectives)—फिल्म का प्रयोग ज्ञानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है, जैसे—



चित्र 8 8—फिल्म प्रोजेक्टर द्वारा चलचित्र प्रदर्शन । दृष्टि पथ के भीतर बैठे लोग बिना बाधा के फिल्म को देख सकते हैं

(i) 'पहचानना' और/या अन्तर बोध सिखाने के लिए । उदाहरण के लिए गतिशील वस्तुओं की रफ्तार, गति में विचलन आदि ।

(ii) नियमों, प्रनियमों आदि का शिक्षण देने के लिए ।

मनोदैहिक उद्देश्य (Psychomotor objectives)—गत्यात्मक कौशलों के प्रशिक्षण के लिए फिल्म का प्रयोग किया जा सकता है । इसके द्वारा गति को बढ़ाकर या घटाकर मन और शरीर में सामंजस्य या सहभाव कैसे चलता है, यह

पढ़ाया जा सकता है । उदाहरण के लिए, किसी औजार या यन्त्र को चलाना, आरोहरण, तैरना आदि की शिक्षा देना ।

भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)—छात्रो मे समुचित अभिवृत्ति और सवेगो का निर्माण करने के लिए फिल्म का प्रयोग सर्वाधिक उपयोगी है । भावात्मक दृश्यो को दिखाने का यह सवश्रेष्ठ उपकरण है ।

फिल्म के लाभ—फिल्म के कुछ लाभ निम्नलिखित हैं

(i) शिक्षण और प्रशिक्षण मे भावात्मक दृश्य उद्दीपनो को प्रस्तुत करने का यह सर्वोत्तम माध्यम है ।

(ii) विशेष दृश्य प्रभावो को उत्पन्न कर यह अधिगम मे वद्धि करता है विशेषकर भावात्मक विषय वस्तुओ के प्रस्तुतीकरण मे ।

(iii) बहुत बडी सख्या मे छात्रो को एक साथ बैठाकर इसका प्रदशन किया जा सकता है जो वीडियो फिल्म द्वारा सम्भव नहीं है ।

(iv) इसका प्रक्षेपण सामने या पीछे लगे दोनो ही प्रकार के स्क्रीन पर किया जा सकता है जो वीडियो फिल्म मे सम्भव नहीं है ।

(v) फिल्म को बीच मे रोककर छात्रो से चर्चा और बहस की जा सकती है । इसके साथ ही अभ्यास पुस्तक (work book) या पाठ निर्देशिका का प्रयोग किया जा सकता है ।

(vi) फिल्म प्रोजेक्टर वीडियो उपकरणो की तुलना मे अधिक आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं और उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जा सकते हैं ।

(vii) इस पर फिलमायी गयी सामग्री को वीडियो टेप पर स्थानान्तरित करने पर श्रव्य और दृश्य गुणवत्ता खराब नहीं होती ।

न्यूनताएँ—शैक्षिक माध्यम के रूप मे फिल्म के प्रयोग मे निम्नलिखित कमियाँ पायी जाती हैं

(i) इसके निर्माण पर बहुत खच होता है और प्रतिभाशाली निर्माणकर्ताओ का मिलना भी कठिन है ।

(ii) फिल्मो की तयारी मे बहुत समय लगता है, और इसमें तत्काल प्रतिपुष्टि (feedback) प्रदान करने की क्षमता नही है ।

(iii) फिल्म सग्रह या रीलो पर अकित विषय वस्तु को मिटाया नही जा सकता । अत इनका दुबारा उपयोग नही हो पाता जसाकि वीडियो टप मे सम्भव है ।

(iv) फिल्म के रख रखाव मे बहुत सावधानी रखनी पडती है । इसे नियमित रूप स साफ करना पडता है ।

(ब) टेलीविजन और वीडियो फिल्म (T V and video film)—विश्व के सभी देशों और भारत में टी० वी० का प्रचलन दिन दूना रात चौगुना बढ़ रहा है। आजकल टी० वी० और फिल्म एक दूसरे से होड़ ले रहे हैं। टी० वी० कार्यक्रम वीडियो फिल्म पर अंकित किये जाते है। शिक्षा में टी० वी० के प्रयोग को निम्न लिखित श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है

(i) कक्षा-कक्ष आंतरिक प्रयोग।

(ii) कक्षा कक्ष अनुदेशन प्रयोग उसी विद्यालय भवन में,

(iii) बहुकक्षा कक्ष अनुदेशन अनेक विद्यालय भवनों में,

(iv) शैक्षिक मूल्य वाले प्रायोगिक कार्यक्रम जो व्यापारिक टलीविजन पर दिखाये जाते हैं।

(v) शैक्षिक कार्यक्रम जो शैक्षिक टी० वी० चैनल पर दिखाये जाते हैं।

(स) क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन (Closed Circuit T V CCTV)—जब कोई ऐसी प्रसारण (Telecast) केवल कक्षाओं और/या स्कूल भवन तक सीमित रखा जाता है तो इसे क्लोज्ड सर्किट टलीविजन कहते हैं, क्योंकि इसकी माइक्रोवेव्स (micro waves) का प्रयोग सीमित होता है और इसे अन्यत्र रखे हुए टी० वी० सेट पर नहीं ग्रहण किया जा सकता। माइक्रोवेव्स संकेतों को को एक्सियल केबिल (Co axial Cable) द्वारा ग्रहण किया जाता है जिसकी लम्बाई सीमित होती है।

सी० सी० टी० वी० (CCTV) निम्नलिखित क्षमताओं से युक्त है—

(i) अनुदेशन के विस्तार क्षेत्र को बढ़ा देता है। एक या एक से अधिक कक्षाओं में इसके द्वारा प्रसारण कर सकते हैं।

(ii) सामान्य कक्षाओं में जिन वस्तुओं या प्रक्रियाओं का प्रदर्शन किया जाता है, सामान्यतः उसे सभी छात्र नहीं देख पाते है किन्तु सी० सी० टी० वी० उन्हें बड़ा कर इस तरह प्रदर्शित कर सकता है कि सभी छात्र उसे देख सकते हैं।

(iii) आदर्श शिक्षकों का लाभ सी सी टी वी के माध्यम से दूसरे विद्यालयों एवं कक्षाओं को भी प्राप्त हो सकता है।

(iv) इसके द्वारा शैक्षिक संस्थान निजी शैक्षिक दूरदर्शन का उपयोग अपनी आवश्यकताओं और समय सारिणी के अनुसार कर सकते हैं।

शिक्षण प्रशिक्षण विद्यालयों में सी सी टी वी का प्रयोग सूक्ष्म शिक्षण (Micro teaching) सूत्रों का वीडियो टेप पर रिकार्ड तैयार करने और आवश्यक प्रतिपुष्टि प्रदान करने के लिए किया जाता है।

विश्व के अनेक मेडीकल कालेजों में सी सी टी वी का प्रयोग गम्भीर आपरेशन की प्रक्रिया को मेडीकल छात्रों को दिखाने के लिए किया जाता है। इस तरह के गम्भीर आपरेशन के समय सभी छात्रों को आपरेशन थियेटर में नहीं बुलाया

जा सकता। सी सी टी वी पर इसका प्रसारण करने से छात्र अपनी कक्षाओ म बैठे बैठे ही आपरेशन की बारीकियो एव विधियो को देख और समझ सकते है।

शैक्षिक टी वी प्रसारण (Educational T V)—शैक्षिक टी वी के विषय मे हमने विस्तृत चर्चा अध्याय 9 मे की है।

वीडियो फिल्म (Video Film)—टी वी के प्रसारण म वीडियो फिल्म का प्रयोग किया जाता है। इन फिल्मो का शैक्षिक माध्यम मे प्रयोग बढता ही जा रहा है। फिल्मों के समान ही इनके द्वारा भी सभी प्रकार के उद्देश्यो को प्राप्त किया जा सकता है।

ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive objectives)—वीडियो फिल्म द्वारा—

(i) उपयोगी दृश्य उद्दीपनो को पहचानने और/या भेद करने का शिक्षण दिया जा सकता है।

(ii) नियमो व प्रनियमो का शिक्षण दिया जा सकता है।

(iii) छात्रो को तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान की जा सकती है।

मनोवेशीय उद्देश्य (Psychomotor objectives)—(i) वीडियो के द्वारा कौशलो के प्रतिमान (model) प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

(ii) यन्त्रो के सचालन, तैरना, चढना आदि कौशलो मे शरीर और मन का स तुलन एव सचालन कैसे होता है, यह सब वीडियो द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

(iii) कौशलो का अभ्यास करते समय वीडियो फिल्म तैयार किया जा सकता है और उसे सी सी टी वी पर दिखाकर छात्रो को तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान की जा सकती है।

भावात्मक उद्देश्य (Affective Objectives)—वीडियो वाछित अभिवृत्तिया और सवेगो के निर्माण मे बहुत सहायक होता है। भावात्मक सूचनाओं का प्रदर्शन इसके द्वारा बहुत ही प्रभावकारी ढग से होता है।

लाभ (Advantages)—वीडियो फिल्म के निम्नलिखित शैक्षिक लाभ हैं—

(i) आवश्यक एव वाछित क्रिया कलापो को छात्रा के सामने प्रदर्शित किया जा सकता है। शिक्षण के समय इसके माध्यम से यह बताया जा सकता है कि कौन सी अनुक्रिया सही ढग से की जा रही है और कौन सी गलत ढग से।

(ii) इसके द्वारा किसी भी वस्तु या घटना को तुरन्त व पुन दिखाया जा सकता है। अत छात्रो को इसके द्वारा तुरन्त प्रतिपुष्टि मिलती है।

(iii) यह दृश्य प्रभावो को उत्पन्न कर अधिगम की प्रतिक्रिया को मनोरजक एव आकर्षक बना देता है।

(iv) इसे जब चाहे तब बन्द कर छात्रों से वार्तालाप और चर्चा करने के बाद पुनः चालू कर सकते हैं।

(v) इसके माध्यम से एक ही पाठ और सूचना को एक ही समय पर सी० सी० टी० वी० के माध्यम से अनेक कक्षाओं में प्रदर्शित किया जा सकता है।

(vi) वीडियो फिल्म का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इस पर पुराने पाठों को मिटाकर नये अथवा संशोधित पाठों को अंकित किया जा सकता है। अतः एक ही वीडियो टेप कई बार, कई पाठों के लिए प्रयोग में लायी जा सकती है।

न्यूनताएँ (Limitations)—वीडियो फिल्म की निम्नलिखित न्यूनताएँ हैं—

(i) इसका प्रयोग करने के लिए मूल्यवान वीडियो उपकरण की आवश्यकता पड़ती है।

(ii) वीडियो के लिए आलेख (script) लिखना कठिन और श्रमसाध्य कार्य है।

(iii) इसके निर्माण का कार्य बहुत महँगा है और साथ ही साथ प्रतिभा सम्पन्न निर्माण टोली का अभाव है।

(iv) जब इसे फिल्म पर स्थानान्तरित करते हैं तब दृश्य गुणवत्ता घट जाती है।

(v) टी० वी० मानीटर (monitor) का स्क्रीन छोटा होने के कारण छोटे समूह में ही इसका प्रदर्शन कर पाते हैं।

(vi) वीडियो फिल्म पर लिखने के लिए अक्षरों और ग्राफ की संख्या सीमित रहती है।

(vii) इलेक्ट्रानिक के नित्य नवीन आविष्कार, वीडियो सिस्टम के पुराना पड़ जाने का खतरा बनाये रखते हैं।

अनुसन्धानों के निष्कर्षों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि छात्र इनसे अवश्य ही सीखते है। ऐसी सूचनाएँ एवं ज्ञान जिनमें कार्य या क्रियाएँ सन्निहित हैं उनके शिक्षण के लिए चलचित्र एवं दूरदर्शन निश्चित रूप से अधिक उत्तम सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार से दोनों सम्प्रत्ययों एवं प्रनियमों के शिक्षण और भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में सर्वाधिक उपयुक्त पाये गये हैं।

(IV) विविध सहायक सामग्रियाँ एवं कार्य (Miscellaneous teaching aids and task)

(अ) अनुरूपक (Simulators)—अनुरूपकों का प्रयोग सामान्यतः उद्योगों, सुरक्षा सेवा और चिकित्सा सेवा के प्रशिक्षण में होता है। एक अनुरूपक वास्तविक परिस्थिति का प्रतिनिधित्व करता है जिससे छात्र या प्रशिक्षणार्थी उस पर अपना

नियन्त्रण रख सके जिस प्रशिक्षण की परिस्थितियो मे लाया जा सके। अनुरूपण वास्तविक परिस्थितियो मे या यन्त्रो पर प्रशिक्षण प्रदान करने के खतरो से बचने के लिए किया जाता है। कोई भी उद्योगपति किसी बहुमूल्य यन्त्र पर एक नये प्रशिक्षणार्थी को काय करने का अवसर देने का खतरा मोल नहीं लेना चाहेगा। अत वह उस यन्त्र के अनुरूपक पर ही पहले उसे प्रशिक्षण देना है। यह बात सेवा तथा चिकित्सा के क्षेत्र मे भी होती है। मनोपेशीय कौशलो के प्रशिक्षण मे अनुरूपको के प्रयोग का प्रचलन निरन्तर बढता जा रहा है। शिक्षा के क्षेत्र मे भी अनेक अनुरूपको का प्रयोग जसे भूमिका का निर्वाह करना (role playing), व्यापार खेल business games), व्यक्ति-अध्ययन (case study) आदि के रूप मे हो रहा है। शृखला तथा बहुभेद बोध से सम्बन्धित अधिगम कार्यों मे इनका प्रयोग अधिक लाभप्रद सिद्ध हुआ है।

(ब) भाषा प्रयोगशाला (Language laboratory)—भाषा-प्रयोगशाला भी एक विशिष्ट प्रकार का अनुरूपक ही है। गत बीस वर्षों मे दिन दूना रात चौगुना भाषा शिक्षण और विदेशी भाषा शिक्षण मे इसका प्रयोग बढ़ता जा रहा है। वैसे यह अत्यन्त खर्चीला उपकरण है किन्तु छोटे छोटे पदो म तारतम्य-युक्त भाषा-शिक्षण के लिए यह अत्य त उपयोगी सिद्ध हुआ है (Mathieu, 1962, Carroll 1963)। अन्तत अनुसन्धाना के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सकेत, शृखला तथा बहुभेदबाघ-शिक्षण के लिए अनुरूपक सफलतापूवक प्रयुक्त किय जा सकते हैं। इसके साथ ही साथ भावात्मक उद्देश्यो की प्राप्ति मे भी अनुरूपण सहायक सिद्ध होते हैं।

(स) क्षेत्र भ्रमण (Field trip)—क्षेत्र भ्रमण यथाथ को प्रस्तुत करत है। अत इनका शिक्षण एव प्रशिक्षण कायक्रमों मे एक महत्वपूर्ण स्थान है। हाँ, समय और धन की दृष्टि से मे अधिक खर्चीले पडते हैं। सम्भवत इसी कारण इनकी प्रभावकारिता से सम्बन्धित अनुसन्धानो का अभाव है। ऐलेन (Allen, 1960) ने लगभग एक दजन उपलब्ध अनुसन्धानों की समीक्षा के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि उनमे से 50% अनुसन्धान इसके पक्ष मे तथा 50% इसके विपक्ष मे हैं। इन अनुसन्धानो के आधार पर हम तीन सामान्य निष्कष निकाल सकते हैं—क्षेत्र भ्रमण ज्ञानात्मक और विशेषकर भावात्मक उद्देश्यो की प्राप्ति म सहायक होत हैं, ये शृखला सम्प्रत्यय और प्रनियमों के शिक्षण में विशेष महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं इनके द्वारा सामान्य विधियों से प्रस्तुत ज्ञान एव सामग्रियो को व्यवस्थित एव सूत्रबद्ध कर उनका साराश निर्मित करने मे भी सहायता मिलती है।

शिक्षण सहायक सामग्रियो की उपयोगिता एव उनके प्रयोग के सम्बन्ध मे कुछ सुझाव (Utility of teaching aids and some suggestions for their use)—

विभिन्न शिक्षण सामग्रियों की संक्षिप्त चर्चा के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि—

(क) छात्र निश्चित रूप से श्रव्य-दृश्य सहायक सामग्रियों की सहायता से सीखते हैं।

(ख) छात्र इनकी सहायता से कितनी मात्रा में सीखेंगे, यह अधिगम काम की संरचना और उसके उद्देश्यों के सन्दर्भ में इनकी उपयुक्तता पर निर्भर करता है।

(ग) शिक्षक निम्नलिखित सुझावों का परिपालन कर श्रव्य दृश्य सामग्रियों की सहायता से सीखने की प्रक्रिया को बहुत अधिक प्रभावशाली बना सकता है

(i) सामग्रियों का प्रस्तुतीकरण करते समय उन्हें छात्रों को यह स्पष्ट रूप से बताना चाहिए कि इनके द्वारा वे किन उद्देश्यों की प्राप्ति करना चाहते हैं।

(ii) इनकी सहायता से छात्रों का शिक्षण सहभाग और सक्रियता बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

(iii) छात्रों के ध्यान को आकृष्ट करने वाली युक्तियों, जैसे—तीर और संकेतक, प्रश्न और परिचर्चा, दत्तकार्य और प्रायोजना आदि का प्रयोग करना चाहिए।

(iv) छात्रों के सम्मुख सहायक सामग्रियों का एकाधिकबार प्रस्तुतीकरण करना चाहिए।

इनके अतिरिक्त हमें यह भी ज्ञात है कि सहायक सामग्रियों के चयन और प्रभावकारी उपयोग के लिए शिक्षकों को अधिगम की संरचना एवं अधिगम के उद्देश्यों को सदा *ध्यान में रखना चाहिए। इसलिए यहाँ अधिगम के उद्देश्यों के* सन्दर्भ में सहायक सामग्रियों के चुनाव से सम्बन्धित सुझावों की चर्चा की जायेगी।

अधिगम के उद्देश्य और श्रव्य दृश्य सामग्रियाँ (Learning objectives and audio-visual materials)—विभिन्न श्रव्य दृश्य सामग्रियों का वर्णन करते समय हमने उनके स्वरूप और उपयोगिता की चर्चा की थी। यहाँ पर हम अनुसंधानों के निष्कर्षों का सारांश प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे यह ज्ञात होगा कि कौन सी सहायक सामग्री किस तरह के शैक्षिक या अधिगम उद्देश्यों के लिए उपयोगी या प्रभावकारी होगी।

चित्र 8 9 से हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं

(i) ज्ञानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति हर प्रकार से श्रव्य-दृश्य सामग्रियों द्वारा सम्भव है।

(ii) भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए रेडियो, रिकार्डप्लेयर, चित्र, चलचित्र, दूरदर्शन, अनुरूपण एवं भाषा प्रयोगशाला का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है।

(iii) मनोपेशीय उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए रिकॉडप्लेयस, टेप रिकॉडर, बडे प्रतिमान, अनुरूपक, भाषा प्रयोगशाला एव क्षेत्र-भ्रमण का प्रयोग अधिक लाभप्रद होता है।

श्रव्य-दृश्य सहायक सामग्रियाँ	विभिन्न वर्ग के अधिगम उद्देश्य		
	ज्ञानात्मक	भावात्मक	मनोपेशीय
रेडियो	▨	▨	
रेकार्ड प्लेयर	▨	▨	▨
टेप रिकार्डर	▨	▨	▨
रेखा चित्र	▨		
चित्र (स्थिर)	▨	▨	
पार दर्शक	▨		
स्वांग	▨		
द्वि आयामात्मक मॉडल	▨		
बड़े मॉडल	▨		▨
फिल्म	▨	▨	
टेलीविजन	▨	▨	
8 mm सतत्यय चलचित्र	▨	▨	
अनुरूपक	▨	▨	▨
भाषा प्रयोगशाला	▨	▨	▨
भ्रमण या यात्रा	▨		▨

चित्र 8 9—विभिन्न प्रकार की श्रव्य दृश्य सहायक सामग्रियाँ जो विभिन्न शैक्षिक उद्देश्यों के लिए अधिकतम लाभप्रद हो सकती हैं

कार्य संरचना और श्रव्य-दृश्य सामग्रियाँ (Task structures and audio-visual Aids)

कार्य संरचना की दृष्टि से श्रव्य दृश्य सामग्रियों के उपयोग मे निमित्त सुझावो का सारांश चित्र 8 10 मे प्रस्तुत किया गया है।

चित्र 8 10 स यह स्पष्ट होता है कि—

(1) सकेत एव शृखला अधिगम सरचनाओ के लिए सभी सामग्रियाँ उपयुक्त हैं कि तु रेडियो, चलचित्र और दूरदशन सकेत अधिगम के लिए उतने उपयुक्त नही हैं।

श्रव्य-दृश्य सहायक सामग्रियाँ	अधिगम संरचना प्रकार				
	संकेत	शृंखला	बहुभेद	सम्प्रत्यय	प्रतियम
रेडियो					
रेकार्ड प्लेयर					
टेप रिकार्डर					
रेखा चित्र					
चित्र स्थिर					
पार दर्शक					
स्वांग					
त्रि आयामात्मक मॉडल					
बड़े माडल					
फिल्म					
टेलीविजन					
8 mm समचक्र चलचित्र					
अनुरूपण					
भाषा प्रयोगशाला					
भ्रमण या यात्रा					

चित्र 8 10— विभिन्न प्रकार की श्रव्य दृश्य सहायक सामग्रियाँ जो विभिन्न परिस्थितियों में अधिकतम लाभप्रद हो सकती हैं

(11) बहुभेदबोध-अधिगम सरचनाओ के लिए रिकॉर्डप्लेयर टेप रिकॉर्डर, रेखाचित्र, ओवरहेड प्रोजेक्टर, अनुरूपण भाषा प्रयोगशाला उपयोगी हैं।

(111) सम्प्रत्ययों और प्रतियमों के शिक्षण के लिए रेखाचित्र, चित्र, ओवरहेड प्रोजेक्टर, चलचित्र, दूरदर्शन और क्षेत्र भ्रमण सर्वथा उपयुक्त हैं।

अभ्यास के प्रश्न

1 सामूहिक अनुदेशन प्रणाली म दृश्य-श्रव्य तकनीकी की उपयोगिता को स्पष्ट कीजिये ।

2 शिक्षण सहायक सामग्रियो का वर्गीकरण कीजिए ।

(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

3 श्रव्य दृश्य तकनीकी के तीन उपयोग बताइये ।

4 दृश्य श्रव्य सहायक सामग्रियो का एक वर्गीकृत सूची प्रस्तुत करते हुये प्रत्येक की उपयोगिता एव न्यूनताओ पर प्रकाश डालिए ।

5 ओवरहैड प्रोजेक्टर की सरचना का वणन कीजिए । साथ ही उसके लाभो एव न्यूनताओ को स्पष्ट कीजिए ।

6 शिक्षण सहायक सामग्री के रूप म टी० वी० अथवा क्लोज सर्किट टेलीविजन (सी० सी० टी० वी०) की उपयोगिताओ एव सीमाओ की विवेचना कीजिए ।

7 अधिगम के उद्देश्य और दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्रियो के सम्बन्धो पर टिप्पणी लिखिए ।



9

शैक्षिक-दूरदर्शन

[EDUCATIONAL T V]

दूरदर्शन सम्प्रेषण का सर्वोत्तम एव सशक्त माध्यम है। यह एक ऐसा नवाचार है जिसने असंख्य लोगो के जीवन मे क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है। अमरीकी लेखक काइडर ने ठीक ही कहा है 'दूरदर्शन ने देश को वास्तव में जकड लिया है। इसका प्रसार रेडियो अथवा मोटर-कार की तुलना में अत्यन्त नाटकीय रहा है। यह हमारे जीवन का इतना अत्यावश्यक अग बन गया है कि यह कहना कठिन है कि यह 'आवश्यकता है या विलासिता'।'

दूरदर्शन के विशिष्ट लाभ—अपनी पुस्तक "ओडोविजुअल इन्सट्रक्शन मेटिरियल्स एण्ड मेथड्स' (Audiovisual Instruction Materials and Methods) मे ब्राउन और उनके सहयोगियों ने दूरदर्शन के इन विशिष्ट लाभो का उल्लेख किया है—

(i) किसी भी कार्यक्रम या दृश्य की जनसख्या के विशाल समूहो तक तत्काल पहुचने का यह सुलभ और अल्प व्यय साधन है।

(ii) यह रेडियो के सर्वोत्तम तत्वो और चलचित्र की सशक्तता को अपने मे जोड़ता है।

(iii) अधिगम की कठिनाइयो पर विजय पाने, महत्वपूर्ण विचारों के प्रस्तुतीकरण तथा अभिवृत्तियो के परिवर्तन करने म लोगों की सहायता करने मे यह सक्षम है। यह ऐसी विधियो से सूचना प्रदान करने मे भी सक्षम है जिनमे न तो उच्च स्तरीय शारीरिक दक्षता की आवश्यकता है और न ही सम्प्रेषण स्थल पर उपस्थित रहने की।

(iv) यह विशिष्ट एवं प्रख्यात शिक्षको या अनुदेशको को समस्त देश के अथवा विश्व के श्रोताओ से व्यक्तिगत सम्पर्क के अवसर बढ़ाने का साधन है।

(v) यह वाछित सामाजिक सुधार एव विकास के लिए सहायक है।

(vi) यह सम्प्रेषण के 'यहाँ और अभी' एव तत्परता के तत्वों पर आधारित है।

शैक्षिक दूरदर्शन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Educational T V Historical background)

नयी दिल्ली मे यूनेस्को (UNESCO) की आम सभा सन् 1956 में हुई। उस सभा मे यह निर्णय लिया कि भारत मे दूरदर्शन का शिक्षा और सामुदायिक विकास के माध्यम के रूप मे प्रयोग पर एक प्रारम्भिक प्रोजेक्ट (pilot project) का सचालन किया जाय। फलस्वरूप 1959 में ऑल इण्डिया रेडियो और यूनेस्को के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये कि प्रोजेक्ट का प्रारम्भ प्रायोजित स्तर पर किया जाए। इस प्रायोजन का उदघाटन 15 सितम्बर 1959 को भारत के प्रथम राष्ट्रपति स्व० राजेन्द्र प्रसाद ने किया। इस प्रकार भारत मे 'प्रयोग, प्रशिक्षण और मूल्याकन' के उद्देश्यो के साथ दूरदर्शन की सेवा का प्रारम्भ हुआ। यह सचार के माध्यम के साथ एक नया प्रयोग था। प्रारम्भ मे केवल 21 प्रौढ शिक्षा और सामाजिक कल्याण सेवाओ के सामुदायिक केन्द्रो पर टी० वी० सेट लगाये गये। इन केन्द्रो पर टेलीक्लब (tele club) सगठित किये गये जिनसे आशा की जाती थी कि वे एक साथ दूरदर्शन कार्यक्रम देखें। कार्यक्रम के पश्चात आपस मे परिचर्चा करें और देखने वालो की प्रतिक्रियाओ को प्रतिपुष्टि (feedback) के रूप में आल इण्डिया रेडियो के पास भेजें। प्रत्येक क्लब मे इस कार्य के लिए एक-एक सयोजक नियुक्त किये गये थे। प्रत्येक मगलवार और शुक्रवार को एक घण्टे का कार्यक्रम दूरदर्शन प्रसारित करता था। टी० वी० कार्यक्रम सूचनात्मक और शैक्षिक थे। इनको वार्ता, नाटक, नृत्य नाटिका, साक्षात्कार, परिचर्चा, सगीत और वृत्त-चित्रो के रूप मे प्रस्तुत किया जाता था। इसके अतिरिक्त महत्वपूर्ण दिवस, गणतन्त्र दिवस, विदेशी राजनेताओ की यात्राओ होली और दीवाली के त्योहारो का प्रसारण भी किया जाता था। ये सभी कार्यक्रम आकाशवाणी भवन, दिल्ली से प्रसारित किये जाते थे और उन्हे 12-15 मील की सीमा मे ही देखा जा सकता था। इन केन्द्रो पर 150 से 200 लोग कार्यक्रमो को देखने आया करते थे। दिसम्बर 1960 से मई, 1961 तक इस प्रकार के 41 कार्यक्रम प्रसारित किये गये। कार्यक्रमो की इस श्रृंखला के प्रसारण के पश्चात नेशनल फडामेन्टल एजूकेशनल सेन्टर (National Fundamental Educational Centre) और इण्डियन एडल्ट एजुकेशन एसोसियेशन (Indian Adult Education Association) ने इन कार्यक्रमो का जनता पर क्या प्रभाव पडा, इसका मूल्याकन किया। प्रयोग के निष्कर्ष उत्साह-वर्धक एव सार्थक दृष्टि से लाभप्रद थे।

इन कार्यक्रमो की सफलता के फलस्वरूप शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम की ओर पहला कदम 'ऑल इण्डिया रेडियो' के द्वारा प्रायोगिक स्तर पर 1960 मे किया गया। इस प्रायोगिक कार्यक्रम के तहत प्रत्येक मगलवार को सायकालीन कार्यक्रमों के स्थान पर अपराह्न 3 से 4 तक स्कूली बच्चो के लिए कार्यक्रम प्रसारित किये

जाने लगे। यद्यपि सामुदायिक केन्द्रो पर जहाँ टी० वी० सेट थे, निर्धारित समय पर बच्चो को एकत्रित करना कठिन काय था फिर भी प्रयोग क परिणाम उत्साह वर्धक थे।

प्रारम्भ म किये गय इन प्रयासो न शक्षिक दूरदशन के बीजारोपण हेतु जमीन तैयार किया। 1961 म फोर्ड फाउण्डेशन के साथ एक चार वर्षीय समझौता हुआ, जिसके तहत दिल्ली के माध्यमिक विद्यालयो मे 600 टी० वी० सेट लगाने की योजना थी। फोर्ड फाउण्डेशन के इस समझौते को वास्तव म शक्षिक दूरदशन का भारत म बीजारोपण कहा जा सकता है। 23 अक्टूबर, 1961 को दूरदशन की इस सेवा का उद्घाटन किया गया। प्रत्येक सप्ताह माध्यमिक विद्यालय के छात्रो के लिए 20 मिनट के 8 शक्षिक दूरदशन कायक्रम प्रसारित किये जाते थे। उन्ही कायक्रम को प्रत्येक दिन दूसरी पाली के छात्रो के लिए पुन प्रसारित किया जाता था। दो बार के प्रसारणो का समय प्रात 9 25 से 9 45 तक और मध्याह्न मे 11 00 से 11 20 तक था। इन प्रसारणो म भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, हिन्दी, अंग्रेजी, भूगोल और समसामयिक घटनाओ एव जानकारी को स्थान दिया गया। टी० वी० सेट से युक्त स्कूलो की सख्या म जैस ही वृद्धि हुई, शक्षिक दूरदशन का लाभ-क्षेत्र भी बढ गया। 36000 विज्ञान के विद्यार्थी और 96000 अंग्रेजी के विद्यार्थी इसका लाभ उठाने लगे। चार वर्षों के पश्चात इस प्रोजेक्ट का मूल्यांकन अमरीकी समाजशास्त्री डॉ० पाल न्यूरथ न किया और इसके परिणामो का सतोषप्रद पाया।

नियमित शैक्षिक टी० वी० कायक्रम का उद्घाटन 16 अगस्त, 1965 के प्रारम्भ मे किसानो के लिए कृषि दशन कार्यक्रम का शुभारम्भ किया गया। इस प्रोजेक्ट का आयोजन ऑल इण्डिया रेडियो ने इ स्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चरल रिसच (Institute of Agricultural Research), दिल्ली प्रशासन, (Delhi Administration) तथा एटामिक रिसच कमीशन (Atomic Research Commission) के सहयोग से किया। इस प्रोजक्ट ने सफलता की ओर आगे कदम बढाया।

साइट प्रोजेक्ट (SITE Project)

शैक्षिक दूरदशन के इतिहास मे प्रसिद्ध सेटेलाइट इन्सटक्शनल टेलीविजन एक्सपेरीमेंट (Satellite Instructional Television Experiment, SITE) का महत्वपूर्ण स्थान है। शैक्षिक दूरदशन के क्षेत्र में यूनेस्को (UNESCO) ने सवप्रथम 1965 मे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की दिशा में पहल किया। तभी SITE का योजनात्मक काय आरम्भ हुआ जिसका कार्यान्वयन 1975–79 मे किया गया। यूनेस्को द्वारा अन्तरिक्ष सम्प्रेषण विषय पर एक बैठक बुलाई गयी और सचार माध्यम विशेषज्ञों की एक अन्तर्राष्ट्रीय समिति का गठन किया। उसे यह काय सौंपा गया कि वह इस सम्बन्ध के सभी पक्षो का विवेचन कर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करे। यह

निश्चय किया गया कि उपग्रह (सेटेलाइट) के माध्यम से टी० वी० कार्यक्रमों के संचालन का एक प्रोजेक्ट भारत में लिया जाय। ऐसा अनुभव किया गया था कि भारत को इस प्रोजेक्ट द्वारा अपनी खाद्य समस्या, निरक्षरता की समस्या और विकास की व्यूह रचनाओं के सम्बन्ध में अनभिज्ञता की समस्या का हल करने में सहायता मिलेगी।

साइट का उद्घाटन 1 अगस्त, 1975 को तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अहमदाबाद में किया। इस प्रोजेक्ट में टी० वी० कार्यक्रम अमेरिका के नेशनल एयरोनॉटिक्स एण्ड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन (NASA) से उधार लिए गये एक उपग्रह (ATS F) के माध्यम से प्रसारित किया जाता था। 30 मई, 1974 को सेटेलाइट (ATS-F) का सफल प्रक्षेपण संयुक्त राज्य अमेरिका के केप केनावेरल से किया गया। इस उपग्रह का भार 3100 पौंड था। यह पृथ्वी से 22,300 मील की ऊँचाई पर पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया गया। उपग्रह की रफ्तार को पृथ्वी की रफ्तार से इस तरह मिलाया गया कि सभी व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए यह किसी एक बिन्दु पर स्थिर रहकर पृथ्वी की कक्षा में गतिमान था। अन्तरिक्ष विज्ञानियों ने बहुत ही पेचीदे हस्तक्षेप से इसे विषुवत रेखा पर स्थानान्तरित किया और यहाँ से अफ्रीका महाद्वीप में केनिया में अवस्थित विक्टोरिया झील के ऊपर स्थापित किया क्योंकि वे चाहते थे कि इसकी सम्पूर्ण शक्ति भारत की ओर केन्द्रित हो। इस उपग्रह के माध्यम से भारत में प्रसारण का कार्य 1 अगस्त, 1977 को प्रारम्भ हुआ और जुलाई, 1976 तक चला। इसके शैक्षिक उद्देश्य कृषि विज्ञान, स्वास्थ्य, शिक्षा परिवार नियोजन, राष्ट्रीय एकता आदि से सम्बन्धित थे। इसके द्वारा निम्नलिखित उद्देश्यों एवं प्रतिफलों की आशा की जाती थी।

(i) छात्रों का प्रवेश संख्या तथा नियमित उपस्थिति बढ़ेगी और विद्यालय छोड़ने वालों (dropouts) की संख्या घटेगी क्योंकि इससे आकर्षित होकर छात्र स्कूल में आयेंगे।

(ii) बच्चों में नवीन विचारों और क्रियाकलापों के प्रति ग्रहणशीलता विकसित होगी, क्योंकि शैक्षिक टी० वी० के इन कार्यक्रमों के द्वारा उन्हें समीपस्थ एवं दूरस्थ दोनों प्रकार से उद्दीपनों का अनुभव प्राप्त होगा।

(iii) व्यावहारिक प्रदर्शन के माध्यम से बच्चों में स्वास्थ्य सम्बन्धी अच्छी आदतें विकसित होंगी क्योंकि वे इनके महत्व को समझ सकेंगे।

(iv) उनमें सामाजिक सामंजस्य और प्रजातान्त्रिक विकास में सहायक समुचित अभिवृत्तियों, रुचियों और जीवन मूल्यों का विकास होगा।

(v) बच्चे वायु, जल और ध्वनि को प्रदूषित करने वाले कारकों को समझ सकेंगे।

(vi) वे जीवित प्राणिया से रुचि विकसित करेंगे और व य जीवन एव जगलो के सरक्षण की आवश्यकता के प्रति सजग रहगे ।

(vii) प्राकृतिक घटनाओ के निरीक्षण एव प्रयोग, कौशल युक्त प्रश्नो और तथ्यो एव आकडो के विश्लेषण के फलस्वरूप बच्चो म वैज्ञानिक अभिवत्ति विकसित होगी ।

(viii) वे विभिन्न प्रकार के सामुदायिक विकास कायक्रमो के विषय म ज्ञान प्राप्त करेंगे । फलस्वरूप इनमे इनका सक्रिय सहयोग विकसित होगा ।

(ix) व्यवस्थित रूप से सगठित बैठको, गोष्ठिया एव सम्मेलनो म उन्मुक्त होकर चर्चा करने के कौशलो और क्षमताओ का उनमे विकास होगा ।

(x) बच्चा मे प्राकृतिक ससाधनो के समुचित उपयोग के प्रति रुचि और सजगता विकसित होगी ।

(xi) बच्चे मातृभाषा, गणित, समाजशास्त्र, सामाय विज्ञान और हस्त कलाओ आदि स्कूली विषय म अपेक्षाकृत अच्छी उपलब्धि करेंगे ।

(xii) अपने प्रत्यक्षीकरण और अनुभवो के समरूप उनमे सामूहिक क्रिया कलापो मे भाग लेने की क्षमता विकसित होगी ।

(xiii) उनम दृश्य और श्र य ग्रहणशीलता तथा उ ह समवित करने की क्षमता विकसित होगी ।

(xiv) बच्चों मे राष्ट्रीय अ तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास होगा ।

(xv) ग्रामीण समुदाय मे बच्चो के स्कूल कायक्रम और क्रिया कलापो म रुचि उत्पन्न होगी ।

साइट कायक्रम का क्षेत्र विस्तार एव कायप्रणाली (Field and Procedure of SITE Programme)

सम्प्रेषण के क्षेत्र म एक प्रयोग के रूप मे साइट की योजना बनायी गयी थी । इसका उद्देश्य सम्पूण राष्ट्र के लिए दूरदशन प्रणाली के सचालन हेतु अनुभव प्राप्त करना था । इस दष्टिकोण से लगभग 2400 ऐसे टी० वी० सेट विभिन ग्रामीण क्षेत्रो मे लगाये गये जो सेटेलाइट से सीधे कायक्रमो को ग्रहण कर सकते थे । साइट मुख्यतया ग्रामीण दशको के लिये टी० वी० कायक्रम प्रस्तुत करता था । यह कायक्रम प्रतिदिन चार घण्टे का होता था । जिसमे से डेढ घण्टे का कायक्रम प्रात काल और ढाई घण्टे का कायक्रम सायकाल प्रसारित होता था । प्रात काल का कायक्रम बच्चो के लिए और सायकालीन कायक्रम व्यस्को के लिए थे ।

साइट कायक्रमो का क्षेत्र भारत के छ राज्यो—आ ध्रप्रदेश, बिहार, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, उडीसा और राजस्थान मे थे । तदनुसार छ स्थानो पर ट्रासमीटर स्थापित किये गये । प्रात एव के द्र स्तर पर कायक्रमो के द्वारा लाभ उठाने वाले गांवो की सख्या आगे दी गयी तालिका म प्रदर्शित है

क्रम स०	राज्य	केन्द्र	सम्मिलित गावो की सख्या
1	आन्ध्रप्रदेश	हैदराबाद	1600
2	बिहार	मुजफ्फरपुर	1600
3	कर्नाटक	गुलबर्गा	300
4	मध्यप्रदेश	रायपुर	400
5	उडीसा	सम्बलपुर	650
6	राजस्थान	जयपुर	4400
		योग	8950

शैक्षिक टी० वी० कायक्रमो का निर्माण टी० वी० बेस प्रोडक्शन सेन्टर (T V Base Production Centre) तथा दूरदर्शन और इण्डियन स्पेस रिसच आगनाइजेशन (Indian Space Research Organisation) किया करते थे। शक्षिक टी० वी० द्वारा छात्रो के कायक्रम के अतिरिक्त शिक्षको के लिए भी कायक्रम प्रसारित किये जाते थे।

इण्डियन स्पेस रिसच आगनाइजेशन (ISRO), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान एव प्रशिक्षण परिषद् (NCERT), शिक्षा मन्त्रालय और विश्वविद्यालय तथा कुछ अन्य सस्थाओ ने राज्य एव राष्ट्रीय स्तर पर देहाती क्षेत्रो के लिए शैक्षिक टी० वी० कायक्रमो का मूल्याकन किया। मोटे तौर पर उनके अध्ययनो के निष्कष उत्साहवधक एव उपयोगी थे।

टेरेस्ट्रियल टी० वी० कायक्रम (Terrestrial T V Programme)

साइट (SITE) के पश्चात भारत सरकार ने निश्चय किया कि साइट द्वारा अपनाये गये 40 प्रतिशत गांवो को टेरेस्ट्रियल ट्रासमीटर की सहायता से टी० वी० कायक्रमो की सुविधा दी जायेगी। साइट के समय से ही स्थानो पर सम्प्रेषण का बुनियादी ढांचा और स्टूडियो की सुविधा उपलब्ध होने के कारण साइट द्वारा सचालित कायक्रमो को अल्प शक्ति टेरेस्ट्रियल टी० वी० ट्रान्समीटर लगाकर चालू रखना सम्भव हो सका। इस प्रोजेक्ट को सामुदायिक अवलोकन स्कीम (Community Viewing Scheme) के नाम से जाना जाता है। यह व्यवस्था एक स्थायी प्रणाली है जो धीरे धीरे विस्तृत होकर और अधिक स्कूलो को अपने दायरे मे लायेगी।

आजकल दिल्ली दूरदर्शन केन्द्र अकेले ही विभिन्न पाठ्यगामी और पाठ्य सहगामी विषयो पर 16 कायक्रम प्रति सप्ताह प्रसारित करता है। 3 लाख से भी अधिक छात्र स्कूलो मे स्थापित 900 से भी अधिक टी० वी० सेट के माध्यम से इन कायक्रमो का अवलोकन करते हैं। इसके अतिरिक्त बम्बई, कलकत्ता, मद्रास,

मुजफ्फरपुर रायपुर, श्रीनगर आदि केन्द्र भी स्कूलों के लिए कार्यक्रम प्रसारित करते हैं।

इंसेट के अन्तर्गत शैक्षिक टी० वी० कार्यक्रम (Educational T V programme under INSAT)

हम जानते हैं कि छठी पंचवर्षीय योजना में 6 से 14 वर्ष की आयु वाले 1 करोड़ अस्सी लाख अतिरिक्त छात्रों तक शिक्षा का विस्तार करना था और साथ ही साथ शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में राष्ट्रीय विकास के सन्दर्भ में पुनरचना एवं सुधार भी करना था। योजना के अन्तर्गत यह स्वीकार किया गया था कि इतना बड़ा विस्तार वर्तमान शिक्षा प्रणाली और उपलब्ध संसाधनों के सहारे सम्भव नहीं है, क्योंकि न तो इतने स्कूल भवन और न ही इतने प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध हैं जो कि 1 करोड़ 80 लाख अतिरिक्त बालकों तक शिक्षा को पहुँचा सकते। अतः भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने शिक्षा का इतनी बड़ी मात्रा में प्रसार एवं पुनरचना तथा सुधार हेतु शैक्षिक तकनीकी का सहारा इंसेट (Indian National Satellite) के प्रयोग द्वारा करना चाहा। इंसेट की क्षमता का प्रयोग शिक्षा के विकास के लिए करने हेतु शिक्षा मन्त्रालय ने जुलाई, 1979 में ही योजना बनाना प्रारम्भ कर दिया। अहमदाबाद के स्पेस एप्लीकेशन सेन्टर (Space Application Centre SAC) द्वारा टी० वी० के भावी उपयोग हेतु योजना बनाने में सहायता ली गयी। सैक (SAC) ने 'इनसेट' शीर्षक पर एक आधार पत्र तैयार किया। जिसमें टी० वी० के लिए आवश्यक उपकरणों और उपग्रह के उपयोग के लिए आवश्यक विकास सामग्रियों पर प्रकाश डाला। इस आधार पत्र पर जनवरी, 1980 में सैक, एन० सी० ई० आर० टी०, आल इण्डिया रेडियो दूरदर्शन, योजना आयोग, यू० जी० सी० और शिक्षा मन्त्रालय के प्रतिनिधियों ने विचार विमर्श किया। यह निर्णय लिया गया कि इनसेट के उपयोग के लिए सॉफ्ट वेयर सामग्रियों की योजना, टी० वी० माध्यम का उपयोग करने वाले सभी मन्त्रालय विशेषकर शिक्षा मन्त्रालय बनाये। शैक्षिक उद्देश्यों और राष्ट्रीय आकांक्षाओं के अनुरूप सेटलाइट टी० वी० का उपयोग करने हेतु योजना बनाने के लिए इस बीच अनेक गोष्ठियाँ की गयीं। अप्रैल, 1980 में यूनेस्को के बैंकाक स्थित क्षेत्रीय कार्यालय ने भारत सरकार को एशियन प्रोग्राम आफ एजुकेशनल इन्नोवेशन फार डेवलपमेन्ट (APEID) के अन्तर्गत आमन्त्रित किया गया। इसी श्रृंखला में 1980 के 1 दिसम्बर से 6 दिसम्बर तक यूनेस्को ने नई दिल्ली में शैक्षिक प्रसारण पर एक राष्ट्रीय कार्यशाला (work shop) का आयोजन किया। एन० सी० ई० आर० टी० आल इण्डिया रेडियो और दूरदर्शन ने इसमें सक्रिय भाग लिया। इनसेट पृथ्वी की कक्षा में प्रक्षेपण एवं स्थापना के अवसर पर शैक्षिक प्रसारण पर आयोजित इस राष्ट्रीय कार्यशाला का बहुत महत्त्वपूर्ण एवं सार्थक योगदान था।

इनसट (INSAT) इण्डियन नेशनल सेटेलाइट (Indian National Satellite) का संक्षिप्त रूप है। इनसेट श्रृंखला का पहला उपग्रह इनसेट 1 ए (INSAT-

1 A) अमेरिका के केपकेनावरल से 10 अप्रैल, 1982 प्रक्षिप्त किया गया था। इस शृंखला का नियोजन अन्तरिक्ष विभाग, आकाशवाणी, दूरदर्शन, दूर संचार विभाग और भारत मौसम विज्ञान विभाग से संयुक्त रूप से किया था। दुर्भाग्य की बात यह है कि छ मास के बाद ही इस उपग्रह को चन्द्रमा के अप्रत्याशित रूप से बाधक बन जाने के कारण निष्क्रिय कर देना पड़ा, जबकि उपग्रह उस समय बिल्कुल ठीक ठीक काम कर रहा था। इसे निष्क्रिय करने से पूर्व इसके माध्यम से नवीन प्रकार के शैक्षिक टी० वी० कार्यक्रमों का प्रसारण प्राइमरी स्कूलों के लिए 15 अगस्त, 1982 से आरम्भ किया गया था।

शैक्षिक टी० वी० कार्यक्रमों का प्रसारण टेरेस्ट्रियल (terrestrial) प्रसारण केन्द्रों से चलता रहा। सौभाग्य से 30 अगस्त, 1983 को इनसेट 1बी को अमेरिका के उसी प्रक्षेपण केन्द्र से प्रक्षिप्त किया गया। यह वही उपग्रह है जो हमारे लिए दिन प्रतिदिन टी० वी० कार्यक्रम लाता है तथा कई रेडियो चैनलों, टेलीफोन और टेलीग्राफ चैनलों को जोड़ता है। रोज टी० वी० पर मौसम के हाल बताता है। साथ ही मानसून के बारे में विस्तृत पूर्वानुमान निकालने और महत्वपूर्ण आँकड़े एकत्र करने में सहायक होता है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि इसके माध्यम से शैक्षिक टी० वी० कार्यक्रमों के प्रसारण में हमें अभूतपूर्व सहायता मिल रही है।

शैक्षिक टी० वी० के उद्देश्य (Objectives of ETV)

टी० वी० के शैक्षिक उपयोग पर 1980 में हुई राष्ट्रीय कार्यशाला में शैक्षिक टी० वी० के विभिन्न रूपों के विषय में विस्तृत चर्चा हुयी जिसके आधार पर इसके निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं

(i) लोगों को राष्ट्रीय विकास के बारे में जानकारी देकर उसमें सक्रिय भाग लेने के लिए प्रोत्साहन एवं प्रेरणा प्रदान करना।

(ii) स्कूलों के बाहर के युवकों एवं प्रौढ़ों के लिए औपचारिक शिक्षा के विकल्प के रूप में विकसित अनौपचारिक शिक्षा का प्रमुख माध्यम बनना।

(iii) अनुदेशन का एक प्रत्यक्ष एवं सशक्त माध्यम बनना।

(iv) औपचारिक शिक्षा की कमियों को दूर कर उसे नवीनतम ज्ञान से परिपूरित करने वाला माध्यम बनना।

(v) शिक्षकों, अनुदेशकों एवं पर्यवेक्षकों के प्रशिक्षण में सहायता प्रदान करना।

(vi) व्यावसायिक (कृषि एवं औद्योगिक) और पेशेवर (चिकित्सा एवं औद्योगिक) कौशलों की शिक्षा देने वाला सशक्त माध्यम बनना।

ग्रामीण बच्चों की दृष्टि से शैक्षिक टी० वी० के उद्देश्य

इनसेट टी० वी० कार्यक्रमों का 'शिक्षा और विकास के लिए उपयोग' विषय पर गठित एक अध्ययन समूह (study group) ने यह कहा है कि बालकों एवं

कर ग्रामीण बालको के लिए शक्षिक टी वी कायक्रमो के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए—

(i) अध्ययन केन्द्र अथवा स्कूलो मे उपस्थित होने और सीखने के लिए बच्चो को प्रेरित करना।

(ii) बच्चो म वाछित अभिवृत्तिया और आदतो का विकास करना।

(iii) उनमे सामुदायिक जागरूकता का सृजन करना।

(iv) छात्रो के कौशलो म सुधार करना।

(v) छात्रो मे खोज करने और स्वय कुछ करने अथवा प्रयोग करने के लिए उ हे प्रेरित करना।

(vi) अपन आस पास और चारो तरफ के वातावरण के विषय मे जागरूकता उत्पन्न करना।

(vii) समाज मे फैली हुई बुराइयो के प्रति और उन्ह दूर करने वाले प्रयासो के प्रति छात्रो को जागरूक बनाना।

शैक्षिक टी वी के कायक्षेत्र एव विशेषताएँ

कायक्षेत्र (Scope)—शक्षिक टी वी (ETV) का तात्पय किसी भी ऐसे टी वी कायक्रम से है जिसका उपयोग शिक्षा और समुदाय के लिए किया जाता है। यही कारण है कि कुछ लेखक इसे सामुदायिक टी वी (Community TV) की सज्ञा प्रदान करते हैं। फेडरल कम्यूनिकेशन कमीशन (Federal Communication Commission) ने शक्षिक टी वी को बहुत अहमियत प्रदान करते हुए उसके क्रिया कलापो का निम्नलिखित क्षेत्र विस्तार प्रस्तुत किया है

(i) उदार शिक्षा और सास्कृतिक सुधार।

(ii) प्रौढो के लिए अनौपचारिक अनुदेशन।

(iii) व्यवसाय स्थल एव घर पर ही अनुदेशन।

(iv) बच्चो के कायक्रम।

(v) प्रौढो के लिए औपचारिक अनुदेशन।

(vi) स्कूली अनुदेशन।

अभी हमने शैक्षिक टी वी को सामुदायिक टी वी कहे जाने की बात की। मन म एक भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि सामुदायिक शक्षिक टी वी कायक्रमो और टी वी का औपचारिक अनुदेशन के लिए प्रयोग म क्या अ तर है ? जब सीधे सीधे औपचारिक अनुदेशन के लिए टी वी का प्रयोग किया जाता है तब ऐसे कायक्रमो को अनुदेशनात्मक टी वी (ITV) कहा जाता है। अनुदेशनात्मक टी वी का प्रयोग स्कूल और कालेजों मे आयु श्रेणी आदि की ओर ध्यान न देते हुए औपचारिक पाठ्य क्रमो को पढाने के लिए किया जाता है। शक्षिक टी वी एक व्यापक पद है जिसमे समुदाय को शिक्षा के लिए टी वी का प्रयोग किया जाता है।

विशेषताएँ (Characteristics)—संचार के बहुमुखी, गत्यात्मक और शक्तिशाली माध्यम के रूप मे टी वी शिक्षा को प्रभावित करने की अपरिमित क्षमता रखती है। यह संचार का नवीनतम माध्यम है और शिक्षण अधिगम के लिए एक नवाचार है। इसका प्रभावकारी उपयोग अधिगम के बुनियादी नियमो पर आधारित है। टी वी का समुचित उपयोग छात्रो म अधिगम के लिए और अधिक उत्तरदायित्व ग्रहण करने क लिए नवीन प्रोत्साहन प्रदान करता है। यह भी सत्य है कि प्रभावकारी 'टी वी शिक्षण' के लिये सामान्य औपचारिक शिक्षण की तुलना म और अधिक तैयारी एव विशेषज्ञो की सहायता की आवश्यकता होती है। टी वी अपने आप म स्वय एक सशक्त इकाई नही है अपितु यह एक यन्त्र है जो किसी एक खास शैक्षिक परिस्थिति म उपयोग में लायी जा सकती है। यह छात्रो शिक्षको और अभिभावको के क्रिया कलापो को सम्बन्धित करने वाली एक नयी और अपेक्षाकृत उत्तम विधि है किन्तु इसके अपेक्षाकृत और अधिक प्रभावशाली प्रयोग हेतु निरन्तर मूल्यांकन की आवश्यकता है। टी वी सभी नियोजको, प्रशासको, शिक्षको, अभिभावको और पत्रकारो से सम्बन्धित है और यह उन पर इस प्रकार के उत्तरदायित्व डालता है ताकि ये सभी अभिकरण परस्पर मिल जुलकर काम करें।

शैक्षिक टी वी की विशिष्ट सार्थकता इस बात मे है कि वह सभी प्रकार की दृश्य श्रव्य सहायक सामग्रियो का उपयोग कर सकता है। शैक्षिक टी वी की दूसरी विशेषता उसकी तत्क्षणता के गुण मे है। नवीनतम सामयिक घटनाओ को कक्षाओ मे इसके माध्यम से तत्काल प्रस्तुत किया जा सकता है। विश्व में किसी भी भाग म खेले जाने वाले क्रिकेट मैच या अन्य कोई मैच, ओलम्पिक खेलकूद, देश मे मनाया जाने वाला गणतन्त्र दिवस आदि घटनाओ को उसी क्षण टी वी के माध्यम से कक्षाओ मे दिखाया जा सकता है। टी वी वर्तमान घटनाओ की ही नही बल्कि अतीत की घटनाओ से भी सम्बन्धित है। इसके द्वारा भूतकाल की घटनाओं को कक्षाओं मे जीवन्त रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है। ऐतिहासिक घटनाओ का नाटकीयकरण, छात्रों का ऐतिहासिक तथ्यो व सम्प्रत्ययो का ज्ञान टी वी के माध्यम स प्रभावी ढग से दिया जा सकता है। टी वी से अधिक बहुमुखी गुणो वाला अन्य कोई सम्प्रेषण माध्यम नही है। विश्व के ऐसे स्थान, जहाँ पहुँचना व्यक्तियो के लिए दुर्लभ है, उनका भी टी वी पर सीधा प्रसारण (live telecast) या वीडियो प्रसारण किया जा सकता है। छात्र कक्षाओ मे बैठे ही बैठे विश्व के सातों आश्चर्यों का दर्शन कर सकते हैं। एवरेस्ट की चोटी और दक्षिण ध्रुव के बर्फीले प्रदेश की सैर कर सकते हैं। टी वी किसी भी उम्र के व्यक्ति एव कक्षा के लिए उपयुक्त है। टी वी कार्यक्रम किसी भी शैक्षिक विषय—कला, विज्ञान, साहित्य, भूगोल इतिहास आदि विषयो पर निर्मित किये जा सकते हैं।

शैक्षिक टी वी बच्चो और बूढ़ो दोनो मे ही रुचि एव प्रेरणा उत्पन्न करने म सक्षम है।

टी वी पर एक रुचिकर कार्यक्रम का अवलोकन करने के लिए विद्यालय से दौड़ते हुए बच्चे घर वापस आते हैं। यहाँ तक कि वे खेलकूद को भी छोड़कर टी वी के सामने बहुत उत्सुकता से बैठकर मनपसन्द कार्यक्रम की प्रतीक्षा करते हैं। प्रौढ़ जन भी पार्टियों चलचित्रों, क्लबों को छोड़कर टी वी के कार्यक्रम के लिए समय देते हैं। शैक्षिक टी वी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह शिक्षकों, छात्रों, अभिभावकों को परस्पर एक दूसरे को समझने में सहायता प्रदान करती है। जब अभिभावक गण स्कूली दृश्यों को टी वी पर देखते हैं और शिक्षक गण अभिभावकों से सम्बन्धित दृश्यों को, तब उन्हें एक दूसरे को समझने का अच्छा अवसर मिलता है। शिक्षक और छात्र टी वी कार्यक्रमों के माध्यम से अपनी शक्तियों एवं कमजोरियों को पहचानते हैं और अपनी सुषुप्त शक्तियों को जाग्रत एवं विकसित करने में प्रयत्नशील होते हैं।

शैक्षिक टी वी नियोजन एवं उत्पादन (ETV Planning and Production)

ग्रामीण क्षेत्रों एवं ग्रामीण बच्चों के लिए उपयुक्त कार्यक्रमों का निर्माण करने हेतु ऐसा सोचा गया कि निर्माण के कार्य का विकेन्द्रीकरण किया जाय। ऐसा इसलिए आवश्यक है कि देश में अनेक भाषाएँ और विशिष्ट प्रकार के सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले अनेक समुदाय हैं। उनकी समस्यायें विभिन्न प्रकार की हैं और उनका समाधान भी प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। इनसेट राज्यों आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, बिहार, महाराष्ट्र, गुजरात और उ० प्र० में एक एक शैक्षिक टी वी निर्माण केन्द्र स्थापित करने का सुझाव विशेषज्ञों ने दिया। अध्ययन समूह ने इस हेतु छठी पंचवर्षीय योजना में 18 करोड़ रुपये केन्द्रों की स्थापना और रु० 4 करोड़ शैक्षिक तकनीकी केन्द्र को सुदृढ़ बनाने के लिए माँगा। किन्तु योजना आयोग ने 11 50 करोड़ रुपए मात्र की स्वीकृति दी और इस बात का आश्वासन दिया कि कार्य का मूल्यांकन करने के पश्चात और धन दिया जायेगा। इनसेट राज्यों ने राज्य सरकारों की सहायता से उपकरणों को उपलब्ध कर शैक्षिक टी० वी० निर्माण केन्द्रों की स्थापना का प्रयास प्रारम्भ कर दिया। इन केन्द्रों की स्थापना में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन और जर्मन जनवादी गणतन्त्र द्वारा यन्त्र और उपकरणों का दान और कर्मचारियों के प्रशिक्षण की सुविधा मिलने की आशा की जा रही है।

साइट राज्यों में निर्माण केन्द्रों की स्थापना और उनकी राजधानियों के समीप या राजधानियों में ही करने की योजना है।

राज्य	निर्माण केन्द्र स्थल (प्रस्तावित)
आन्ध्र प्रदेश	हैदराबाद
बिहार	पटना
गुजरात	अहमदाबाद
महाराष्ट्र	पूना
उड़ीसा	भुवनेश्वर
उ० प्र०	लखनऊ

प्रस्तावित क्षेत्रीय निर्माण केन्द्र स्टेट काउंसिल आफ एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग (SCERT) अथवा स्टेट इन्स्टीट्यूट आफ एजुकेशन' (SIE) के नियन्त्रण मे काम करेंगे किन्तु उन्हे पर्याप्त स्वायत्तता और कार्य करने की स्वतन्त्रता दी जायेगी।

कार्यक्रमो की योजना म शिक्षाशास्त्रियो, विषय विशेषज्ञ शिक्षको, स्क्रिप्ट लेखको, निर्माताओं और माध्यम विशेषज्ञ का परस्पर सक्रिय सहयोग रहेगा। शैक्षिक टी वी कार्यक्रमो के निर्माताओ के पास जिन लोगो के लिए कार्यक्रम का निर्माण किया जा रहा है, उनकी पृष्ठभूमि के विषय मे उन्हें पर्याप्त ज्ञान और अनुभव होना चाहिए। प्रसारण के तकनीकी एव सृजनात्मक स्रोतो के उपयोग हेतु उन्हें तकनीकी दृष्टि से प्रशिक्षित होना चाहिए। शैक्षिक टी वी कार्यक्रमो के लिए आलेख (script) लिखने वालो को भी समुचित रूप से प्रशिक्षित होना चाहिए। उन्हे या तो स्वय ही विषय का विशेषज्ञ होना चाहिए अन्यथा उनके द्वारा लिखित आलेख का पुनरावलोकन विषय के विशेषज्ञ द्वारा करवाना आवश्यक होगा। उनमे सृजनात्मक लेखन के लिए प्रतिभा और दर्शको की आवश्यकताओ और रुचियो के ज्ञान का होना भी आवश्यक है। कार्यक्रम का प्रस्तुत करने वाला एक अच्छा सम्प्रेषक होना चाहिए। उसके लिए यह आवश्यक नही है कि वह स्वय ही आलेख लेखक हो। शैक्षिक टी वी कार्यक्रम को न केवल आकर्षक होना चाहिए अपितु उन्हें विषयगत और भाषागत त्रुटियो से मुक्त भी होना चाहिए।

शैक्षिक कार्यक्रमों की प्राथमिकताएँ (ETV Programme priorities)

शैक्षिक टी वी कार्यक्रमों के निर्माण की योजना और निर्माण म आगामी 10 वर्षों के लिए राष्ट्रीय प्राथमिकताओ की सूची निम्नलिखित है

(i) औपचारिक और अनौपचारिक दोनो ही प्रकार की प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमिकरण।

(ii) अनौपचारिक प्रौढ शिक्षा, आर्थिक और सामाजिक कार्यों से शिक्षा को जोडना।

(iii) व्यावसायिक और पशेवर कौशलो का विकास।

(iv) नागरिकता के लिए प्रशिक्षण।

(v) वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के लिए विज्ञान को लोकप्रिय बनाना।

(vi) राष्ट्रीय एकता की वृद्धि करना।

(vii) जनसख्या शिक्षा, ऊर्जा सरक्षण, वन्यजीवन सरक्षण, प्रदूषण निवारण, भोजन और स्वास्थ्य आदि राष्ट्रीय महत्व के विषय मे जानकारी देना।

शैक्षिक टी वी का उपयोग एव मूल्यांकन (Utilization and Evaluation of ETV)

शैक्षिक टी वी कार्यक्रमो के उपयोग हेतु सबसे पहली आवश्यकता है—टी वी सैट का उपलब्ध होना। हजारो, लाखो रुपयो की लागत से बने हुए कार्यक्रम

व्यथ सिद्ध होगे अगर टी वी सेट विद्यालयो और ग्रामीणो के लिए उपलब्ध न हों। टी वी सेट उपलब्ध कराने के पश्चात उपयुक्त सहायक सामग्रियो का निर्माण और वितरण शैक्षिक टी वी का उपयोग करने वाले शिक्षको और छात्रो के लिए होना चाहिए। इन सहायक सामग्रियो के उपयोग से शक्षिक कायक्रमो की प्रभावकारिता बहुत बढ जाती है। 'सेन्ट्रल इ स्टीटयूट आफ एजुकेशनल टेक्नॉलाजी' द्वारा ऐसी सहायक सामग्रियो का निर्माण करना चाहिए। सरकारो के मागदशन हेतु माडल के रूप मे उन सहायक सामग्रियो को राज्य शैक्षिक टी वी निर्माण केन्द्रो' पर प्रेषित करना चाहिए। राज्य के केन्द्र इन सामग्रियो को अपनी क्षेत्रीय आवश्यकताओ के अनुरूप अनुकूलित कर सकते है। साथ ही साथ इसी माडल पर नवीन कायक्रमो का निर्माण भी कर सकते हैं। 'से ट्रल इ स्टीटयूट आफ टेक्नॉलाजी' को चाहिए कि वह विभिन्न राज्यो के आलेख लेखको, शिक्षको के लिए प्रशिक्षण कायक्रम का आयोजन करे। शैक्षिक टी वी कायक्रमो का समुचित उपयोग छात्रो एव दशको के लिए हो सके इसलिए पत्रको और प्रसारण के द्वारा शिक्षको एव अन्य सम्बन्धित लोगो को कायक्रमो के विषय मे पूव सूचना प्रदान करना चाहिए।

कायक्रमो मे निर तर सुधार हो और उनकी प्रभावकारिता मे वृद्धि हो, इसके लिए कायक्रमो का मूल्याकन करना एक अनिवाय आवश्यकता है क्योकि मूल्याकन के द्वारा ही प्रतिपुष्टि मिलती है तथा प्रतिपुष्टि सुधार का सर्वोत्तम साधन है।

कायक्रमो म सुधार लाने के लिए सरल, शीघ्र, प्रभावकारी और यथास्थान मूल्याकन करने की विधियाँ अधिक उपयोगी होती है। मूल्याकन की प्रक्रिया द्वारा यह देखना होगा कि कायक्रम की योजना बनाते समय जिन शैक्षिक उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए कायक्रम का निर्माण किया गया था, वे कायक्रमों द्वारा प्राप्त किये गये अथवा नही। मूल्याकन की यह प्रक्रिया केवल खाना पूर्ति के लिए न होकर कायक्रम मे वास्तविक सुधार के लिए होनी चाहिए।

इनसेट (INSAT) चुनौती से भरा हुआ राष्ट्रीय प्रोजेक्ट है। इसका उपयोग शिक्षा जगत मे विशेषकर ग्रामीणो एव सुख सुविधाओ से वचित आम जनता की शिक्षा के लिए नवीन सम्भावनाओ को ज म देने वाला है। इनसेट के द्वारा शक्षिक टी वी कायक्रम के प्रसारण ने समाज सुधारको, शिक्षको एव प्रशासको मे भविष्य के प्रति आशा का सचार किया है। इनसेट 1 बी 1990 तक अपना काम करता रहगा। इसके पहले ही इनसेट 1 सी के प्रक्षेपण की व्यवस्था है। इनसेट 1 बी की जीवनी शक्ति के समाप्त होने पर उसका कायभार वह स्वय सम्भाल लेगा। आज भारत ससार के उन इने गिने देशा म है, जिन्होन अन्तरिक्ष तक्नीकी का व्यवहार एव उपयोग करने की क्षमता विकसित कर ली है। अमेरिका सोवियत सघ और पश्चिमी यूरोपीय देशा के बाहर भारत ही शायद एक मात्र देश है जिसने अ तरिक्ष

की उलझनों पर काबू पा लिया है। इनसेट के माध्यम से शैक्षिक टी वी के नवाचार का सहारा लेकर भारत शिक्षा के प्रचार और प्रसार में सफलता के नये कीर्तिमान स्थापित करेगा, इसमे कोई स देह नहीं है।

अभ्यास के प्रश्न

1 भारत मे शैक्षिक दूरदर्शन के विकास का इतिहास प्रस्तुत करते हुए इसके विशिष्ट लाभों की विवेचना कीजिए।
2 साइट (SITE) प्रोजेक्ट के सम्बन्ध मे आप क्या जानते हैं ? इसके द्वारा शैक्षिक दूरदर्शन आन्दोलन को क्या लाभ प्राप्त हुए हैं ?
3 इनसैट (INSAT) से आप क्या समझते हैं ? शैक्षिक टी वी के उद्देश्य और कार्य क्षेत्र की विवेचना कीजिए।
4 शैक्षिक टी वी को और प्रभावकारी बनाने के लिए अपने रचनात्मक सुझाव प्रस्तुत कीजिए।
5 इनसैट प्रोग्राम का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)



10

दूरस्थ शिक्षा

[DISTANCE EDUCATION]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् अपने देश मे शिक्षा का व्यापक प्रचार व प्रसार हुआ है। हमारा लक्ष्य निरक्षरता का उन्मूलन और शिक्षा का सार्वभौमिकरण करना है किन्तु शिक्षा के प्रसार एव जनसख्या की वृद्धि की होड ने हम इन लक्ष्यो तक नहीं पहुँचने दिया। तेजी से बढने वाली जनसख्या के साथ ही साथ लोगो मे एक नयी जागृति और शिक्षा के प्रति अपने अधिकारो की चेतना जन्मी है। शिक्षा की व्यापक माँग ने शक्षिक नियोजनकर्त्ताओ के मन और मस्तिष्क को उद्वेलित किया है। वे सोच नही पाते है कि बढती हुई जनसख्या के साथ शिक्षा के प्रसार और उसकी गुणवत्ता (quality) मे किस प्रकार तालमेल स्थापित किया जाय। इतना तो निश्चित है कि वतमान अनमनीय रूढिग्रस्त विद्यालय की चाहरदीवारी मे बन्द शिक्षा प्रणाली, प्रजातान्त्रिक और समाजवादी विशाल भारतीय समाज की शक्षिक आवश्यकताओ के लिए पर्याप्त नही है। अत कुछ निश्चित शक्षिक मूल्यो पर क्रान्तिकारी पुनर्विचार एव मूल्याकन करना अनिवाय हो गया है। हमे एक नयी व्यूह रचना (Strategy) अथवा नवाचार का निर्माण करना होगा जो जनता की शक्षिक आवश्यकताओ को पूरा कर सके। दूरस्थ शिक्षा भारतीय शिक्षा जगत मे इसी प्रकार के एक शक्तिशाली नवाचार के रूप मे प्रकट हुई है। इसके द्वारा जनता की शक्षिक आवश्यकताओ के साथ साथ उनके लिए शिक्षा का वैयक्तिकरण भी हो सकेगा।

विश्व के अनेक विकासशील देशो ने प्रशिक्षित शिक्षको, भवनो और उपकरणो के अभाव मे दूरस्थ शिक्षा को अपनाकर अपने देशवासियो को शिक्षा सुलभ करायी है। शिक्षा की इस नवीन प्रणाली का अति विस्तृत प्रयोग पत्राचार और अन्य जनसचार माध्यमो के सहारे खुले विश्वविद्यालयो (open universities) के रूप मे शिक्षा का लोकप्रिय और प्रभावकारी माध्यम बन सका है। खुले अथवा मुक्त विश्व विद्यालय एव इसी प्रकार की सस्थाएँ ब्रिटेन, रूस, पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी, फ्रांस तथा अन्य यूरोपीय देशो मे सफलतापूवक काय कर रही हैं।

विशाल जनसंख्या की शैक्षिक आवश्यकता की पूर्ति हेतु दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का प्रयोग भारत मे बहुत नया है। इस नवाचार को शीघ्र प्रचलित करने की उत्सुकता एव उत्साह के कारण इसने सम्प्रत्ययात्मक रूपरेखा एव प्रयोग विधि ने अनेक रग रूप ले लिये हैं। कुछ लोग इसे अनौपचारिक (informal) शिक्षा पत्राचार पाठयक्रम मात्र, लघु उन्मुखता कार्यक्रम, गहन पाठ्यक्रम अथवा लम्बी अवधि के पत्राचार एव सम्पर्क कार्यक्रम समझ बैठते हैं। अत प्रारम्भ मे ही हमे इसके अर्थ, स्वरूप, प्रकृति और क्षेत्र को भली भाँति समझ लेना चाहिए।

दूरस्थ शिक्षा अर्थ एव परिभाषा (Distance Education Meaning and Definition)

फिलिप काम्बस और मन्जूर अहमद के अनुसार, "स्थापित औपचारिक शिक्षा के दायरे से बाहर चलने वाली सुसगठित शैक्षिक प्रणाली को दूरस्थ शिक्षा कहते हैं। यह एक स्वतन्त्र प्रणाली के रूप मे अथवा किसी वृहद् प्रणाली के अग के रूप मे सीखने वालो के एक निश्चित समूह को निश्चित शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने मे सहायता प्रदान करती है।"[1]

माल्कम आदिशेषया के अनुसार "दूरस्थ शिक्षा का तात्पर्य उस शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से है जिसमे स्थान और समय के आयाम शिक्षण और अधिगम के बीच हस्तक्षेप करते हैं।"[2] अर्थात् शिक्षण की प्रक्रिया किसी अन्य स्थान पर की जा सकती है और अधिगम की प्रक्रिया किसी अन्य समय पर अधिगमकर्त्ता के द्वारा सम्भव होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली स्कूलों या शिक्षण संस्थाओं की बन्द चाहरदीवारी के बाहर समय एव स्थान की सीमाओ से मुक्त होकर चलने वाली एक शैक्षिक प्रणाली है।

इसमे और औपचारिक (formal) शिक्षा मे इन बिन्दुओ पर मूलभूत अन्तर है। इसमे उपस्थिति की अनिवार्यता नही रहती और शिक्षक के आमने सामने बैठकर

---

1 "An organised systematic educational activity carried on outside the framework of the established formal system Whether operating separately or as an important feature of some broader activity that is intended to serve identifiable learning clienteles and learning objectives —Philip Combs and Manzoor Ahamad, *New Paths to Learning* UNESCO 1973

2 " it refers to the teaching learning process undertaken where a space and/or time dimension intervene between the teaching and learning Malcolm Adiseshiah Distance Education for Developing countries *Educational Technology News letter* Vol 4, No 1, Jan 1981

शिक्षा नही ग्रहण करनी होती है । अधिगमकर्त्ता अपने मनचाहे समय पर सीखने की अपनी गति के साथ अपने ही घर या अन्य किसी स्थान पर शिक्षा ग्रहण कर सकता है ।

शिक्षण संस्थाओ की चाहरदीवारी से इसकी मुक्ति के कारण सम्भवत कुछ लोग दूरस्थ शिक्षा को अनौपचारिक (informal) एव आकस्मिक (incidental) शिक्षा समझ बैठते हैं किन्तु ऐसा समझना एक भूल होगी । अनौपचारिक शिक्षा और दूरस्थ शिक्षा एक दूसरे के पर्यायवाची नही हैं । दूरस्थ शिक्षा सुनिश्चित शैक्षिक उद्देश्यो, विषय वस्तु, सचार माध्यम और निर्दिष्ट जनसख्या वाली एक सुसगठित शैक्षिक प्रणाली है ।

दूरस्थ शिक्षा उन सभी विधियों का उपयोग करती है जिनमे शिक्षक और सीखने वाले के बीच भौतिक दूरी होने के बावजूद कोई बाधा उपस्थित नही होती । शिक्षण की प्रक्रिया मुद्रण (printing) यांत्रिक और इलेक्ट्रानिक साधनो एव माध्यमो जैसे अखबारो पत्रो, फिल्मो, रिकार्डों रेडियो, टेलीविजन, वीडियो टेप, कम्प्यूटर और माइक्रोप्रोफेसर आदि द्वारा सचालित होती है । इस प्रणाली की मुख्य विशेषता है औपचारिकता को दूर करना, लचीला होना, बहुमुखी होना, और स्कूल मे जाकर पढने से मुक्त होना । दूसरे शब्दो मे, इसकी प्रमुख विशेषता है इसका असमीपस्थ सचार (non contiguous communication) प्रणाली पर आधारित होना । वैसे जब कभी आमने-सामने बैठकर सम्पर्क की आवश्यकता होती है, इस प्रणाली मे भी सम्पर्क सत्र (contact session) की व्यवस्था की जा सकती है ।

अन्तत हम कह सकते हैं कि दूरस्थ शिक्षा निम्नलिखित तीन प्रकार की दूरियो को निर्दिष्ट करती है

(i) शिक्षक और सीखने वाले के बीच भौतिक दूरी ।

(ii) पाठ या अधिगम सामग्री के निर्माण और उसके सम्प्रेषण मे समय की दूरी या अन्तराल ।

(iii) पाठ या अधिगम सामग्री के सम्प्रेषण और अधिगमकर्त्ता द्वारा उसे प्राप्त या ग्रहण करने या सीखने के मध्य दूरी ।

शिक्षण और अधिगम की प्रक्रिया मे इन दूरियो के हस्तक्षेप के कारण ही इस प्रणाली को दूरस्थ शिक्षा कहते हैं ।

दूरस्थ शिक्षा की विशेषताएँ (Characteristics of Distance Education)

उपर्युक्त परिभाषाओ का विश्लेषण करने के पश्चात दूरस्थ शिक्षा की निम्न लिखित विशेषताएँ दिखायी पडती हैं

(i) यह शिक्षण अधिगम की एक सुसगठित प्रणाली है न कि आकस्मिक या अनौपचारिक शिक्षा का यह स्वाध्याय मात्र ।

(ii) यह शिक्षण अधिगम की एक ऐसी प्रणाली है जो निश्चित एव स्थिर

विषय वस्तु समय, शिक्षण विधियों और आमने सामने बैठकर पढ़ने-पढ़ाने के बन्धन से मुक्त रहती है।

(iii) यह प्रणाली अधिगमकर्त्ताओ की आवश्यकताओ, स्तर और उनके दैनिक जीवन कार्यों से जुड़ी रहती है।

(iv) यह हमेशा अधिगमकर्त्ताओ के सुनिश्चित एव विशिष्ट समूह और शिक्षा के सुनिश्चित एव विशिष्ट उद्देश्यो के लिए होती है।

(v) दूरस्थ शिक्षा स्व अधिगम (self learning) की एक विधि है जिसमे छात्र स्वय अपने प्रयासो से सीखता है। इसमे छात्र को निजी पहल और प्रेरणा पर अन्य किसी वस्तु की तुलना मे अधिक निर्भर रहना पडता है।

(vi) दूरस्थ शिक्षा एक ऐसा नवाचार है जो लचीला (flexible) और कम खर्चीला है।

(vii) इस प्रणाली मे छात्र अपनी योग्यता के अनुसार और अपनी इच्छानुसार समय लगाकर प्रगति करता है। इसमे बाहर से उसके ऊपर कुछ थोपा नही जाता और उसे सब कुछ स्वय ही सीखना तथा अर्जित करना होता है।

दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न रूप अथवा प्रकार (Forms or Types of Distance Education)

दूरस्थ शिक्षा अनेक रूपो मे अनेक देश एव विश्व के अन्य देशो मे चलायी जा रही है। इसके निम्न प्रमुख रूप या प्रकार हैं

(i) पत्राचार कार्यक्रम (Correspondence Programme)

(ii) रेडियो शैक्षिक कार्यक्रम (Radio Educational Programme)

(iii) शैक्षिक दूरदर्शन (ETV)

(iv) खुला विद्यालय एव विश्वविद्यालय (Open School and University)

(v) शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम (Teacher training programme)

(vi) सेवारत शिक्षक शिक्षण कार्यक्रम (Inservice teacher training programme)

दूरस्थ शिक्षा से लाभान्वित होने वाले विशिष्ट समूह (Group specifically helped by distance Education)

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली शिक्षा को औपचारिक शिक्षण सस्थाओ के बन्धन से मुक्त कर शिक्षा के लाभ को हर ऐसे व्यक्ति के द्वार तक पहुँचाती है जो शिक्षित होकर अपने जीवन को समुन्नत करना और अपनी ज्ञान की पिपासा को शान्त करना चाहता है। दूरस्थ शिक्षा से निम्नलिखित समूहो को विशेष लाभ एव सहायता प्राप्त होती है

(i) ऐसे अधिगमकर्त्ता जो दूर दराज के ग्रामो, वन्य एव पहाड़ी प्रदेशो मे बसे हुये हैं, जहाँ शैक्षिक सुविधाओ का अभाव है या वे अति सीमित मात्रा मे है।

(ii) ऐसे अधिगमकर्त्ता जो अपनी शिक्षा को आगे चालू रखने के लिए कही अन्यत्र जाने म पूणतया असमथ हैं।

(iii) ऐसे अधिगमकर्त्ता जो जीविकोपाजन के लिए किसी व्यवसाय या ध धे को अपना लेते हैं और उसके फलस्वरूप किसी भी प्रकार की औपचारिक शिक्षा से वचित रह जाते हैं।

(iv) ऐसे वयस्क अधिगमकर्त्ता जो आत्मसन्तोष अथवा व्यावसायिक उन्नति के लिए अपने ज्ञान के भण्डार को बढ़ाने का निश्चय करते हैं और कुछ नया सीखना चाहते हैं।

(v) निरक्षर किसान और मजदूर।

(vi) गृहणियाँ।

(vii) विकलाग और विशिष्ट समूह के अधिगमकर्त्ता जो औपचारिक स्कूलो का लाभ नही उठा सकते।

इनम से भारतवष म प्रचलित दूरस्थ शिक्षा के कुछ स्वरूपो का विस्तृत विवेचन हम अगले अध्यायो म करेंगे।

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के लाभ (Advantages of Distance Education)

भारत को सच मे ही प्रजातान्त्रिक एव कल्याणकारी राज्य बनाने म दूरस्थ शिक्षा अत्यन्त महत्वपूण भूमिका निभा सकती है। देशवासियो मे ज्ञान के अति व्यापक प्रचार और प्रसार द्वारा दूरस्थ शिक्षा समाज के स्वरूप को बदल देने मे सक्षम है। परम्परावादी औपचारिक शिक्षा की तुलना मे इसके अनेक लाभ हैं जैसे—

(i) दूरस्थ शिक्षा नागरिको और कायकर्त्ताओ को काय करते हुए सीखने (learn while earn) एव शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करता है। इस प्रकार यह प्रणाली राष्ट्रीय उत्पादन के स्तर को गिरने नही देती।

(ii) यह लाखो ऐसे लोगो को सतत शिक्षा (contin ing education) की सुविधा प्रदान करता है जो इसके लिए इच्छुक हैं।

(iii) जो लोग आत्मोन्नति अथवा व्यावसायिक उन्नति के लिए अपने ज्ञान व कौशल की वृद्धि करना चाहते हैं उनके लिए दूरस्थ शिक्षा प्रणाली उच्च शिक्षा के द्वार सहज ही खोल देती है।

(iv) साक्षरता के विकास मे यह सहायता प्रदान करती है।

(v) गृहणियो के लिये यह शिक्षा सुलभ करती है और उनके गृहकाय सम्बन्धी कौशलो को समुन्नत बनाती है।

(vi) विकलांग और विशिष्ट बालको के लिए शिक्षण और प्रशिक्षण प्रदान करती है।

(vii) शिक्षा की लालसा रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के द्वार तक शिक्षा का आलोक पहुचाती है।

दूरस्थ शिक्षा के सिद्धान्त (Principles of Distance Education)

हमने देखा कि दूरस्थ शिक्षा अपने विभिन्न रूपो म भारत एव विदेशो मे कायरत है। इसकी प्रभावकारिता और सफलता निम्नलिखित प्रनियमो पर आधारित है। अत इन प्रनियमो का ज्ञान एव अनुपालन दूरस्थ शिक्षा के सफल प्रयोग हेतु आवश्यक है। क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, भोपाल के डॉ० पी० एल० किर्किरे और डॉ० के० एस० खिची[1] ने दूरस्थ शिक्षा के प्रनियमों की निम्नलिखित सूची प्रस्तुत की है

(1) **अधिकतम अभिप्रेरणा तकनीको के प्रयोग का प्रनियम** (Principle of using maximum motivation technique)—दूरस्थ शिक्षा की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि अधिगमकर्त्ता, जो शिक्षक अथवा प्रशिक्षक अथवा अनुदेशक के सामने उपस्थित नही है, उनको शैक्षिक उद्देश्यो की ओर बढ़ने के लिए सतत प्रेरित किया जाय। इस हेतु उपयुक्त अभिप्रेरणा तकनीको अथवा विधियो का विकास आवश्यक है। अधिगमकर्त्ताओ से बार बार पत्र द्वारा सम्पर्क स्थापित करना, अधिगमकर्त्ताओ को सुगम एव उपयुक्त दत्त काय (assignments) देना और उनका मूल्याकन कर अधिगमकर्त्ताओ को प्रतिपुष्टि (feedback) प्रदान कर प्रोत्साहित करना आदि कुछ ऐसी विधियाँ हैं जो दूरस्थ अधिगमकर्त्ताओ की अभिप्रेरणा को बढ़ावा देती हैं।

(2) **प्रस्तुतीकरण मे स्पष्टता का प्रनियम** (Principle of clarity of presentation)—अधिगम की प्रक्रिया म सम्भवत स्पष्ट प्रस्तुतीकरण ही एकमात्र ऐसा तत्व है जो अधिगमकर्त्ता को सीखने मे लगाये रखता है। जो कुछ भी अनुदेशन देना है, उसमे किसी भी प्रकार के अस्पष्ट अथ वाले शब्दो और भ्रम उत्पन्न करने वाले विचारो का समावेश नही होना चाहिए। शिक्षण की विषय वस्तु को लिखित या मुद्रित रूप मे प्रस्तुत करते समय इस बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है कि वह केवल किसी एक विचार या तथ्य या सम्प्रत्यय को एक ही अनुच्छेद म प्रस्तुत करे। कई बार ऐसा न करने से पत्राचार पाठयक्रम के लिये बनाये गये पाठ छात्रो के लिए दुरूह और बेकार हो जाते है।

(3) **सक्रिय अधिगम का प्रनियम** (Principle of active learning)—स्पष्ट प्रस्तुतीकरण के साथ साथ यह भी आवश्यक है कि दूर बैठा हुआ अधिगमकर्त्ता अधिगम की प्रक्रिया मे सक्रिय रूप से भाग ले। अधिगमकर्त्ताओ को सन्दभ सामग्रियो को पढने के लिए कहा जा सकता है कुछ सामग्री एकत्रित करने के लिए लिखा जा सकता है, कुछ विशेष सूचनाओ को एकत्रित कर विश्लेषित करने का काय दिया

[1] P L Kirkire and K S Khichi *Distance Education Principles and Methodology* Report of XVI Annual Conference of Indian Association for Educational Technology, 14–16 January 1984

जा सकता है अथवा कुछ विशेष तथ्यो या घटनाओ की व्याख्या करने का काय सौंपा जा सकता है। सतत् कुछ न कुछ करते रहने से ही अधिगमकर्त्ता सीख सकते हैं और अपना विकास कर सकते हैं। दूरस्थ अधिगमकर्त्ता के सामने समुचित लक्ष्य रखकर उन्हे काय देने, उनके कार्यों का बार बार मूल्यांकन करने, उन्हे पुरस्कार द्वारा पुनर्बलित (reinforce) कर उनको सक्रियता सतत सीखने में सहायता प्रदान की जा सकती है।

(4) अधिगमकर्त्ता मे समुचित सजगता विकसित करने का प्रनियम (Principle of developing proper awareness among learners)—दूरस्थ शिक्षा कायक्रमो की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि अधिगमकर्त्ताओ के मन मस्तिष्क मे यह बात अच्छी तरह बैठा दी जाय कि जिन उद्देश्यो और कायक्रमो को उनके सामने रखा गया है, वे उन्ही के लाभ के लिये हैं और यदि वे थोडे उत्साह और अनुशासन के साथ प्रयत्नशील होगे तो वे उन सभी लक्ष्यो को प्राप्त कर सकते हैं। दूर बैठे अधिगमकर्त्ता के मन मे इस तरह की सजगता निर्मित करना आवश्यक है। ऐसा हम दूरवर्ती शैक्षिक कायक्रमो के समुचित प्रचार द्वारा कर सकते हैं।

(5) जनता में दूरस्थ शिक्षा के प्रति समुचित अभिवृत्ति के विकास का प्रनियम (Principle of developing proper attitude among masses towards distance education)—दूरस्थ शिक्षा की सफलता के लिए अधिगमकर्त्ता की सजगता के साथ साथ जनता मे उसके प्रति समुचित एव सकारात्मक अभिवृत्ति positive attitude) का विकास करना भी आवश्यक है। ऐसा न होने पर जनता दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के द्वारा शिक्षित लोगो को घटिया किस्म का शिक्षित समझने लगती है। फलस्वरूप इस प्रणाली की प्रगति बाधित हो जाती है। दूरस्थ शिक्षा कायक्रम की सफलता के लिए, इसके प्रति जन जन म सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करने के लिए समुचित प्रभावकारी विधियाँ विकसित करनी होगी।

(6) अधिगमकर्त्ता के समाजीकरण का प्रनियम (Principle of socializing the learner)—दूर दूर बसे अधिगमकर्त्ताओ को अलग अलग परिस्थितियो म शिक्षा देना उनके व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए उचित नहीं होगा। इस प्रणाली मे भी कुछ ऐसे कायक्रमो का समावेश होना चाहिए जिनक द्वारा उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास हो। यह तभी सम्भव होगा जब एक दूसरे से दूर दूर और अलग अलग रहने वाले अधिगमकर्त्ताओ को समय-समय पर किसी एक स्थान पर बुलाकर कुछ सामूहिक कार्यक्रम किये जाएँ। ऐसे सम्मेलनों में अधिगमकर्त्ता अपने अनुभवो की अभिव्यक्ति और विचारो का आदान प्रदान कर सकते हैं। शिक्षा के जनतान्त्रिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए समाजीकरण सम्बन्धी ऐसे कायक्रम बहुत सहायक सिद्ध होते हैं।

(7) बहु माध्यम उपागम का प्रनियम (Principle of multi media approach)—दूर दूर बसे हुये अधिगमकर्त्ता केवल छपे हुए पत्रों या पाठो के द्वारा

ही पूरी तरह नही सीख सकते। उन्हे सीखने की अन्य सहायक सामग्रियो का सहारा देना होगा। ऐसी सामग्रियो को किसी केन्द्रीय स्थान पर रखना चाहिए जहाँ महीने मे एक या दो बार अधिगमकर्त्ता आ सकें, उनका उपयोग कर सकें और परस्पर विचार विमर्श कर सकें।

(8) संगठन के समुचित स्तर को विकसित करने का प्रनियम (Principle of developing proper level of organisation)—दूरस्थ शिक्षा को प्रभावकारी और सफल बनाने मे कई लोगो को एकजुट होकर कार्यरत रहना पडता है। विषय-वस्तु विशेषज्ञो, निर्देशन विशेषज्ञो, मनोवैज्ञानिको, तकनीकी विशेषज्ञो और मूल्यांकन विशेषज्ञो का एक नेतृत्व के तहत एक सन्तुलित संगठन का निर्माण करना होता है। ऐसा करना दूरस्थ शिक्षा के पर्यवेक्षण, और सफलता के लिए अति आवश्यक है।

(9) पर्यवेक्षण प्रणाली विकसित करने का प्रनियम (Principle of developing supervisory system)—पर्यवेक्षण के कार्य के लिए दूरस्थ शिक्षा मे सुसंगठित व्यवस्था निर्मित करना अनिवार्य है। वास्तविकता यह है कि किसी भी प्रकार के अनुदेशनात्मक कार्य की सफलता का मूलमन्त्र पर्यवेक्षण और परामर्श है। यह भी सत्य है कि दूर दूर बसे हुए अधिगमकर्त्ताओ की कठिनाइयो का निदान और उसके निराकरण के लिए परामर्श देना अत्यन्त कठिन एवं चुनौतियो से भरा हुआ कार्य है। इस निमित्त शिक्षाशास्त्रियो को समुचित व्यूह-रचना विकसित करनी चाहिए।

(10) समुचित शैक्षिक तकनीकी के प्रयोग का प्रनियम (Principle of using proper educational technology)—जैसाकि पहले ही बताया जा चुका है कि दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमो मे रेडियो, टी० वी० और समाचार पत्रो के साथ-साथ टेलीफोन का भी प्रयोग करना पडता है। इन संचार माध्यमो के द्वारा विशिष्ट उद्देश्यो के लिए पर्याप्त सूचनाएँ अधिगमकर्त्ताओ तक पहुँचाई जा सकती हैं। संचार माध्यमो का समुचित और अधिकतम उपयोग सुनियोजित ढंग से कर दूरस्थ शिक्षा की प्रभावकारिता को बढ़ाया जा सकता है।

(11) विशेष परीक्षण सेवाओं के उपयोग का प्रनियम (Principle of special testing services)—दूर दूर फैले हुए अधिगमकर्त्ताओ का मूल्यांकन करना स्वयं मे एक कठिन कार्य है। इनके मूल्यांकन के लिए विशेष विधियो और तकनीकियो का विकास करना होगा। नैदानिक उद्देश्यो के लिए बीच बीच मे स्व-मूल्यांकन की व्यूह रचना का प्रयोग आवश्यक है। इस दिशा मे शैक्षिक तकनीकी के विभिन्न उपागमो का प्रयोग सहायक होगा।

(12) आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रम का अधिनियम (Principle of need based curriculum)—किसी भी शिक्षा व्यवस्था की तरह दूरस्थ शिक्षा का

पाठयक्रम भी आवश्यकताओ पर आधारित होना चाहिए। य आवश्यकताएँ राष्ट्रीय, सामाजिक और वयक्तिक हो सकती हैं। इन पर आधारित हुये बिना कोई भी पाठय क्रम सफल नही हो सकता। दूरस्थ शिक्षा काय करते हुए सीखने की व्यवस्था या कायप्रणाली है। अत इसका आवश्यकता आधारित होना और भी आवश्यक है। पाठयक्रम के निर्माताओ को व्यक्ति समाज एव राष्ट्र की आवश्यकताओ, आकाक्षाओं और उनकी उन्नति को ध्यान म रखते हुये पाठयक्रम का निर्माण करना चाहिए। एसे पाठयक्रमा का राष्ट्रीय उद्देश्य के साथ समर्थित होना आवश्यक है। साथ ही साथ इसे व्यक्ति की आवश्यकताओ के अनुरूप भी होना चाहिए।

(1०) **दल प्रयास का नियम (Principle of Team Efforts)**—किसी भी कायक्रम की सफलता के लिए उसम कायरत सभी सदस्यो के सम्मिलित तथा सामूहिक प्रयास की आवश्यकता होती है। दूरस्थ शिक्षा की जड़ें भी दल प्रयासो द्वारा ही मजबूत हो सकती हैं। दल निष्ठा की भावना भारतीय कायकर्त्ताओ व अधिकारियो मे कम मात्रा म पायी जाती है। अत दूरस्थ शिक्षा क निर्माताओ और प्रवतको को इस दिशा म विशेष प्रयास करने की आवश्यकता होती है। ऐसे काय क्रमो की योजना बनानी पडेगी जिसके द्वारा निष्ठा विकसित हो।

दूरस्थ शिक्षा औपचारिक शिक्षा का एक प्रभावकारी विकल्प है। इसका क्षेत्र अति व्यापक है। आजीवन शिक्षा से लेकर शिक्षा के सावभौमिकीकरण तक को यह अपनी परिधि म समाविष्ट करता है। निरक्षरता को दूर करने मात्र के लिए ही नहीं अपितु उच्च शिक्षा की माग का सवसुलभ बनाने हेतु भी इसकी आवश्यकता है। शक्षिक एव व्यावसायिक अवसर की समानता प्रदान करने वाला यह एक सशक्त माध्यम है। गरीब पिछडे हुये, निराश एव वचित लोगो क लिये यह आशा एव प्ररणा का स्रोत है। अत यह प्रजातान्त्रिक एव समाजवादी भारत की रचना के लिये एक सशक्त नवाचार है।

अभ्यास के प्रश्न

1. प्रजातान्त्रिक समाजवादी विशाल भारतीय समाज की शक्षिक आवश्यकताओ की पूर्ति क लिए दूरस्थ शिक्षा एक शक्तिशाली नवाचार है।' इस कथन की समीक्षा कीजिए।
2. दूरस्थ शिक्षा' से आप क्या समझते हैं? इसकी मुख्य विशेषताओ पर प्रकाश डालिए।
3. दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न स्वरूपो का उल्लेख करते हुये इससे लाभान्वित होन वाले विशिष्ट समूहो का उल्लेख कीजिए।
4. दूरस्थ शिक्षा के सामान्य प्रनियमा को स्पष्ट कीजिए और इस प्रणाली के लाभो की विवेचना कीजिए।
5. सुदूर शिक्षा का प्रत्यय स्पष्ट कीजिए। सुदूर शिक्षा आधुनिक काल म किस प्रकार उपयोगी हो सकती है? (गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)



11

खुला विश्वविद्यालय

[OPEN UNIVERSITY]

शैक्षिक नवाचारों में खुला विश्वविद्यालय आजकल चर्चा का विषय बना हुआ है। खुला विश्वविद्यालय दूरवर्ती शिक्षा के क्षेत्र में सर्वाधिक लोकप्रिय नवाचार सिद्ध हो रहा है। इस नवाचार को विभिन्न विशेषज्ञों ने अनेक नाम दिए हैं, जैसे-मुक्त विश्वविद्यालय (open university), दीवार विहीन विश्वविद्यालय (university without wall) खुले आकाश का विश्वविद्यालय (university of the air) आदि खुला विश्वविद्यालय एक ऐसा प्रयास है जो अ-औपचारिक विधियों द्वारा बहुत बड़ी संख्या में ऐसे छात्रों को शिक्षित करने का माध्यम है जो औपचारिक शिक्षा की छत्र छाया में नहीं आ सके। औपचारिक विश्वविद्यालयों की तरह इसमें प्रवेश के लिए किसी शैक्षिक योग्यता के निम्नतम स्तर का बंधन नहीं रहता है। उपस्थिति की अनिवार्यता, विद्यालय परिसर में आकर बैठने और पढ़ने का बंधन भी नहीं लगाया जाता। इन बंधनों से मुक्ति अथवा खुलेपन के कारण ही दूरवर्ती शिक्षा की इस प्रणाली को खुला या मुक्त विश्वविद्यालय कहा जाता है। इस प्रकार के विश्वविद्यालय छात्रों को प्रमाणपत्र एवं उपाधि प्रदान करने के लिए कायरत हैं। इसी कारण से अ-औपचारिक शिक्षा के इस नवाचार को खुला विश्वविद्यालय कहा गया है।

स्वरूप और कार्य प्रणाली को समझने के लिए सर्वोत्तम उपाय होगा एवं ऐसे खुले विश्वविद्यालय का वर्णन जो विश्व के लिए एक उदाहरण बन गया है।

ब्रिटेन का खुला विश्वविद्यालय (Open university of U K)

ब्रिटेन का खुला विश्वविद्यालय विश्व के अन्य खुले विश्वविद्यालयों के लिए एक उदाहरण और मानदण्ड बन गया है। इस विश्वविद्यालय की स्थापना का सुझाव ब्रिटेन की लेबर पार्टी के तत्कालीन नेता श्री हेराल्ड विल्सन ने सन् 1963 में दिया था। उन्होंने एक वक्तव्य द्वारा एक 'यूनिवर्सिटी आफ द एअर' (University of the Air) की योजना का प्रारूप प्रस्तुत किया। यह एक ऐसी शिक्षा प्रणाली थी जो टी० वी०, रेडियो और पत्राचार पाठ्यक्रमों का प्रयोग करेगी। यद्यपि इस योजना और विचार की इंगलैण्ड में लोगों ने खिल्ली उड़ाई फिर भी ऐसे व्यक्तियों की जिन्होंने किसी भी कारण से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं पाया, उनके लिए शैक्षिक अवसर प्रदान करने हेतु इंगलैण्ड की लेबर पार्टी के कार्यक्रमों का यह एक अभिन्न अंग बन गया। 1966 में ब्रिटेन की सरकार ने एक श्वेतपत्र (white paper) जारी कर पत्राचार शिक्षण संस्थान का नामकरण 'खुले आकाश का विश्व विद्यालय' (university of the air) करना चाहा।

योजनाओं के प्रारूप का कार्यान्वयन—1970 में ब्रिटेन के खुले विश्व विद्यालयों की स्थापना से हुई। उसी वर्ष इसमें प्रवेश हेतु चालीस हजार आवेदन पत्र आये किन्तु केवल 25 हजार व्यक्तियों को इसमें शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रवेश दिया गया। खुले विश्वविद्यालयों में सर्वप्रथम समाज विज्ञान, कला, विज्ञान और गणित में बुनियादी या प्रारम्भिक पाठ्यक्रमों का शिक्षण प्रारम्भ किया गया। आयु, निवास के स्थान, बुनियादी शैक्षिक स्तर आदि की ओर ध्यान देते हुए इस विश्वविद्यालय में अध्येताओं या छात्रों को प्रवेश दिया जाता है।

1970 में प्रवेश की प्रक्रिया समाप्त होने के पश्चात् पहले पाठ्यक्रम का शिक्षण 1971 में प्रारम्भ हुआ। इस वर्ष की परीक्षाओं में जो लोग अनुत्तीर्ण हो गये, उन्हें निराश न करते हुये यह सूचना दी गयी कि वे लोग आगामी वर्ष दुबारा जबकि तकनीकी विषयों के भी पाठ्यक्रम चालू किये जायेंगे, प्रवेश के लिए आवेदन कर सकते हैं। जनवरी, 1971 में खुले विश्वविद्यालय का पहला शैक्षिक कार्यक्रम रेडियो और स्क्रीन पर प्रस्तुत किया गया और क्लर्कों, किसानों, गृहणियों, शिक्षकों और सिपाहियों तथा अनेक प्रकार के लोगों के समूहों ने इसके छात्र के रूप में अपना अध्ययन प्रारम्भ किया। पत्राचार की इकाइयों अथवा पाठों को बहुत सावधानी से निर्मित किया गया। विज्ञान के छात्रों को अपने घर पर लघु (mini) प्रयोगशाला स्थापित करने के लिए वैज्ञानिक उपकरण भी दिये गये।

खुला विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम, प्रारूप एवं घटक (Open university course, design and its components)

खुले विश्वविद्यालय की लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ती गयी और आज 50

हजार विद्यार्थी इसमे पजीकृत हैं। यह विभिन्न प्रकार के 100 पाठ्यक्रमो की शिक्षा प्रदान करता है। 10 हजार से अधिक विद्यार्थी अब तक इस विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं और विभिन्न प्रकार के व्यवसायो मे लग हुये है। इन विद्यार्थियों ने अपना अध्ययन अपने गृह स्थान पर रहकर किया। इनके शिक्षण का माध्यम पत्राचार, विशेषकर तैयार की गयी पुस्तकें, विशिष्ट रूप से निर्मित टी० वी० और रेडियो कार्यक्रम आदि थे। सभी छात्रो को अनिवार्य रूप से ग्रीष्मकालीन स्कूलो में, जो परम्परागत विश्वविद्यालयो के परिसर में लगाय जाते हैं, एक सप्ताह के लिए आकर रहना अनिवार्य है। व्यक्तिगत सम्पर्क और आपस मे विचारो का आदान प्रदान करने के लिए छात्र अपनी इच्छानुसार खुले विश्वविद्यालय द्वारा स्थापित स्थानीय अध्ययन केन्द्रों मे जा सकते हैं। आजकल इस खुले विश्वविद्यालय के पास 13 क्षेत्रीय कार्यालय और लगभग 300 अध्ययन केन्द्र तथा 5000 अशकालिक (part time) ट्यूटर एव ट्यूटर काउसलर हैं। प्रत्यक छात्र को पत्राचार ट्यूटर क द्वारा व्यक्तिगत ट्यूशन प्राप्त होता है। प्रत्येक छात्र श्रेणी (grade) एकत्रित कर श्रेयाक (credit) प्राप्त करता है। सामान्य पाठ्यक्रम क लिए उसे 6 और आनर्स (honours) पाठ्यक्रम के लिए 8 श्रेयाक अर्जित करा होते हैं। एक सप्ताह म लगभग 10 से 12 घण्टे का 32 सप्ताह तक चलन वाला अध्ययन एक श्रेणी के बराबर होता है। इस विश्वविद्यालय म शैक्षिक सत्र जनवरी से प्रारम्भ होकर दिसम्बर तक चलता है। इस अवधि मे छात्रो का सतत् मूल्याकन चलता रहता है। प्रत्येक छात्र को 6 दत्तकार्य (assignment) सफलतापूर्वक करने पड़ते हैं जिन्हें उनके ट्यूटर जाँचते हैं। सत्र के अन्त म सभी छात्रो को परीक्षा म बैठना अनिवार्य है।

विश्वविद्यालय मे पाठ्यक्रम की रचना विश्वविद्यालय के पूर्णकालिक शिक्षक B B C के कार्यक्रम निर्माता (B B C producers), प्राविधिक तकनीकी विशेषज्ञ और क्षेत्रीय केन्द्रो क पूर्णकालिक कर्मचारी मिलकर करते हैं। इस टीम की सहायता के लिए कलाकारो, शिल्पको, चित्रकारो, पुस्तकालय प्रमुखो आदि का समूह रहता है। पाठ्यक्रम निर्माण की यह टोली विभिन्न प्रकार के सचार माध्यमो और विधियो क प्रयोग क विषय में नीति निर्धारण करते हैं। इस विश्वविद्यालय म पाठ्यक्रम की रचना से लेकर छात्रो के मूल्याकन एव उपाधि प्रदान करन तक का सचालन उपर्युक्त सभी प्रकार के कार्यकर्त्ता मिलजुल कर करते हैं।।

खुला विश्वविद्यालय : रेडियो और टी० वी० प्रसारण (Open university radio and T V broadcasts)

खुले विश्वविद्यालय मे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का सचालन केवल पत्राचार पाठो के द्वारा ही नही होता अपितु रेडियो और टेलीविजन प्रसारण का भी उपयोग किया जाता है। बी० बी० सी० खुले विश्वविद्यालय के लिए प्रति सप्ताह 30 घण्टे

का प्रसारण राष्ट्रीय टी० वी० नेटवर्क (बी० बी० सी० चैनल–2) पर करता है और उसी प्रकार 30 घण्टे का प्रसारण रेडियो नेटवर्क पर भी करता है। इस कार्य के लिए विश्वविद्यालय बी० बी० सी० को धन देता है। यह धन खुले विश्वविद्यालय को ब्रिटेन की सरकार द्वारा प्राप्त होता है।

बी० बी० सी० ने खुले विश्वविद्यालय के लिए कार्यक्रम निर्माण करने हेतु विशेष निर्माता इकाई का सगठन किया है। प्रत्येक वर्ष बी० बी० सी० इस विश्व विद्यालय के लिए 300 टी० वी० कार्यक्रम और रेडियो कार्यक्रम निर्मित करता है। प्रत्येक कार्यक्रम 20 से 25 मिनट का होता है। एक कार्यक्रम को प्रसारित करने के बाद उसी सप्ताह छात्रो की सुविधा के लिए उसे पुन प्रसारित किया जाता है।

खुला विश्वविद्यालय ट्यूटोरियल एव परामर्श सेवाएँ (Open university tutorial and counselling services)

इस खुले विश्वविद्यालय द्वारा 13 क्षेत्रीय कार्यालय चलाये जाते हैं। इन कार्यालयो का सीमा क्षेत्र पूरे इगलैण्ड को घेरता है। क्षेत्रीय कार्यालय अपने क्षेत्र के छात्रो के लिए पत्राचार के अतिरिक्त अन्य सहायक सेवाओ जैसे ट्यूटोरियल और परामर्श सेवाओ आदि का प्रबन्ध करता है। जैसाकि हम जानते हैं कि खुले विश्व विद्यालय मे शिक्षण का काय मुख्य रूप से पत्राचार द्वारा किया जाता है किन्तु इसके साथ ही छात्रो द्वारा किये गये दत्त कार्य का मूल्याकन और उनकी कठिनाइयो को दूर करने के लिए परामर्श देने का काय ट्यूटरगण करते हैं। अत इसके द्वारा छात्रो को जाँचे गये दत्तकार्य छात्रो को लौटा दिये जाते हैं। पत्राचार एव दत्त कार्य के मूल्याकन के प्रतिपुष्टि (feedback) प्राप्त होता है। पत्राचार एव दत्त कार्य के लिए एव मार्गदर्शन प्राप्त अतिरिक्त छात्रो को अपनी कठिनाइयो को दूर करने के लिए एव मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु ट्यूटर से व्यक्तिगत रूप से मिलने का आयोजन भी किया जाता है। छात्रो की सहायता के लिए प्रत्येक तीन सप्ताह के पश्चात् ट्यूटोरियल कक्षाओ का आयोजन किया जाता है। इन कक्षाओ मे मुख्य रूप से उपचारात्मक (remedial) शिक्षण प्रदान किया जाता है। प्रत्येक छात्र को परामर्शदाता से सम्बद्ध कर दिया जाता है। परामर्शदाता खुले विश्वविद्यालय के स्थायी प्रतिनिधि के रूप मे कार्य करते हुए छात्रो की सहायता मे लगा रहता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस अवैयक्तिक प्रणाली मे परामर्शदाता व्यक्तिगत सम्बन्धों का पुट देता है। प्रत्येक छात्र को कम से कम एक सप्ताह तक किसी केन्द्र द्वारा आयोजित आवासीय विद्यालय मे उपस्थित रहना अनिवार्य है।

खुला विश्वविद्यालय : स्थानीय अध्ययन केन्द्र (Open university Local study centre)

छात्रो को सहायता प्रदान करने हेतु खुले विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय कार्यालय स्थानीय अध्ययन केन्द्रों का सचालन करते हैं। इन अध्ययन केन्द्रों पर छात्रों को

पुस्तकालय, फिल्म, टेपरिकार्डर, टी० वी० एवं वीडियो टेप आदि की सुविधा प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त, ट्यूटर और परामर्शदाता की सहायता भी प्राप्त होती है। विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले छात्रों को समय का अभाव रहता है। अतः वे अपनी सुविधा के अनुसार इन अध्ययन केन्द्रों से यदा कदा लाभ उठाते हैं। इन अध्ययन केन्द्रों पर ही छात्रों को ट्यूटर और परामर्शदाता आमने सामने बैठाकर उनकी समस्याओं का समाधान करते हैं। इन केन्द्रों में ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है कि छात्र परस्पर मिल सकें, अपनी समस्याओं पर चर्चा कर सकें और एक दूसरे की सहायता से अपनी शैक्षिक कठिनाइयों को दूर कर सकें। इन अध्ययन केन्द्रों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि छात्रों के मन में विश्वविद्यालय के प्रति लगाव और अपनत्व की भावना का विकास होता है। अन्ततः हम कह सकते हैं कि अध्ययन केन्द्र अपने सामाजिक कार्यक्रमों द्वारा छात्रों को मैत्रीपूर्ण वातावरण में सीखने का अवसर प्रदान करता है।

खुला विश्वविद्यालय : अनुसन्धान एवं प्रतिपुष्टि (Open university Research and feedback)

खुले विश्वविद्यालय की शिक्षा प्रणाली में सुधार हेतु 1970 में, 'इन्स्टीट्यूट आफ एजुकेशनल टेक्नोलाजी' (Institute of Educational Technology) की स्थापना की गयी है। शैक्षिक तकनीकी विशेषज्ञ इस विश्वविद्यालय के प्रत्येक अंग में सुधार लाने के लिए अनुसन्धान का कार्य करते हैं और प्रतिपुष्टि द्वारा सम्बन्धित कार्यकर्त्ताओं एवं उप प्रणालियों की सहायता एवं मार्गदर्शन करते हैं। ये विशेषज्ञ—(i) पाठ्यक्रम की रचना करने, (ii) शैक्षिक उद्देश्यों को परिभाषित करने, (iii) उपयुक्त संचार माध्यम चुनने, (iv) शैक्षिक पाठ एवं अन्य सामग्रियों का निर्माण करने, (v) छात्रों का मूल्यांकन करने और (vi) अन्ततः पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करने में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाते हैं।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि खुला विश्वविद्यालय अपनी शिक्षा प्रणाली में छात्रों को सभी प्रकार के पाठ्यक्रमों एवं सभी स्तरों के पाठ्यक्रमों के लिए बहु-माध्यम पैकेज (multi media packages) प्रदान करते हैं। चूंकि विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए कोई बुनियादी शैक्षिक योग्यता की आवश्यकता नहीं है। अतः इसमें अध्ययनरत छात्र किसी न किसी अर्थ में औपचारिक शिक्षा की सुविधाओं से वंचित (deprived) एवं शिक्षा ग्रहण करने में अनेक बाधाओं से ग्रसित व्यक्तियों की श्रेणी में आते हैं। ऐसी आम जनता की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने वाला यह विश्वविद्यालय सही अर्थों में प्रजातान्त्रिक एवं समाजवादी है। चूंकि समाज के कमजोर और निर्धन वर्ग के लोग अन्य खर्चीले माध्यमों की तुलना में मुद्रित पाठ वस्तुओं और पुस्तकों को अधिक पसन्द करते हैं इसलिए खुला विश्वविद्यालय ऐसी सामग्रियों का प्रकाशन बहुत बड़ी मात्रा में करता है और आज यह विश्वविद्यालय विश्व का सबसे बड़ा पुस्तक प्रकाशक समझा जाता है। इस प्रकार यह खुला विश्व-

विद्यालय दूरवर्ती शिक्षा एव शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे विश्व के अन्य देशों के लिए एक आदर्श माडल के रूप मे हमारे सामने है।

खुला विश्वविद्यालय भारतीय दशावली (Open university Indian scenario)

भारत मे सर्वप्रथम खुले विश्वविद्यालय की स्थापना आन्ध्र प्रदेश मे हुई। इसका मुख्यालय हैदराबाद मे अवस्थित है। सन 1983 से यह कार्यरत है। इसमे भी शिक्षा पत्राचार, सम्पर्क, कार्यक्रम, ट्यूटोरियल और दृश्य श्रव्य सहायक सामग्रियों के माध्यम से दिया जाता है। जो भी व्यक्ति 20 वर्ष की आयु का हो गया है, इस विश्वविद्यालय मे स्नातक पाठयक्रम म प्रवेश के लिए आवेदन कर सकता है।

आन्ध्र प्रदेश के खुले विश्वविद्यालय की सफलता, लोकप्रियता और आम जनता के लिए इसकी उपयुक्तता को ध्यान मे रखकर एक और राष्ट्रीय खुले विश्व-विद्यालय की स्थापना 1985 मे दिल्ली मे की गई और इसका नामकरण स्वर्गीय प्रधानमं त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के नाम पर किया गया। इस विश्वविद्यालय का सक्षिप्त परिचयात्मक विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (Indira Gandhi National Open University)

भारतीय ससद द्वारा सितम्बर, 1985 मे पारित एक एक्ट के अन्तर्गत 'इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय' की स्थापना हुई। इसका मुख्यालय नई दिल्ली म अवस्थित है। जिसका पत्राचार पता के-76, हौजखास, नई दिल्ली–110016 है।

विश्वविद्यालय का निर्धारित एव घोषित लक्ष्य है—उन सभी व्यक्तियो को उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना जो अपनी योग्यता, दक्षता अथवा तत्सम्बन्धी विशेषज्ञता को विकसित करना चाहते हैं। पत्राचार एव मुद्रित पाठ्य सामग्रियों के अतिरिक्त सम्प्रेषण सम्बन्धी आधुनिक माध्यमो तथा प्रौद्योगिकी का भरपूर उपयोग विश्वविद्यालय द्वारा किया जाता है। विश्वविद्यालय मे पजीकृत छात्र अथवा सम्बद्ध अध्येता अपने समय तथा स्थान सम्बन्धी सुविधाओ के अनुरूप शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

स्नातक स्तरीय पाठयक्रम मे प्रवेश दो वर्गों अथवा धाराओ के अन्तर्गत किया जाता है। प्रथम वर्ग, उन प्रत्याशियों का है जिनके पास 10+2 पद्धति से प्राप्त शिक्षा अथवा उसके समकक्ष कोई योग्यता है और द्वितीय वर्ग, उन प्रत्याशियो का है जिनके पास कोई निर्धारित योग्यता नही है जिन प्रत्याशियों के पास 10+2 पद्धति या उसके स्तर की योग्यता है उन्हें विश्वविद्यालय मे सीधा प्रवेश मिल जाता है। किसी भी शैक्षिक योग्यता से विहीन प्रत्याशियो को प्रवेश परीक्षा देनी पड़ती है। शर्त यह है कि ऐसे प्रत्याशियो की आयु 20 वर्ष से कम नही होनी चाहिए।

प्रवेश परीक्षा म उत्तीर्ण होने वाले प्रत्याशियो को स्नातक पाठ्यक्रम मे सीधा प्रवेश मिल जाता है। पूर्व शिक्षा विहीन ऐसे छात्रो के लिए पहले चार महीने के प्रारम्भिक पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं। तत्पश्चात् स्नातक स्तर के अन्य वैकल्पिक विषयो जैसे कला, वाणिज्य एव औद्योगिक पाठ्यक्रम का अनुसरण छात्र कर सकते हैं। स्नातक स्तरीय कायक्रम का प्रत्याशी अपनी सुविधानुसार पाठ्यक्रम को 3 से 8 वष तक की अवधि मे पूरा कर सकता है। इस पाठ्यक्रम मे शिक्षण का माध्यम हिन्दी तथा अँग्रेजी रहता है।

खुले विश्वविद्यालय की शिक्षण पद्धति की अपनी अलग विशेषता है। यह विभिन्न सम्प्रेषण माध्यमो से सुसज्जित एव एकीकृत पद्धति का प्रयोग करते हुये अपने छात्रो को शिक्षित करने का प्रयास करता है। इसके अन्तगत स्वत शिक्षाधारित मुद्रित सामग्री (Self instructional printed material) के अतिरिक्त श्रव्य एव दृश्य सहायक सामग्रियाँ भी उपलब्ध करायी जाती हैं। आकाशवाणी (radio) एव दूरदशन (T V) सम्बन्धी माध्यमों का यथोचित उपयोग किया जाता है। खुले विश्वविद्यालय ने सारे देश मे प्रादेशिक एव स्थानीय अध्ययन केन्द्र स्थापित किये हैं। इन केन्द्रो पर छात्रो को शिक्षको के मागदशन के अतिरिक्त विभिन्न सम्पक कायक्रमो का लाभ भी मिलता है। सम्पूर्ण देश मे इस प्रकार के लगभग 110 केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय सुनियोजित रीति से अपने पाठ्यक्रमो का विस्तार कर रहा है। अभी तक बी ए और बी कॉम पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त उसने निम्नलिखित शक्षिक कायक्रमों को प्रारम्भ कर दिया है—

(i) डिप्लोमा इन मैनेजमेट
(ii) डिप्लोमा इन डिस्टेन्स एजुकेशन
(iii) डिप्लोमा इन क्रिएटिव इंग्लिश राइटिंग
(iv) सर्टिफिकेट कोस इन फूड एण्ड न्यूट्रिशन
(v) सर्टिफिकेट कोस इन रूरल डेवलपमेट

उपयुक्त पाठ्यक्रमो की सफलता और माँग को दृष्टि मे रखते हुये यह विश्वविद्यालय निम्नलिखित शैक्षिक कायक्रमो को प्रारम्भ करने की योजना बना चुका है और शीघ्र ही नवाचारों से परिपूरित पाठ्यक्रमो को लागू करने वाला है—

(i) बचलर ऑफ लाइब्रेरी एण्ड इन्फारमेशन साइंस
(ii) डिप्लोमा इन मनेजमेट (मॉड्यूल III और IV)
(iii) बचलर ऑफ साइंस
(iv) सर्टिफिकेट कोस इन कम्प्यूटर आप्लिकेशन्स फार आफिस मैनेजमेट
(v) डिप्लोमा इन हायर एजुकेशन
(vi) डिप्लोमा इन रूरल एजुकेशन

(vii) डिप्लोमा इन फूड एण्ड न्यूट्रिशन

(viii) डिप्लोमा इन चाइल्ड केयर एण्ड एजुकेशन

(ix) एडवान्स्ड डिप्लोमा इन डिस्टेंस एजुकेशन

(x) डिप्लोमा इन क्रिएटिव राइटिंग इन हिन्दी

(xi) सर्टिफिकेट प्रोग्राम इन वाटर रिसोर्सेज मनेजमेंट

(xii) सर्टिफिकेट प्रोग्राम इन एनर्जी कन्जरवेशन एण्ड मनेजमेंट

(xiii) बी टेक इन वाटर रिसोर्सेज मैनेजमट एण्ड एनर्जी रिसोर्सेज मनेजमट

खुले विश्वविद्यालय की उपयोगिता का प्रमाण स्वय इनका विस्तार है। इनकी सफलता और प्रभावकारिता, इनके द्वारा निर्मित पाठय सामग्रियो की स्पष्टता और छात्रो को समुचित रीति से प्रेरित करने की क्षमता पर निर्भर करता है। इतना तो हम सभी मानेंगे कि खुले विश्वविद्यालय के नवाचार ने आम जनता के मन मे शिक्षित होने की आशा का सचार किया है।

अभ्यास के प्रश्न

1 'खुला विश्वविद्यालय' किसे कहते हैं ? इसकी काय प्रणाली की विवेचना कीजिए।

2 भारत के किसी एक 'खुले विश्वविद्यालय' पर एक परिचयात्मक टिप्पणी लिखिए।

3 'खुला विश्वविद्यालय' का प्रत्यय स्पष्ट कीजिए।

(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)



12

पत्राचार शिक्षा

[CORRESPONDENCE EDUCATION]

विकासशील देश आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। उनमे राजनैतिक एव सामाजिक आर्थिक परिवर्तन का काय तेजी से चल रहा है। देश की जनता को खुशहाल बनाने हेतु इन देशो मे नित्य नवीन नवाचारो को अपनाया जा रहा है। घिसी-पिटी पुरानी विधियो परम्पराओ और रूढियो के सहारे जन-आकाक्षाओं की पूर्ति करना अब सम्भव नहीं हैं। आज जनता मे वैयक्तिक एव सामाजिक समानता की माँग उसके मन और मस्तिष्क पर हावी है। समानता के अवसर की माँग ने शिक्षा के सावभौमिकरण की माँग को बलवती बनाया है। दुर्भाग्य की बात है कि विकासशील देशो को विरासत मे उनके पूर्व शासकों द्वारा मिली शिक्षा प्रणाली अभिजात्य वग के लोगों के लिए ही उपयुक्त है। यह जन-आकाक्षाओं की पूर्ति करने मे पूर्णतया अक्षम है। इस तरह की शिक्षा प्रणाली ने समाज को अमीर गरीब, शिक्षित अशिक्षित रोजगार बेरोजगार आदि वर्गों मे बाँट दिया है। औपचारिक शिक्षा के इस स्वरूप ने समाज की इन खाइयो को पाटने के स्थान पर और गहरा एव चौडा किया है।

स्वत त्रता प्राप्ति के पश्चात् एक नया समाज ज म ले रहा है जो समानता एव समता का आकाक्षी है। समतावादी सामाजिक मनोवृत्ति के साथ ही साथ लोग शिक्षा के स्वरूप एव सम्प्रत्यय मे परिवतन लाना चाहते हैं। पहले विश्वविद्यालयो को उच्च शिक्षा का के द्र माना जाता था, जिसमें केवल शिक्षण और अनुस धान का काय चलता था। अब इस बात की माँग उठने लगी है कि विश्वविद्यालयो को भी इस बात के लिए बाध्य किया जाय कि वे सामाजिक पुनरचना और प्रसार शिक्षा का दायित्व अपने ऊपर लें। 1972 मे पजाब विश्वविद्यालय के कुलपति ने कहा था "पहले विश्वविद्यालयीय शिक्षा के दो परम उद्देश्य थे—शिक्षण और अनुस धान। युद्ध के पश्चात् परिवर्तित परिस्थितियो मे अब विश्वविद्यालय यथाथ से विलग हुये अमूत ज्ञान का आश्रय स्थल मात्र बनकर नही चल सकता है। आज वास्तविकता की माँग है कि सामाजिक आर्थिक परिवर्तनो के अनुरूप शिक्षा को नवीन रूप और

प्रारूप प्रदान किया जाय।" समतावादी जनमत की माँग है कि सीखने वालों को विश्वविद्यालय न जाना पड़े अपितु विश्वविद्यालय स्वयं उनके दरवाजों पर दस्तक दे। इस माँग ने विश्वविद्यालय के क्रिया-कलापों के प्रारूप में एक तूफान खड़ा कर दिया। फलस्वरूप पत्राचार शिक्षा के कार्यक्रम का श्री गणेश हुआ।

पत्राचार शिक्षा अर्थ एवं परिभाषा (Correspondence Education ; Meaning and Definition)

'पत्राचार शिक्षा', जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, ऐसी शिक्षा प्रणाली को कहा जाता है जो पत्र या डाक द्वारा सम्पन्न की जाती है। ग्लैटर और वैडेल (1971) के अनुसार, "पत्राचार शिक्षा अनुदेशन शिक्षा के लिए एक सुसगठित व्यवस्था है जो डाक द्वारा दी जाती है। यद्यपि डाक द्वारा दिये गये ट्यूशन को दूरस्थ संचार माध्यमों के साथ-साथ आमने-सामने बैठकर शिक्षण देने आदि क्रिया कलापों से भी जोड़ा जा सकता है।"[1] पत्राचार शिक्षा या कार्यक्रम के उद्देश्यों, इसके द्वारा शिक्षित होने वाले लोगों, और इसके द्वारा प्रयुक्त अनुदेशन के माध्यमों के कारण अनेक लोग इसे अनेक नाम देते हैं।

जो लोग इसके द्वारा शिक्षा ग्रहण करने वालों के निवास स्थानों का दूर दूर होने को आधार मानते हैं वे इसे दूरवर्ती शिक्षण' (distance teaching) या परिसर बाहर शिक्षण (off campus teaching) की सज्ञा देते हैं। जो लोग इसके द्वारा अधिगमकर्त्ता को उसके घर पर ही उसकी शिक्षा व्यवस्था करने के प्रशसनीय उद्देश्य का ध्यान में रखते हैं ऐसे लोग इसे गृह अध्ययन प्रणाली' (home study system) के नाम से पुकारते हैं। किन्तु यह नामकरण पत्राचार शिक्षा के सम्प्रत्यय को पूर्णतया स्पष्ट नहीं करता क्योंकि गृह अध्ययन प्रणाली का कनी एफ० सरडॉस के अनुसार तात्पर्य है "किसी संस्था या व्यक्ति के द्वारा ऐसी सेवाएँ प्रदान करना जो शिक्षण का उत्तरदायित्व अपने पर लेता है। गृह अध्ययन की व्याख्या, अध्ययन स्थल पर बल देने के कारण आत्म अनुदेशन (self instruction) के रूप में सीमित हो जाती है।

इंगलैण्ड के लोगों ने अपने प्रमुख पत्राचार शिक्षण संस्था को खुले विश्व विद्यालय (open university) की संज्ञा दी है। इसके पीछे सम्भवतः यही कारण है कि आयु निवास के स्थान, बुनियादी शैक्षिक योग्यता आदि की ओर ध्यान न देते हुए, यह विश्वविद्यालय किसी को भी प्रवेश देता है। खुलेपन के इस विचार,

---

1 '*Correspondence education can be defined as organised provision for instruction and education through post, although postal tuition can be supplemented by many other distance media,* ■ *well as by face to face teaching*'
(Glatter, R, and Wedell, E H, *Study by Correspondence* London, Longman, 1971)

विशेषकर विश्वविद्यालय की भौगोलिक सीमाओं से मुक्ति के कारण हाल ही में कुछ उत्साही लेखकों ने इसे 'बिना दीवार का विश्वविद्यालय' (university without wall) कहना शुरू कर दिया है। 1966 में ब्रिटेन की सरकार ने एक श्वेत पत्र जारी कर अपने पत्राचार शिक्षण संस्थान का नामकरण 'खुले आकाश का विश्व विद्यालय' (University of the Air) करना चाहा। इसके पीछे सम्भवत यही कारण है कि इस शिक्षा प्रणाली मे आकाशवाणी (Radio) को अनुदेशन के अतिरिक्त माध्यम के रूप में अधिकाधिक प्रयोग किया जायेगा।

विभिन्न नामकरणों के जाल मे फँसी शिक्षा प्रणाली का सम्प्रत्ययात्मक अर्थ सर्वाधिक 'पत्राचार शिक्षा' द्वारा ही स्पष्ट होता है, जैसाकि ग्लटर और वेडेल की परिभाषा से स्पष्ट है।

पत्राचार शिक्षा के उद्देश्य (Objectives of Correspondence Courses)

पत्राचार शिक्षा कार्यक्रम मुख्यतया माध्यमिक शिक्षा परिषदों और विश्व विद्यालयों द्वारा छात्रों को विभिन्न परीक्षाओं के लिए तैयार करने के उद्देश्य से चलाये जाते हैं। कुछ स्थानों पर डिग्री या प्रमाणपत्रों से असम्बद्ध पत्राचार शिक्षा कार्यक्रम इसलिए भी चलाये जाते हैं कि लोग उन कौशलों का विकास करें जो उनके सेवापूर्व और सेवारत प्रशिक्षण के अंग हैं। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने 1978 के अपने प्रकाशन 'एडल्ट एजुकेशन कम्पोनेन्ट्स इन डेवलपमेन्ट स्कीम्स ऑफ गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया' (Adult Education Components in Development Schemes of Government of India) में पत्राचार पाठ्यक्रमों के उद्देश्यों का उल्लेख इस प्रकार किया है

(1) बहुत बड़ी संख्या में लोगों को ज्ञान अर्जित करने और व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के लिए शिक्षा की वैकल्पिक विधि का प्रबन्ध करना।

(2) व्यक्तियों को उनकी निजी सुविधानुसार शिक्षा प्रदान करना और उन्हें अपने खाली समय को शैक्षिक प्रक्रियाओं में लगाने हेतु सहायता प्रदान करना।

पत्राचार शिक्षा ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और विकास (Correspondence Education Historical back ground and development)

अ-औपचारिक शिक्षा (non formal education) के एक सशक्त प्रणाली के रूप मे पत्राचार शिक्षा सर्वथा नवीन नहीं है। केवल पत्राचार की बात करें तो संचार एवं सम्प्रेषण के रूप में इसका प्रयोग सम्भवत उतना ही पुराना है जितना कि अक्षरों तथा लिखने की कला का आविष्कार। आजकल पत्राचार शिक्षा ने शिक्षा के क्षेत्र में नये आयाम जोड़े हैं और प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक की सुविधा को जनसुलभ बना दिया है। वर्तमान पत्राचार शिक्षा जिसमें व्यक्तिगत पत्राचार से ऊपर उठकर पत्राचार का उपयोग शिक्षा, अनुदेशन एवं प्रशिक्षण के लिए किया जाने लगा है, के जनक के रूप में एक अंग्रेज श्री पिटमैन का नाम लिया जाता

है । सम्भवत 1840 मे सवप्रथम इन्होने अपने छात्रों को लिखित निर्देश डाक द्वारा भेजकर प्रशिक्षित करने का प्रयास किया था । इन प्रारम्भिक साधारण प्रयासों न आगे चलकर एक शताब्दी से भी कम समय में एक पूण विकसित नवीन शिक्षा प्रणाली का रूप धारण किया जो आज जनसख्या मे एक बहुत बडे अश को लेकर समतावादी समाज की रचना करने म सक्रिय है । 19वी शताब्दी के अ त तक अनक यूरोपीय देशो जैसे जमनी, इगलैण्ड और स्वीडेन ने इसे अपनाकर पत्राचार शिक्षा के क्षेत्र में पथ प्रदशक का काय किया । 20वी शताब्दी के मध्य तक सयुक्त राज्य अमेरिका और रूसी समाजवादी गणराज्य न इस प्रणाली को बहुत बडे पमाने पर अपनाया । फलस्वरूप पत्राचार शिक्षा प्रणाली को न्यूजीलैंड, जापान और अ य बहुत से देशो म उच्च प्राथमिकता दी जाने लगी । द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका से प्रताडित देशो ने अपनी तात्कालिक शैक्षिक समस्याओं एव आवश्यकताओ की पूर्ति एक दशक से कम समय मे ही पत्राचार शिक्षा प्रणाली को अपनाकर पूरी कर ली ।

विश्व मच पर पत्राचार प्रणाली की इन सफलताओं से इस शताब्दी के छठे दशक म तत्कालीन केन्द्रीय शिक्षा म त्री डा० कालू लाल श्रीमाली अत्य त प्रभावित हुए । उनकी कल्पनाशीलता ने भारतीय युवको की शक्षिक आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु इस प्रणाली का प्रायोगिक उपयोग करना चाहा । उन्ही की प्रेरणा और निर्देशन के आधार पर 1962 मे एक 'पाइलॉट प्रोजेक्ट' (Pilot project) के अन्तगत दिल्ली विश्वविद्यालय म पत्राचार शिक्षा विद्यालय की स्थापना हुई । इस पत्राचार विद्या लय ने विभिन्न महाविद्यालयो से उत्तीण छात्रा की बाढ को महाविद्यालय परिसरमें प्रवेश मे ही नही रोका अपितु अनेक लाखो के मन मे विश्वविद्यालयीय शिक्षा प्राप्त करने की आशा जगाकर उ हें उच्च शिक्षा का अवसर भी प्रदान किया । 1964 म भारत सरकार ने 'भारतीय शिक्षा आयोग' का गठन किया । इस आयोग ने पत्राचार शिक्षा प्रणाली की प्रशसा करते हुए लिखा "एक ऐसी विधि का होना आवश्यक है जो शिक्षा को लाखो ऐस लोगों तक पहुचाए जो स्वय अपन प्रयास से और अपनी सुविधा के समय पर अध्ययन करना चाहते हैं । हम मानते हैं कि पत्राचार या गृह अध्ययन पाठ्यक्रम इस स्थिति का सही उत्तर प्रदान करता है ।" इस आयोग ने यह मत भी प्रकट किया है कि ऐसा कोई कारण नहीं है कि हम आशकित हो कि पत्रा चार पाठ्यक्रम द्वारा दी गयी शिक्षा स्कूलो और कालेजो म दी जाने वाली शिक्षा की तुलना मे घटिया किस्म की होगी । पत्राचार प्रणाली के सम्बन्ध मे विदेशो और भारत मे हुए शक्षिक अनुसधानों द्वारा भी इस बात की पुष्टि हुई है कि इस प्रकार की आशका बेबुनियाद है ।

आयोग की सस्तुतियों ने अनक भारतीय विश्वविद्यालयो को प्रोत्साहित किया कि वे बड पमाने पर पत्राचार शिक्षा प्रणाली को अपनायें । भारतीय विश्वविद्यालय भी उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश के लिए इच्छुक छ त्रों की बढ़ती हुई सख्या और उ ह

स्थान देने के लिए नये नये विद्यालय स्थापित करने की माँग के दबाव से त्रस्त एव चिंतित थे। ऐसी स्थिति मे शिक्षा आयोग की सस्तुति ने मन चाहे वरदान का काय किया। फलस्वरूप 1964 के पश्चात पत्राचार शिक्षा प्रणाली का देश म अभूतपूव विस्तार हुआ। सर्वप्रथम, दिल्ली प्रशासन के शिक्षा निदेशालय ने माध्यमिक विद्यालय स्तर पर परीक्षा हेतु पत्राचार विद्यालय का प्रारम्भ किया। तत्पश्चात कई एक माध्यमिक शिक्षा परिषदो ने भी हाईस्कूल परीक्षा और माध्यमिक स्तरीय शिक्षक प्रशिक्षण परीक्षा के लिए पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिषद ने इस नवाचार को अपनाकर जुलाई, 1979 मे दिल्ली मे 'खुले स्कूल' की स्थापना की जो छात्रो को केन्द्रीय शिक्षा परिषद की परीक्षा के लिए तैयार करता है।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे 1968 मे ही राजस्थान विश्वविद्यालय तथा पजाबी विश्वविद्यालय, (पटियाला) मे पत्राचार पाठ्यक्रम के सस्थानो की स्थापना हुई। इसके एक साल बाद ही मैसूर और मेरठ मे पत्राचार सस्थानो का जन्म हुआ। 1971 इस प्रणाली के विकास के लिए बहुत ही शुभ वष था क्योंकि इसमे पाच और पत्राचार सस्थान चण्डीगढ, शिमला, मदुरै, बम्बई और लुधियाना मे स्थापित हुए। विस्तार की यह प्रक्रिया आगे बढ़ती गयी और आज 33 विश्वविद्यालयों, 8 केन्द्रीय सस्थानो (क्षेत्रीय महाविद्यालयो सहित) और अनेक व्यक्तिगत सस्थाओ के द्वारा चलाये जाने वाले पत्राचार शिक्षा केन्द्र हैं, जो विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमो के लिए पत्राचार माध्यम को अपनाते हैं। निकट भविष्य मे यह सख्या बढकर कितनी हो जायेगी, कहना सम्भव नही है। अत हम कह सकते हैं कि पत्राचार शिक्षा प्रणाली, जो दूरवर्ती शिक्षा प्रणाली का ही एक प्रमुख रूप है, दिन प्रतिदिन अधिकाधिक लोकप्रिय होती जा रही है, क्योंकि अब इसे लोग औपचारिक सस्थागत शिक्षा प्रणाली के एक कम खर्चीली एव प्रभावकारी विकल्प के रूप मे मानने लगे है। प्रमाणस्वरूप एक उदाहरण देना समीचीन होगा। आजकल उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद ने इण्टरमीडिएट स्तर पर व्यक्तिगत (Private) परीक्षार्थियो के लिए पत्राचार पाठ्यक्रम को अपनाना अनिवाय कर दिया है।

पत्राचार शिक्षा क्षेत्र विस्तार पाठयक्रम एव अध्येतागण (Correspondence Education coverage, courses and clientele)

पत्राचार के माध्यम से शिक्षा देने का कार्य मुख्यत विश्वविद्यालय एव उनसे सम्बद्ध सस्थाएँ कर रही हैं। राष्ट्रीय शक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) अपने चार क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयो मे पत्राचार द्वारा शिक्षक-प्रशिक्षण का कार्य कर रही है। भारत सरकार का 'हिन्दी निदेशालय' और 'सेण्ट्रल इन्स्टीटयूट ऑफ इग्लिश एण्ड फॉरेन लैंग्वेजेज' द्वारा भी यह कार्यक्रम सचालित किया जा रहा है। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड एव राज्य के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि स्कूली शिक्षा स्तर पर पत्राचार प्रणाली का

प्रयोग कर रहे हैं। इनमे से कुछ सस्थाएँ परम्परावादी पाठ्यक्रमो, जो शैक्षिक उपाधियो के लिए चलाये जाते हैं, को छोडकर व्यवसायोन्मुख (job-oriented) पाठ्यक्रम चला रही हैं। लुधियाना और पतनगर मे अवस्थित कृषि विश्वविद्यालय कृषि तकनीकी, गृह प्रबन्ध और पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित पाठ्यक्रम पत्राचार द्वारा सचालित कर रहे हैं। हैदराबाद का केन्द्रीय अंग्रेजी और विदेशी भाषा सस्थान 'अंग्रेजी शिक्षण प्रमाण पत्र' पाठ्यक्रम और श्रीनगर स्थित सस्थान 'हिन्दी उर्दू शिक्षण पाठ्यक्रम' सचालित कर रहा है। अन्य व्यावसायोन्मुख पाठ्यक्रम जैसे कार्यालय प्रबन्ध, पुस्तकालय विज्ञान, पत्रकारिता, पर्यटन और होटल प्रबन्ध से सम्बन्धित हैं।

भौगोलिक दृष्टि से भारत के नक्शे पर इन सस्थाओ का वितरण असन्तुलित है। असन्तुलन को निकट भविष्य मे दूर करने की योजना केन्द्रीय एव राज्य सरकारो द्वारा बनायी जा रही है और निकट भविष्य मे आशा की जाती है कि यह असन्तुलन कम होता जायेगा।

जहाँ तक इस शिक्षा प्रणाली के अनुयायियो अर्थात पत्राचार के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने वाले लोगो का प्रश्न है, मूलत वे कामकाजी लोग हैं जिन्होंने जीवन-यापन के लिए पढाई छोडकर व्यवसाय अपना लिया है। इनमे ऐसे लोग भी है जो परम्परागत शिक्षण सस्थाओ के द्वारा छोड दिये गये हैं, निकाल दिये गये हैं या उन्होने इन सस्थाओ को स्वय छोड दिया है। किन्तु हाल में ही राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ है कि इस शिक्षा प्रणाली मे भी कामकाजी लोगो का प्रतिशत घटकर केवल 47 प्रतिशत ही रह गया है। अब नवयुवको मे भी पत्राचार पाठ्यक्रम लोकप्रिय होता जा रहा है, क्योकि यह उन्हें काम करते हुये भी सीखने का अवसर प्रदान करता है। दूर दराज के ग्रामो, वन एव पहाडी प्रदेशो के निवासी नवयुवक भी इसकी ओर आकर्षित हो रहे है।

पत्राचार शिक्षा उपकरण एव शिक्षण तकनीकी (Correspondence Education Tools and Techniques of Teaching)

किसी भी प्रकार के शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान को ज्ञान युक्त व्यक्ति द्वारा ज्ञानरहित व्यक्ति तक सम्प्रेषित करना है। औपचारिक परम्परागत शिक्षा प्रणाली मे ज्ञान के सम्प्रेषण का कार्य मौखिक शब्दो द्वारा होता है। शिक्षक कक्षा मे बठे बालको से सीधे बातचीत कर ज्ञान को छात्रो तक पहुँचाता है। पत्राचार शिक्षा की नवीन प्रणाली म भौतिक दृष्टि से दूर-दूर बैठे व्यक्तियो या अध्येताओ की शैक्षिक आवश्यकताओ की पूर्ति की जाती है। इसमे मुख्य रूप से मुद्रित शब्दो का सहारा लिया जाता है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नही है कि पत्राचार के माध्यम को सचार के अन्य माध्यमो का सहारा नही दिया जा सकता। चूंकि मुख्य उद्देश्य ज्ञान का सम्प्रेषण है अत मुद्रित शब्दों के साथ साथ सचार के अन्य माध्यमों जैसे रेडियो प्रसारण, टेली

विजन, वीडियो टेप टेलीफोन और इनसे भी आगे बढ़कर व्यक्तिगत सम्पर्क आदि का सहारा लिया जा सकता है। भारतीय परिस्थितियों के सन्दर्भ में जहाँ गरीबी का आलम चारों ओर है, यहाँ साधारण जनता के पास टेलीविजन, वीडियोटेप, टेलीफोन, फिल्म प्रोजेक्टर, टेपरिकार्डर आदि का प्रयोग सर्वत्र सम्भव नहीं है क्योंकि जहाँ दो वक्त के भोजन और तन ढकने के लिए वस्त्र भी सुलभ नहीं है, वहाँ इन महँगे आधुनिक इलेक्ट्रानिक यन्त्रों का होना अभी दूर का सपना है। अतः भारतीय परिवेश में पत्राचार शिक्षा का प्रमुख माध्यम लिखी हुई पाठ सामग्री और यदा-कदा व्यक्तिगत सम्पर्क की विधि ही है। कहीं कहीं रेडियो एवं टी० वी० प्रसारण भी सहायता कर सकता है। पत्राचार शिक्षा में अपनायी जाने वाली कुछ प्रमुख विधियों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है।

(1) पाठ आलेख (Lesson Scripts)—पाठ आलेख पत्राचार कार्यक्रम की रीढ़ है। अतः पत्राचार शिक्षण में इसके प्रयोग और रचना में बहुत सावधानी बरती जाती है। प्रत्येक पाठ आलेख को बहुत सावधानी से निर्मित किया जाता है। तत्पश्चात् उसकी पुनर्विवेचना एवं समीक्षा की जाती है। समीक्षा के बाद उसके परिष्कृत रूप को एक छोटे समूह पर पूर्व परीक्षण करने के पश्चात् ही आलेख की उपयुक्तता सिद्ध होने पर उसे अध्येताओं या छात्रों के पास डाक द्वारा भेजा जाता है।

पत्राचार पाठ निश्चित रूप से पाठ्यपुस्तकों एवं शोधपत्रों से भिन्न एक सरल सुबोध और रुचिकर आलेख है। इसको लिखने में निम्नलिखित बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है

(i) पाठ आलेख सरल एवं बोधगम्य शैली में लिखा जाना चाहिए।

(ii) आलेख की भाषा का स्तर बोलचाल एवं दैनिक समाचार पत्रों की भाषा के स्तर के समकक्ष होना चाहिए अन्यथा पढ़ने वाले को बार बार शब्दकोश पलटना पड़ेगा।

(iii) आलेख को सावधानी से चित्रों रेखाचित्रों, चार्ट, सारिणी आदि से परिपूरित करना चाहिए ताकि दूर बैठे हुये छात्र भी पाठ को आसानी से समझ सकें।

(iv) जहाँ तक सम्भव हो आलेख में अनौपचारिकता का पुट होना चाहिए ताकि पढ़ने वाले को यह महसूस हो कि उसके सामने बैठकर कोई उससे वार्तालाप कर रहा है।

(v) पाठ छात्रों में जिज्ञासा उत्पन्न करने वाला होना चाहिए।

(vi) पाठ उपविषयों, सम्प्रत्ययों आदि को सही तारतम्य में रखने वाला होना चाहिए।

(vii) प्रत्येक उपविषय, उपकथ्य सम्प्रत्यय आदि प्रस्तुत करने के बाद उन पर अभ्यास के प्रश्न होने चाहिए। इस प्रकार के अभ्यास के प्रश्न छात्रों के लिए विश्राम स्थल और प्रतिपुष्टि (feedback) के साधन बनते हैं।

उपयुक्त बिन्दुओ को ध्यान मे रखते हुए पाठ आलेख लिखना सरल कार्य नही है। इसको लिखने का कार्य सम्बन्धित विषय के मुख्य विशेषज्ञ और प्रोफसर स्तर के लोग करते हैं। आलेख लिखने की तकनीकी मे प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

पाठ बन जाने के बाद छात्रो से उस पर जो प्रतिपुष्टि लेखक को मिलती है, उसको आधार मानकर विषय वस्तु के क्षेत्र मे होने वाली प्रगति का समावेश करने हेतु समय समय पर पाठ को संशोधित एव परिवर्तित करना परम आवश्यक है।

अन्ततः हम यह कहना चाहेंगे कि पाठ लेखन मे थोडी सी ढिलाई और लापरवाही पाठ को छात्रो के लिए दुरुह ही नही बना देगी अपितु वह अनुदेशन को निम्न स्तर का बनाकर पत्राचार पाठ्यक्रम प्रणाली के उद्देश्यो की ही हत्या कर देगी।

(2) व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम (Personal Contact Programme)—इस बात का हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि पत्राचार शिक्षा प्रणाली मे पाठ आलेखों के बाद सबसे महत्वपूर्ण स्थान व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमो' का है। आमने सामने बैठकर शिक्षक और शिक्षार्थी में शैक्षिक दृष्टि से चलने वाले वार्तालाप की उपयोगिता के विषय मे जितना भी कहा जाय वह थोडा ही होगा। पत्राचार कार्यक्रमो म इसीलिए बीच बीच मे व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमा के सत्र का आयोजन किया जाता है। ऐसे कार्यक्रम छात्रो मे अपनत्व की भावना एव आत्मविश्वास जाग्रत करते हैं। व्यक्तिगत सम्पर्क छात्रो के मन मे उठने वाली शैक्षिक और प्रशासनिक समस्याओ का समाधान करने म सक्षम होती है।

पत्राचार संस्थान, 'व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम को सुनिश्चित स्थान पर एक निश्चित अवधि के लिए किसी सुनिश्चित क्षेत्रो के छात्रो के लिए आयोजित करते हैं। इन कार्यक्रमा का आयोजन संपुटित प्रकार का शिक्षण (capsuled type teac hing) की दृष्टि से होता है। 'इसके द्वारा छात्रो के पास भेजे गये पठन सामग्री को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है। शिक्षण की इस प्रक्रिया के द्वारा उन विषय बिन्दुओ को समझाने की चेष्टा की जाती है जो आगामी परीक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

कई बार शिक्षकगण थोडे समय मे सब कुछ सीखा देने के लोभ म इस कार्यक्रम को इतना व्यस्त और थका देने वाला बना देते हैं कि शिक्षण सत्र (teaching session) के बाद वयक्तिक सम्पर्क आदि के लिए छात्रों के पास कोई समय नही बचता। इस प्रचलन के कारण सम्पर्क कार्यक्रमो का मुख्य उद्देश्य ही अधर मे लटक जाता है। सम्पर्क के अभाव के साथ-साथ इन कार्यक्रमों मे व्याख्यान के अतिरिक्त अन्य किसी शिक्षण कार्यक्रम या सहायक सामग्रियों के प्रयोग का अभाव भी इन कार्यक्रमों को उबाऊ और थकाने वाला प्रभावहीन कार्यक्रम बना देता है। इन व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रमो म एक और बुनियादी कमी है कि आमन्त्रित छात्रा म से केवल 30

से 40 प्रतिशत छात्र ही इसमे भाग लेने आते हैं। इन न्यूनताओ के अतिरिक्त व्यक्तिगत सम्पर्क कायक्रम में एक और साधन, 'परामश' (counselling) का अभाव रहता है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया मे निर्देशन और परामश का प्रयोग छात्रो की शक्षिक एव व्यक्तिगत समस्याओ के समाधान के लिए आवश्यक है किन्तु अपने देश मे चलने वाले पत्राचार शिक्षा कायक्रमो मे बहुत कम स्थानो पर इसकी व्यवस्था है। विदेशो मे चलने वाले पत्राचार पाठ्यक्रमो मे निर्देशन एव परामश देने की विशद व्यवस्था की जाती है। अपने देश मे भी इसका प्रचलन प्रारम्भ हुआ है किन्तु अभी हमे इस दिशा मे बहुत कुछ करना बाकी है।

विदेशो के पत्राचार शिक्षा प्रणाली मे छात्रो से व्यक्तिगत सम्पक बढ़ाने, स्वाध्याय मे उनकी सहायता करने तथा पुस्तकालयो की सुविधा प्रदान करने के लिए क्षेत्रीय अध्ययन केन्द्रो' की स्थापना की जाती है। छात्र इन केन्द्रो पर आकर शैक्षिक मागदशन और निर्देशन प्राप्त करते हैं शिक्षका से सम्पक स्थापित करते हैं और अपनी अनेक कठिनाइयो को दूर करने मे सफल होते हैं।

(3) रेडियो वार्ता (Radio Talk)—पत्राचार शिक्षा प्रणाली के अनुदेशनात्मक कायक्रमो मे सम्प्रेषण के जिस माध्यम से पर्याप्त लाभ उठाया जा सकता है वह है—रेडियो। इस माध्यम का सबसे बड़ा लाभ यह है कि अधिगमकर्त्ता या छात्र को अपने स्थान से कहीं गये बिना इसके द्वारा अनुदेशक प्राप्त हो सकता है। शैक्षिक रेडियो कायक्रम एव वार्ता आदि के विषय मे हम विशद चर्चा अध्याय 9 मे कर चुके हैं।

(4) शक्षिक टेलीविजन (Educational T V)—पत्राचार पाठयक्रम में प्रयुक्त होने वाले माध्यमो मे टेलीविजन अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध हो रहा है। यह व्यक्ति के दृष्टि एव श्रवण दोनो ही इन्द्रियो को प्रभावित करता है अत यह रेडियो की तुलना मे कई गुना अधिक महत्वपूण भूमिका निभाता है। शक्षिक टेलीविजन के विषय मे विस्तृत चर्चा भी अध्याय 9 मे की गई है।

(5) अनुक्रिया पत्र दत्त कार्य (Response-sheet Assignment)—पत्राचार शिक्षा के जिन उपकरणो या तकनीकी का हमने उल्लेख किया वे सभी ज्ञान को सम्प्रेषित करने के साधन थे। शिक्षण की प्रक्रिया पूरी हो जाने अधिगम के मापन एव मूल्यांकन का काय भी शिक्षण प्रक्रिया का एक प्रमुख अग है। शिक्षा सम्प्रेषण की द्विमुखी प्रक्रिया है जिसमे शिक्षक छात्रों से बातचीत करता है और बाद मे छात्रों ने क्या सीखा यह ज्ञात करने के लिए अनेक विधियां एव सउद्देश्य प्रश्नो का प्रयोग करता है। शिक्षक, छात्रो को प्रतिपुष्टि प्रदान करता है।

अत पत्राचार शिक्षा मे किसी न किसी प्रकार की प्रतिपुष्टि प्रदान करने की व्यवस्था होनी चाहिए। इस आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुए पत्राचार शिक्षा मे छात्रो के अध्ययन के मूल्यांकन हेतु अनुक्रिया पत्र दत्त काय का प्रयोग किया जाता है

प्रत्येक पाठ के पश्चात प्रश्नो का एक समूह तैयार किया जाता है। छात्रो को निर्देश दिया जाता है कि वे दिये गये प्रश्नो का पूर्ण सावधानी से उत्तर दें।

दत्त काय अनुक्रिया पत्र पर अपने उत्तरो को लिखकर छात्र इसकी जाँच के लिए पत्राचार सस्थान को वापस भेजते हैं। अनुभव मे आया है कि छात्र इस काय को बहुत ही हल्के ढग से लेते हैं और किसी भी तरह खाना पूरी कर देते हैं। दूसरी तरफ सस्थान को प्राप्त हुए इन अनुक्रिया पत्रों के मूल्याकन का मसला उठता है। पत्राचार सस्थान मे इनकी समुचित जाँच होनी चाहिए जो मूल्याकन की कसौटियो पर खरी उतरे। सस्थान के शिक्षको को छात्रो द्वारा किये गये दत्त कार्यों को भली भाँति जाचना चाहिए और प्रतिपुष्टि हेतु अपना विस्तृत अभिमत लिखकर छात्रो को प्रतिपुष्टि (feedback) प्रदान करने हेतु जँचे हुए प्रपत्रो को उनके पास वापस भेजना चाहिए। सस्थान मे शिक्षको के अभाव और शिक्षको मे मूल्यांकन के प्रति आस्था के अभाव म दत्त काय के जाँचने का काय किसी तरह पूरा कर दिया जाता है। आव श्यकता इस बात की है कि इस काय क महत्त्व को समझा जाय और इसे समुचित रीति से सम्पन्न किया जाय क्योकि पत्राचार पाठ्यक्रम मे इस प्रक्रिया का बहुत महत्त्व है।

पत्राचार शिक्षा के शिक्षक एव अन्य सहायक सेवाएँ (Faculty and other supporting services of correspondence education)

पत्राचार पाठ्यक्रम व्यवस्था सरचना का सबसे महत्वपूर्ण अग है—इसम काय करने वाले शिक्षक एव अन्य सहायक कर्मचारी। इस नयी शिक्षा प्रणाली की सफलता या असफलता इसमे कायरत शिक्षको पर निभर रहती है। यदि लिखित पाठ सुयोग्य रीति से बनाया गया है, सम्पक काय प्रभावशाली ढग से सम्पन्न किया गया है, अनु क्रिया पत्रो का मूल्याकन कुशलतापूवक किया गया है और छात्रो के साथ अर्थपूर्ण सम्पक स्थापित किये गये हैं जिसके द्वारा छात्रो को सन्तोष एव पूर्ण लाभ का अनुभव हो तभी हम कह सकते हैं कि इस नवीन शिक्षा प्रणाली ने अपने उद्देश्यों का सफलता पूवक प्राप्त किया। स्पष्ट है कि यह सफलता शिक्षको की कायकुशलता और काय क प्रति उनकी निष्ठा पर निभर करती है।

जिस प्रकार की स्थिति आज भारत मे पत्राचार शिक्षा प्रणाली की है, उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि इसे दूसरे नम्बर की शिक्षा समझा जाता है। परिणामस्वरूप प्रथम श्रेणी के विद्वान एव शिक्षक विश्वविद्यालय के विभागों मे काय करना पसन्द करते हैं और पत्राचार सस्थानो म नही। पत्राचार सस्थानों का विश्वविद्यालय से सम्बन्ध होने के कारण इन पर परम्परागत विश्वविद्यालय की मनोवृत्ति हावी रहती है। विश्वविद्यालय म काय करने वाले शिक्षक यह कहते हुए सुने जाते हैं कि पत्राचार सस्थान वालो के पास काम ही क्या है? इस मनोवृत्ति से ग्रसित विश्वविद्यालय के अधिकारी पत्राचार सस्थानों म पर्याप्त शिक्षको की नियुक्ति नहीं करते। पत्राचार शिक्षा सस्थान में कोई एक डायरेक्टर और उसके एक या दो सहयोगी

प्रवक्ता काय के अम्बार से इतने लदे रहते है कि उनकी कायक्षमता और भी घटती जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि उत्तम से उत्तम शिक्षको की एक सुयोग्य टोली नियुक्त की जाय क्योंकि, इस प्रणाली मे शिक्षको को ऐसे अनेक काय करने होते हैं जिनके लिए उन्ह विशिष्ट प्रशिक्षण और अनेक शिक्षण माध्यमो के प्रयोग मे दक्षता की आवश्यकता होती है। उन्ह पाठ लेखन से लेकर छात्रो से सम्पक छात्रो के काय का मूल्याकन एव प्रतिपुष्टि प्रदान करना तथा छात्रो को समुचित मागदशन एव परामश देने तक का काय करना पडता है। वह भी ऐसे छात्रो को जो उनसे मीलो दूर कही और बैठे हैं।

पत्राचार शिक्षा प्रणाली की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि इनके सस्थानो मे शिक्षको व छात्रो की सहायता के लिए सहायक सेवाओ का भी प्रावधान किया जाय। एक पाठ आलेख को लिखने के बाद उसे सम्पादित करने तथा उसमे चित्र, चार्ट, नक्शे, कार्टून आदि बनाने की आवश्यकता पडती है। छपाई के साथ उसकी प्रूफ रीडिंग और अन्त मे सिलाई और जिल्दसाजी का भी काम करना पडता है। अगर इन्हीं कार्यों का समुचित ढग से करना हो तो पत्राचार शिक्षा सस्थान मे शिक्षको के अतिरिक्त सम्पादको, चित्रकारो, कम्पोजीटरो, प्रूफ रीडरो आदि की आवश्यकता पडेगी। आधुनिक पत्राचार कायक्रमो मे इलेक्ट्रानिक उपकरणो जैसे रेडियो, टेलीविजन, टेपरिकाडर, वीडियो टेप, फिल्म आदि का प्रयोग नितान्त आवश्यक है। अत: पत्राचार सस्थान को इन उपकरणो का सचालन करने वाले कमचारियो एव अधिकारियो की सेवाओ की आवश्यकता पडती है।

पत्राचार शिक्षा प्रणाली भारत म पनप रही है और विकास की ओर उन्मुख है। किन्तु अभी बहुत कुछ करना शेष है। 1980-81 तक के लिए लक्ष्य था कि 20 प्रतिशत छात्र पत्राचार प्रणाली के माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर सकें किन्तु कुछ सर्वेक्षणो के आधार पर यह ज्ञात हुआ है कि केवल 3 6 प्रतिशत छात्र ही पत्राचार प्रणाली द्वारा उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। इसका तात्पय यह है कि अभी भी अपने देश मे यह प्रणाली परम्परागत औपचारिक शिक्षा के मोहजाल से लोगों को मुक्त कराकर अपनी ओर आकर्षित नही कर सकी है।

गत 10 वर्षों मे पत्राचार सस्थानो की सख्या बढ़ी है किन्तु इसके विस्तार म कोई सन्तुलन नही है। कही तो पचास मील की परिधि म ही पाँच पाँच पत्राचार सस्थान हैं जैसे जम्मू, श्रीनगर, चण्डीगढ, शिमला, पटियाला, कुरुक्षेत्र आदि तो कही सैकडो व हजारों मील की दूरी पर एक या दो सस्थान हैं। सरकार एव विश्व विद्यालय अनुदान आयोग (UGC) को यह चाहिए कि वे इस क्षेत्रीय असन्तुलन को दूर करें।

परम्परागत सरकार और परम्परागत विश्वविद्यालयो मे यह आम धारणा है कि परम्परागत शिक्षा की तुलना म पत्राचार शिक्षा सस्ती और घटिया किस्म की है

सम्भवतः इसी धारणा ने पत्राचार शिक्षा प्रणाली की प्रगति में सबसे बड़ी बाधा खड़ी की है। इस प्रणाली के द्वारा शिक्षित व्यक्तियों को हेय दृष्टि से देखा जाता है। उन्हें रोजगार के क्षेत्र में भी प्रमुखता नहीं दी जाती है और इसमें कार्यरत शिक्षकों को 'नम्बर दो' का शिक्षक समझा जाता है। जबकि वास्तविकता यह नहीं है। अनेक अनुसन्धान कार्यों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि पत्राचार शिक्षा प्रणाली द्वारा शिक्षित व्यक्ति परम्परागत शिक्षा प्रणाली से निकले व्यक्तियों की तुलना में योग्यता एवं शैक्षिक उपलब्धि में समकक्ष होते हैं।

इस प्रणाली की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि सरकार इसके प्रचार और प्रसार के लिए समुचित धन की व्यवस्था करे तथा पत्राचार शिक्षण संस्थानों एवं विश्वविद्यालय के शिक्षकों में सहयोग की भावना बढ़े। पत्राचार शिक्षा प्रणाली की सफलता जनता की समतावादी समाज रचना और कल्याणकारी राज्य की स्थापना के सपने को साकार करने का एक सशक्त साधन है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

अभ्यास के प्रश्न

1. 'पत्राचार पाठ्यक्रम' के अर्थ एवं परिभाषाओं की विवेचना कीजिए।
2. भारत में पत्राचार शिक्षा के क्षेत्र विस्तार एवं पाठ्यक्रम का विवरण दीजिए।
3. पत्राचार पाठ्यक्रम के उपकरण एवं तकनीकी का विवरण दीजिए।
4. भारत में पत्राचार पाठ्यक्रम की प्रगति की सम्भावनाओं की समीक्षा कीजिए।



13

समाजोपयोगी उत्पादक कार्य : सउका

[SOCIALLY USEFUL PRODUCTIVE WORK : SUPW]

समाजोपयोगी उत्पादक काय (सउका) ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

समाज उपयोगी उत्पादक काय की सकल्पना भारतीय शिक्षा म एक नवाचार के रूप मे अपनाया गया है। 1964–66 म भारतीय शिक्षा आयोग ने शिक्षा के सभी स्तरो पर काय अनुभव (work experience) को प्रदान करने की सिफारिश की। "हम यह सिफारिश करते हैं कि काय अनुभव को सभी प्रकार की शिक्षा, चाहे वह सामान्य हो या व्यावसायिक, को एक अभिन्न अग के रूप मे शुरू किया जाए। कार्य अनुभव की परिभाषा यह है कि स्कूल, घर, कारखाने, खेत, फैक्टरी या अन्य किसी भी उत्पादक काम मे भाग लेना।

काय अनुभव की शिक्षा से समरस करने की योजना का सूत्रपात महात्मा गांधी की बुनियादी शिक्षा प्रणाली मे हुआ। गांधीजी बुनियादी स्कूलो मे समाजोपयोगी और उत्पादक अनुभवो को शिक्षा प्रणाली का केन्द्र बिन्दु बनाना चाहते थे। इसका उद्देश्य बालको को अपने समाज के सामाजिक, आर्थिक, सास्कृतिक और राजनीतिक आवश्यकताओ तथा आशाओ एव आकाक्षाओ की सही जानकारी के निकट लाना था। तत्कालीन शिक्षा पद्धति ब्रिटिश राज्य की देन थी जिसम शिक्षा ग्रहण करने वाला भारतीय बालक अपने ही देश मे विदेशी बनाया जा रहा था। अत गांधीजी ने एक सच्चे राष्ट्रनेता के रूप म एक ऐसी शिक्षा प्रणाली का प्रारूप और योजना जिसे हम बुनियादी शिक्षा के रूप मे जानते हैं, देशभक्त विचारशील लोगो के समक्ष प्रस्तुत किया था। इस प्रणाली के स्कूलो का पाठ्यक्रम एक उपयुक्त एव उपयोगी हस्तकला (craft) के केन्द्र बिन्दु के इद गिद गठित किया गया था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात बुनियादी स्कूलो क अतिरिक्त सामान्य विद्यालयो के पाठ्यक्रम मे भी इसे जोड दिया गया। दुर्भाग्यवश आजादी के पश्चात् देश भक्ति, एव सामाजिक उत्पादन की भावना की वृद्धि होने के स्थान पर उसका ह्रास ही हुआ। बुनियादी स्कूलो मे हस्तकला या दस्तकारी एक औपचारिकता एव कमकाण्ड बनकर रह गया। अन्य विद्यालयो मे तो उसे हेय दृष्टि से देखा ही जाता था।

किंतु कोठारी आयोग (1964-66) ने भारतीय शिक्षा की समस्याओं को गहराई से देखा और उसे गांधीजी की बुनियादी शिक्षा मे प्रतिपादित हस्तकला—उत्पादक कार्य के महत्व का समझा। आयोग ने उसी सम्प्रत्यय को परिमार्जित कर एक नवीन सम्प्रत्यय कार्यानुभव (work experience) का प्रतिपादन किया। इसका कार्यान्वयन भारतीय स्कूलो मे और आधुनिक जीवन की प्रक्रिया मे व्यावहारिक अनुभव प्रदान करने हेतु किया गया। इस सम्प्रत्यय ने हस्तकला मे प्रशिक्षण की सकल्पना को एक व्यापक आधार प्रदान किया। इसने शिक्षा मे उत्पादक कार्यों के क्षेत्र को विस्तृत किया, उसकी उपयोगिता और सम्भावनाओ को नये आयाम दिये। आयोग की सिफारिशों को ध्यान मे रखते हुए एन सी ई आर टी ने 'दस वर्षीय स्कूलो के लिये पाठ्यक्रम एक प्रारूप' (The Curriculum for the Ten Years School A Framework) नामक पुस्तिका 1975 मे प्रकाशित की। साथ ही साथ इस संस्था ने प्रस्तावित पाठ्यक्रम की आवश्यकताओ की पूर्ति हेतु अनेक पाठ्य पुस्तको का प्रकाशन भी किया। इन पाठ्यक्रमो को बहुत से लोगो की तीव्र आलोचना का सामना करना पड़ा। फलस्वरूप 1977 मे शिक्षा मत्रालय ने गुजरात विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति श्री ईश्वर भाई पटेल की अध्यक्षता मे एक समीक्षा समिति (review committee) का गठन किया। जिसको उपर्युक्त पाठ्यक्रम की समीक्षा करने का दायित्व सौंपा गया।

समाजोपयोगी उत्पादक कार्य अर्थ एवं परिभाषा

समीक्षा समिति ने सभी दृष्टियों से विचारकर इस बात पर पुन बल दिया कि महात्मा गांधी ने पहले जिस प्रकार बुनियादी शिक्षा प्रणाली मे उत्पादक कार्यों को महत्व दिया था, उसी प्रकार हमे भी वर्तमान शिक्षा प्रणाली मे इसको महत्व देना चाहिए। छात्रो को व्यावहारिक, उत्पादक तथा सामाजिक दृष्टि से उपयोगी शारीरिक क्रिया कलापो का अनुभव प्रदान करना अत्यन्त आवश्यक है। इसी समिति ने कार्यानुभव (work experience) के सम्प्रत्यय को और व्यापक बनाते हुए 'समाजोपयोगी उत्पादक कार्य (SUPW) की सकल्पना को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाने की सिफारिश की। इस सम्प्रत्यय के अन्तर्गत उन्होंने केवल उत्पादक हस्त कार्य और पशीय कौशलो (motor skills) को ही इसके क्षेत्र म नहीं रखा अपितु सामाजिक सेवा कार्यों को भी स्थान दिया है। ईश्वर भाई समिति ने शिक्षा म समाजोपयोगी उत्पादक कार्य की विस्तृत विवेचना की है। समिति के अनुसार समाजोपयोगी उत्पादक कार्य को एक सउद्देश्य और सार्थक कार्य के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है जिसके फलस्वरूप किसी उपयोगी वस्तु या सामाजिक सेवाओ का निर्माण होता है।

समिति द्वारा प्रस्तुत सकल्पना की और विस्तृत व्याख्या एवं स्पष्टीकरण के लिये 1978 म इस विषय में गुजरात विद्यापीठ के शिक्षा सकाय म एक राष्ट्रीय कार्यशाला (National Workshop) का आयोजन किया गया। समिति एवं

कायशाला के प्रकाशित प्रतिवेदनो के आधार पर एस पी रुहला ने "समाजोपयोगी उत्पादक कार्य" मे प्रयुक्त प्रत्येक शब्द की निम्नलिखित व्याख्या प्रस्तुत की है

(i) सामाजिक (Socially)—इस पद का पहला शब्द है—'सामाजिक'। यह इस बात पर बल देता है कि निम्न स्तर की शिक्षा (प्राथमिक शिक्षा स्तर) प्राप्त एक बालक को अपने समुदाय में सामाजिक कौशलों और कार्य कौशलों की दृष्टि से कुशलतापूर्वक काय करने की क्षमता से युक्त होना चाहिए। उसे अपने आसपास के समुदाय से सुसमायोजित होना चाहिए। उसे यह समझना चाहिए कि समाज की आवश्यकताओं मे कोई परस्पर विरोध नहीं है। व्यक्ति की आवश्यकतायें, समाज की आवश्यकताओ मे समाहित हैं। अत प्रत्येक व्यक्ति को समाज के क्रिया-कलापो मे सक्रिय एव प्रभावकारी रीति से भाग लेना चाहिए।

(ii) उपयोगी (Useful)—'उपयोगी' शब्द इस बात पर विशेष बल देता है कि व्यक्ति के द्वारा किया गया कार्य किसी उपयोगी वस्तु के रूप मे प्रतिफलित हो। कार्य का फल या उत्पाद व्यक्तिगत रूप से काय करने वाले बालक के लिए और उसके सामान्य समूह, समुदाय या समाज की दृष्टि से भी उपयोगी एव लाभकारी होना चाहिए।

(iii) उत्पादक (Productive)—उत्पादक से तात्पर्य यह है कि उत्पाद (products) या उत्पादित सेवायें (services) वतमान ससाधनो मे सार्थक वृद्धि करने वाली हो। इसी प्रकार यदि किसी सेवा को निर्मित किया गया हो तो वह सेवा भी वर्तमान प्रचलित सेवाओ मे नया योगदान देने वाली हो। उत्पादन चाहे मूर्त हो या अमूर्त, उसका मापन होना चाहिए। यह मापन उसके द्वारा अर्जित धन या उसके द्वारा बढ़ाई गयी स्कूल की बचत या किसी उपयोगी वस्तु के निर्माणस्वरूप अभिवत्ति प्रचलन या वैयक्तिक या सामाजिक जीवन के वाछित मूल्यो के निर्माण के आधार पर किया जा सकता है।

अतत हम कह सकते है कि समाजोपयोगी उत्पादक कार्य एक ऐसा काय है जिसके द्वारा किसी उपयोगी वस्तु का निर्माण किया जाता है। अत यह एक सोद्देश्य और सार्थक काय है जिसके द्वारा व्यक्ति एव समाज के लिए उपयोगी वस्तुओ या सेवाओ का सृजन होता है।

समाजोपयोगी कार्य की आवश्यकता एव आधार (SUPW Need and bases)

समाजोपयोगी उत्पादक काय देश, समाज और व्यक्ति की आवश्यकताओ की आधारशिला पर निर्मित एक सम्प्रत्यय है। अत इसकी शैक्षिक नींव बहुत ही शक्तिशाली है। इसके दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, एव आर्थिक आधारो का विवेचन यहाँ समीचीन होगा।

(i) दार्शनिक आधार—समाज उपयोगी उत्पादक काय गाँधीवादी जीवन दर्शन पर आधारित है। महात्मा गाँधी ने बुनियादी शिक्षा प्रणाली का प्रतिपादन

इसलिए किया था कि वे भारतीय समाज को सर्वोदय समाज में परिवर्तित करना चाहते थे। सर्वोदय समाज का एक ऐसे समाज की परिकल्पना है जिसम सबका उदय अर्थात सबका कल्याण होगा। जिसमें समाज का हर व्यक्ति उच्च नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक मूल्य वाला होगा। उसका जीवन दर्शन मानवतावादी व समाजवादी होगा। ऐसे समाज की रचना सहयोग, समता एव विकेन्द्रीकरण से युक्त व शोषण से मुक्त होगी। इस समाज का प्रत्येक व्यक्ति कार्यकुशल व आत्मनिर्भर होगा। उसमे स्वतन्त्रता, सहयोग, समाज सेवा, आत्मानुशासन सत्य और देश भक्ति की भावना होगी। ऐसे ही समाज की रचना हेतु गांधीजी ने बुनियादी शिक्षा प्रणाली मे उत्पादक कार्यों को केन्द्रीय स्थान प्रदान किया था।

छात्रों को समाज उपयोगी उत्पादक कार्यों को करने का अवसर प्रदान करने से उनमे प्रजातान्त्रिक समाजवादी दर्शन, स्वस्थ रुचियो, अभिवृत्तियों एव उच्च जीवन मूल्यों का बीजारोपण होता है। उत्पादन कार्यों से सम्बन्धित कौशलो का विकास उनमे जीवन के प्रति आस्था या विश्वास भरती है। हमारा सविधान हमारे देश को प्रजातान्त्रिक, समाजवादी और धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र के रूप मे विकसित करना चाहता है। हमारे य सपने गांधीजी के जीवन दर्शन पर आधारित हैं। इन सपनों का साकार करने की आवश्यकता की पूर्ति करने म समाज उपयोगी उत्पादक कार्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(ii) सामाजिक आधार—अंग्रेजों द्वारा चलायी गयी शिक्षा प्रणाली आजादी के पश्चात भी थोडे बहुत परिवर्तनो के साथ उसी प्रकार चलती रही। यह शिक्षा प्रणाली अक्षर ज्ञान, अंक ज्ञान व पुस्तकीय ज्ञान पर आधारित है। इसने समाज में अनेक प्रकार के भेद व विभाजन निर्मित किये हैं। पढ़े-लिखे लोग कोई भी कार्य अपने हाथ से स्वय नहीं करना चाहत। जो पढ़े लिखे नही हैं वे ही मेहनत मजदूरी का कार्य करते हैं। मेहनत कश लोगों को य पढे लिखे लोग हेय दृष्टि से देखते हैं। इस प्रणाली से शिक्षित होता है वह अपने गांव श्रम साध्य कार्य तथा अपने पैतृक उद्योग धन्धे को छोडकर अभिजात वर्ग का कार्य (white collar job) करना चाहता है जिसके फलस्वरूप गांव उजडते जा रहे हैं तथा शहर आबाद हो रहे हैं।

उनकी छाया म गन्दी बस्तियाँ बिलबिला रही हैं। समाज स इस प्रकार के विभाजन का दूर करना प्रजातन्त्र और समाजवाद के विकास के लिए नितान्त आवश्यक है। यह तभी सम्भव है जब बच्चो को भारतीय समाज की आवश्यकताओं और आकाक्षाओ के प्रति सजग एवं जागरूक बनाया जाय। इसके लिए देश की सांस्कृतिक विरासत से परिचित कराना होगा, और उनमे श्रम के प्रति सम्मान जगाना होगा।

समाजोपयोगी उत्पादक कार्य बच्चो मे प्रजातान्त्रिक एव समाजवादी समाज रचना के आदर्शों के अनुरूप अभिवृत्तियाँ और उच्च जीवन मूल्यों का विकास करना

चाहता है। इस कार्य की योजना का निर्माण एव सचालन इस ढग से किया जाता है कि छात्र यह समझने लगते हैं कि हमारी संस्कृति और हमारा समाज उन्हे क्या क्या प्रदान करता है। वह अपनी क्षमताओं को पहचानने लगता है। वह अनुभव करने लगता है कि सामाजिक परिवतन, आधुनिकीकरण, राष्ट्रोत्थान आदि मे उसका कितना और कैसे अशदान हो सकता है।

विद्यालयो के नवीन पाठ्यक्रम मे समाजोपयोगी उत्पादक कार्यों के साथ सामाजिक सेवा का कायक्रम भी सम्मिलित किया गया है। ये दोनो काय एक दूसरे के अनुपूरक हैं और दोनो एक दूसरे से अभिन्न रूप स जुडे हैं। उदाहरणस्वरूप—छात्र सामाजिक सेवा कायक्रम के तहत गांवो मे जाते हैं। गाँव की सफाई का कायक्रम वे अपने हाथ मे लेते हैं। कूडा कचरा एकत्रित होता है। छात्र गड्ढे खोदकर कूडे कचरे को उसमे डालकर कम्पोस्ट खाद तयार करना भी सीख सकते हैं। इस प्रकार सामाजिक सेवा और समाजोपयोगी उत्पादक काय दोना साथ साथ सम्पन्न हो जात हैं। इसी प्रकार का एक उदाहरण और लीजिये। समाज सेवा के अ तगत छात्र गाँवो मे जनसख्या, पशुओं की सख्या एव उनके निवास स्थान का सर्वेक्षण करन गये हैं। गाँवो मे फसलें खडी है। उनकी कटाई चल रही है। वे फसलो की कटाई का काम सीखकर किसानो की कटाई के काम मे हाथ बँटाकर उनका मन जीत सकते हैं। साथ ही साथ एक एकत्रित आँकडो के सहारे ग्रामीण बच्चो की देखभाल करने वाले एक केन्द्र की योजना बना सकते हैं तथा गाँव की सफाई की पूण रूप रेखा तैयार कर सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज से अलग थलग पडा हुआ स्कूल समाज की सेवा कर समाज के साथ समरस होना है, समाज की सेवा करता है। समाज सेवा के कायक्रम छात्रो को समाजोपयोगी उत्पादक काय सीखने और उपयोग करने मे सहायक होता है। दूसरे शब्दो मे समाजोपयोगी उत्पादक काय समाज की आवश्यकताओ की पूर्ति करता है और छात्रो मे समाज सेवा का सक्रिय रूप से भाग लाने के लिए प्रेरणा प्रदान करता है।

इस प्रकार समाजोपयोगी उत्पादक काय सामाजिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

सामाजिक आवश्यकताओ की पूर्ति के साथ साथ यह 'काय-आधारित शिक्षा' छात्रो एव समाज के आर्थिक विकास से भी अभिन्न रूप से जुडी हुई है। छात्र दैनिक जीवन उपयोगी वस्तुओ का निर्माण अपने हाथो द्वारा स्थानीय उपलब्ध साधनो के सहारे करना सीखते हैं। ऐसा करने से बालक आत्म निर्भर, उत्पादक एव मितव्ययी बन स्वय अपने लिये, परिवार के लिए और समाज के लिए उपयोगी बन जाते है।

विभिन्न प्रकार के उत्पादक कार्यो को सीखते और करते हुए छात्र कुछ कार्यों में विशेष रुचि लेने लगते हैं और उस काय मे विशेषज्ञता प्राप्त कर लेत हैं। आगे चलकर उस कार्य को छात्र अपना मुख्य व्यवसाय बना सकते हैं। यदि ऐसा न हुआ

तो भी छात्र सीखे हुए कौशल को अपने जीविका काम के रूप में अपनाकर अपनी आयदनी बढ़ाने का साधन बना सकते हैं। गाँवों को उजड़ने और भारतीय हस्त कलाओ को लुप्त होने से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि अधिक स अधिक नवयुवको को इन ग्राम्य कलाओं और गाँवों की ओर आकर्षित किया जाय। समाज उपयोगी उत्पादक कार्य के अन्तगत क्रियाकलापो द्वारा भारत मे सामाजिक व आर्थिक परिवतन लाया जा सकता है। ऐसी आशा का सचार जन मानस मे हुआ है।

(iii) मनोवैज्ञानिक आधार—बालको के सर्वांगीण विकास हेतु उनके शारीरिक एव मानसिक क्षमताओ के विकास की एक आवश्यक शत है। शारीरिक व्यायाम शरीर के सतुलित विकास हेतु एक अनिवार्यता है। छात्रो को उत्पादक कार्यों मे लगाकर उनको मेहनत करने का अभ्यास कराया जाता है। छात्रो की कर्मेन्द्रियो एव ज्ञानेन्द्रियो दोनो के ही समुचित विकास का अवसर मिलता है। कलाओ और उनमे सम्बन्धित कौशलो का अभ्यास, छात्रो का पेशीय विकास (motor development) मे सहायता प्रदान करता है। इससे स्पष्ट है कि समाज उपयोगी उत्पादक काय छात्रो के शारीरिक विकास मे सहायता प्रदान कर उनके मानसिक विकास हेतु माग प्रशस्त करता है।

कोई बालक निष्क्रिय नहीं बैठना चाहता है और व उत्साह, कार्यक्षमता एव गतिशीलता के जीव त प्रतीक हैं। यदि किसी बालक को स्वत त्रता प्रदान की जाये तो वह खेलना चाहेगा, कुछ बनाना चाहेगा। कलात्मक अभिव्यक्ति करेगा, विभिन्न एव आकषण वस्तुओ को एकत्रित करेगा और कुछ न हो सका तो आपस मे बातें करेगा, पर निष्क्रिय होकर नही बैठेगा। अत सीखने का सर्वोत्तम माध्यम 'कुछ करना' या 'करके सीखना' (learning by doing) है। समाजोपयोगी उत्पादक काय बालको को कुछ करने का अवसर देता है। उन्हे सक्रिय बनाता है और अन्तत उनके मानसिक विकास का माग प्रशस्त करता है। बालक उत्पादक कार्यों म लगने के कारण अनक स्थानो से उस काय के लिए सामग्री एव साधन जुटाता है। इस प्रक्रिया मे उसे अनेक लोगो के साथ मिलने का अवसर मिलता है। साथ ही साथ उसे अपने चारो ओर के वातावरण मे कुछ चीजें खोजनी भी पड़ती हैं। इस प्रकार उत्पादक काय उसमे निरीक्षण करने और साथ ही साथ सामाजिक रूप से परस्पर क्रिया करने का अवसर प्रदान करती है। हम देखते हैं कि इस काय के द्वारा उसको सर्वांगीण विकास (शारीरिक, पेशीय सामाजिक, नैतिक, ज्ञानात्मक और बौद्धिक विकास) का अवसर मिलता है। उत्पादक क्रिया कलापो द्वारा बालक अपने वातावरण पर नियन्त्रण करना सीखते हैं। साथ ही साथ उनमे समुचित अभिवृत्तियो आकाक्षाओ और जीवन मूल्यो का विकास सम्भव होता है। इतना हो नहीं उत्पादक काय बच्चो को अपनी अभिव्यक्ति का अनुपम अवसर प्रदान करता है। बालक की सृजनशीलता को बढ़ावा देता है। अन्तत हम कह सकते हैं कि देखने मे मामूली सा

लगने वाला उत्पादक कार्य छात्रो के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का एक सशक्त माध्यम बन जाता है।

समाजोपयोगी उत्पादक काय के उद्देश्य (Objectives of SUPW)

शिक्षा मे समाज उपयोगी उत्पादक कार्य व्यवस्था करने अथवा पाठ्यक्रम में इसको प्रमुख स्थान देने के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

(i) समुदाय में प्रचलित व्यवसाय की दुनिया और उत्पादक धन्धो से छात्रो को परिचित कराना।

(ii) बालको मे श्रम व श्रमिको के प्रति आदर की भावना का विकास करना तथा स्वय अपने हाथ से अपना काय करने मे गौरव की भावना का अनुभव कराना।

(iii) विभिन्न प्रकार की क्रियाओ में निहित सिद्धान्तो की जानकारी देना।

(iv) छात्रो मे सामाजिक समस्याओ के प्रति जागरूकता विकसित करना और सामुदायिक सेवाओ के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति जाग्रत करना।

(v) छात्रो मे समाज का एक उपयोगी सदस्य बनने की चाह विकसित करना और उनमे यह भाव भरना कि सामुदायिक उन्नति एव भलाई के लिए वह अपना सर्वोत्तम योगदान करें।

(vi) छात्रो मे स्वस्थ एव वाछित अभिवृत्तियो और टोली अथवा समूह मे एक जुट होकर काय करने के गुणो का विकास करना।

(vii) छात्रो मे सामाजिक दृष्टि से वाछित जीवन मूल्यो जैसे आत्म विश्वास, श्रम के प्रति आदर, सहनशीलता, सहकारिता, सहानुभूति, सेवा भावना, देश भक्ति, त्याग, सत्य निष्ठा आदि गुणो का विकास करना।

(viii) छात्रो को विभिन्न प्रकार के कार्यों के स्वरूप एव प्रनियमो को समझने मे सहायता प्रदान करना।

(ix) छात्रो को उत्पादक कार्यों मे अधिक से अधिक उत्साहित करना ताकि वे उत्पादन के क्षेत्र मे आगे बढ़कर कुछ धन अर्जित कर सकें और इस प्रकार वे अध्ययन और धनार्जन (earn with learn) साथ साथ कर सकें।

(x) छात्रो को सृजनात्मक आत्माभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करना और उनमें समस्या समाधान की क्षमताओ का विकास करना।

समाजोपयोगी उत्पादक काय की विषय वस्तु (Contents of SUPW)

समाज उपयोगी उत्पादक कार्यों की सख्या बहुत बडी है। हस्त कलाओ का विस्तार एव उनके निर्माण की प्रक्रिया बहुरगी एव बहु आयामी है। अत विद्यालयों मे चलाये जाने वाले उत्पादक कार्यों का चयन करते समय हमे बालको, विद्यालयो एव समुदायो की आवश्यकताओ पर ध्यान देना होगा। आवश्यकता आधा

रित विषय वस्तु (काय) ही सफलतापूर्वक सचालित किया जा सकता है। समाज उपयोगी उत्पादक काय के समग्र कायक्रमो के दो प्रमुख घटक हैं।

(i) मूल घटक या कायक्रम (Core Programme)—भोजन, आवास, स्वास्थ्य, मनोरजन, सामुदायिक काय एव सेवाओ से सम्बन्धित साधारण किन्तु आवश्यक छोटे-मोटे कार्य आते हैं, तथा

(ii) वैकल्पिक घटक या कायक्रम (Elective Programme)—इसमे ऐसे काय आते हैं जिन्हे सीखकर छात्र कोई न कोई सामान उत्पादित करते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे क्रिया कलाप जो समाज की तात्कालिक आवश्यकताओ एव उपलब्ध सुविधाओ से सम्बन्धित हैं, इस घटक के अन्तगत आते हैं।

समाज उपयोगी उत्पादक काय के अन्तगत किसी भी कार्य का चयन करते समय बालको की आवश्यकताओ, उनकी परिपक्वता का स्तर, उत्पाद का सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त होना इत्यादि पर ध्यान देना आवश्यक है। कार्यों के चयन के लिए हमे निम्नलिखित कसौटियो को ध्यान मे रखना चाहिए

(1) उत्पादक काय शिक्षाप्रद हो, इस हेतु निम्नलिखित कसौटियो की ओर ध्यान देना चाहिए

(i) उत्पादक काय छात्रो के विकास एव परिपक्वता स्तर के समकक्ष होना चाहिए।

(ii) छात्रो की विकासात्मक आवश्यकताओ की पूर्ति करने वाला होना चाहिए।

(iii) यह छात्रो के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को विकसित करने वाला होना चाहिए।

(iv) यह छात्रो के लिए आत्म सिद्धि (self actualization) की प्रक्रिया मे सहायक होना चाहिए।

(v) इन कार्यों को इस प्रकार नियोजित करना चाहिए कि छात्रो मे समस्या समाधान और सजनात्मक चिन्तन क्षमता का विकास हो सके। साथ ही यह समुचित जीवन मूल्यो के विकास मे सहायक हो।

(vi) यह छात्रो मे उपयुक्त एव उपयोगी ज्ञान, कौशल आदि का विकास करने मे सहायक हो।

(vii) यह छात्रो को कुशल एव दक्ष कार्यकर्ता के रूप मे विकसित करने मे सहायक हो।

(2) उत्पादक काय वास्तव मे उत्पादक हो इसके लिए निम्नलिखित कसौटियो का उपयोग करना उपयुक्त होगा

(i) यह काय ऐसी चीजो का उत्पादन करे जिसकी सीधी खपत छात्रो और समुदाय मे हो जाय।

(ii) उत्पादन को बाजार मे बेचा जा सके ।

(iii) 'उत्पादक काय की सेवाएँ ऐसी हो जो समाज के लिए सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से मूल्यवान हो,

(iv) सामाजिक दृष्टि से उपयोगी होने के लिए उत्पाद छात्र एव समुदाय की आवश्यकताओ को पूरा करने वाला हो । उपर्युक्त मूलभूत कसौटियाँ बहुत ही महत्वपूण हैं, किन्तु उनके साथ निम्नलिखित व्यवहारिक कसौटियो का भी आधारभूत महत्व है । अत इनकी ओर ध्यान देना समाज उपयोगी उत्पादक कार्यों की सफलता के लिए अनिवाय है

(क) उत्पादक काय के लिए आवश्यक उपकरण, कच्चे माल, तकनीकी सुविधाएँ आसानी से उपलब्ध हो ।

(ख) कार्यों के लिए समुचित एव योग्य प्रशिक्षित एव जानकार लोग उपलब्ध हों ।

(ग) वह कार्य ऐसा हो कि उसे सफलतापूर्वक पूण करना यथार्थत सम्भव हो ।

यहाँ हम इस बात की ओर पुन ध्यान आकृष्ट करना चाहते है कि समाज उपयोगी उत्पादक कार्य केवल बालको के पेशीय कौशलो के विकास मात्र के लिए नही है । अपितु इसके अन्तगत उनका ज्ञानात्मक व भावात्मक विकास भी सम्मिलित है । अत इसमे ऐसे कार्यक्रमो व विषय वस्तुओ का समावेश होना चाहिए जिनसे छात्रो मे ज्ञानात्मक और भावात्मक अधिगम भी सम्भव हो ।

उत्पादक कार्यों की विषय सूची (Content of Productive Work)

बालको के सर्वांगीण विकास हेतु उत्पादक कार्यों की एक बहुत लम्बी सूची तयार की जा सकती है । उपयु क्त कसौटियो को ध्यान मे रखते हुए छात्रो क विकासात्मक एव परिपक्वता स्तर, विद्यालय के ससाधनो एव समुदाय की आवश्यकताओ को दृष्टि मे रखते हुए विद्यालय अपनी विषय वस्तु का स्वय नियोजन एव निर्धारण कर सकता है । ईश्वर भाई पटेल समिति की रिपोट मे कक्षानुसार 'सउका' की सूची प्रस्तुत की गयी है । इसके अतिरिक्त कक्षानुसार उत्पादक कार्यों की सूची प्रत्येक राज्य के 'राज्य शैक्षिक अनुसधान एव प्रशिक्षण परिषद से भी प्राप्त की जा सकती है । यहाँ पर हम इन कार्यक्रमो की एक सामान्य सूची प्रस्तुत कर रहे हैं ।

(1) शारीरिक विकास के लिए 'सउका'

(i) खेल

(क) कमरे के अन्दर खेले जाने वाले खेल,

(ख) खुले मैदान मे खेले जाने वाले खेल,

(ii) दौड

(iii) सामूहिक व्यायाम

(iv) कुश्ती
(v) तैराकी
(vi) योगासन
(vii) नौका चालन

(2) शैक्षिक विकास के लिए 'सउका'

(i) स्कूल पत्रिका
(ii) दीवार-पत्रिका
(iii) वाद विवाद एव भाषण प्रतियोगिताएँ
(iv) कविता पाठ
(v) लेखन प्रतियोगिताएँ, जैसे—निबन्ध, कहानी आदि।
(vi) साहित्य भाषा
(vii) पुस्तकालय पठन
(viii) नाटक
(ix) गोष्ठी
(x) विस्तार भाषण (Extension Lecture)

(3) नागरिकता विकास हेतु 'सउका'

(i) विद्यार्थी सहकारी स्टोर का गठन।
(ii) विद्यार्थी परिषद का गठन।
(iii) सहकारी बक का गठन।
(iv) नागरिक सस्थाओ, जैसे—नगरपालिका, डाकखाना, ग्राम पचायत, जिला परिषद, विधान सभा, उच्च न्यायालय आदि की यात्रा।
(v) राष्ट्रीय एव धार्मिक उत्सव मनाना।
(vi) स्कूल समारोह जैसे वार्षिक पारितोषक वितरण समारोह, विदाई समारोह आदि मनाना।

(4) सौन्दर्यात्मक, सांस्कृतिक एव भावात्मक विकास हेतु 'सउका'

(i) सगीत और नृत्य
(ii) चित्रकला
(iii) फैंसी ड्रेस
(iv) विविधतापूर्ण कार्यक्रम
(v) लोकगीत
(vi) प्रदर्शनी
(vii) परम्परागत उत्सव मनाना
(viii) स्कूल सज्जा

स्वच्छता तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों से लेकर पर्यावरण को स्वच्छ रखने वाले कार्य तक सम्मिलित होने चाहिए।

(ii) भोजन—छात्रों को भोजन के लिए आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन सम्बन्धी कार्यों को करना चाहिए तथा उनको पकाने की विधियों की भी जानकारी कराना चाहिए। कहने का सार यह है कि भोजन पकाने का दायित्व केवल नारि कार्यों का ही न हो छात्रों को भी भोजन तैयार करने की विविध विधियों को जानना चाहिए। इन कार्यों का विभाजन छात्रों की वय तथा स्तर के अनुरूप ही हो। कक्षा 9 तथा 10 के छात्रों से यह अपेक्षा की जाय कि वे अपने तथा अपने साथियों के लिए उत्तम प्रकार के स्वास्थ्यवर्द्धक भोजन तैयार कर सकें। इसके अन्तर्गत संतुलित आहारों तथा सस्ते लाभप्रद आहारों की जानकारी देना भी जरूरी है।

(iii) आश्रय—घर की सफाई सफेदी, मरम्मत, दरवाजों की देख रेख तथा वार्निश करना, मकानों का निर्माण आदि कार्यों का अनुभव दिलाया जाय। कार्यों को वय तथा स्तर के अनुरूप ही नियोजित करके कराया जाय।

(iv) वस्त्र—कपड़ों की मरम्मत, बटन लगाना धुलाई, रंगाई से लेकर कपड़ों की सिलाई तक के सभी काय इसमें आते हैं।

(v) सांस्कृतिक तथा मनोरंजनात्मक कार्य—होली, दीवाली, रक्षाबन्धन पन्द्रह अगस्त, छब्बीस जनवरी आदि के उत्सवों की तैयारी करना तथा उनको मनाना उत्पादक कार्यों की श्रेणी में आते हैं। मनोरंजन कार्यों में फूलमालाएँ बनाना, स्टेज बनाना, ड्रामा, नाटक कीर्तन आदि का आयोजन भी सम्मिलित हैं।

(vi) सामुदायिक कार्य तथा समाज सेवा—इसके महत्व को प्राय सभी अध्यापक भली जानते हैं। छात्रों में सामुदायिक भावना का विकास तथा पड़ोसी के साथ प्रेम से रहने की भावना का विकास सामुदायिक तथा समाज सेवा के कार्यों से ही सम्भव होता है।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्रों में यह दक्षता आ जानी चाहिए कि वे कार्यों को कुशलतापूर्वक कर सकें और उन कार्यों से कुछ आमदनी भी कर सकें। छात्र अपना काय यदि स्वयं ही कर लेते हैं और उसके फलस्वरूप उनके धन की बचत होती है तो उस काय को भी उत्पादक काय कहा जा सकता है।

समाजोपयोगी उत्पादक कार्यों का कार्यान्वयन (How to implement SUPW)

शिक्षा के उद्देश्य और कार्यों की सूची प्रस्तुत करने के पश्चात् हमें सोचना है कि इस नवाचार का स्कूलों में कार्यान्वयन किस प्रकार करना चाहिए। प्रत्येक विद्यालय को शिक्षकों, छात्रों व सामुदायिक नेताओं से विचार विमर्श कर उत्पादक कार्यों का चुनाव करना चाहिए। शिक्षकों को यह देखना चाहिए कि ऐसे कार्यों का चुनाव किया जाय जो छात्र के लिए और समुदाय के लिए वास्तव में उपयोगी हो।

शिक्षको को कम से कम निम्नलिखित तीन बिन्दुओ को इसकी योजना बनाने और लागू करते समय ध्यान मे रखना चाहिए

(1) उन्हे चाहिए कि वे अपनो आर्थिक और अन्य ससाधनो के भीतर ही अपनी योजना बनावें।

(2) इन सभी कार्यों का सगठन व निर्देशन मुख्यतया विद्यालय मे काय करने वाले शिक्षको के द्वारा ही किया जाय क्योकि इसके लिए विद्यालय को अन्य कोई अतिरिक्त शिक्षक नही मिल सकेंगे।

(3) सउका को आवश्यकता आधारित कायक्रम होना चाहिए। यह छात्रो की आवश्यकताओ को पूरा करने वाला होना चाहिए। ग्रामीण एव शहरी बालक एव बालिकाओ के स्कूलो मे कायक्रमो मे अन्तर होना स्वाभाविक है।

कायक्रमो को क्रियान्वित करने मे हमे निम्नलिखित तीन समस्याओ का समाधान ढूढना पडेगा

(i) शिक्षको का प्रशिक्षण,

(ii) सुविधाओ और उपकरणो का प्रबन्ध, तथा

(iii) कायक्रमो का विकास।

(i) शिक्षकों का प्रशिक्षण—छात्रो को उत्पादक कार्यों की शिक्षा देने के लिए ऐसे शिक्षको की आवश्यकता होगी जो स्वय उस काय को करने मे दक्ष हो। ऐसे शिक्षको के अभाव मे इस योजना मे रुचि रखने वाले शिक्षको को प्रशिक्षित करने की व्यवस्था करना आवश्यक है। इस प्रकार का शिक्षण देने वाले सस्थानो म इन शिक्षको को थोडे समय के लिए भेजकर प्रशिक्षित किया जा सकता है। दूसरी व्यवस्था यह हो सकती है कि व्यवसायिक स्कूलो के स्नातको को कुछ समय के लिए स्कूलो मे बुलाकर स्कूली शिक्षकों को उनके द्वारा प्रशिक्षित करवाकर इस काय मे लगाया जाय। तीसरा उपाय यह हो सकता है कि स्कूलो मे विभिन्न उत्पादक कार्यों की जानकारी को अशकालिक परिश्रामी या अतिथि अध्यापक (visiting teachers) के रूप मे नियुक्त किया जाय।

(ii) सुविधायें और उपकरण की व्यवस्था—सउका के कार्यों का सचालन सफलतापूर्वक तभी सम्भव होगा जब स्कूलो मे इसके लिए आवश्यक सुविधायें और उपकरण उपलब्ध हो। साधनो और सामग्रियो का प्रबन्ध स्कूलो को स्थानीय समुदाय के सहयोग से करना चाहिए। साथ ही सरकार को चाहिए कि स्कूलो के लिए औजारों और सामग्रियो की सस्ती किटो (Kits) की व्यवस्था करें।

(iii) कायक्रम का विकास एव कार्यान्वयन—योजना चालू करने से पहले बहुत से प्रारम्भिक काय करने होगे। इसके लिए समुचित,व्यूह रचना बनानी होगी। सउका की योजना को स्कूलो मे कार्यान्वित करने के लिए अधोलिखित पदो का अनुकरण करना उपयोगी सिद्ध होगा

(क) विद्यालय मे उपलब्ध ससाधनों का सर्वेक्षण—यह काय शिक्षका, छात्रों और स्कूल के अन्य कायकर्त्ताओं द्वारा किया जा सकता है।

(ख) समुदाय का सर्वेक्षण—शिक्षक और छात्र निम्नलिखित जानकारियो को प्राप्त करने के लिए समुदाय का सर्वेक्षण कर सकते हैं

समुदाय मे उपलब्ध विभिन्न उत्पादक काय।

समुदाय मे चलने वाले विभिन्न उत्पादक कार्यों म कितनी सी सख्या मे छात्रो को सलग्न किया जा सकता है।

समुदाय मे अ–औपचारिक शिक्षा और अन्य सामाजिक सेवाओ की आवश्यकतायें।

समुदाय म उपलब्ध ऐसे सदस्य जो इस कार्यक्रम म सहायता करने के इच्छुक हो और उनकी सहायता का स्वरूप तथा समुदाय मे उपलब्ध नेतृत्व और अन्य विशेषज्ञ व्यक्ति।

उपलब्ध प्राकृतिक ससाधन अन्य सामग्रियो और उनका मूल्य।

(ग) शिक्षकों की बठक—'सउका' उपयु क्त सर्वेक्षणो के पश्चात कार्यान्वयन का तीसरा कदम है—निम्नलिखित विषयो की चर्चा करना और निणय लेने के लिए शिक्षको की बैठक करना

कौन से ऐसे कायक्रम हैं जि हें बिना किसी कठिनाई के विद्यालय मे शुरू किया जा सकता है।

इनके लिए कौन कौन सी तैयारी आवश्यक है।

इस सम्बन्ध मे जनता का सहयोग (समुदाय विशेषज्ञ, अभिभावक, आदि) किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

कायक्रम के लिए शिक्षकों मे कायभार किस प्रकार वितरित किया जाय।

सउका मे छात्रो के द्वारा किये गये कार्यों और उनकी प्रगति का रिकाड किस प्रकार रखा जायेगा।

छात्रो के कार्यों का मूल्याकन कैसे किया जायेगा और मूल्याकन के परिणामो को भविष्य मे छात्रो की प्रगति के लिए कैसे उपयोग मे लाया जायेगा।

अन्तत हम कह सकते हैं कि सउका को स्कूलो म लागू करने के लिए हमेशा यथाथ के धरातल पर रहते हुए बुद्धिमत्तापूवक कार्य करना चाहिए। कायक्रम की सफलता शिक्षका, छात्रो, समुदाय के नेताओ और शिक्षा अधिकारियो के परस्पर सहयोग एव इस काय के प्रति उनकी निष्ठा पर निर्भर करता है।

विद्यालयो मे 'सउका' का मूल्यांकन (Evaluation of SUPW in Schools)

'सउका' एक ऐसा नवाचार है जो शिक्षा का अभिन्न अग बन गया है। शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया मे मूल्यांकन एक अनिवाय घटक है। अत सउका का

मूल्यांकन कैसे किया जाए, इस पर विचार करना महत्वपूर्ण है। एन सी ई आर टी द्वारा प्रकाशित सोसली यूजफुल प्रोडक्टिव वर्क करिकुलम डेवलपिंग एण्ड इम्प्लीमेंटिंग प्रोग्राम (1979) नामक पुस्तक में स्कूलों में चलने वाले सउका का मूल्यांकन करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं

(i) जब कार्यक्रम एक दो साल चल चुके तब इनका मूल्यांकन एक स्थानीय टीम के द्वारा कराना चाहिए। मूल्यांकन का उद्देश्य, कार्यक्रम में आने वाली कठिनाइयों का पता लगाने और पाठ्यक्रम में कैसे सुधार लाया जाये, इस बात की जानकारी प्राप्त करना है।

(ii) विद्यालय में ही एक कार्य समूह (working group) नियुक्त करना चाहिए जो उपर्युक्त मूल्यांकन के परिणामों का विश्लेषण करें और यह सुझाव दें कि कार्यक्रम में आने वाली कठिनाइयों को कैसे दूर किया जाये और कार्यक्रम में कैसे सुधार लाया जाये।

(iii) प्रसार कार्य (extension work)—'सउका' को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जो सउका से सम्बन्धित उत्पादन और सामुदायिक सेवाओं से हैं। अत इन्हें इन क्षेत्रों में किये गये नवीन विकास को आत्मसात करते रहना चाहिए। उदाहरण के लिए, कृषि जगत में नित्य नये सुधारों और नवाचारों का जन्म हो रहा है उन्हें अपनाना आवश्यक है। अत इस कार्य के लिए विद्यालय के और बाहर की संस्थाओं जैसे कृषि विभाग, औद्योगिक विभाग, कुटीर उद्योग विभाग और औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं आदि से सम्पर्क बनाये रखना आवश्यक है।

स्कूलों में सउका' के मूल्यांकन के उपयुक्त सुझावों के अतिरिक्त हम नीचे कुछ ऐसे सुझाव दे रहे हैं जो 'सउका' सम्बन्धी कार्यक्रमों में छात्रों द्वारा किये गये कार्यों का मूल्यांकन कैसे किया जाय, इसे स्पष्ट करते हैं।

छात्रों के कार्यों का मूल्यांकन करने हेतु इसके आयामों और कसौटियों का सबसे पहले निर्धारण होना चाहिए।

शिक्षकों को चाहिए कि इन कसौटियों को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित आयामों का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करने हेतु उपकरण एवं विधि विकसित करें।

(क) प्रत्येक छात्र द्वारा कार्य में लगाया गया समय,

(ख) उत्पादक कार्य या सेवा के स्वरूप (व्यक्तिगत या सामूहिक),

(ग) समाज उपयोगी उत्पादक कार्य में छात्रों की सहभागिता (पहल, नियमितता, समय की पाबन्दी, कार्य उत्पादन की मात्रा और गुणवत्ता, सौन्दर्य बोध, जिज्ञासा उपाय कुशलता, सृजनशीलता, प्रसार कार्य में रुचि, कार्यों का रिकार्ड रखना आदि बिन्दुओं पर)

जहाँ तक सम्भव हो मूल्यांकन का कार्य उसी शिक्षक के द्वारा होना चाहिए जिसने कक्षा में छात्रों से कार्य करवाये हैं। अच्छा तो यह होगा कि वह शिक्षक कार्य

क्रम स्थल पर ही दैनिक या साप्ताहिक मूल्याकम करें। पांच बिन्दु वाली (अति उत्तम, उत्तम, स तोषप्रद, निम्न, अति निम्न) निर्धारण मापनी (Rating Scale) पर मूल्याकन करना।

मौखिक परीक्षा लेना (समय समय पर मौखिक परीक्षा ली जा सकती है) किन्तु लिखित और औपचारिक परीक्षा करने की आवश्यकता नही है। मूल्याकन की यह प्रक्रिया पूरे सत्र सतत चलनी चाहिए।

सउका का मूल्याकन आनन्ददायक होना मूल्याकन छात्रो मे आनन्द का सचार करें, न कि भय एव विरोध का।

'सउपा या मूल्याकन उपयुक्त बिन्दुओ को ध्यान मे रखते हुए समुचित रूप से करना चाहिए। इसके निमित्त उपयुक्त वस्तुनिष्ठ उपकरणो एव साधनो का निर्माण शिक्षको द्वारा आवश्यक है। मूल्याकन छात्रो एव समग्र स्कूली कायक्रम का करना चाहिए ताकि दोनो ही स्तर पर निरतर सुधार होता रहे।

'सउका एक ऐसा शैक्षिक नवाचार है जिसमे शिक्षा और भारत की भावी पीढ़ी की मानसिकता मे क्रान्तिकारी परिवतन लाने की क्षमता है किन्तु कुछ लोग इसकी आलोचना करते हैं। उनकी आलोचना का मुख्य बिन्दु है—इसमे मौलिकता का अभाव। उनका कहना है कि यह बुनियादी शिक्षा का रूपान्तरण मात्र है और इसका भी वही हश्र होगा जो बुनियादी स्कूलो मे तथा चलने वाली हस्तकला तथा हस्त उद्योग का हुआ। कुछ दूसरे आलोचको का कहना है कि इसमे बुनियादी शिक्षा की तरह हस्तकला का अन्य विषयो से सहसम्बध स्थापित करने की बात नही है अत यह चलेगी नही। अन्य आलोचको का कहना है कि जिस देश मे अभी तक स्कूलो मे श्यामपट्ट तथा टाटपट्टी तक मुहैया नही कराय जा सके, वहा हस्तकला एव अन्य सेवाओ के लिए धन कहाँ से आयेगा। योजना मात्र रह जायगी और वह चलेगी तो केवल खाना पूरी वाली मनोवृत्ति से।

इस काम के लिए प्रशिक्षित शिक्षको के अभाव को कैसे दूर किया जायेगा, यह आलोचको का प्रश्न है। ईश्वर भाई पटेल कमेटी की इस सस्तुति की आलोचना शिक्षक एव शिक्षक प्रशिक्षको ने की है कि इसके लिए अलग से प्रशिक्षित शिक्षको की व्यवस्था करने की आवश्यकता नहीं है।

आलोचनाओ के बिन्दुओं पर विचार करने से हमे यह ज्ञात होता है कि इनम से कोई भी बिन्दु सउका के दाशनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक आधारो पर नहीं है। इस कार्य का आधार बहुत ही ठोस एव तर्क सगत है। भारतीय शिक्षा मे आमूल परिवतन लान की इसम क्षमता है। इसमे इस बात की क्षमता है कि यह भारत की भावी पीढ़ी मे श्रम एव श्रमिको के प्रति आदर एव प्रेम जाग्रत कर उनको भी अपने हाथ मे अपने जीवन को समुन्नत करने की प्रेरणा दे सके तथा गरीबो और अमीरो शिक्षित और अशिक्षित वर्गों मे बँटे समाज को एक समतावादी समाज म परिवर्तित

कर सके। इसके आलोचक निराशावादी मनोवृत्ति के शिकार हैं। अत इस मनोवत्ति से ग्रसित लोगो की इसके प्रति उदासीनता से इसे बचाना अति आवश्यक है । शिक्षकों को इसके प्रति समुचित उन्मुखता प्रदान कर इस नवाचार को भली भाँति कार्यान्वित करने की योजना बनानी चाहिए । इस भय मे कोई दम नही है कि इसके क्रिया वयन हेतु अपरिमित धन चाहिए । इसके लिए चाहिए इसके प्रति निष्ठा और इसके दार्शनिक एव मनोवज्ञानिक आधारो मे विश्वास । सउका के अन्तगत ऐसे कायक्रमो को अपनाया जा सकता है जिनमे अतिरिक्त धन की आवश्यकता नाममात्र की भी नही होगी। वास्तविकता तो यह है कि सउका का दशन हमे यह सिखाता है कि कम खच मे समाज, समुदाय एव विद्यालय के वतमान ससाधनो के सहारे सभी प्रकार के उत्पादक काय किये जा सकते हैं और करने चाहिए । हाँ, यह सही है कि अविकसित क्षेत्रो जसे—जन जातियो की आबादी वाले क्षेत्रो तथा झुग्गी झोपडी म रहने वाल लोगो के लिए सरकार एव समाज को कुछ अधिक धन देने की व्यवस्था करनी होगी। सरकार इस ओर सचेष्ट भी है । हमे अपने शिक्षको की ईमानदारी, कायकुशलता एव क्षमता, दृढ निष्ठा एव प्रयास पर पूण विश्वास रखना चाहिए । इन शिक्षको के प्रयास एव सामुदायिक सहयोग तथा कल्याणकारी राज्य की स्थापना की माग इस कायक्रम को सफलतापूवक सचालित करने म सक्षम है ।

अभ्यास के प्रश्न

1 समाजोपयोगी उत्पादक काय के अथ एव परिभाषा को स्पष्ट करते हुये इसके सामाजिक एव मनोवैज्ञानिक आधारो की विवेचना कीजिए ।

2 समाजोपयोगी एव उत्पादक काय क्या हैं ? दो उदाहरण दीजिए ।

(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

3 समाजोपयोगी उत्पादक काय के उद्देश्य क्या हैं ? इसके कायक्षेत्र को निर्धारित करते हुये इसके कार्यान्वयन के लिए अपने सुझाव दीजिए ।



14

सामुदायिक सेवा

[COMMUNITY SERVICE]

बालको मे सामुदायिक भावना तथा पडोसी के साथ प्रेम से रहने की भावना का विकास सामुदायिक तथा समाज सेवा के कार्यों से ही सम्भव होता है। किन्तु दुर्भाग्य का विषय है कि आज भारत मे औपचारिक शिक्षण सस्थाएँ समाज से कट चुकी हैं। उनका समाज से सम्बन्ध इतना ही है कि समाज के बालक वहाँ शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते हैं। विद्यालय एक ऐसे सम्मोहन की निद्रा मे जी रहे है जिसमे पढने वाले छात्र इसी सम्मोहन से ग्रसित होकर समाज से पूर्णत कटकर व्यक्तिवादी बनते जा रहे है। जो भी शिक्षित हो जाता है, वह समाज, समाजवाद, प्रजातन्त्र, राष्ट्र भक्ति, राष्ट्रीय एकता आदि की बातें तो बढ चढ़कर करता है किन्तु उसके जीवन मे समाज के लिए त्याग और अपने स्वार्थों की बलि चढ़ने की मनोवृत्ति का नितान्त अभाव है। विद्यालयो मे सामान्यत सामाजिक विषयो के अध्ययन का अवसर मिलता है। किन्तु उनकी यह जानकारी बौद्धिक स्तर पर ही रहती है। जानकारी मात्र, ज्ञान का स्वरूप नही लेती। जानकारी जब अनुभूति का विषय बनती है तब उसका रूपान्तरण ज्ञान मे होता है। इस प्रकार का अनुभूत ज्ञान ही व्यक्ति के आचरण मे प्रकट होता है। अनुभूति के अभाव मे व्यक्ति अनेक सामाजिक एव नैतिक मूल्यो को केवल बुद्धि के धरातल पर ही स्वीकार करते हैं। अत ऐसे पढ़े लिखे लोग इन मूल्यो को अपने निजी जीवन मे चरितार्थ नही करते। यही कारण है कि भारत म वास्तविक समाज सेवा के स्थान पर मौखिक सेवा (Lip Service) की वृद्धि अधिक हुई है। अत छात्रो के मन और मस्तिष्क दानो मे ही समाज की समस्याओं की अनुभूति होना आवश्यक है, तभी छात्रो या नवयुवको मे वास्तविक सामाजिक चेतना और सेवा का जागरण होगा।

कई बार शिक्षाशास्त्री कहते हैं कि आधुनिक औपचारिक शिक्षण सस्थाएँ निर्जीव हो गयी हैं। इसका अर्थ है कि उनकी कार्य प्रणाली नीरस, घिसी पिटी तथा समाज एव जन भावनाओं से पूर्णतया कटी हुई हैं। ऐसी सस्थाओ मे पुरानी शिक्षण विधियाँ अपनायी जाती हैं। विद्यार्थियो तथा अध्यापको द्वारा कोई सामाजिक या

रचनात्मक काय नही किया जाता और शिक्षण केवल परीक्षाओ की तैयारी मात्र बनकर रह जाता है। ऐसे विद्यालयो मे खेल के मैदान और खेलो की व्यवस्था तो अवश्य होती है किन्तु खेल और खेल भावना का विकास नही होता, इन विद्यालयो मे शिक्षण तकनीकी से सम्बन्धित सभी श्रव्य-दृश्य उपकरण उपलब्ध तो रहते हैं किन्तु उनका प्रयोग कभी नही किया जाता। इन विद्यालयो मे समाजोपयोगी उत्पादक काय पाठ्यक्रम में एक विषय है, उसका शिक्षण और परीक्षण भी होता है किन्तु उसकी सामाजिक उपयोगिता एव छात्रो मे उसके द्वारा सामाजिक भावना का विकास नाम मात्र के लिए भी नही होता। इन विद्यालयो मे न तो रचनात्मक अध्यापक होते हैं, न रचनात्मक विद्यार्थी और न ही रचनात्मक काय। ऐसे विद्यालयो के कारण ही शिक्षा के स्तर मे दिन प्रतिदिन गिरावट आती जा रही है। ये विद्यालय पी० सी० रेन द्वारा लिखी इस पुरानी बात को पूणतया भूल गये हैं "विद्यार्थी के हित के लिए उसकी योग्यता को प्रशिक्षित करने के लिए, उसकी सौन्दर्यात्मक योग्यता को विकसित करने के लिए, उसे अपने समुदाय और देश के प्रति कत्तव्य समझाने के लिए विद्यालय का गठन करो—उसे मैट्रिक की परीक्षा के लिए तैयार करने के लिए विद्यालय का गठन मत करो।"

सम्भवत इसी दयनीय स्थिति को देखते हुए माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953 54) ने लिखा—"शिक्षा मे सुधार का आरम्भ विद्यालय को जीवन से पुन जोड़ने एव उनमे घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित करने से होगा, जो कि आज की परम्परागत औपचारिक शिक्षा के कारण टूट चुका है। हमे विद्यालय को वास्तविक, सामाजिक जीवन एव सामाजिक गतिविधियो का केन्द्र बनाना है जहाँ आदश मनुष्य समुदाय के समान सुन्दर और सहज जीवन की प्रेरणा और प्रणाली दिखाई दे।"

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में नयी शिक्षा नीति के तहत शिक्षा काय मे समाज के योगदान पर बहुत बल दिया गया है। यह अभिभावको, विभिन्न विकास कार्यों मे लगे सस्थानों, शिक्षा और उसमे लगे कायकर्ताओ के योगदान को प्रमुखता देती है। फलस्वरूप विद्यालयो और समाज के बीच घनिष्ठ सम्बन्धो की स्थापना को महत्वपूण काय समझा गया है। विद्यालय और समाज के घनिष्ठ सम्बन्धो के अभाव के कारण ही सम्भवत आज समाज मे छुआछूत, जाति भेद, निर्धनता, निरक्षरता, चोर-बाजारी, तस्करी, हिंसा, दहेज आदि समस्याएँ विकट रूप से व्याप्त हैं। गाँवो एव नगरो की पिछड़ी बस्तियो मे तो ये समस्याएँ भयकर रूप मे दिखाई देती ही हैं, किन्तु पढ़े लिखे लोगो एव राजनतिक और सामाजिक नेताओ म भी उनकी गहरी पैठ है। जनजीवन इतना भ्रष्ट एव पतनोन्मुख हो गया है कि निस्वाथ जन-सेवा करने वाला व्यक्ति ही चोर, बेईमान एव स्वार्थी कहा जाने लगा है। ऐसी स्थिति मे आशा की एक मात्र किरण छात्रो मे सामाजिक चेतना एव सामुदायिक सेवा की भावना को जाग्रत करने में ही दिखाई पड़ती है।

सामाजिक चेतना का अर्थ

सामाजिक चेतना का अर्थ व्यक्ति मे समाज के प्रति आत्मीयता एव एकात्मकता का भाव है। इस भाव के साथ ही व्यक्ति मे समाज के हित का तथा समाज के प्रति ममत्व के विचार पनपते हैं। फलस्वरूप व्यक्ति समाज की भलाई के रक्षण और बुराइयो के निवारण के लिए कायरत होता है। समाज के साथ आत्मीयता और एकात्मकता मे जीवन की पूणता का अनुभव करना सामाजिक चेतना का द्योतक है। इसी सामाजिक चेतना का जागरण एव विकास करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है।

विद्यालय समाज निर्माण के केन्द्र

विद्यालय शिक्षा के केन्द्र होते हैं। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के जीवन और चरित्र का निर्माण होता है। शिक्षा वह ज्योति है जो व्यक्ति की बुद्धि को प्रकाशित करती है। समाज व्यक्तियो से बनता है। अत शिक्षा के द्वारा अ तत समाज का ही निर्माण होता है। शिक्षा के प्रकाश से ही समाज को जीने की दिशा एव जीवन मिलता है। इस प्रकार विद्यालय समाज निर्माण के केन्द्र हैं। निर्माण के ही केन्द्र नही अपितु वे सामाजिक चेतना के भी केन्द्र हैं। विद्यालय मे यदि सामाजिक चेतना न रही तो विद्यालय निर्जीव बन जायेंगे। अत समाज मे नवजीवन का सचार और शिक्षा द्वारा जनाकाक्षाओ की पूर्ति का लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब हमारे विद्यालय छात्रो मे सामाजिक चेतना का जागरण करते हुये उन्हे सामुदायिक सेवा करने के लिए अभिप्रेरित करें।

सामुदायिक सेवा के उद्देश्य

सामुदायिक सेवा का उद्देश्य बालको मे ऐसी मनोवृत्ति विकसित करना है, जिससे वे समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व को भली भाँति समझ तथा अपने कर्तव्य का पालन करें। व्यक्ति का जन्म समाज मे होता है। उसी से वह अपने परिवार समुदाय समाज तथा राष्ट्र मे जुडता है।

जन्म से बालक का अहम् का स्वार्थ बोध प्रकृतिजन्य है। बालक स्वय की आवश्यकताओ, अपेक्षाओ और महत्वाकाक्षाओं का बोध स्वत करता है किन्तु सामाजिकता जन्मजात नहीं होती। सामाजिकता का जन्म उसमे पर्यावरण से प्राप्त सस्कारो के द्वारा होता है। सामाजिक चेतना एव समाज सेवा की भावना बालकों म सामाजिक प्रक्रिया से निर्मित होती है। इस समाजीकरण प्रक्रिया का शुभारम्भ परिवार में होता है। परिवार मे ही बालक के व्यक्तित्व की नींव रखी जाती है। बालक का स्व परिवार की परिधि तक विस्तृत होता है। बालक परिवार के सदस्यो के साथ प्रेम, सहानुभूति सहयोग आदि सामाजिक गुणो का विकास करता है। इस प्रकार उसके 'अहं बोध' का विकास धीरे धीरे सामाजिक बोध मे परिणित होने लगता है। परि

वार, प्राथमिक एव माध्यमिक विद्यालयो मे समुचित तथा योग्य सामाजिक वातावरण के अभाव मे प्राय यह सामाजिक चेतना परिवार की परिधि तक ही सीमित रह जाती है। विद्यालय मे सामाजिक सेवा का उद्देश्य इसी समाजीकरण की प्रक्रिया को गति देना है। विद्यालय में ऐसे सामाजिक वातावरण का सृजन करना चाहिए कि बालक की सीमित सामाजिक चेतना का विकास परिवार की परिधि अथवा चक्रव्यूह का भेदन कर समाज और राष्ट्र की एकात्मकता तक पहुचे।

राष्ट्र-भक्ति का सही अथ मे कतव्य निर्वाह उसी समय होता है जब विद्यार्थी अपने व्यक्तिगत एव पारिवारिक स्वार्थों को समाज के लिए तथा समाज के स्वार्थों को राष्ट्रहित मे छोडने को तैयार होता है। स्वार्थ की भावना मानव की जन्म-जात कमजोरी है किन्तु एक सुसगठित एव नैतिक समाज में उस स्वाथ की भावना का परिमार्जन एव उदात्तीकरण सम्भव है। सुसगठित एव नतिक समाज मे ऐसे वातावरण की प्रबलता रहती है कि व्यक्ति को स्वाथ का बलिदान करना होता है। यही कारण है कि हम अपने विद्यालयो म ऐसे सामाजिक वातावरण का निर्माण करना है जिसके द्वारा हमे अपने छात्रो तथा छात्राओ को सामाजिक कतव्यो के प्रति जागरूक ही नही बनाना है वरन् उन्हे समाज और सामाजिकता का सजग प्रहरी भी बनाना है। जैसा बीज बोया जाता है, वसा ही वृक्ष उत्पन्न होता है। जब परिवार, विद्यालय एव समाज में त्याग, बलिदान, प्रेम, सेवा तथा भाई-चार का बीज पडता है तब वह समाज आगे के लिए वैसी ही पीढ़ी तैयार करता है।

विद्यालय मे सामुदायिक सेवा कार्य की पूर्वापेक्षाएँ (Pre-requisites for Community Services in Educational Institutions)

हमने सामुदायिक सेवा के उद्देश्यो और उसकी प्राप्ति के लिए विद्यालय की भूमिका की चर्चा पिछले पृष्ठो मे की है किन्तु इन उद्देश्यो की चर्चा और इनकी प्राप्ति, योजना अथवा पाठ्यक्रम बनाकर विद्यालयो को दे देने मात्र से सम्भव नही है। शिक्षा के माध्यम स बालको म सामाजिक चेतना का जागरण और सामाजिक सेवा की आदत का निर्माण करने के लिए हम विद्यालयो म निम्नलिखित बातो की ओर विशेष ध्यान देना होगा। विद्यालय म सेवारत सभी विषयो के शिक्षको को इन उद्देश्यो के *अनुरूप व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहित करना होगा—*

(1) बालकों की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास समाज हित मे करना— शिक्षा के माध्यम से बालको की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास होना है। ये शक्तियाँ दुधारी तलवार के समान होती है। समुचित अभिवृत्तियों एव जीवन मूल्यों के विकास से जब यह पोषित होती है तब ये विकसित शक्तियाँ अपने समाज के हित सरक्षण एव बुराई के निवारण मे लगती हैं अन्यथा ये समाज को ही भ्रष्ट और नष्ट करने वाले स्वार्थलोलुप क्रिया-कलापो में लगकर समाज और देश को कमजोर बनाती हैं। सभी शिक्षको का यह दायित्व है कि प्रारम्भ से ही छात्रों में समाज हित के सस्कार

विकसित करें। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालकों की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करते हुए उनमें यह भाव जाग्रत करना है कि उनकी समस्त शारीरिक एवं मानसिक शक्तियाँ समाज हित के लिए हैं। शिक्षित व्यक्ति स्वार्थ से ऊपर उठता है। स्वार्थ के विसर्जन में नैतिकता एवं सामाजिक हित की भावना के बीज अंकुरित होते हैं। विद्यालय का वातावरण ऐसा होना चाहिए जिसमें स्वार्थ के विसर्जन के संस्कार एवं सामाजिक चेतना तथा सेवा का जागरण छात्रों में हो सके और उनकी समस्त विकसित शक्तियाँ समाज की भलाई एवं संरक्षण में लगें।

(ii) **सभी पाठ्य-विषयों का ज्ञान समाज की समस्याओं के समाधान हेतु करना**—शिक्षा के द्वारा छात्रों को विभिन्न विषयों का ज्ञान कराया जाता है। छात्र विद्यालय में इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, विज्ञान आदि विषयों का अध्ययन करते हैं। इन विषयों का ज्ञान मात्र प्राप्त कर लेना स्वयं में कोई उद्देश्य नहीं रखता। इस ज्ञान की उपयोगिता एवं सार्थकता तभी है जब इन विषयों का ज्ञान समाज और देश की समस्याओं के समाधान के सन्दर्भ में कराया जाय। सभी शिक्षकों को प्रारम्भ से ही छात्रों में यह चेतना जाग्रत करनी है कि प्रत्येक विषय का ज्ञान प्राप्त करने का उद्देश्य समाज की सेवा और उन्नति के लिए है। विभिन्न विषयों की पाठ्य-वस्तु एवं शिक्षण प्रणाली भी इस उद्देश्य की पूर्ति के अनुरूप होनी आवश्यक है।

(iii) *शिक्षा का सम्बन्ध जीवन से जोड़ना*—सभी शिक्षक शिक्षा के उद्देश्य की बात करते समय तुरन्त यह बोल पड़ते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य राष्ट्र के भावी नागरिकों का निर्माण करना है। किन्तु हमें इस उद्देश्य की संकल्पना को बदलने की आवश्यकता है। वास्तव में विद्यालय के छात्र कानूनी दृष्टि से अल्पवयस्क होने के नाते मताधिकार से वंचित हैं किन्तु वे जन्म से ही भारत के नागरिक हैं। शिक्षकों को छात्रों को भावी नागरिक मानने के स्थान पर आज के नागरिक के रूप में जीवन का निर्माण करना शिक्षा का उद्देश्य मानना चाहिए। विद्यालय समाज का लघु रूप है। उसमें ऐसे संस्कार क्षम वातावरण का सृजन करना चाहिए जिसमें छात्र अच्छा नागरिक के रूप में अपना वर्तमान जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा प्राप्त कर सकें। विद्यालय में छात्रों को अलग-अलग समूहों में विभक्त कर विद्यालय के कार्यों के विभिन्न उत्तरदायित्व सौंपने चाहिए। सहपाठ्यगामी क्रिया-कलापों के द्वारा उनमें उत्तरदायित्व की भावना, कर्त्तव्यनिष्ठा, निजी आचरण में दूसरों के हितों का ध्यान रखने की प्रवृत्ति, प्रेम, सहयोग, सेवा, मिलकर कार्य करने की भावना आदि सामाजिक गुणों का विकास करना चाहिए।

(iv) **छात्रों को सामाजिक समस्याओं की अनुभूति कराना**—हमारे देश में पाँच करोड़ जनसंख्या वनवासियों की है जो घोर जंगल में रहते हैं। उनके पास न पहनने को वस्त्र है न ही दो समय पेट भरने के लिए भोजन। देश की 46 प्रतिशत जनसंख्या (सरकारी घोषणाओं के अनुसार) गरीबी रेखा से नीचे है। यद्यपि शासन

की ओर से गरीबी उन्मूलन एवं उनके जीवन का विकास करने हेतु पर्याप्त धन विभिन्न योजनाओं में व्यय किये जा रहे हैं, किन्तु भ्रष्ट नौकरशाही एवं नेतृत्व के कारण विकास के कार्य का लाभ उन तक नाममात्र को ही पहुंच पाया है। नगर के विद्यालय शैक्षिक परिभ्रमण योजनाओं के अन्तर्गत अपने छात्रों को बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास तथा कश्मीर के मनोरम एवं आलीशान स्थलों का भ्रमण कराते हैं। वास्तव में भारत के जीवन का दर्शन तो ग्रामों व वनों में ही होता है जहाँ देश की 82 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। विद्यालयों की शैक्षिक यात्राएँ इन ग्रामीण और वनवासियों के जीवन से अपने छात्रों को परिचित कराने हेतु आयोजित की जानी चाहिए। इस प्रकार शिक्षक अपने छात्रों में सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूक, अनुभूति एवं सामाजिक चेतना का जागरण भली भाँति कर सकेंगे।

सामुदायिक सेवा कार्यक्रम

विद्यालयों में सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों का आयोजन दो स्तरों पर किया जाना चाहिए

(1) पूर्वाभ्यास स्तर,

(2) व्यावहारिक कार्य स्तर।

(1) पूर्वाभ्यास स्तर—पूर्वाभ्यास स्तर से हमारा तात्पर्य ऐसे कार्यक्रमों से है जो विद्यालय में ही आयोजित किये जाते हैं और जिनके माध्यम से छात्रों में सामाजिक चेतना एवं सेवा का भाव भरकर सामुदायिक कार्य करने का अभ्यास कराया जाता है, जैसे—

(i) श्रम के प्रति आदर और निष्ठा का भाव भरने के लिए छात्रों पर विद्यालय भवन कक्षा कक्ष, खेल के मैदान की सफाई एवं विद्यालय की चाहरदीवारी की सुरक्षा तथा उसकी मरम्मत पानी की व्यवस्था आदि का उत्तरदायित्व सौंपना।

(ii) स्काउटिंग तथा गर्ल गाइडिंग में बालक तथा बालिकाओं को प्रशिक्षित करना।

(iii) देश प्रेम की प्रवृत्ति जाग्रत करने के लिए विद्यालय में सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन करना और इन आयोजनों का सम्पूर्ण दायित्व छात्रों को सौंपना।

(iv) छात्रों में स्वदेशी निष्ठा का जागरण करने के लिए पराधीनता के काल में महात्मा गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन की दार्शनिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को समझाना। स्वाधीनता के पश्चात् विदेशी वस्तुओं, विदेशी वेशभूषा और अँग्रेजी भाषा का प्रयोग करने में आज लोग जिस गौरव का अनुभव करने लगते हैं उसे समाप्त करने के लिए छात्रों में पुनः स्वदेशी आन्दोलन की भावना को पुनर्जीवित करना। शिक्षकों को इस कार्य में स्वयं पहल करनी होगी और छात्रों के सम्मुख जीवित जागृत उदाहरण के रूप में स्वयं को खड़ा करना होगा।

(v) शिक्षा के माध्यम से समाज में सामाजिक चेतना जागृत करना शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। अतः शिक्षण संस्थाओं की गतिविधियाँ केवल अपने छात्रों तक सीमित न रहकर समाज के जीवन को प्रभावित करने वाली तथा उसे दिशाबोध कराने वाली होनी चाहिए। शिक्षकों को विद्यालयों के विशाल भवनों का उपयोग सामाजिक क्रिया कलापों के लिए करना चाहिए। इन भवनों पर समाज का करोड़ों रुपया व्यय हुआ है किन्तु इनका उपयोग केवल छः घण्टों के लिए होता है। और शेष समय में उनमें ताले लटके रहते हैं। वर्ष भर में लगभग 6 महीने विद्यालय प्रायः बन्द ही रहते हैं अतः यह विचार करने की आवश्यकता है कि इन विशाल भवनों का उपयोग समाज के हित में या कार्य में किस प्रकार किया जा सकता है। केवल विद्यालय भवन ही नहीं, विद्यालय से सम्बद्ध शिक्षकों, अभिभावकों एवं छात्रों की विशाल जनशक्ति का उपयोग भी सामुदायिक सेवा के लिए किस प्रकार किया जाय, यह सोचना पड़ेगा।

छात्र, शिक्षक, प्रबन्ध समिति अभिभावकगण इन सबकी विशाल जनशक्ति विद्यालय में उपलब्ध है। इस जनशक्ति का उपयोग योजनाबद्ध रीति से किया जाय तो सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को हम शिक्षा के माध्यम से साकार कर सकते हैं।

(vi) समाज के विभिन्न दोषों को दूर करने के लिए छात्रों में प्रेरणा एवं प्रतिबद्धता विकसित करने हेतु ज्ञानात्मक एवं भावात्मक स्तर पर अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया जा सकता है।

समाज में प्रचलित कुरीतियों मिथ्याचारों, आडम्बरों, तथा दोषों से समाज कमजोर तथा विघटित होता है। ऐसी धारणाओं, कुरीतियों तथा मान्यताओं का उन्मूलन आवश्यक है। विद्यालय में उपलब्ध छात्रों की विशाल जनशक्ति आस पास के समाज में इन कुरीतियों एवं भ्रष्टाचारों का विरोध करने लगे और उन्हें दूर करने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों में सक्रिय हो जाय तो देश का नक्शा बदल सकता है। यह कार्य कुरीतियों एवं भ्रष्टाचारों की प्रकृति और कारणों को छात्रों द्वारा समझने पर ही सम्भव है। ये कुरीतियाँ हैं—

छुआछूत एवं जातिवाद।
दहेज प्रथा एवं बाल विवाह।
मद्यपान, धूम्रपान एवं नशीली वस्तुओं का प्रयोग।
बालिकाओं एवं महिलाओं में शिक्षा का अभाव।
श्रमिक के प्रति अनादर।
स्त्री एवं पुरुषों में भेदभाव।
समाज में प्रचलित अंधविश्वास।
सरकारी एवं सार्वजनिक प्रतिष्ठानों में भ्रष्टाचार।

आतकवाद एव हिंसा ।

चोर बाजारी एव तस्करी ।

महिलाओ के प्रति असम्मान एव अश्लीलता आदि ।

अत इनका ज्ञान एव अनुभूति कराने के लिए विद्यालय मे कायक्रमो का आयोजन करने हेतु निम्नलिखित सकेत प्रस्तुत है—

विभिन्न सामाजिक दोषो के कारणो पर विचार गोष्ठी का आयोजन करना।

कुरीतियो पर नियन्त्रण विषयक जानकारी कराना ।

इन विषयों पर छात्रो से निबन्ध लेखन करवाना ।

सामाजिक दोषो को दूर करने हेतु सरकारी प्रयास एव दण्ड प्रक्रिया से परिचित कराना ।

इन विषयो पर वाद विवाद प्रतियोगिताएँ तथा परिचर्चा आयोजित करना ।

चरित्रवान सामाजिक कायकर्त्ताओ, विद्वानो साधु सन्तो की वार्ताएँ कराना ।

इन कुरीतियो की विभीषिका एव उनको दूर करने के उपायो पर आधारित नाटको, फिल्मो एव टी वी कायक्रमो को छात्रो को दिखाने की व्यवस्था करना ।

जन सचार के अन्य माध्यमा जसे पत्र पत्रिकाएँ, रेडियो आदि का प्रयोग करना ।

इसके अतिरिक्त पूर्वाभ्यास स्तर पर छात्रों मे श्रम देशभक्ति, सहयोग, सहकाय सेवा आदि के जीवन मूल्यो को प्रस्थापित एव विकसित करने हेतु इस स्तर पर निम्नलिखित कार्यों की योजना बनाकर छात्रो के उत्तरदायित्व पर कार्यान्वित किये जा सकते हैं—

छात्र परिषद् का सगठन ।

छात्र बैंक ।

छात्र वाचालय ।

विद्यालय सज्जा हेतु छात्र समूह का गठन ।

छात्र बुक बैंक

छात्र सामुदायिक जीवन शिविर ।

छात्र परिभ्रमण योजना (गाँव, जनजाति, बस्तियो आदि की ओर)

विद्यालय म सांस्कृतिक एव राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन ।

विद्यालय मे स्वदेशी वस्त्रो से निर्मित विद्यालय वेश (uniform) व्यवस्था ।

(2) व्यावहारिक काय स्तर—पूर्वाभ्यास स्तर पर सामुदायिक सवा के विभिन्न कायक्रमो के द्वारा छात्रो मे सामाजिक चेतना एव सामाजिक सेवा का जागरण तो होगा ही, उसके साथ ही उनमे सामुदायिक सेवा कार्यों की कार्य प्रणाली की समझ और उनके लिए आवश्यक कौशलों का विकास भी होगा। सामुदायिक चेतना से युक्त, सामुदायिक सेवा की काय प्रणाली से परिचित और इसके लिए आवश्यक कौशलो से युक्त छात्रा को शिक्षक व्यावहारिक स्तर पर सामुदायिक सेवा के विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करने के लिए उन्हे समुदाय एव समाज म भेज सकते हैं।

यहाँ हम पुन इस बिन्दु पर बल देना चाहते हैं कि पूर्वाभ्यास स्तर पर सामुदायिक एव सामाजिक चेतना जाग्रत किये बगैर यदि छात्रों को सामुदायिक सेवा के कार्यों के लिए समुदाय या समाज मे भेजा जायेगा तो लेने के देने पड जायेंगे। सस्कार विहीन, प्रशिक्षण विहीन एव सामाजिक सेवा म आस्था विहीन तथा कथित समाज सुधारको एव सामुदायिक सेवा कायकर्ताओ और छात्रो के कारनामो से हम सभी परिचित है। आये दिन अखबारो की सुर्खियो म ऐसा समाचार छपते हैं एन एस एस के छात्रा ने दुकानदारो को लूटा, ग्राम सेवक मुखिया के घर चोरी कर पलायित, सामाजिक कायकर्ता ने दहेज के लिए पत्नी को जलाया आदि। अत व्यावहारिक स्तर पर सामुदायिक सेवा के लिए छात्रा को समाज म तभी जाने की अनुमति दी जानी चाहिए जब पूर्वाभ्यास स्तर पर उनका काय सन्तोषजनक एव सफल रहा हो।

व्यावहारिक स्तर पर सामुदायिक सेवा के निम्नलिखित कायक्रम विद्यालय अपने हाथ मे ले सकते हैं—

(i) अ औपचारिक शिक्षा मे सहयोग—निरक्षरता जीवन का सबसे बडा अभिशाप है। निरक्षर व्यक्ति अपने अधिकार तथा कतव्यो के प्रति कभी भी सजग नही हो पाता। यही कारण है कि लोकतान्त्रिक व्यवस्था म शासन का पहला कत्तव्य समाज के लोगो की शिक्षा की उचित व्यवस्था करना होता है।

प्रौढ शिक्षा का सम्बन्ध उन निरक्षर लोगो की शिक्षा से है जो 15 से 35 वष की आयु के अन्तगत आते हैं। अ औपचारिक शिक्षा कायक्रम के अन्तगत शासन इस समय इससे कम वय वग के उन बालक बालिकाओ की शिक्षा की भी व्यवस्था कर रहा है जो किसी कारणवश विद्यालयीय शिक्षा का लाभ नही उठा पा रहे हैं। इसके अन्तगत विद्यालय न जाने वाले किसी भी ऐसे छात्र की शिक्षा की व्यवस्था होती है जो 14 वष वग से कम हैं।

अ-औपचारिक शिक्षा मे सहयोग देना एक व्यावहारिक काय है। अत इस काय मे व्यावहारिकता का ही अनुसरण अपेक्षित होगा। कार्य मे असावधानी के कारण अ औपचारिक शिक्षा एक मखौल का विषय बनकर न रह जाय इसके लिए शिक्षको को सदैव सतक रहना चाहिए।

(ii) श्रमदान करना—कोई भी शारीरिक उत्पादक काय जब धन या लाभ की इच्छा मे किया जाता है तो उसे श्रमदान कहते हैं। वास्तव मे दान का अथ ही है जरूरत मन्द को आवश्यकता पडने पर धन, श्रम अथवा साधन प्रदान करना। श्रमदान के अन्तगत ऐसे काय भी आते हैं जिनसे समाज के लोगो को लाभ होता है जसे—सडक बनाना, सोकपिट (Soakpit) का निर्माण, विद्यालयो की सफेदी करना आदि।

श्रमदान एक व्यावहारिक काय है अत इसके लिए पहले से ही एक योजना बनाना आवश्यक है। जो भी काय कराया जाय, उसके लिए पहले से ही छात्रो को

अवगत करा देना चाहिए। उदाहरण के लिए, सडक निर्माण की योजना को ले लीजिए। इसके लिए पहले से निर्धारित करना होगा कि कुल कितना समय लगेगा, काय कितने दिनो म पूरा करना है, प्रतिदिन कितने घण्टे कार्य करना होगा, निश्चित समय मे काय को पूरा करने क लिए कितने छात्रा का लगाना उपयुक्त होगा, काय के लिए कौन कौन से सामान, औजार आदि की आवश्यक्ता होगी इत्यादि। पूरी योजना का निर्माण छात्रो के साथ परामश करके करना अधिक प्रभावकारी होता है। इस प्रकार छात्रा को काय करने के साथ साथ उसके नियोजन की जानकारी भी हो सकेगी।

(iii) पास पडोस की सेवा—पास पडोस की सेवा सामुदायिक सेवा का अग है। पाठ्यक्रम में इसको अलग स्थान देकर इस पर विशेष बल दिया गया है। यहाँ भी सेवा का अथ नि स्वाथ सहायता से है। इसके अन्तगत इन सभी कार्यों को लिया जा सकता है जिनसे समुदाय के लोगो को लाभ हो सकता है। ऐसे कार्यों को मानवीय काय की सज्ञा दी जाती है। अत इसके अन्तगत मनुष्यो, बालको आदि की सेवा के साथ साथ घरेलू पशुओ की सेवा भी आती है। सामान्यत इनमे निम्नलिखित काय सम्मिलित किये जा सकते हैं

प्राथमिक चिकित्सा करना, जैसे—साँप, बिच्छू, बर आदिके काटने का उपचार, बुखार को थर्मामीटर से नापना, श्वास तथा नाडी की गति को देखना आदि।

किसी दैवी आपदा जसे, बाढ, सूखा, भूकम्प आदि के समय लोगा की सहायता करना।

निर्धन छात्रो की पुस्तको आदि से सहायता करना।

पढ़ाई मे कमजोर साथियो की पढ़ाई मे सहायता करना।

सास्कृतिक तथा मनोरजक कायक्रमो का आयोजन करना।

पास पडोस की सेवा करना सामुदायिक सेवा का प्रमुख कार्य है। जब कुछ बालक दूसरो की मदद करते हैं तो उससे दूसरे बालक भी प्रोत्साहन प्राप्त करते हैं तथा समाज की सेवा म वे भी लग जाते हैं। अत इन सेवा कार्यों को छात्र अपना धम समझ कर करें, ऐसा प्रयास शिक्षको द्वारा होना चाहिए।

(iv) यातायात (ट्रैफिक) के नियम तथा सामान्य व्यवहार की बातें सीखना और दूसरों को सिखाना—सडक पर सुरक्षित आवागमन हेतु यह आवश्यक है कि सभी लोग ट्रैफिक के नियमों का पालन करें। एक व्यक्ति की गलती के कारण दुर्घटनाएँ हो सकती हैं और अनेक व्यक्ति कठिनाई म पड सकते हैं। अत ट्रैफिक तथा सड़क के सामान्य नियमो का पालन करना सभी के लिए आवश्यक है। छात्र इन नियमो को सीखकर इनका पालन स्वय करें तथा अन्य लोगो का इन नियमो के पालन हेतु प्रशिक्षण एव सहायता प्रदान करें। यह भी सामुदायिक सेवा का एक महत्वपूर्ण अग है।

(v) पर्यावरणीय प्रदूषण को समझना और उससे बचने के उपायों की शिक्षा देना—जनसंख्या की वृद्धि तथा उद्योगों में निरंतर प्रगति के कारण जल, वायु, ध्वनि एवं मृदा प्रदूषणों से मानव जीवन के लिए अनेक खतरे उत्पन्न हो गये हैं। अत पर्यावरण संरक्षण की संकल्पना का ज्ञान होना, प्रदूषण से बचने के उपायों को समझ कर उन्हीं उपायों के सहारे पर्यावरण का संरक्षण करना और समुदाय के लोगों में पर्यावरण संरक्षण के उपायों का प्रचार और प्रसार करना भी सामुदायिक सेवा का महत्वपूर्ण कार्य है।

(vi) विकलांग छात्रों को पढ़ने तथा अन्य कार्यों में सहायता देना—विकलांग समाज के अभिन्न अंग हैं। अपनी विकलांगता के कारण वे अपने को असहाय एवं अक्षम अनुभव करते हैं। अत उनकी सेवा करना, उनके लिए अध्ययन सामग्री जुटाना, उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाने में सहयोग देना, मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उनकी समस्याओं का निवारण करना आदि सामुदायिक सेवा का एक विशिष्ट क्षेत्र है।

(vii) विद्यालय के पुस्तकालय एवं वाचनालय का समाज हित में उपयोग करना—प्रत्येक विद्यालय में पुस्तकालय एवं वाचनालय होता है, विद्यालय-समय के अतिरिक्त समय में विद्यालय के वाचनालय का उपयोग समाज के लिए हो सके, इसके लिए छात्रों के सहयोग से समुचित व्यवस्था की जा सकती है।

(viii) विद्यालय के रेडियो एवं दूरदर्शन का सामाजिक उपयोग करना—रेडियो और दूरदर्शन शिक्षा का सशक्त माध्यम है। विद्यालय के अतिरिक्त समय में समाज के लोगों के लिए इनका सदुपयोग हो सके, इस हेतु छात्रों के सहयोग से इनके सामाजिक उपयोग की व्यवस्था की जा सकती है।

(ix) चलचित्र या फिल्म प्रदर्शन की व्यवस्था करना—फिल्म सामाजिक जागरण, सुधार एवं शिक्षा का अत्यन्त प्रभावकारी माध्यम है। शैक्षिक एवं चलचित्रों के प्रदर्शन की व्यवस्था समाजोन्नति के लिए छात्र कर सकते हैं।

शैक्षिक विकास के लिए सामुदायिक प्रतिभागिता

समुदाय का अर्थ व्यक्तियों के ऐसे वर्ग से है जिसके सदस्यों की रुचियाँ एवं आवश्यकतायें एक जैसी होती हैं। वे एक विशिष्ट क्षेत्र ग्राम में रहते हुये शिक्षा के विकास में भाग लेते हैं। सामुदायिक सेवा में कार्य समुदाय के लाभ के लिए होते हैं अत इनकी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि समुदाय के सदस्य सेवा कार्य में कितना सहयोग प्रदान करते हैं। सामुदायिक प्रतिभागिता के बगैर सामुदायिक सेवा का कोई भी कार्य सफल नहीं हो सकता और यह बात शैक्षिक विकास योजनाओं पर विशेष रूप से लागू होती है।

(i) सामुदायिक प्रतिभागिता के क्षेत्र—एक शैक्षिक संस्था के सभी कार्यों के लिए सामुदायिक प्रतिभागिता आवश्यक है। अत हमें इन क्षेत्रों के विषय में जानना आवश्यक है जिनमें समुदाय की सहायता प्राप्त करना सर्वाधिक आवश्यक है। एसे कुछ क्षेत्र अग्रलिखित हैं

अधिक से अधिक संख्या मे समुदाय के लोग अपने बालको को स्कूलो मे भर्ती करावें तथा उन्हे नियमित रूप से विद्यालय मे भेजे । इसके लिए सामुदायिक सहयोग की आवश्यकता है ।

स्कूल, समुदाय का अभिन्न अग है । अत समुदाय स्कूल को भौतिक सुविधाएँ जस भवन, फर्नीचर, निर्माण शिक्षण सहायक सामग्रियाँ, शिक्षको के लिए निवास स्थान आदि की व्यवस्था करने मे सहायता प्रदान कर सकता है ।

समाज मे अनेक कुशल कारीगर होते हैं । वे स्कूल मे समाजोपयोगी उत्पादक कार्यों के सगठन एव प्रशिक्षण में सहायता प्रदान कर सकते हैं ।

समुदाय का सहयोग स्कूल की दैनिक समस्याओ का समाधान और उत्तम शिक्षा के अनुकूल वातावरण बनाये रखने आदि मे भी आवश्यक है ।

स्कूल की सामुदायिक सेवा के क्षेत्र—स्कूल एव समुदाय की सहभागिता उपर्युक्त क्षेत्रो के अतिरिक्त अनेक अन्य क्षेत्रो मे भी आवश्यक होगी । सामुदायिक सहभागिता के बनाये रखने के लिए विद्यालय को समुदाय के निकट जाना होगा । नीचे कुछ ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्रो का उल्लेख किया जा रहा है जिनमें स्कूल समुदाय की सेवा कर सकते हैं ।

स्कूल अपने विद्यार्थियो को समुदाय के सदस्यो की उस अ-औपचारिक शिक्षा का भार सौंप कर समाज की सेवा कर सकते हैं ।

स्कूल अपने भवन एव मैदान को समाज के लोगो को बैठक, सभा समारोह आदि करने के लिए दे सकते हैं ।

स्कूल के शिक्षक गाँवो एव बस्तियो मे विद्वान समझे जाते हैं । अत वे लोग समुदाय के सदस्यो को अपना मार्गदर्शन प्रदान कर उनकी सहायता कर सकते है ।

स्कूल सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप मे काय करते है । वे समाज मे सुधार के लिए नवीन विचारों एव नवाचारो के प्रचार एव प्रसार का काय कर सकते हैं ।

इस प्रकार स्कूल समुदाय की सेवा कर समुदाय का समथन और सहयोग प्राप्त करने मे सफल हो सकते हैं ।

सामुदायिक सेवा की तकनीक—सामुदायिक सेवा काय के लिए अनेक विधियाँ एव तकनीक ढूँढे गये हैं । समुदाय की आवश्यकता और छात्रो की योग्यता के अनुसार इनमे से अनेक तरीके अपना कर सामुदायिक सेवा के कार्यों को समुचित रूप से चलाया जा सकता है । सामुदायिक काय के कुछ प्रमुख तकनीक निम्नलिखित हैं

1 समुदाय की सेवा का कार्य करने करने के पूव हमे समुदाय को अच्छी तरह जान लेना चाहिए । समुदाय के सामाजिक ढाच अथ-व्यवस्था, सास्कृतिक अ[illegible] राजनीतिक सगठन आदि को समझने की कोशिश करनी चाहिए ।

2 समुदाय की सेवा करने वाले को समुदाय के साथ समरस हो जाना चाहिए। समुदाय की सेवा करने वाले को उसके सदस्यों का सम्मान करना चाहिए।

3 समुदाय तथा उसके सदस्यों की समस्याओं को समझना आवश्यक है। समस्याओं को समझे बगैर अपने विचार समुदाय पर नहीं थोपना चाहिए।

4 समुदाय के उभरते हुये नेताओं का जो अधिकतर युवक और शिक्षित हों, सहयोग प्राप्त करने की कोशिश करना चाहिए। समाज के वरिष्ठ सदस्यों की सहायता प्राप्त करना लाभदायक होगा।

5 समुदाय में आयोजित सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक समारोहों में भाग लेना चाहिए ताकि समाज के निकट आने में सहायता मिले।

6 सामुदायिक सेवा की सफलता के लिए स्कूल में सक्रिय अभिभावक शिक्षक संघ की स्थापना करानी चाहिए।

7 उपरोक्त विधियों के अतिरिक्त कुछ और गुण हैं जो समाज सेवा का काम करने वाले छात्रों में होने चाहिए। जैसे हँसमुख स्वभाव, बात करने का ढंग, सदस्यों के प्रति आदर आदि।

8 सामुदायिक सेवा की कोई भी योजना तभी सफल होगी जब उसमें समुदाय की सहभागिता का समावेश हो। समुदाय की सहभागिता प्राप्त करने के लिए ऊपर बताये गये उपायों को अपनाने से सफलता प्राप्त हो सकती है। किन्तु इन उपायों को ही अंतिम सूची समझ लेना एक गलत कदम होगा। समुदाय की आवश्यकता, छात्रों की सामाजिक सेवा सम्बन्धी चेतना शिक्षकों की समाज सेवा के प्रति अभिवृत्ति एवं प्रतिबद्धता तथा सामुदायिक सहयोग की मात्रा के आधार पर सामुदायिक सेवा की तकनीकी का निर्माण या चयन अधिक लाभप्रद होगा।

अभ्यास के प्रश्न

1 शिक्षा में सामुदायिक सेवा का क्या महत्व है? विद्यालय को समाज निर्माण का केन्द्र कैसे बनाया जा सकता है?

2 सामुदायिक सेवा कार्यक्रम को प्रारम्भ करने के पूर्व आप कौन कौन सी पूर्वापेक्षाओं की पूर्ति करना आवश्यक समझते हैं?

3 सामाजिक सेवा के अन्तर्गत आप जिन कार्यक्रमों को प्रारम्भ करना चाहें उनकी संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।



15

विशेष शिक्षा

[SPECIAL EDUCATION]

व्यक्ति एक दूसरे से कई बातों मे भिन्न होते हैं। आधुनिक मनोविज्ञान ने यह प्रदर्शित किया है कि व्यक्तियों मे यह विभिन्नता शारीरिक, बौद्धिक, संवेगात्मक, सामाजिक एव सांस्कृतिक आयामों मे होती है। सामान्य बालकों मे थोडी-बहुत विभिन्नता तो सर्वत्र दिखाई पडती है किन्तु कुछ खास बालकों मे यह विभिन्नता बहुत अधिक होती है। वे सामान्य बालकों से इतना अधिक भिन्न होते हैं कि उनको अलग से पहचाना जा सकता है। ये 'विशिष्ट बालक' हैं। इन्हें सामान्य कक्षाओं एव वातावरण मे समायोजित होने मे कठिनाई होती है। अत इनके लिए विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था करनी पडती है।

विशिष्ट बालक अर्थ एव परिभाषा (Exceptional Child Meaning and Definition)

विशिष्ट बालक को परिभाषित करना कठिन है क्योंकि विशिष्ट शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों मे किया जाता है। कुछ मनोवैज्ञानिक अत्यन्त 'प्रतिभाशाली' को विशिष्ट बालक की श्रेणी मे रखते हैं तो कुछ 'मन्दबुद्धि' या 'पिछडे बालक' को। क्रो और क्रो के अनुसार, 'विशिष्ट पद ऐसे विशेषक (traits) या उन विशेषकों से युक्त व्यक्ति पर लागू होता है जिसके कारण व्यक्ति अपने आस पास के लोगों का ध्यान अपनी ओर विशेष रूप से आकृष्ट करता है।'[1]

अमेरिकन नेशनल सोसाइटी ऑफ स्टडी ऑफ एजुकेशन (American National Society for Study of Education) ने विशिष्ट बालकों को इन शब्दों मे परिभाषित किया है—"विशिष्ट बालक वे हैं जो कि सामान्य बालकों से शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक या सामाजिक विशेषताओं मे इतनी अधिक दूरी पर हैं कि अपनी

---

1 The term exceptional is applied to traits or to a person possessing the traits, because of it the individual receives special attention from his fellows" —*Crow and Crow*

उच्चतम योग्यता तक विकसित होने के लिए उन्हें विशेष शैक्षिक सेवाओं की आवश्यकता पड़ती है।"[1]

उपर्युक्त परिभाषाओं को और व्यापक बनाते हुए भार्गव एवं सवानियाँ[2] ने विशिष्ट बालक को इस प्रकार परिभाषित किया है—"विशिष्ट बालक एक ऐसा बालक है जो कि शारीरिक मानसिक, सामाजिक, शैक्षिक, सांवेगिक एवं व्यावहारिक विशेषताओं के कारण किसी सामान्य या औसत बालक से उस सीमा तक स्पष्ट रूप से विचलित या भिन्न होता है जहाँ कि उसे अपनी योग्यताओं, क्षमताओं एवं शक्तियों को समुचित रूप से विकसित करने के लिए परम्परागत शिक्षण विधियों में परिमार्जन या विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रमों की आवश्यकता होती है। इस श्रेणी में शारीरिक रूप से अक्षम, प्रतिभाशाली, सृजनात्मक, मन्दबुद्धि, शैक्षिक रूप से श्रेष्ठ एवं पिछड़े बाल अपराधी असमायोजित, समस्याग्रस्त, सांवेगिक, अस्थिरता युक्त आदि प्रकार के बालक सम्मिलित हैं।"

विशिष्ट बालकों के प्रकार (Types of exceptional children)

विशिष्ट बालकों को उनकी विशिष्टता की प्रकृति एवं क्षेत्र के आधार पर इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है—

1 मानसिक रूप से विशिष्ट (Mentally exceptional)—इस वर्ग में मुख्यतः निम्नलिखित प्रकार के विशिष्ट बालक आते हैं—

(क) प्रतिभाशाली बालक (gifted child)

(ख) मन्दितमना बालक (mentally retarded child)।

2 शारीरिक दृष्टि से विशिष्ट (Physically handicapped)—इस वर्ग में निम्नलिखित प्रकार के विकलांग बालक आते हैं—

(क) चक्षु विकलांग (visually handicapped)

(ख) श्रवण दोष युक्त बालक (impaired hearing)

(ग) वाक् दोष युक्त बालक (speech impaired)

(घ) विरूपित बालक (crippled child)

(ङ) अस्वस्थ विकलांग (unhealthy handicapped child)

सांवेगिक दृष्टि से विशिष्ट (Emotionally Exceptional)—इस वर्ग में निम्न प्रकार के विशिष्ट बालक आते हैं—

(क) असमायोजित एवं नैतिकता विचलित बालक (Maladjusted and morally devient)

---

[1] An exception child is who deviates from the normal or average child in mental, physical emotional and social characteristics to such an extent that he requires a modification of school practices or special education services in order to develop to his maximum capacity (American National Society for Study of Education)

[2] महेश भार्गव एवं भावना सवानियाँ : विशिष्ट बालक, 1983

(ख) समस्यात्मक बालक (problem child)

(ग) बाल अपराधी (delinquents)

(घ) संवेगिक रूप से विशिष्ट बालक (emotionally disturbed)

4 बहु विकलांग बालक (Multihandicapped)—इस वर्ग में ऐसे बालक आते हैं जो एक से अधिक दृष्टि से विशिष्ट हैं।

विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance of Special Education)

हमने विशिष्ट बालकों के वर्गीकरण का अवलोकन किया है। यदि इन सभी प्रकार के बालकों को एक ही कक्षा में, एक ही शिक्षक द्वारा, एक ही विधि से शिक्षित करने की चेष्टा की जाय तो स्थिति हास्यास्पद हो जायेगी। सम्भवत वह कक्षा एक शक्षिक कक्षा न होकर 'चिड़िया घर' का दृश्य उपस्थित करेगी। इस प्रकार की कक्षा से सामान्य बालकों और विशिष्ट बालकों दोनों का ही अहित होगा। शिक्षक ऐसे चक्कर में पड़ जायेगा कि उसमें से वह कभी भी नहीं निकल सकता। यदि वह सामान्य बालकों की ओर ध्यान देता है तो विशिष्ट बालक अवाक बने बैठे रहेंगे या कक्षा में हंगामा मचायेंगे। विशिष्ट बालकों की ओर ध्यान देने पर सामान्य बालक नुकसान उठायेंगे। मानसिक और शारीरिक दृष्टि से इतने अधिक भिन्न बालकों की शिक्षा एक साथ सम्भव नहीं हो पायेगी। अत हमें विशिष्ट शिक्षा का प्रबन्ध एवं इसकी व्यवस्था विशिष्ट बालकों के लिए करनी ही होगी।

विशिष्ट शिक्षा एक ऐसा शक्षिक कार्यक्रम है जिसकी विशेष योजना विभिन्न प्रकार के विशिष्ट बालकों की समुचित शिक्षा हेतु की जाती है। इस प्रकार की विशिष्ट शिक्षा, सामान्य स्कूलों की विशिष्ट कक्षाओं में अथवा विशिष्ट बालकों के लिए ही स्थापित विशिष्ट संस्थाओं में दी जाती है। इन संस्थाओं में विशेष शक्षिक उपलब्धि एवं प्रशिक्षण से युक्त शिक्षक, विशिष्ट बालकों को शिक्षण एवं मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

सम्पूर्ण विश्व में आजकल समता एवं अवसर की समानता के लिए व्यापक माँग है। माँग की पूर्ति हेतु सभी जनतान्त्रिक एवं समाजवादी देशों में प्रयास चल रहा है। फलस्वरूप विशिष्ट बालकों की आवश्यकताओं के अनुरूप उन्हें शिक्षित करने का आन्दोलन भी दिन प्रतिदिन और अधिक व्यापक एवं शक्तिशाली बनता जा रहा है। प्रत्येक प्रकार के विशिष्ट बालकों की शिक्षा का रूप कैसा हो और उनके सर्वोत्तम लाभ के लिए किस प्रकार इसे सचालित किया जाय, इस सम्बन्ध में विश्व में उपयोगी अनुसन्धान प्रयोग हो रहे हैं।

दुर्भाग्यवश अपने देश में इस दिशा में कार्य की गति बहुत मन्द रही है। फलस्वरूप यहाँ विशिष्ट बालकों की शिक्षा का समुचित विकास नहीं हो पाया है। इस परिस्थिति को देखते हुये शिक्षा आयोग (1964–66) ने विशिष्ट बालकों

शिक्षा की आवश्यकता पर बहुत अधिक बल देते हुये कहा "उनकी शिक्षा केवल मानवतावादी आधारों पर ही नहीं, उपयोगिता के आधारों पर भी गठित करनी होगी। उचित शिक्षा आमतौर पर विकलांगता पर काफी हद तक विजय पाने योग्य और एक उपयोगी नागरिक बनाती है। सामाजिक न्याय का भी यही तकाजा है। यह स्मरण रखना होगा कि अनिवार्य शिक्षा पर संवैधानिक निदेश में विकलांग बच्चे भी शामिल हैं।"

निम्नलिखित विशिष्ट आवश्यकतायें भी विशिष्ट शिक्षा के संगठन एवं प्रसार को बल प्रदान करती हैं

(1) विशिष्ट बालक सामान्य स्कूलों में चलने वाली सामान्य कक्षाओं से लाभ नहीं उठा पाते। उनके लिए विशेष विधियों, पाठ्यक्रमों एवं शिक्षकों की आवश्यकता है। यदि उनकी ओर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो वे समस्यात्मक बालक बन जायेंगे और स्वयं, परिवार तथा समाज को हानि पहुँचायेंगे। अतः विशिष्ट बालकों के लिए विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था एक अनिवार्य आवश्यकता बन जाती है।

(2) विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता मानसिक एवं शारीरिक विकलांगों के लिए और भी आवश्यक है क्योंकि वे परिवार एवं समाज में समायोजित होने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। यदि उन्हें भाग्य या भगवान के भरोसे छोड़ दिया जायेगा तो वे कुण्ठा एवं भग्नाशा से ग्रसित हो मानसिक दृष्टि से बीमार हो जायेंगे और सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से बोझ बन जायेंगे। अतः आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें विशिष्ट शिक्षा देकर उनमें आत्मविश्वास जाग्रत कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाया जाय। उचित शिक्षा द्वारा उन्हें समाज का उत्पादक एवं उपयोगी सदस्य बनाया जा सकता है।

(3) विशिष्ट शिक्षा, अभिभावकों, शिक्षकों एवं शैक्षिक प्रबन्धकों को विशिष्ट बालकों की समस्याओं को समझने में सहायता प्रदान करती है। इसके द्वारा विशिष्ट बालक समाज में समायोजित होते हैं और समाज का उनके प्रति दृष्टिकोण बदल कर नकारात्मक से सकारात्मक बन जाता है।

(4) अन्धे, बहरे, गूंगे बालकों की सामान्य बालकों के साथ बैठाकर शिक्षित नहीं किया जा सकता। ऐसे बालकों की शिक्षा के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि एवं शिक्षकों की आवश्यकता है।

(5) विशिष्ट बालकों की शैक्षिक, सामाजिक एवं शारीरिक आवश्यकतायें सामान्य बालकों से भिन्न होती हैं। अतः समाज एवं शिक्षाशास्त्रियों का यह दायित्व है कि उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उनके लिए विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था करें।

(6) विशिष्ट बालक अपनी योग्यताओं एवं क्षमताओं के स्तर तक विकास कर सकें, इसके लिए विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता है। इसके द्वारा हमें उन्हें समायोजित, उत्पादक एवं आत्मनिर्भर बालक बनाने की आवश्यकता है।

विशिष्टता का क्षेत्र सार्वभौमिक है। यह किसी भी वर्ग, जाति, धर्म, सम्प्रदाय एवं राष्ट्र के व्यक्तियों में पायी जा सकती है। विशिष्टता वंशानुगत अथवा वातावरणजन्य हो सकती है अथवा दोनों की अंतःक्रिया का प्रतिफल। इतिहास के पन्नों पर अनेक विशिष्टता से युक्त लोगों के नाम अंकित हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति केनेडी की बहन मन्द बुद्धि थी। प्रसिद्ध विद्वान एवं अमेरिका लेखिका डा० हेलेन केलर अंधी और बहरी थी। महान कवि सूरदास अंधे थे। प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइनस्टीन का भाषा विकास बहुत विलम्ब से हुआ था। राष्ट्रपति रूजवेल्ट स्वयं पोलियो के शिकार थे। इन उदाहरणों को यहाँ प्रस्तुत करने का एक मात्र उद्देश्य यह है कि कोई भी अक्षम बालक उचित शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा सामान्य बालकों की तरह स्वयं, समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी बनाया जा सकता है। अतः संसार के सभी देशों में विशिष्ट बालकों के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ है और इन बालकों की समुचित शिक्षा के लिए विशिष्ट शिक्षा की व्यवस्था की जा रही है।

विशेष शिक्षा की समस्यायें (Problems of Special Education)

विशेष शिक्षा के आदर्श एवं उद्देश्य सामान्य शिक्षा के आदर्शों एवं उद्देश्यों के समान ही हैं। इन दोनों में एक मात्र अन्तर इनके स्वरूप एवं विधियों में है। विशेष शिक्षा विशिष्ट बालकों की विशिष्ट योग्यताओं एवं अक्षमताओं के अनुरूप होती है। अतः इसमें शिक्षण, प्रशिक्षण, मार्गदर्शन की विशिष्ट विधियों एवं तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। विशेष शिक्षा की अपनी विशिष्ट समस्या निम्नलिखित बातों से सम्बन्धित है—

(i) **विशिष्ट बालक को समझने (understanding) की समस्या**—किसी बालक को शिक्षा प्रदान करने के लिए उसके व्यक्तित्व को समझना आवश्यक है किन्तु विशिष्ट बालकों की शिक्षा में यह अति आवश्यक है क्योंकि विशिष्ट बालक की विशेषताएँ साधारण बच्चों की तुलना में अधिक तीव्र और विचित्र होती हैं। शिक्षकों एवं अभिभावकों को सबसे पहले अपने मन में यह बात बैठा लेनी चाहिए कि विशिष्ट बालक भी एक व्यक्ति है जिसे सभी के समान आदर, विश्वास स्नेह और सुरक्षा चाहिए। विशिष्ट बालकों के व्यक्तित्व के विषय में पूर्ण जानकारी एवं समझ शिक्षकों के लिए विशिष्ट बालकों के शिक्षण एवं प्रशिक्षण की प्रक्रिया को सरल, प्रगतिशील एवं रुचिकर बना देगी।

(ii) **औपचारिक (formal) शिक्षा की समस्या**—सामान्य बालकों के समान ही विशिष्ट बालकों को भी औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता है। ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि उन्हें कम से कम पढ़ने, लिखने और साधारण गणित का ज्ञान हो जाय। आधुनिक शैक्षिक तकनीकी ने ऐसी विधियों, तकनीकों एवं उपकरणों का आविष्कार किया है जिनकी सहायता से विकलांग बच्चों को भी औपचारिक शिक्षा

दी जा सकती है। विशिष्ट बालको की शिक्षा का स्तर उनके शारीरिक एव मानसिक स्तर के अनुरूप होनी चाहिए।

(iii) व्यावसायिक प्रशिक्षण (vocational training) की समस्या—विशिष्ट बालको के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण भी आवश्यक है किन्तु यही विशेष शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य नही होना चाहिए। विकलाग बच्चो को रोजगारपरक काम धन्धो मे प्रशिक्षित करने की व्यवस्था होनी चाहिए। इन्हे सगीत, टाइप राइटिंग, कताई बुनाई, सिलाई, कढाई, धुलाई पाक कला आदि कार्यों मे प्रशिक्षित किया जा सकता है। एक विकलाग बालक के लिए यह सर्वोत्तम होगा कि वह अपनी अक्षमता के अनुरूप कोई ऐसा काय सीख ले ताकि वह आत्मनिभर हो जाय। ऐसा करने से उसकी हीनता की भावना कम होगी और उसमे आत्मविश्वास एव आत्मसुरक्षा की भावना जागेगी। उसका जीवन आत्म सन्तोष एव आनन्द से भर जायेगा।

उपयुक्त तीन प्रमुख समस्याओं का समाधान करने हेतु विशेष शिक्षा की व्यवस्था मे निम्नलिखित व्यावहारिक समस्याओ का सामना करना पडेगा —

(1) विशेष परिभ्रामी शिक्षको (special visiting teachers) सामाजिक कायकर्त्ताओ, विशेषज्ञो द्वारा शिक्षण, प्रशिक्षण एव निर्देशन की व्यवस्था की समस्या।

(2) सामान्य विद्यालयो मे ही विशिष्ट बालको के लिए अतिरिक्त कक्षा (extra class planning) नियोजन एव व्यवस्था की समस्या।

(3) सामान्य विद्यालयो मे यहाँ विशिष्टबालको की सख्या अधिक है। उनमे उनके लिए विशेष कक्षाओ की योजना (special class planning) एव व्यवस्था की समस्या।

(4) बहरे, गूगे, अन्धे, अपराधी, उच्च प्रतिभा सम्पन्न आदि विशिष्ट बच्चो के लिए पृथक विशेष विद्यालय (special schools) की योजना एव स्थापना की समस्या।

(5) विशिष्ट बच्चो के लिए आवासीय विद्यालयो (residential schools) की स्थापना की समस्या।

(6) विशिष्ट बालको को शिक्षित एव प्रशिक्षित करने वाले शिक्षको के प्रशिक्षण की समस्या।

(7) विशिष्ट बालकों की शिक्षा हेतु उपकरणो आदि के प्रबन्ध और उसके लिए आवश्यक धन की व्यवस्था की समस्या।

विशेष शिक्षा को शिक्षा की मुख्य धारा मे मिलाना (Main Streaming)

समाजवादी और प्रजातान्त्रिक जीवन दशन को अपनाने के कारण समाज मे सभी बालकों के लिए शिक्षा के समान अवसर की माँग है। इसी माँग के फलस्वरूप आज विद्यालयो मे सभी प्रकार के विकलांगो एव विशिष्ट बालकों के लिए पूर्व

कालिक अथवा अशकालिक कक्षाएँ चलाने की व्यवस्था की जा रही है। विगत तीन चार दशकों से शिक्षाशास्त्रियों मे एक बहस चल रही है कि क्या विशेष बालको की शिक्षा सामान्य विद्यालयो की सामान्य कक्षाओ मे भली भाति हो सकती है या उनके लिए अलग से विशेष शिक्षा की व्यवस्था अच्छी रहेगी ? सामान्य कक्षाओं में सभी की शिक्षा हो, इसी को 'मुख्य धारा मे मिलाना' (main 'streaming) कहते है क्योंकि इससे शिक्षा की मुख्य धारा मे सभी को तैरने का अवसर मिलता है। प्रजातान्त्रिक जीवन दर्शन से प्रभावित कई देशो मे विशेष शिक्षा पर अधिक बल दिया जाने लगा है, विशेषकर अमेरिका मे आल हैंडीकप्ड चिल्ड्रेन एक्ट (All Handicapped Children Act) 1975 मे वहाँ की सरकार ने पारित किया जो कि एक प्रकार से मेन स्ट्रीमिंग एक्ट (Main Streaming Act) ही है।

इस एक्ट के मुख्य उद्देश्य हैं :

(1) अमेरिका के सभी बालको को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करना।

(2) सभी का कम से कम प्रतिबंधित वातावरण मे निःशुल्क जनशिक्षा प्रदान करना।

(3) व्यापक एव भेदविहीन परीक्षण और मूल्यांकन का प्रबन्ध करना।

(4) विकलांगो और प्रतिभाशाली बालको के लिए वयक्तिक शिक्षा कार्यक्रम (Individualized Education Programme IEP) की व्यवस्था करना।

इस ऐक्ट मे अन्य बहुत सी व्यवस्थाओ का उल्लेख है किन्तु हमने यहाँ पर उपर्युक्त चार का ही जिक्र किया है ताकि मेन स्ट्रीमिंग पर वहाँ कितना बल दिया जा रहा है, यह समझा जा सके।

मेन स्ट्रीमिंग के पक्ष एव विपक्ष मे तर्क

पक्ष मे तर्क--इसके पक्षधर निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत करते हैं

(1) विशेष कक्षाएँ और विशेष स्कूल, विकलांग बच्चो की शिक्षा की समस्या से कतराने का प्रयास मात्र है। क्योंकि वे गलत ढग से निदान कर बालको को मन्दितमना या विकलांग बनाकर उन्हें अलग कर देते हैं। वास्तविकता यह है कि उनका पिछड़ापन सांस्कृतिक या आर्थिक पृष्ठभूमि के कारण जन्म लेता है।

(2) विशिष्ट कक्षाओ या स्कूलो मे बालको को शिक्षित करने से उनके गले मे विकलांगता' या मूढ़ता का पट्टा बाँध दिया जाता है। इस तरह का नामकरण उनकी सहायता करने के बजाय उनकी समस्याओ को और जटिल बना देता है।

(3) विशेष कक्षाएँ और स्कूल, किसी भी तरह अन्य स्कूलो की तुलना मे अच्छे नहीं हैं। वे विकलांगो को दूसरे सामान्य बच्चो के साथ प्रतियोगिता करने की प्रेरणा से उन्हे वंचित करते हैं। विशेष स्कूलो मे पढ़ने वाले विकलांग बालक उन विकलांग बालको की तुलना मे अच्छी उपलब्धि नहीं करते जो सामान्य विद्यालयो मे ही पढते है। ऐसा निष्कर्ष बहुत से शोध अध्ययनो द्वारा प्राप्त हुआ है।

(4) विशेष कक्षाएँ और विशेष स्कूल, अवसर की समानता के सिद्धान्त की अवहेलना करते हैं।

विपक्ष मे तर्क—मेन स्ट्रीमिंग के विरोध मे अग्रलिखित तर्क प्रस्तुत करते हैं

(1) विकलांग बालक सामान्य कक्षाओं में सामान्य बालकों से होड़ नहीं ले सकते। अतः उनके आत्मसम्मान और आत्म विश्वास को धक्का लगता है। विशेष कक्षाओं में उनकी योग्यता के स्तर के अनुसार कार्य दिया जाता है अतः वे अनुत्तीर्ण होने की कुण्ठा से बच जाते हैं। विशेष कक्षाओं की आलोचना का आधार इनमें प्रचलित कमजोर पाठ्यक्रम और अपूर्ण अनुसन्धान है।

(2) निदान और नियोजन में कभी कभी गलती हो सकती है किन्तु इसके लिए विशेष शिक्षा को ही खराब बताना उचित नहीं है।

तर्क और वितर्क की यह शृंखला अभी तक किसी निर्णयात्मक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पायी है। चोफिन (Choffin, 1974) ने इस वाद विवाद का सारांश इन शब्दों में प्रस्तुत किया है, "यद्यपि वर्तमान मेन स्ट्रीमिंग प्रोग्राम ने ऐसा कोई प्रमाण नहीं उपस्थित किया है कि वह पुरानी व्यवस्था (अलग विशेष शिक्षा) से बेहतर है। किन्तु यह भी सही है कि वे निश्चित रूप से पुरानी व्यवस्था की तुलना में खराब भी नहीं है और उसमें आगे कुछ अच्छा करने की सम्भावना है। इतना तो सत्य है कि सभी बालकों को शिक्षा की मुख्य धारा में तरने के लिए उतार देने मात्र से कुछ होने जाने वाला नहीं है। विकलांग एवं विशिष्ट बालकों के लिए हमें सामान्य कक्षा में सही विशेष ध्यान देना ही होगा।"

मेन स्ट्रीमिंग के पीछे जो तार्किक बुनियाद है वह बहुत मजबूत है क्योंकि सभी प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य है—बालकों का सर्वांगीण विकास एवं सामाजिक और सांवेगिक सुसमायोजन। किसी भी प्रकार का बालक क्यों न हो उसे अन्ततः समाज में ही रहना और जीना है। अतः विकलांगों को भी सामान्य विद्यालयों की मुख्य धारा में ही शिक्षित करना उनके विकास के लिए आवश्यक है। इसी कारणवश अधिकांश शिक्षाशास्त्री आजकल इस पक्ष में हैं कि विकलांगों एवं विशिष्ट बालकों को सामान्य स्कूल की मुख्य धारा में ही मिला दिया जाय और इनकी अपंगता या विशिष्टता को ध्यान में रखकर उनकी क्षमता एवं योग्यता के अनुरूप उन्हें थोड़ी देर के लिए अलग करके विशेष कक्षाओं में शिक्षा दी जाय। किन्तु अन्य व्यावहारिक आयामों जिनमें वे सामान्य बालकों के समान ही हैं, की शिक्षा सामान्य कक्षाओं में ही दी जाय। इससे उनके संवेगात्मक, सामाजिक और शैक्षिक विकास में समुचित सन्तुलन बना रहेगा।

अभ्यास के प्रश्न

1. विशिष्ट बालक और विशेष शिक्षा से आपका क्या तात्पर्य है? विशिष्ट बालकों का एक वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुये विशिष्ट शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. विशिष्ट शिक्षा की समस्याओं का उल्लेख करते हुये मेन स्ट्रीमिंग के पक्ष एवं विपक्ष में अपने तर्क प्रस्तुत कीजिए।
3. विशिष्ट बालक कौन हैं? उनकी शिक्षा का नियोजन कैसे किया जा सकता है? (गोरखपुर विश्वविद्यालय 1989)

□□

16
प्रतिभाशाली बालक
[GIFTED CHILDREN]

प्रतिभाशाली बालको को 'विशेष शिक्षा' की आवश्यकता वाले 'विशिष्ट बालकों' की श्रेणी मे इसलिए रखा गया है क्योकि वे उच्च बुद्धि एव अभिक्षमताओ से सम्पन्न है। सामान्य बालको से वे इतने अधिक भिन्न है कि सामान्य कक्षाओ मे वे अनेक समस्याएँ खडी कर देते हैं। यदि घर पर और स्कूलो मे उन्हे समुचित शिक्षा एव प्रशिक्षण मिले तो इसमे सन्देह नही है कि उनमे से, अधिकांश प्रतिभासम्पन्न वैज्ञानिक नेता और प्रकाड विद्वान बनेंगे। इसके विपरीत यदि अभिभावको एव शिक्षकों ने उनकी प्रतिभा की ओर ध्यान नही दिया तो वे अवांछित दिशाओ मे भटक जायेंगे और समाज विरोधी कार्यों मे अपनी प्रतिभा का दुरुपयोग कर परिवार, समाज और देश के लिए समस्या बन जायेंगे।

प्रतिभाशाली बालक अर्थ एव परिभाषा (Gifted Child Meaning and definition)

प्रतिभाशाली बालक को अनेक विद्वानो ने विभिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है। लूसिटो (1963) ने प्रतिभाशाली पद के सम्बन्ध मे पायी जाने वाली भ्रांतियो का उल्लेख करते हुए यह बताया है कि इस पद की परिभाषाओ को पाँच वर्गों म विभाजित किया जा सकता है

(1) कार्योत्तर निरूपित परिभाषाएँ (Ex Post Facto definitions)—इन परिभाषाओ मे उन्हीं व्यक्तियो को प्रतिभाशाली माना गया है जिन्होने किसी व्यवसाय या कार्यक्षेत्र मे उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है।

(2) बुद्धिलब्धि आधारित परिभाषाएँ (I Q Based definitions)—इसके अन्तगत ऐसे व्यक्तियो को प्रतिभाशाली कहा गया है जो बुद्धिलब्धि की दृष्टि से अति उच्च हैं। इस प्रकार बुद्धिलब्धि के वितरण पर प्रतिभाशाली होने के लिए कोई सुनिश्चित विभेदक बिन्दु (cut off point) निर्धारित नही है। कई उद्देश्यो को ध्यान मे रखते हुए मनोवैज्ञानिक 115 से 180 बुद्धिलब्धि की सीमा को प्रतिभाशाली होने का मानदण्ड स्वीकार करते हैं।

(3) सामाजिक परिभाषाएँ (Social definitions)—इसके अंतर्गत जिन व्यक्तियों ने कला, संगीत या अन्य सांस्कृतिक क्षेत्रों में विशिष्ट उपलब्धि अर्जित की है, उनको प्रतिभा सम्पन्न कहा जाता है।

(4) प्रतिशतीय परिभाषाएँ (Percentage definitions)—इन परिभाषाओं के अनुसार किसी समूह में निश्चित प्रतिशत या अनुपात में आने वाले बालकों को प्रतिभाशाली की श्रेणी में रखा जाता है। यह एक सांख्यिकीय सम्प्रत्यय है। किसी भी गुण या विशेषक के सामान्य वितरण वक्र (normal distribution curve) पर +2 प्रामाणिक विचलन (+2 SD) के ऊपर आने वाली जनसंख्या को प्रतिभाशाली कहा जाता है।

(5) सृजनशीलता आधारित परिभाषाएँ (Creativity based definitions)—इस श्रेणी की परिभाषाओं में प्रतिभाशाली उन्हें कहा जाता है जिनमें सृजनशीलता की मात्रा अधिक होती है। गिल्फोर्ड की बुद्धि संरचना के प्रतिमान (structure of intellect model) को दृष्टि में रखते हुए अपसारी उत्पाद (divergent production) की क्षमता को प्रतिभा सम्पन्नता का मानदण्ड माना जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रतिभाशाली बालक की श्रेणी में आने के लिए कई प्रकार के मानदण्ड हैं। नेशनल सोसाइटी फॉर द एजुकेशन' की 57वीं वार्षिक पुस्तिका (1958) में 'प्रतिभाशाली' पद की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है "एक गुणी या प्रतिभाशाली बालक वह है जो व्यवहार के किसी भी उपयोगी क्षेत्र में एक जैसा किन्तु विलक्षण निष्पादन व्यक्त करता है। इस परिप्रेक्ष्य में इस प्रकार की श्रेणी में न केवल बौद्धिक दृष्टि से प्रतिभासम्पन्न बालक ही रखे जायेंगे प्रत्युत वे भी शामिल किए जा सकते हैं जो संगीत, चित्रकला, सृजनात्मक लेखन नाट्य, यान्त्रिक कुशलता तथा सामाजिक नेतृत्व प्रदर्शित करते हैं।" यह परिभाषा बहुत व्यापक है किन्तु इसमें बालकों के सम्भावित विकास की अपेक्षा 'उपलब्धि' पर अधिक बल दिया गया है। इस परिभाषा के अंतर्गत अपनी क्षमता से निम्न स्तर की उपलब्धि करने वाले (under achiever) प्रतिभाशाली बालकों को स्थान नहीं दिया गया है। इस प्रकार 150 की बुद्धि लब्धि रखने वाला बालक जो विद्यालय में वांछित उपलब्धि नहीं प्रदर्शित करता या सामाजिक दृष्टि से मान्य आचरण नहीं करता वंचित या अल्प सुविधा प्राप्त है या विदेशी पृष्ठभूमि वाला है, को प्रतिभाशाली बालक नहीं कहा जा सकता।

उपर्युक्त परिभाषा की न्यूनताओं को दृष्टि में रखते हुए लूसिटो ने भी प्रतिभाशाली बालक को निम्नलिखित शब्दों में अति व्यापक रूप से परिभाषित किया है

प्रतिभाशाली बालक वे हैं जिनकी क्षमता एवं बौद्धिक शक्तियाँ उत्पादनशील एवं मूल्यांकन सम्बन्धी दोनों ही प्रकार की वैचारिक प्रक्रियायें इतने उच्च स्तर की हैं कि ऐसा तर्कसंगत रूप में माना जा सकता है कि पर्याप्त प्राप्ति अनुभवों के मिलने

पर वह भावी संस्कृति के समस्या समाधानकर्त्ता, खोजकर्त्ता, प्रवतक एव मूल्याकन-कर्ता बन सकेंगे।"

अतत हम कह सकते हैं कि प्रतिभासम्पन्नता एक ऐसी सकारात्मक विशिष्टता है जो बालक के व्यक्तित्व म अन्तर्निहित विलक्षण योग्यताओ एव क्षमताओ के कारण उसे शीघ्र सीखने और साथ ही साथ किसी विशिष्ट क्षेत्र म विलक्षण उपलब्धि प्राप्त करने मे सहायक होती है।

प्रतिभाशाली बालकों की विशेषताएँ (Characteristics of gifted children)

टरमन ने 30 वर्षों तक 1528 प्रतिभाशाली व्यक्तियो, जिनकी बुद्धि लब्धि 135 से अधिक थी, का लम्बवत् अध्ययन (longitudinal study) कैलीफोर्निया मे किया। इस अध्ययन के आधार पर उन्होने प्रतिभाशाली बालको की अनेक विशेषताओ का पता लगाया। इसके अतिरिक्त हालिंगवर्थ, विटी, स्किनर तथा हैरीमैन ने भी प्रतिभाशाली बालको की विशेषताओ का अध्ययन किया। इन सभी अध्ययनो के आधार पर हम प्रतिभाशाली बालको की विशेषताओ की निम्नलिखित सूची प्रस्तुत करते हैं

1 शारीरिक विशेषताएँ (Physical Characteristics)—प्रतिभाशाली बालकों मे

(i) शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है। जैसे—चलना, बोलना, ज्ञानेन्द्रियो का विकास आदि।

(ii) सामान्य बालको की तुलना मे भार, ऊँचाई एव शक्ति अधिक होती है।

(iii) उत्तम स्वास्थ्य और शारीरिकी (physique) होती है।

2 मानसिक एव बौद्धिक विशेषताएँ (Mental Characteristics)—प्रतिभाशाली बालको मे

(i) सीखने, समझने स्मरण सश्लेषण एव तर्क करने की विशेष क्षमता होती है।

(ii) अमूर्त तथ्यो को समझने की क्षमता होती है।

(iii) विशाल शब्द भण्डार, वाकपटुता एव स्पष्ट आत्माभिव्यक्ति की क्षमता होती है।

(iv) उत्तम कल्पना शक्ति एव अन्तर्दृष्टि होती है।

(v) उच्च स्तर की सहजबुद्धि (common sense), सामान्य ज्ञान एव उच्च बुद्धिलब्धि पायी जाती है।

(vi) मौलिक चिन्तन एव नवीनता के प्रति उत्सुकता होती है।

(vii) ध्यान केंद्रित करने की व्यापक क्षमता होती है।

(viii) सूक्ष्म एव सटीक निरीक्षण करने की क्षमता होती है।

(ix) एक या एक से अधिक क्षेत्रो मे विशिष्ट योग्यता होती है।

(3) शैक्षिक विशेषताएँ (Educational Characteristics)—प्रतिभाशाली बालक—

(i) विद्यालय म नियमित रूप से उपस्थित होते हैं।

(ii) पाठ की पूव तयारी और गृह काय सदैव करते हैं।

(iii) निर्धारित पाठ्य पुस्तको के अतिरिक्त सहायक पुस्तका, समाचार पत्र पत्रिकाओ को पढने म रुचि रखते हैं।

(iv) अध्ययन म अपनी धुन के पक्के और कक्षा मे सर्वाधिक अक प्राप्त करने वाले होते हैं।

(v) अपेक्षाकृत कम समय और परिश्रम म अधिक अक प्राप्त करत हैं।

(vi) अन्य प्रतिभाशाली बालकों से प्रतिस्पर्धा रखते हैं।

4 सवेगात्मक विशेषताएँ (Emotional Characteristics)—प्रतिभाशाली बालक—

(i) सावेगिक स्थिरता और समायोजन से युक्त होते हैं।

(ii) सामान्यतया प्रसन्नचित्त रहते हैं एव कठिनाइयो व समस्याओ को स्वतन्त्र रूप से हल करना चाहते हैं।

(iii) नवीन व्यक्तियो, स्थानो और परिस्थितियो से शीघ्र ही सुसमायोजित हो जाते हैं।

(iv) का चरित्र और व्यक्तित्व उच्च स्तर का होता है।

(v) हास परिहास म रुचि लेने वाला एव विनोदप्रिय होता है।

(vi) आत्म विश्वासी एव जोखिम उठाने वाला होता है।

(vii) विभिन्न एव विशद रुचियो वाला होता है।

5 सामाजिक विशेषताएँ (Social Characteristics)—प्रतिभाशाली बालको मे निम्न सामाजिक विशेषताएँ दृष्टिगत होती हैं—

(i) उच्च स्तर का सामाजिक समायोजन।

(ii) ईमानदारी उत्तरदायित्व एव भरोसे म दी।

(iii) नेतृत्व की विशेष योग्यता।

(iv) अनुशासन पालन एव दूसरे का सम्मान करना।

(v) विनम्र एव आज्ञाकारी।

(vi) लोकप्रिय व्यक्तित्व।

(vii) निष्कपटता एव सामाजिक दायित्व लेन मे तत्परता।

6 नकारात्मक विशेषताएँ (Negative Characteristics)—प्रतिभाशाली बालकों मे सामाजिक दृष्टि से कुछ नकारात्मक विशेषताएँ भी देखने को मिलती हैं। इन नकारात्मक विशेषताओ का विकास सम्भवत उनकी प्रतिभा का समुचित पोषण एव उपयोग न करने के कारण होता है। कुछ नकारात्मक विशेषताएँ अग्र लिखित हैं—

(i) कभी कभी समूह से पृथक होकर एकाकी रहना ।

(ii) ईर्ष्यालु एव अहकार युक्त व्यवहार करना ।

(iii) कभी कभी आवश्यकता से अधिक बोलना तथा हठ करना ।

(iv) पाठ्यक्रम को सरल समझने के कारण पढने लिखने मे आलस्य प्रदर्शित करना ।

(v) रुचिकर विषयो मे कक्षा काय की उपेक्षा और अध्यापक के आदेशो की अवहेलना करना ।

प्रतिभाशाली बालक की पहचान (Identification of gifted child)

प्रारम्भिक अवस्था मे ही प्रतिभाशाली बच्चो की पहचान करना अभिभावकों, शिक्षकों, मनोवज्ञानिको और सामाजिक कायकर्त्ताओ का सम्मिलित दायित्व है जितनी जल्दी उनकी पहचान होगी, उतनी ही जल्दी उनके लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था कर उनकी प्रतिभा के विकास मे हम सहायक हो सकते हैं ।

प्रतिभावान बालको को पहचानने की अनेक विधियाँ हैं । उनमे से कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं—

(1) **बुद्धि परीक्षण**—बुद्धि परीक्षण द्वारा प्रतिभाशाली बालकों का प्रारम्भिक चुनाव सम्भव है ।

(2) मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणो का प्रयोग (use of standardized achievement test)

(3) स्कूल के अक पत्र और सचयी प्रपत्रो (cumulative records) से भी बालकों की प्रतिभासम्पन्नता का पता लगाने म सहायता मिल सकती है ।

(4) कक्षा मे और कक्षा से बाहर छात्रो का निरीक्षण करने से छात्रों की प्रतिभाओ के विषय मे शिक्षक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ।

प्रतिभाशाली बालको की पहचान करने और उन्हें चुनने के लिए किसी भी एक विधि का सहारा न लेकर ऊपर बताई गयी सभी विधियों का प्रयोग कर उनसे प्राप्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष निकालना चाहिए ।

प्रतिभाशाली बालको की पहचान के लिए औपचारिक विधियो म मानकीकृत बुद्धि' एव उपलब्धि' परीक्षणो का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है । भारतीय सन्दर्भ मे राष्ट्रीय स्तर पर ये परीक्षाएँ एन० सी० ई० आर० टी० या राज्य स्तर पर मनोविज्ञान केन्द्रो तथा एन० सी० ई० आर० टी० जसी सस्थाओ द्वारा ली जाती हैं । विज्ञान जसे विषयो मे प्रतिभाशाली बालको की खोज हेतु विशेष प्रकार की परीक्षाओ की व्यवस्था इन सस्थाओ की है । इस सम्बन्ध म यह कहना सामयिक होगा कि औपचारिक एव अ-औपचारिक दोनो विधियों की वैधता, विश्वसनीयता एव उपयुक्तता की ओर विशेष रूप से सावधानी बरतनी चाहिए ।

प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा (Edu ation of Gifted Children)

विपक्ष मे तर्क—प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के बारे मे अनेक विचार हैं। कुछ शिक्षाविद उनके लिए किसी भी प्रकार की विशेष शिक्षा व्यवस्था के विरोधी हैं। उनका तर्क यह है कि यदि वे सचमुच प्रतिभाशाली हैं तो स्वय ही किसी भी प्रकार की शिक्षा व्यवस्था से लाभ उठा सकते हैं। कुछ चुने हुए प्रतिभाशाली बच्चो को अलग और विशेष शिक्षा देना समाजवाद और प्रजातन्त्र के सिद्धान्तो के खिलाफ है। ऐसी व्यवस्था सामान्य बच्चो मे उनके प्रति ईर्ष्या और द्वेष की भावना भर देगी। प्रतिभाशाली बालको की अलग शिक्षा व्यवस्था बहुत खर्चीली होगी और खर्च का बोझ आम जनता पर पडेगा।

प्रतिभाशाली बालको की विशेष शिक्षा व्यवस्था के विरोध म कुछ शिक्षको का तर्क यह है कि प्रतिभाशाली बालको को उनकी कक्षाओं से निकाल कर अलग कर दिया तो पढाने मे कौन सा आनन्द आयेगा ? इन बच्चो को अलग करने से इनमे मिथ्याभिमान और आडम्बर आने की सम्भावना बढ जायेगी।

पक्ष मे तर्क—इन तर्कों का विरोध करते हुए बहुत से शिक्षाविद् प्रतिभाशाली बालको के लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था के पक्ष मे इस प्रकार के तर्क प्रस्तुत करते हैं—

प्रजातन्त्र का अर्थ है सबको समान अवसर प्रदान करना। अत प्रतिभाशाली बालको को उनके मानसिक स्तर के अनुरूप विशेष शिक्षा की व्यवस्था होनी ही चाहिए। यदि ऐसा न हुआ तो उनम आलस्य, आरामतलबी एव प्रमाद के अवगुण विकसित होने लगेंगे। उनके लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था करने से ही उनका विकास होगा, उन्हे कठिन परिश्रम करने की प्रेरणा मिलेगी और कुसमायोजन स उनका बचाव होगा। आज ससार मे विकास और समृद्धि के लिए होड लगी हुई है। कोई भी देश इस होड मे तभी आगे बढ सकता है जब वह अपने प्रतिभाशाली बालको को शैशवावस्था म ही पहचान कर उनकी प्रतिभा का समुचित विकास करे। अपना देश अनेक समस्याओ से ग्रसित है। इन समस्याओ का समाधान घिसी पिटी परम्परा गत विधियो ■ सम्भव नहीं है। इसके लिए मौलिक चिन्तन, नवीन आविष्कार एव नवाचारो की आवश्यकता है। आवश्यकताओ की पूर्ति प्रतिभा की खोज और प्रतिभाशाली बालको की समुचित शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है।

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के निर्देशक प्रनियम (Guiding Principles of Education for Gifted)

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा की योजना बनाना एव उसे सचालित करना एक कठिन कार्य है। इनकी शिक्षा के लिए प्रचलित एव सवमान्य निर्देशक प्रनियम निम्नलिखित हैं

(1) अवसर की समानता का प्रनियम (Principle of Equality of Oppor tunity)—प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा व्यवस्था मे अवसरों की समानता का

प्रनियम सर्वोच्च है। सामान्य बालकों के समान ही उन्हे भी अपनी प्रतिभा के अधिकतम विकास के लिए स्वतन्त्रता एव अवसर मिलने चाहिए। अवसर की समानता का तात्पय यह भी है कि प्रतिभाशाली बालको को अपने उच्च बौद्धिक-स्तर के अनुरूप शिक्षा के अवसर दिये जाएँ।

(2) मिथ्याभिमान एव आडम्बर से बचने का प्रनियम (Principle of Avoidance of conciet and snobbery)—प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि उनम मिथ्याभिमान एव आडम्बर आदि की भावना विकसित न होने पाये।

(3) सवधित पाठ्यचर्या का प्रनियम (Principle of enriched curricules)—प्रतिभाशाली बालको को शिक्षा मे वास्तविक सवधित पाठ्यचर्या का प्रावधान होना चाहिए। प्रतिभाशाली बालक कक्षाओ म सामान्य बालको की तुलना म पढाई जाने वाली विषय-वस्तु को शीघ्र समझ लेते हैं। अत बचे हुए समय का सर्वोत्तम उपयोग होगा उन्हें सर्वधित पाठ्यचर्या म लगाना ताकि वे अपने समय का सदुपयोग करते हुए अपनी प्रतिभा के अनुरूप अपना अधिकतम विकास कर सके।

(4) बुरी सामाजिक आदतों की रोकथाम का प्रनियम (Principle of Prevention of bad social habits)—प्रतिभाशाली बालक सामान्य बालक की तुलना मे जल्दी सीखते और समझते हैं। उनके काय का स्तर भी सामान्य से काफी ऊँचा होता है। अत उनके पास बचे हुए समय और शक्ति का समुचित उपयोग नहीं किया जायेगा तो उनमे बुरी सामाजिक आदतो के पनपने की आशका बढ जाती है। वे जल्दबाजी और लापरवाही से काम करने लगते हैं। उनमे खराब और सामाजिक अपव्यय की आदत पडने लगती है। प्रतिभाशाली बच्चो की शिक्षा व्यवस्था एसी होनी चाहिए जो उन्हे बुरी आदतो और विद्रोही भावना आदि से बचाये।

(5) सर्वांगीण बाल विकास का प्रनियम (Principle of all round development)—प्रतिभाशाली बालक को कभी भी एकपक्षीय विकास करने की अनुमति नही देनी चाहिए। ऐसा न हो कि वे 'किताबी कीड' या न ह 'बृहस्पति' (typical scholar) बन जाये और उन्ह दीन दुनिया की कोई खबर हो न रहे। प्रतिभाशाली बालको के लिए एक स्वस्थ और सर्वांगीण विकास करने वाली शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है। जिसके फलस्वरूप प्रतिभाशाली बालको का शक्षिक, सामाजिक, शारीरिक एव नतिक विकास हो सके।

(6) विशिष्ट प्रतिभाओं के विकास का प्रनियम (Principle of developing special abilities)—कुछ प्रतिभाशाली बच्चो मे अद्वितीय क्षमताएँ अथवा प्रतिभाएँ होती हैं अर्थात् वे अन्य प्रतिभाशाली बालको की तुलना मे भी अधिक प्रतिभा सम्पन्न होते हैं। अत उनके लिए उनकी प्रतिभा के स्तर तक उनको विकसित करने के लिए विशेष रूप से व्यक्तिगत ध्यान देने की आवश्यकता पडती है।

विलक्षण प्रतिभा के धनी बालकों की शिक्षा और विकास समाज, राष्ट्र और विश्व के लिए नितान्त आवश्यक है।

(7) बाल अध्ययन पर आधारित शिक्षा का प्रनियम (Principle of education based on child study)—प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा प्रत्येक बालक के गहन अध्ययन और विश्लेषण पर आधारित होनी चाहिए। उनकी योग्यताओं, क्षमताओं, अभिरुचियों और व्यक्तित्व की पूरी जानकारी करने के पश्चात उसी के अनुरूप उनकी शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए।

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के उपागम (Approaches of Education of gifted children)

प्रतिभाशाली बालकों को शिक्षा देने के लिए प्राय निम्नलिखित तीन उपागम उपयोग में लाये जाते हैं

(1) त्वरण उपागम (Acceleration approach)—त्वरण उपागम को प्रतिभाशाली बालको की शिक्षा में कई ढंग से प्रयोग में लाया गया है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित विधियाँ प्रयोग में लायी जा रही हैं

(i) प्रतिभाशाली बालकों को उनकी वास्तविक आयु की अपेक्षा मानसिक आयु के आधार पर प्राथमिक कक्षाओं में प्रवेश देने की व्यवस्था।

(ii) द्रुत प्रोन्नति (fast promotion) के द्वारा एक ही वर्ष में प्रतिभाशाली बालकों को एक से अधिक कक्षाओं का पाठ्यक्रम समाप्त कर शीघ्र प्रोन्नति देने की व्यवस्था। उदाहरण के लिए, दूसरी कक्षा से चौथी में या चौथी से छठी कक्षा में प्रोन्नति कर देना।

(iii) कक्षा स्तर का अन्तर्विद्धिकरण (telescoping grades)—इसके अन्तर्गत ऐसे कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं जिनके माध्यम से प्रतिभाशाली बालक थोड़े समय में ही अधिक सामग्री का अधिगम कर लेने में सफल हो जाता है। उदाहरण के लिए इसके अन्तर्गत एक प्रतिभाशाली बालक प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम को पाँच वर्ष के बजाए तीन वर्षों में ही पूरा कर लेता है।

(iv) माध्यमिक विद्यालयों तथा कालेजों में शीघ्र प्रवेश की व्यवस्था करना ताकि पिछली कक्षाओं में द्रुत प्रोन्नत या अन्तर्विद्ध (telescoping) किये गये प्रतिभाशाली बालकों को सम्यक शिक्षा प्रदान की जा सके।

(v) मुक्त शिक्षा की प्रणालियों जैसे पत्राचार पाठ्यक्रम' एवं 'मुक्त विश्वविद्यालय आदि के द्वारा अत्यन्त लचीली शैक्षिक व्यवस्थाओं को उपलब्ध कराना।

त्वरण उपागम में प्रयुक्त विधियों की आलोचना कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इस बात को लेकर की है कि इनसे बालक का संवेगिक तथा सामाजिक विकास बाधित होता है। फलस्वरूप उन्हें समायोजन सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। आलोचकों की इन आशंकाओं की पुष्टि शोध पर आधारित नहीं है। अनेक शोधकर्त्ताओं ने इनकी आशंकाओं को निर्मूल सिद्ध किया है।

(2) संवर्धन उपागम (Enrichment Approach)—संवर्धन एक ऐसा उपागम है जिसमें प्रतिभाशाली बालक की विशिष्ट योग्यताओं, क्षमताओं एवं गुणों को विकसित करने का अवसर प्रदान किया जाता है जिसमें विस्तृत पाठ्यक्रम, अतिरिक्त क्रियाकलापों, प्रयोगशाला कार्य आदि की व्यवस्था की जाती है। प्रतिभाशाली बालकों के लिए पाठ्यक्रम को पुनर्गठित किया जाता है और इसके अन्तर्गत दिये जाने वाले गृहकार्य एवं कक्षाकार्य उच्च स्तर के होते हैं।

संवर्धन की कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं

(i) सामान्य कक्षाओं में प्रतिभाशाली बालकों को अतिरिक्त अध्ययन, प्रदत्त कार्यों तथा कक्षा के बाहर की क्रियाओं में भाग लेने के लिए शिक्षक द्वारा प्रोत्साहित करना।

(ii) कक्षा में प्रतिभाशाली बालकों का समूह बनाना जिससे उनकी रुचियों एवं आवश्यकतानुसार स्वतन्त्र अन्वेषण एवं चिन्तन का अवसर मिले। इससे अपेक्षित समस्याओं का समाधान कर सकेंगे।

(iii) विद्यालयों में अध्ययन विषयों के अतिरिक्त कुछ अन्य विषय जैसे, टाइपिंग, विदेशी भाषा सीखने आदि की व्यवस्था करना जिससे बालक अपनी रुचि के अनुसार उनमें अपने को अच्छी तरह लगा सके।

(iv) विद्यालयों में विशिष्ट अध्यापकों की नियुक्ति करना ताकि वे प्रतिभाशाली बालकों की पहचान कर उनके अनुरूप शिक्षण कर सकें, परामर्श दे सकें और उनकी प्रतिभा के विकास में सब तरह से सहायक बन सकें।

(v) शिक्षकों को इस बात के लिए प्रेरित करना कि वे अपनी कक्षाओं के प्रतिभाशाली बालकों को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने व पहल करने की आजादी प्रदान करें जिससे उनकी उपलब्धि का स्तर ऊँचा हो सके।

(3) विशेष कक्षाएँ एवं विद्यालय (Special classes and school)—प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के लिए विशेष कक्षाओं एवं विद्यालयों की व्यवस्था इस उपागम के अन्तर्गत की जाती है। इसके अन्तर्गत मुख्यतः तीन प्रकार की निम्नलिखित व्यवस्थाएँ प्रचलित हैं—

(i) पूर्ण पृथक्कीकरण (Total seggregation)—इस व्यवस्था में प्रतिभाशाली बालकों को चुनकर पूर्णतया अलग शिक्षा देने की व्यवस्था की जाती है।

(ii) अपृथक्कीकरण (No seggregation)—इस व्यवस्था में प्रतिभाशाली बालकों के लिए अलग से कोई व्यवस्था नहीं की जाती है और उन्हें सामान्य स्कूलों की सामान्य कक्षाओं में ही पढ़ाया जाता है।

(iii) आंशिक पृथक्कीकरण (Partial Seggregation)—इस व्यवस्था में प्रतिभाशाली बालकों को शिक्षित करने के लिए उन्हें चुनकर एकदम अलग अलग अन्यत्र पढ़ाने की व्यवस्था नहीं की जाती किन्तु इसमें बालकों की प्रतिभा को पहचान कर प्रतिभा के विषय या क्षेत्र में पढ़ाने के लिए अलग बैठाकर पढ़ाने की व्यवस्था की

जाती है। किन्तु अन्य विषयों या क्षेत्रों में उन्हें सामान्य बालकों या छात्रों के साथ रखकर सामान्य कक्षाओं में ही पढ़ाया जाता है।

आजकल शिक्षा जगत में हुये अनुसंधानों की कसौटी पर यह तीसरी व्यवस्था अधिक खरी उतरती है। अतः इस व्यवस्था का प्रचलन आजकल अधिक है।

प्रतिभाशाली बालकों के लिए शिक्षण उपागम (Teaching approaches for gifted children)

प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के लिए शिक्षण के नवीन उपागमों का प्रयोग करना अधिक लाभप्रद होता है। बर्नार्ड ने इन विशिष्ट शिक्षण उपागमों के विषय में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं

(1) प्रतिभाशाली बालकों पर 'निन्दा' एवं 'डाँट फटकार' का प्रभाव मन्द बुद्धि बालकों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक श्रेयस्कर पाया गया है। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उन्हें निन्दा या डाँट फटकार के जरिये शिक्षण देने की संस्तुति की जा रही है। आवश्यकता इस बात की है कि उनके कार्यों को समालोचनात्मक प्रतिपुष्टि प्रदान की जाय।

(2) अधिगम को प्रभावकारी और सुगम बनाने हेतु शाब्दिक वर्णन तथा सामान्यीकरण का उपयोग करना अधिक सहायक होता है।

(3) विषय वस्तु के प्रस्तुतीकरण के समय अनावश्यक आवृत्ति और थकी थकायी अधिगम सामग्री नहीं प्रस्तुत करनी चाहिए। ऐसा करने से प्रतिभाशाली बालकों में अरुचि एवं निष्क्रियता उत्पन्न होती है।

(4) प्रतिभाशाली बालकों के व्यक्तित्व एवं चारित्रिक विशेषकों को ध्यान में रखते हुये अद्भुत एवं चुनौती से भरे हुए विषयों का प्रतिपादन करना चाहिए।

(5) पुस्तकों, प्रयोगशाला उपकरणों एवं प्रदर्शनात्मक सामग्रियों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराना चाहिए ताकि प्रतिभाशाली बालक अपनी रुचि एवं उद्देश्य के अनुसार उनका चयन एवं उपयोग कर सकें।

(6) प्रतिभाशाली बालकों के समूह में वैयक्तिक विभिन्नता सामान्य बालकों के समूह की अपेक्षा अधिक व्यापक होती है। अतः प्रतिभाशाली बालकों की विविध रुचियों, आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की पूर्ति हेतु सर्वोत्तम कोटि की सम्मुन्नत अधिगम सामग्रियों, दत्त कार्यों तथा योजनाओं की व्यवस्था करनी चाहिए।

उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निम्नलिखित शिक्षण विधियों का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त होता है

(i) नाटकीयकरण (dramatization)

(ii) छात्र शोध (students research)

(iii) परियोजना विधि (project method)

(iv) देशाटन एवं यात्रा (excursion)

(v) प्रयोगात्मक विधि एवं उन्नत उपकरण (experimental method and improved equipment)

(vi) सर्वोत्तम शिक्षकों द्वारा शिक्षण (teaching by best teachers)

प्रतिभाशाली बालकों व शिक्षकों के गुण (Characteristics of teachers for Gifted)

प्रतिभाशाली बालकों को पढ़ाने के लिए शिक्षकों की नियुक्ति बड़ी सावधानी से करनी चाहिए। चुने हुए शिक्षकों को विशेष शिक्षा की विधियों एवं तकनीकों में प्रशिक्षित होना चाहिए अथवा चुनाव के पश्चात् उन्हें प्रशिक्षित करने की व्यवस्था करनी चाहिए। सर्वोत्तम शिक्षकों के द्वारा ही प्रतिभाशाली बालकों की प्रतिभा पनप सकती है।

प्रतिभाशाली बालकों के शिक्षकों की विशेषताओं की निम्नलिखित सूची अमेरिकन एजूकेशनल पालिसी कमीशन' ने प्रस्तुत की है

(अ) उच्चकोटि की बुद्धि,

(आ) समृद्ध ज्ञान एवं सूचना,

(इ) बहुमुखी रुचियाँ,

(ई) खोजी प्रवृत्ति,

(उ) उत्साहित एवं प्रेरित करने की क्षमता,

(ऊ) विनम्रता,

(ए) व्यक्तिगत एवं सामाजिक दायित्व बोध,

(ऐ) ईर्ष्या मुक्त,

(ओ) आलोचना के प्रति अधिक संवेदनशील न होना।

हम जानते हैं कि सभी गुण सम्पन्न शिक्षकों को प्राप्त करना कितना कठिन है किन्तु इन गुणों में से अधिकांश से युक्त शिक्षकों का मिलना असम्भव भी नहीं है।

अभ्यास के प्रश्न

1 प्रतिभाशाली बालक की विभिन्न परिभाषाओं का उल्लेख करते हुये यह बताइये कि आप किस परिभाषा को सर्वोत्तम मानते हैं ? और क्यों ?

2 मेधावी बालकों की शिक्षा के लिए अभिभावकों को क्या करना चाहिए ?

(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

3 प्रतिभाशाली बालकों की क्या विशेषताएँ होती हैं ? उन्हें आप किस प्रकार पहचान सकेंगे ?

4 प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के निर्देशक प्रनियमों की विवेचना कीजिए। प्रतिभाशाली बालकों की शिक्षा के विभिन्न उपागमों एवं शिक्षण विधियों की विवेचना कीजिए।

□□

17

मंदितमना बालक

[MENTALLY RETARDED CHILD]

मानसिक मंदिता का सम्बन्ध मानसिक अपरिपक्वता, अक्षमता या न्यूनता से है। 'मंदितमना बालक' (mentally retarded child) की संज्ञा उन सभी बालकों को दी जाती है जो अपनी मानसिक अक्षमता या न्यूनता के कारण घर, समाज तथा विद्यालय की परिस्थितियों मे अपने को समायोजित करने मे असमर्थ होते हैं।

इग्लैण्ड के 1921 के 'मेन्टल डिफिसिएन्सी ऐक्ट' (Mental Deficiency Act of 1921) के अनुसार "मानसिक मंदिता 18 वर्ष की आयु के पूर्व की मानसिक विकास की अपूर्ण या बाधित स्थिति है जो जन्मजात कारणों से या बीमारी अथवा दुर्घटना जनित होती है।"

ट्रेडगोल्ड (1937) के शब्दो मे 'मानसिक न्यूनता, अपूर्ण मानसिक विकास की ऐसी स्थिति है जिसमे व्यक्ति अपने समवयस्क व्यक्तियों के साथ सामान्य वातावरण मे अनुकूलन स्थापित करने मे अक्षम होता है तथा अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु देख रेख, नियन्त्रण या बाहरी सहायता पर निर्भर करता है। ट्रेडगोल्ड ने आगे चलकर 1952 मे मानसिक मंदिता को इन शब्दो मे पुन परिभाषित किया, मानसिक न्यूनता या बुद्धिदौर्बल्य वह स्थिति है जिसमे मन पूर्ण विकास या सामान्य विकास तक पहुँचने मे असफल रहता है।'

डॉल (1941) ने मन्दबुद्धिता के सम्प्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए कोई परिभाषा न देते हुए मानसिक मंदिता की निम्नलिखित छ विशेषताओ का उल्लेख किया है। वे हैं :

(i) सामाजिक अक्षमता
(ii) मानसिक न्यूनता
(iii) विकासात्मक अवरोध
(iv) परिपक्वता के स्तर तक न पहुँच पाना
(v) शारीरिक सरंचनाजनित
(vi) निश्चित रूप से असाध्य या लाइलाज।

इस प्रकार की अनेक परिभाषाएँ समय समय पर विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी हैं किन्तु उनमे से कोई भी मानसिक मंदिता के सम्प्रत्यय को पूर्ण रूप से स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त नही है। विभिन्न लेखको द्वारा इंगित विशेषताएँ भी एक दूसरे से असम्बद्ध हैं। अत अमेरिकन एसोसियेशन ऑन मेन्टल डिफिसियेन्सी (American Association on Mental Deficiency) ने रिक हेबर की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया। इस समिति को मानसिक मंदिता के सम्प्रत्यय की समुचित परिभाषा विकसित करने का कार्य सौंपा गया। हेबर (1977) के शब्दो मे, "मानसिक मन्दिता स्पष्ट रूप से औसत से निम्नस्तर की सामान्य क्रियात्मकता है जो विकासात्मक अवस्था मे निम्नस्तरीय व्यवहार अनुकूलन के रूप मे प्रकट होती है।"[1]

इस परिभाषा मे निम्नलिखित तीन परस्पर सम्बद्ध विशेषतायें हैं

(i) औसत से न्यून मानसिक या बौद्धिक क्रियात्मकता

(ii) मूलत विकासात्मक

(iii) क्षतिग्रस्त अनुकूलित व्यवहार।

उपर्युक्त पहली विशेषता की जाँच के लिए किसी एक मानकीकृत बुद्धि परीक्षण का प्रयोग कर बालकों की बुद्धिलब्धि (I Q) ज्ञात की जाती है। यदि बालक सामान्य से,—2 प्रमाणिक विचलन (—2SD) कम है तो वह बालक औसत से कम बुद्धि वाला है। स्टैनफोर्ड बिने और वेश्लर परीक्षण (Stanford Binet and Wechsler Tests) के लिए यह बुद्धि लब्धि बिन्दु क्रमश 68 और 72 है।

निम्नस्तर का बुद्धि लब्धि जीवन के प्रारम्भिक 18 वर्षों म प्रकट होती है।

इसके साथ मन्दितमना की श्रेणी मे रखे जाने के लिए यह भी जरूरी है कि बालक का व्यावहारिक अनुकूलन भी बाधित या क्षतिग्रस्त हो। ग्रोसमन (1977) ने अनुकूलित व्यवहार की परिभाषा इन शब्दो मे दी है

"एक व्यक्ति किसी आयु वर्ग एव सास्कृतिक समूह के लिए अपेक्षित स्वायत्तता और सामाजिक उत्तरदायित्व के मानदण्डो को कितनी प्रभावकारिता या अश तक पूरी करता है।"[2]

अनुकूलित व्यवहार का अर्थ है सामाजिक समायोजन जो अपनी सहायता स्वय करने के साधारण कौशल से युवावस्था के व्यक्तिगत सामाजिक समायोजन तक कुछ भी हो सकती है। उदाहरण के लिए, शैशवावस्था मे यह परिपक्व होने के कौशल,

---

1 'Mental retardation is significantly sub average general functioning existing concurrently with deficits in adaptive behaviour and manifested during development period' —Haber

2 "The effectiveness or degree with which an individual needs the standard of personal independence and social responsibility expected for age and cultural group —Grossman

स्कूली आयु वग मे सीखने की विशेषताएँ और युवावस्था मे व्यक्तिगत सामाजिक समायोजन हो सकती है। व्यवहार अनुकूलन के स्तर को भी विभिन्न परीक्षणों जैसे— ए० ए० एस० डी० द्वारा निर्मित अनुकूलित व्यवहार मापनी, लैम्बट एव उनके सहयोगी (1975), विनलैंड सामाजिक परिपक्वता मापनी (डॉल 1965), बालको के लिए अनुकूलित व्यवहार सूची (भरकर एव लिविस, 1977) द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।

इस परिभाषा के अनुसार मदितमना की श्रेणी मे वे ही रखे जायेंगे जिनकी बुद्धिलब्धि और व्यवहार अनुकूलन दोनो ही क्षतिग्रस्त या निम्नस्तर के हो। उदाहरण के लिए, इस परिभाषा के अनुसार एक बालक जिसकी बुद्धिलब्धि 60 है और हमारे पास उसके व्यवहार अनुकूलन के क्षतिग्रस्त या निम्न स्तर का होने का प्रमाण नहीं है तो उसे हम मदितमना की श्रेणी मे नहीं रख सकते। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह बड़ा स्पष्ट और न्याय सगत लगता है। किन्तु कई लोगो ने इस परिभाषा मे सन्देह व्यक्त किया है क्योंकि उनके विचार से व्यवहार अनुकूलन के मापन हेतु कोई विश्वसनीय परीक्षण नही है। मैकिमलन (1977) ने भविष्यवाणी की है कि अधिकाश शिक्षाशास्त्री बुद्धिलब्धि को ही मदितमना होने की कसौटी मानते रहेंगे।

मदितमना बालको के अध्ययन के प्रवतक एक फ्रासीसी चिकित्सक डॉ० इटाड (Itard) थे जिन्होने एविरान के जगली बालक का अध्ययन किया। सेग्विन ने आगे चलकर मदबुद्धि बालको के समुचित शैक्षिक अनुस्थापन (placement) की ओर ध्यान केन्द्रित किया।

मन्दितमना बालको की शिक्षा के क्षेत्र मे गत वर्षों मे अत्यधिक प्रगति हुई है। अमेरिका और ब्रिटेन मे इनकी शिक्षा के राष्ट्रीय सघ उल्लेखनीय काय कर रहे हैं। अपने देश मे भी मन्दितमना बालको की शिक्षा और पुनर्वास के कायक्रमो की योजनाएँ बनायी गयी हैं। 1984 मे हैदराबाद मे 'राष्ट्रीय मानसिक विकलाग सस्थान' की स्थापना की गयी है। नई शिक्षा नीति के तहत एन० सी० ई० आर० टी० एव जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय (दिल्ली) इस दिशा मे कायरत हैं।

मानसिक मदिता के कारण (Causes of mental deficiency)

मानसिक मदिता के अनेक जटिल कारण हैं। मानसिक न्यूनता के विभिन्न स्तरो या प्रकारों के लिए इनम से कोई एक या अनेक कारण बन सकते हैं। अध्ययन की सुविधा हेतु इन कारणो को हम तीन वर्गों मे विभक्त करते हैं

(1) जन्म से पूव प्रभावी कारक (Prenatal factors)

(2) जन्म के समय प्रभावी कारक (Perinatal factors)

(3) जन्म के पश्चात प्रभावी कारक (Post natal factors)

(1) जन्म से पूर्व प्रभावी कारक—गर्भावस्था मे अनेक ऐसे कारक हैं जो गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क के विकास को प्रभावित करते हैं। माता पिता मे उपस्थित आनुवशिक दोष एव गर्भकाल में होने वाली रासायनिक गड़बड़ियाँ इनमे मुख्य हैं जैसे—

(i) विषाक्त पदार्थ (toxic agents)—ये विषाक्त पदार्थ गर्भवती स्त्री में संक्रमित होते हैं और गर्भस्थ शिशु में दोष उत्पन्न करते हैं।

(ii) औषधियाँ (drugs)—गर्भावस्था में नशीले पदार्थ एल एस डी, हिरोइन आदि का प्रयोग।

(iii) विकिरण (radiation)—गर्भावस्था में माता का अत्यधिक विकिरण जैसे एक्सरे आदि सहन करना।

(iv) शारीरिक एवं मानसिक बीमारियाँ (physical and mental disease)—गर्भस्थ महिला का मधुमेह, रक्तचाप या अत्यधिक मानसिक तनाव से ग्रसित होना।

(v) आनुवंशिकी एवं चयापचय (genetics and metabolism)—माता या पिता के गुणसूत्रों में दोषपूर्ण जीन्स की उपस्थिति। फेनिलकीटो यूरिया एक ऐसी चयापचय विकृति है जो पीढ़ी दर पीढ़ी चलती है तथा गर्भस्थ शिशु को मंदितमना बना सकती है।

(2) जन्म के समय प्रभावी कारक—पूर्ण रूप से स्वस्थ गर्भस्थ शिशु जन्म के समय ऐसी परिस्थितियों से गुजरता है कि उसके मानसिक मंदिता होने की सम्भावना बढ़ जाती है। जन्म के समय प्रभावी कारकों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है

(i) अपरिपक्व जन्म (premature birth)—अनेक अध्ययनों के आधार पर यह सिद्ध हो चुका है कि सामान्य रूप से जन्मे बालकों की तुलना में अपरिपक्व जन्म वाले बालक (9 महीने के गर्भकाल से पूर्व जन्मे) अधिक संख्या में मानसिक मन्दता से पीड़ित होते हैं।

(ii) प्रसवावस्था की परेशानियाँ (complications during delivery)—जटिल प्रसव काल, शल्य कार्य द्वारा प्रसव (caesarean operation) जन्म के समय शिशु को पर्याप्त मात्रा में आक्सीजन न मिलना आदि भी मानसिक मंदिता के कारण बन सकते हैं।

(3) जन्म के पश्चात प्रभावी कारक—जन्म के पश्चात बालकों के विकास काल में मानसिक क्षति पहुँचाने वाले निम्न कारक हैं

(i) अतिघाती रोग (acute illness)—कुछ तीव्र बीमारियाँ जैसे खसरा, चेचक, पीलिया, कुकुरखाँसी, मोतीझरा आदि जन्म के पश्चात् बालक के मस्तिष्क के विकास को कुप्रभावित करती हैं।

(ii) लैड विष प्रयोग (lead poisoning)—लकड़ी दीवारों के पेंटस, पेन्सिल में लगे लैड को चाटने या खा लेने से मस्तिष्कीय विकास अवरुद्ध होने लगता है।

(iii) दुघटना द्वारा मस्तिष्क क्षति (accidental brain injury)—अचानक दुघटनावश मस्तिष्क में चोट लगना मन्दबुद्धिता का कारण बन सकता है।

(iv) वंचित परिवेश (deprived environment)—मानसिक मन्दता के महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक कारण सामाजिक, आर्थिक एव सांस्कृतिक वचन है ।

मन्दितमना बालकों का वर्गीकरण (Classification of Mentally Retarded Children)

मानसिक मंदिता का वर्गीकरण शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, अधिगम ग्राह्यता दर आदि के आधार पर किया जा सकता है। किन्तु शिक्षा जगत मे सामान्यत बुद्धिलब्धि के आधार पर किया गया यह वर्गीकरण अधिक प्रचलित है ।

मन्दिता का स्तर (Level of MR)	वेश्लर बुद्धि लब्धि (Wechsler IQ)	स्टनफोर्ड बिने बुद्धिलब्धि (Stanford Binet IQ)
न्यून मंदित (Mild)	55–69	52–67
सामान्य मंदित (Moderate)	40–54	36–51
अत्यधिक मंदित (Severe)	25–39	20–35
दुर्बोध मंदित (Profound)	25 से नीचे	20 से नीचे

शैक्षिक दृष्टि से मन्दितमना निम्नलिखित वर्गों मे विभाजित किये जाते हैं

(i) शिक्षण योग्य मंदितमना (Educable Mentally Retarded EMR) इनकी बुद्धिलब्धि का अन्तराल 60 से 85 माना जाता है ।

(ii) प्रशिक्षण योग्य मन्दितमना (Trainable Mentally Retarded TMR) इनकी बुद्धिलब्धि का अन्तराल 30 से 59 माना गया है ।

(iii) शिक्षण अयोग्य (Uneducable Mentally Retarded Custodial) इनकी बुद्धि लब्धि 30 से नीचे होती है ।

मन्दितमना बालकों की विशेषताएँ (Characteristics of Mentally Retarded Children)

सामान्य बालको की तुलना म मन्दितमना बालक मन्दगति से विकास करता है। अत छ वर्ष की आयु मे जो सामान्य बालको के लिए स्कूल जाने की अवस्था है उसमे मन्दितमना बालको की मानसिक आयु चार या पाँच वर्ष या उससे भी कम होती है । इस कारण वे समय से स्कूल जाना भी प्रारम्भ नहीं करते । यदि माता पिता उन्हे स्कूल म भर्ती करवा भी देते हैं तो वे मन्दगति से सीखते हैं। हतोत्साह और निराशा के कारण उनमें स्कूल एव स्कूल के कार्यक्रमो के प्रति अरुचि विकसित हो जाती है । इस प्रकार उनम सामाजिक एव सावेगिक कुसमायोजन बढ़ने लगता है।

मन्दितमना बालको की प्रमुख विशेषताएँ हैं—शारीरिक दृष्टि से निम्न एवं बीमार, सावेगिक अस्थिरता, सामाजिक कुसमायोजन अपूर्ण एव दोषयुक्त शब्द भण्डार, सीमित और अत्यन्त साधारण रुचियाँ, वास्तविक आयु से नीचे के आयु वर्ग के क्रिया-कलाप, अत्यन्त अल्प ध्यान विस्तार, मन्द प्रतिक्रिया—काल, सामान्यीकरण करो

मे असमर्थता, अमूर्त सम्प्रत्ययो के साथ कार्य न कर पाना, पहल का अभाव, मौलिकता का न होना, अपने आप काम न कर पाना, आत्मसंयम का अभाव, गलत प्रयोग विधि, अत्यधिक सुझाव ग्रहणशीलता, दुराचार एव नैतिकता की ओर बढा हुआ झुकाव आदि।

मानसिक मंदिता की रोकथाम (Prevention of mental retardation)

मनोवैज्ञानिकों एव मनोचिकित्सकों ने मानसिक मंदिता की रोकथाम के लिए अनेक सुझाव दिये हैं। उनमें निम्नलिखित तीन प्रमुख हैं

(1) **पृथक्कीकरण (Segregation)**—ऐसी दलील दी जाती है कि मन्दितमना बालकों को सामान्य बालको से अलग कर उन्हें विशेष शिक्षा प्रदान करने वाले विद्यालयो म रखा जाय।

(2) **बन्ध्याकरण (Sterlization)**—अतिमंदित माता पिताओ एव बालको का बन्ध्याकरण करा देना चाहिए ताकि भविष्य मे ऐसे नस्ल के बच्चो की जनसंख्या वृद्धि रुक जाय।

(3) **गर्भ निरोध (Birth control)**—मंदितमना अभिभावको को गर्भ निरोध की समुचित जानकारी प्रदान करनी चाहिए ताकि वे भविष्य म मंदितमना बालको को जन्म न दे सकें।

मन्दितमना बालकों को शिक्षा (Education of Mentally Retarded Children)

मानसिक मंदिता निश्चित रूप से एक शैक्षिक समस्या है। विद्यालयो म ऐसे बालक अति मन्द गति से सीखते हैं। शिक्षकों के सामने इन बालको की मानसिक मंदिता के कारणों को जानने और मन्दन के विशेष क्षेत्र को पहचानने की समस्या रहती है। क्योंकि इन बालको की शिक्षा की व्यवस्था उनकी मंदिता के स्वरूप एव स्तर पर आधारित होगी।

मंदितमना बालकों के शिक्षा के सामान्य प्रनियम (Principles of Education for Mentally Retarded)

मंदितमना बालको की शिक्षा के मूलभूत प्रनियम एव सिद्धान्त सामान्य बालको की शिक्षा के समान ही हैं। सभी प्रकार की शिक्षा का उद्देश्य बालको को इस प्रकार का शिक्षण देना है कि वे अपने वातावरण मे भली भाँति जीवन यापन कर सकें। फिर भी मंदितमना बालको के शिक्षकों को निम्नलिखित प्रनियमो का अनुपालन और समुचित सहायता प्रदान करता है। वे प्रनियम हैं

(1) **अवसर की समानता का प्रनियम (Principle of equality of opportunity)**—सामान्य बालको की कक्षाओ मे मंदितमना बालको की स्थिति अत्यन्त दयनीय बन जाती है। अक्सर वे उम्र के अनुसार कक्षा मे सबसे बडे और शक्षिक उपलब्धि के अनुसार सबसे कम होते हैं। अपने से बहुत अधिक तेज बुद्धि वाले बालको

के साथ उन्हें होड़ लेनी पड़ती है अतः ये अक्सर अपने को असहाय अनुभव करते हैं। कक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाते हैं। विफलता के कारण उनका सामाजिक एवं सामाजिक समायोजन भी दिन प्रतिदिन बिगड़ता जाता है। अतः समान अवसर का प्रनियम उनके लिए इस बात पर बल देता है कि उनकी मानसिक योग्यता के अनुरूप उनकी ओर विशेष और व्यक्तिगत ध्यान दिया जाय। वे शैक्षिक प्रगति कर सकें, इस हेतु उन्हें अत्यन्त सरल ढंग से पढ़ाना चाहिए और स्नेहपूर्ण मार्ग-दर्शन प्रदान करना चाहिए।

(ii) समुचित स्कूली कार्य का प्रनियम (Principle of appropriate school work)—यदि मंदितमना बालकों को उनकी बुद्धि स्तर के अनुरूप सरल और साधारण कार्य स्कूल में दिए जाएँ तो वे सामान्यतः अपेक्षाकृत अच्छा कार्य और अच्छी उपलब्धि कर पायेंगे। इस प्रकार की सफलता उन्हें भविष्य में और अच्छा कार्य करने के लिए प्रेरणा प्रदान करेगी।

(iii) वांछित आचरण के प्रशिक्षण का प्रनियम (Principle of training for desirable conduct)—मंदितमना बालकों की सबसे बड़ी आवश्यकता उनके सामान्य व्यवहार और वांछित आचरण के निर्माण करने की है। उन्हें प्रसन्नचित्त रहने, स्वयं को उपयोगी कार्यों में लगाने, स्वच्छता, आत्म नियन्त्रण, सच्चाई, ईमानदारी, दूसरों की स्वतन्त्रता के प्रति आदर करने का प्रशिक्षण देना चाहिए।

(iv) निन्दा एवं दाग लगाने से बचने का प्रनियम (Principle of avoidance of stigmatization)—सामान्य बालकों में मन्दितमना बालकों को 'बुद्धू', 'गोबर', मूर्ख, घटिया, बेकार, लीचड़ आदि नाम देने की प्रवृत्ति पायी जाती है। इस प्रकार मंदित बालकों को बेइज्जत होने एवं मजाक, उड़ाए जाने या चिढ़ाये जाने से बचाना चाहिए। अन्य बालकों को समझाना चाहिए कि ऐसा करने से उन पर तथा मंदित बालकों पर कितना बुरा प्रभाव पड़ता है।

(v) पूर्व शैक्षिक कार्यक्रमों का प्रनियम (Principle of pre-academic programmes)—मन्दितमना बालकों को औपचारिक शिक्षा देने के पूर्व कुछ समय तक पूर्व शैक्षिक कार्यक्रमों में लगाना बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है। इस तरह के कार्यक्रमों में रुचिकर और अधिक देर तक चलने वाले सुखद कार्यानुभव इन बालकों को प्रदान किये जाते हैं। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य मंदित बालकों की कल्पना शक्ति को विकसित करना होता है। इन कार्यक्रमों से कुछ विशिष्ट प्रकार की मानसिक प्रक्रियाओं का रुचिकर अभ्यास करने का अवसर भी मिलता है।

मंदितमना बालकों की शिक्षा (Education of mentally retarded)

मंदितमना बालकों की शिक्षा की कोई भी रूपरेखा बनाने के पूर्व उनके मन्दिता के स्तर को समझना और उसी के अनुरूप शिक्षा व्यवस्था करनी चाहिए अतः इस पर हम दो स्तरों पर विचार करेंगे।

शिक्षा पाने योग्य मन्दितमना और उनकी शिक्षा (Education for EMR)—शिक्षा पाने योग्य मंदितमना बालको की मानसिक आयु अपने उम्र के सामान्य बालको की मानसिक आयु के आधे से तीन चौथाई तक होती है। इनके लिए शिक्षा के उद्देश्य तथा पाठ्यक्रम का निर्धारण इनकी शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है।

शिक्षित होने योग्य मन्दितमना बालकों को शिक्षा के उद्देश्य (Aims of education for EMR)—शिक्षा के सामान्य उद्देश्यो एव लक्ष्यो की दृष्टि से मन्दित मना एव सामान्य बालको मे कोई अन्तर नही है। किन्तु इनमे बुद्धि का स्तर सामान्य से कम होने के कारण कुछ अतिरिक्त उद्देश्यो का निर्धारण किया जाता है। किर्क एव जॉन्सन ने इन बालको के लिए शिक्षा के निम्नलिखित आठ उद्देश्य बताये हैं—

(i) सामाजिक कौशलो का विकास करना,

(ii) व्यावसायिक कौशलों का विकास करना,

(iii) उत्तम मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम के द्वारा मन्दित बालको मे स्वतन्त्र व्यवहार एव संवेगात्मक सुरक्षा का विकास करना,

(iv) उत्तम शिक्षा स्वास्थ्य कार्यक्रमों के द्वारा मन्दित बालको मे आरोग्यता की आदतो का विकास करना,

(v) न्यूनतम शैक्षिक योग्यता (पढ़ना, लिखना व सरल गणित) का विकास करना।

(vi) खाली समय मे व अपना मनोरंजन कर सकें तथा अन्य क्रिया कलापो मे अपने को लगा सकें, ऐसी क्षमता उनमे विकसित करना।

(vii) परिवार मे वे अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह कर सकें, ऐसी योग्यता का विकास करना।

(viii) सामुदायिक कार्यक्रमो की सहायता से उनको समुदाय का एक क्रियाशील एव उपयोगी सदस्य बनना।

प्रशिक्षण योग्य मन्दितमना बालक और शिक्षा (TMR and Education)

इस वर्ग मे आने वाले मंदितमना बालको की मानसिक आयु अपनी वास्तविक आयु से आधी या उससे भी कम होती है। अत उनके लिए शिक्षा की व्यवस्था पृथक कक्षाओ अथवा विद्यालयों म करनी पडती है।

शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)

प्रशिक्षण योग्य मन्दितमना बालको को शिक्षित करने के लिए निम्नलिखित सामान्य उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं

(i) स्व सहायता (Self help)—अर्थात् वे अपना दैनिक कार्य आदि स्वय कर सकें इसकी योग्यता का विकास करना।

(ii) घर और समाज मे समायोजित होने की क्षमता का विकास करना।

(iii) खेल कूद एवं मनोरंजन की क्षमता का विकास करना।

(iv) बात चीत आदि कर सकने की भाषा एवं वाणी का विकास करना।

(v) समूह में रह सकने की क्षमता का विकास करना।

(vi) बालक को प्रसन्नचित्त एवं ऐसा बनाना कि माता पिता एवं अन्य लोग उसके साथ आसानी से रह सकें।

(vii) उनमें पहल करने (initiative) की योग्यता का विकास करना।

(viii) उनमें आर्थिक उपयोगिता (economic usefulness) का विकास करना।

मन्दितमना बालकों के लिए शिक्षा व्यवस्था (Educational provision for M R)

मन्दितमना बालकों के सर्वांगीण विकास के लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है जो उनके मानसिक स्तर के अनुरूप हो। मन्दिता की पहचान करने के पश्चात् उसकी प्रकृति स्तर के अनुरूप शिक्षा एवं प्रशिक्षण के देने के उद्देश्य से उनके लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था निम्नलिखित रूपों में की जा सकती है।

(i) आवासीय विद्यालय (Residential schools)—अत्यन्त मन्दित बालकों को घर पर अथवा सामान्य विद्यालयों में शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रदान करना असम्भव होता है। अतः इन्हें सुसज्जित विद्यालय अस्पताल (well equipped hospitals cum schools) में ही रखा जाना चाहिए। जहाँ इनकी देखभाल करने के लिए प्रशिक्षित परिचारिकाओं तथा सुयोग्य चिकित्सकों की व्यवस्था रहती है। चूँकि ये बालक अपने दैनिक कार्यों को भी खुद नहीं कर पाते अतः जीवन भर इन्हें ऐसी संस्थाओं में ही रहना पड़ता है।

शिक्षाशास्त्रियों की दृष्टि में शिक्षण एवं प्रशिक्षण योग्य (Educable and trainable) मन्दितमना बालकों के लिए सर्वथा पृथक विद्यालयों की व्यवस्था को उचित नहीं माना है। इस प्रकार की व्यवस्था बालकों के परस्पर समायोजन के लिए तो ठीक है किन्तु सामाजिक एवं अन्य प्रकार के समायोजनों के लिए उत्तम नहीं होती। सामान्य बालकों से इस व्यवस्था में सम्पर्क टूट जाने से मन्दितमना बालक अनेक क्रियायें एवं कौशल जो वे दूसरों के अनुकरण मात्र से सीख सकते थे, नहीं सीख पाते। अतः हम यहाँ यह कहना चाहेंगे कि पृथक आवासीय विद्यालयों की व्यवस्था अत्यधिक मन्दित बालकों के लिए ही उचित है।

(ii) विशेष विद्यालय (Special schools)—मन्दितमना बालकों के लिए पृथक विशेष विद्यालयों की व्यवस्था की जाती है। किन्तु यह व्यवस्था अत्यधिक मन्दित तथा प्रशिक्षण योग्य मन्दितमना बालकों के लिए होनी चाहिए। इन विद्यालयों में मन्दित बालक विद्यालय के समय वहाँ पढ़ने जाते हैं और विद्यालय समाप्त होने पर अपने घरों को वापस लौट आते हैं। इस प्रकार वे विशेष शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त करने के साथ साथ सामाजिक समायोजन के क्षेत्र में भी आगे बढ़ते हैं। इस

विद्यालयो मे मन्दितमना बालको की योग्यतानुसार, आयु एव आवश्यकता के अनुरूप विशिष्ट प्रकार की कक्षा व्यवस्था की जाती है।

(iii) विशेष कक्षा (Special classes)—सामान्य विद्यालयो म शिक्षा योग्य मन्दितमना बालको के लिए सामान्य विद्यालयो में पृथक कक्षायें चलायी जाती हैं। इन कक्षाओ म मन्दित बालक अपनी योग्यता के अनुरूप शिक्षण प्राप्त करते हैं। शेष समय मे वे विद्यालय के औसत बालको के साथ ही सामान्य कक्षाओ मे बैठकर शिक्षा ग्रहण करते हैं।

मन्दितमना बालकों की शिक्षा की विशिष्ट समस्यायें (Some Significant problem of Education for MR)

मन्दितमना बालको की शिक्षा की व्यवस्था प्रभावकारी एव सफल बने, इस हेतु निम्नलिखित समस्याओ पर विशेष ध्यान देना चाहिए

(i) कक्षा का आकार (The class size)—मन्दितमना बालक बहुत धीमी गति से सीखते हैं। अत उन्हें शिक्षित करने के लिए व्यक्तिगत ध्यान देना शिक्षको के लिए आवश्यक है। अत मन्दितमना बालको की कक्षा मे बालको की सख्या जहाँ तक हो सके, सीमित रखनी चाहिए। एक कक्षा मे दस से बीस बालक से अधिक नही होने चाहिए।

(ii) आधुनिक उपकरण (Modern equipment)—मन्दितमना बालको की कक्षाएँ हवादार एव सुसज्जित होनी चाहिए। चूकि ये बालक अमूर्त सम्प्रत्ययो को समझने म असमर्थ होते हैं। अत उनके लिए आधुनिक शिक्षण सहायक सामग्रियो की व्यवस्था करनी चाहिए। शैक्षिक फिल्म, श्रवण सहायता यन्त्र, वाद्य यन्त्र, टी वी आदि की व्यवस्था करना आवश्यक है।

(iii) विशिष्ट पाठ्यक्रम (Special curriculum)—मन्दितमना बालको के लिए विशेष रूप से साधारण, सरल रुचिकर और भावोत्तेजक पाठ्यक्रमो का निर्माण आवश्यक है उसे बहुत सावधानी के साथ पदानुक्रमित करना चाहिए। इसमे व्यावहारिक एव व्यावसायिक कार्यों को अधिक स्थान मिलना चाहिए।

(iv) शिक्षण विधियाँ (Methods of teaching)—इन बालको की शिक्षण विधि भी सरल, रुचिकर एव व्यक्ति उन्मुख होनी चाहिए। इन विधियो की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं

(अ) बार-बार अभ्यास और दुहराना

(आ) शिक्षण विधियाँ सरल और ज्यादा व्यावहारिक होनी चाहिए। उन्ह लम्बी सैद्धान्तिक चर्चाओं से बचना चाहिए।

(इ) समाज विज्ञान, साहित्य और इतिहास पढ़ाते समय रुचिकर घटनाओ और चरित्रो पर विशेष ध्यान देना चाहिए और सैद्धान्तिक एव दार्शनिक विवेचन स बचना चाहिए।

(ई) भूगोल, नागरिकशास्त्र की शिक्षा के समय बालकों का ध्यान अपने गली, मोहल्ले, तहसील, शहर, प्रांत और देश के मूत स्थितियों पर आकर्षित करना चाहिए। विदेशों का भूगोल और संस्कृति के विषय में पढ़ाकर समय गँवाना व्यर्थ होगा।

(v) पूर्वाग्रह से बचना (Avoidence of prejudice)—सर्वप्रथम इस बात की आवश्यकता है कि प्रशिक्षक स्वयं मन्दितमना बालकों के प्रति पूर्वाग्रहों जैसे य 'भदह' 'मूढ़' 'बेकार' आदि होते हैं से मुक्त रहें। उन्हें इस बात का प्रयास करना चाहिए कि दूसरे बालक भी इन बालकों को न चिढ़ायें। शिक्षक का यह सोचना चाहिए कि ये ऐसे बालक हैं कि जिन्हें सामान्य बालकों की अपेक्षा हमें अधिक सहानुभूति सहायता और मार्गदर्शन की आवश्यकता है।

(vi) शिक्षक गण (Teaching staff)—मन्दित बालकों की शिक्षा के लिए ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता है जो उस कार्य के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित हों। सामान्य शैक्षिक योग्यताओं के अतिरिक्त उनमें सहानुभूति, सेवा और कार्य के प्रति दृढ़ आस्था का होना अति आवश्यक है। मनोविज्ञान का व्यावहारिक ज्ञान विशेषकर विशिष्ट बालकों के मनोविज्ञान का ज्ञान उन्हें होना चाहिए। इस तरह के विशेष शिक्षकों के लिए विशिष्ट प्रकार के प्रशिक्षण के लिए आवश्यक धन और व्यवस्था की कठिनाइयों को शीघ्रातिशीघ्र दूर करना होगा।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि विश्व के प्रत्येक देश में मन्दितमना बालकों की संख्या काफी बड़ी है। यदि इन बालकों को समुचित शिक्षण और प्रशिक्षण दिया जायेगा तो वे अपने को प्रसन्न एवं सुरक्षित अनुभव करेंगे। तब ऐसी आशा की जा सकती है कि वे एक अच्छे और स्वावलम्बी नागरिक के रूप में विकसित होंगे और परिवार एवं समाज के लिए बोझ नहीं बन रहेंगे। इसके विपरीत यदि उनकी ओर ध्यान नहीं दिया गया तो वे कुंठित और अपराधी व्यक्ति के रूप में विकसित होंगे। अतः समाज और देश को इनकी समुचित शिक्षा का दायित्व वहन करना ही है।

अभ्यास के प्रश्न

1. मन्दितमना बालक को आप किस प्रकार परिभाषित करेंगे?
2. मन्दितमना बालकों का वर्गीकरण प्रस्तुत कीजिए तथा उनकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. मन्दितमना बालकों की शिक्षा के सामान्य प्रनियमों की विवेचना कीजिए।
4. शिक्षित होने योग्य एवं प्रशिक्षित होने योग्य मन्दितमना बालकों की शिक्षा के उद्देश्यों का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत कीजिए।
5. मन्दितमना बालकों की शिक्षा की विशिष्ट समस्याओं का उल्लेख करते हुये उनकी शिक्षा व्यवस्था के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन कीजिए।
6. मानसिक रूप से पिछड़े बालक कौन हैं? इनकी पहचान कैसे हो सकती है?

(गोरखपुर विश्वविद्यालय 1989)



18

कुसमायोजित एवं नैतिकता विचलित बालक

[MALADJUSTED AND MORALLY DEVIENT CHILD]

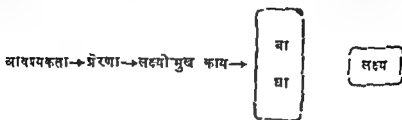
जनजीवन मे विकास की प्रक्रिया मे भिन्नता एक सामान्य अनुभव है। ये भिन्नताएँ शारीरिक और मानसिक दोनो ही पक्षो मे दिखायी देती हैं। माता पिता और अभिभावक, बालको की शारीरिक बीमारी के विषय मे अधिक चिंतित रहते हैं और बालक के बीमार होते ही चिकित्सको के पास दौड़ना शुरू कर देते हैं। किन्तु व्यावहारिक गड़बड़ियो अथवा मानसिक अस्वस्थता के लक्षण प्रकट होने पर वे उसकी ओर तनिक भी ध्यान नही देते। व्यावहारिक विचलन की प्रकृति और उसके कारण एव निवारण को न समझने के कारण अभिभावक एव शिक्षक बालकों मे कुसमायोजन को विकसित करते है।

समायोजन का अर्थ (Meaning of Adjustment)

कुसमायोजन को समझने के लिए आवश्यकता इस बात की है कि हम समायोजन के अर्थ एव सम्प्रत्यय को समझें। समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने व्यवहार मे परिवर्तन कर अपने वातावरण से सामजस्य स्थापित करता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जीवन एक सतत चलने वाला क्रम है जिसके द्वारा व्यक्ति बाह्य वातावरण एव स्वय की शारीरिक व मानसिक आवश्यकताओ की पूर्ति करने म लगा रहता है। व्यक्ति खाने और पीने के लिए, आश्रय और प्रेम ढूढने के लिए, सहमति और मत्री पाने, सुरक्षा और सम्मान पाने, आदि म सदैव लगा रहता है। समायोजन को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है जिसके द्वारा व्यक्ति अपनी आवश्यकताओ और परिस्थितियो की मांगो के मध्य शारीरिक एव मानसिक सन्तुलन स्थापित करता है।

यदि हम किसी सामान्य समायोजन प्रक्रिया का विश्लेषण करें तो इस प्रक्रिया मे हम इस पदानुक्रम को कार्यरत पायेंगे। सबसे पहले व्यक्ति किसी 'आवश्यकता' (need) का अनुभव करता है। यह आवश्यकता उसे उस वस्तु या लक्ष्य की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करती है जिसके द्वारा आवश्यकता की पूर्ति होगी। लक्ष्य की ओर बढते समय मार्ग मे कोई न कोई बाधा आ खड़ी होती है। फलस्वरूप व्यक्ति व्यवधान एव तनाव का अनुभव करता है। वह व्यवहार को बदलता है—व्यवहार

को और तीव्र बनाता है या बाधा से बचता है और समस्या का कोई समाधान निकालता है। समायोजन की इस प्रक्रिया को निम्न चित्र में प्रदर्शित किया गया है



चित्र 18 1 समायोजन की प्रक्रिया

समायोजन प्रक्रिया के मुख्य तत्व

इस प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए मनोवैज्ञानिकों ने समायोजन को एक ऐसे व्यवहार के रूप में परिभाषित किया है जो प्राणी या व्यक्ति के तनाव को कम करने के लिए होती है। इसका अर्थ है कि समायोजन व्यक्ति और उसके वातावरण के मध्य चलने वाली प्रक्रिया से सम्बन्धित है। व्यक्ति की आवश्यकताएँ अनन्त हैं। एक आवश्यकता की पूर्ति होने के पश्चात दूसरी आवश्यकता जन्म लेती है। उस आवश्यकता की पूर्ति के लिए समायोजन की प्रक्रिया पुनः सक्रिय होती है। इसीलिए समायोजन को हमने निरन्तर चलने वाली क्रिया के रूप में परिभाषित किया। इस प्रकार हम देखते हैं कि समायोजन व्यक्ति की आवश्यकताओं और उसके जीवन की समस्याओं से जुड़ा हुआ है। आवश्यकताओं की यह पूर्ति, व्यक्ति जिस समाज में रहता है उसमें प्रचलित रीति रिवाजों, नैतिक मान्यताओं एवं मानदण्डों के अनुरूप होनी चाहिए। यदि व्यक्ति ऐसा नहीं करता तो वह अपनी समस्याओं या आवश्यकताओं की पूर्ति करने के स्थान पर मानसिक व सामाजिक द्वन्द्वों में उलझ जाता है और अपनी समस्याओं को कई गुना बढ़ा लेता है।

मनुष्य की मुख्य आवश्यकताएं या समस्याएँ सामान्यतः तीन वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं

(i) शारीरिक एवं भौतिक आवश्यकताएँ और उनसे उत्पन्न समस्याएँ, जैसे– भोजन, वस्त्र, आवास, भौतिक प्रकोपों से सुरक्षा आदि।

(ii) मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ और उससे उत्पन्न समस्यायें, जैसे—आराम, सन्तोष, पीड़ा से मुक्ति, सहमति की आवश्यकता, स्वतन्त्रता, आत्म-सम्मान, सफलता और उपलब्धि, सुरक्षा की आवश्यकता, स्नेह और अपनत्व की आवश्यकता आदि।

(iii) सामाजिक तथा सांस्कृतिक आवश्यकताएँ और उनसे उत्पन्न समस्याएँ। व्यक्ति जिस सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में रहता है, उसके रीति रिवाज, उसकी माँगें और निषेधों को पूरा करने की आवश्यकता है।

व्यक्ति की आवश्यकताओं और सामाजिक मानदण्डों के बीच अन्तर्द्वन्द्व निरन्तर चलता है। साथ ही साथ व्यक्ति की अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं में भी अन्तर्द्वन्द्व खड़े हो जाते हैं। इस स्थिति में व्यक्ति रस्साकसी करता रहता है। कभी एक इच्छा या आवश्यकता की ओर तो कभी दूसरी आवश्यकता की ओर खिंचता रहता है। अन्तर्द्वन्द्व की यह स्थिति सांवेगिक तनाव की स्थिति है। इस तनाव की स्थिति से मुक्त होने के लिए व्यक्ति को समायोजन की प्रक्रिया का सहारा लेना पड़ता है। प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति द्वन्द्वात्मक स्थिति से किस प्रकार समायोजित होगा? कुछ व्यक्तियों के पास उनके निश्चित आदर्श, जीवन मूल्य, व्यवहार के नैतिक आधार होते हैं, वे उनको अच्छी तरह समझते हैं और अन्तर्द्वन्द्वों का समाधान करते समय यथार्थ के धरातल पर रहते हुये समायोजन के ऐसे तरीकों को अपनाते हैं जो समाज को स्वीकृत हों और जो उनके सांवेगिक तनाव को कम करने वाले हों। इस प्रकार का समायोजन करने वाले को हम 'सुसमायोजित' व्यक्ति की श्रेणी में रखते हैं। कुछ अन्य लोग प्रभावहीन रीति से आवश्यकताओं या अन्तर्द्वन्द्वों का समाधान करते हैं। उनका व्यवहार दूसरों के लिए हानिकारक नहीं होता किन्तु उनके तनाव को भी दूर नहीं करता। कुछ दूसरे प्रकार के लोग अवांछित एवं अनैतिक व्यवहारों का सहारा लेकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति या अपनी समस्याओं का समाधान करते हैं। इससे उनकी समस्याएँ और उलझ जाती हैं। उनका सांवेगिक तनाव घटने के स्थान पर और बढ़ जाता है क्योंकि उनके द्वारा अपनाया गया मार्ग या व्यवहार समाज के नैतिक, न्यायिक, सांस्कृतिक मानदण्डों द्वारा स्वीकृत नहीं किया जाता। इस प्रकार के प्रभावहीन एवं समाज द्वारा अस्वीकृत समायोजन को 'कुसमायोजन' कहा जाता है। इस तरह का समायोजन यद्यपि प्रभावहीन और सामाजिक दृष्टि से अवांछित है फिर भी इसको अपनाने वाले व्यक्ति का तनाव कुछ समय के लिए दूर हो ही जाता है। पुनः ऐसा ही मौका आने पर उस व्यक्ति में पुनः इसी प्रकार के कुसमायोजित व्यवहार होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इस दुश्चक्र में फँसकर व्यक्ति धीरे धीरे कुसमायोजित अथवा नैतिक दृष्टि से विचलित व्यक्तियों की श्रेणी में चला जाता है। उदाहरण के लिए, एक बालक जो गृह कार्य नहीं करता तथा अध्यापक की डाँट-डपट से बचने के लिए कक्षा को छोड़ देता है। कक्षा छोड़ने से कम से कम उस समय के लिए उसे संवेगात्मक तनाव से मुक्ति मिल जाती है। दुबारा जब वह गृह कार्य नहीं कर पाता तो पुनः उसके द्वारा कक्षा छोड़ने की सम्भावना बढ़ जाती है और इस प्रकार वह कक्षा छोड़ने वाला भगोड़ा (truant child) एवं समस्यात्मक बालक बन जाता है।

कुसमायोजित या समस्यात्मक बालक (Maladjusted or problem child)

कुसमायोजित बालक अथवा व्यक्ति अपने असाधारण, अवांछित, अनैतिक व्यवहारों या व्यक्तित्व के कारण समाज एवं विद्यालय में विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न करते हैं। अतः इन्हें समस्यात्मक बालक कहा जाता है।

सामान्यत सभी बालको या व्यक्तियो मे असामान्य व्यवहार जीवन म कभी न कभी अवश्य देखने को मिलते हैं। किन्तु कभी एक बार इस प्रकार का अवांछित व्यवहार करने वाले को कुसमायोजित या समस्यात्मक बालक व्यक्ति नही कहा जा सकता। व्यक्ति को समस्यात्मक या कुसमायोजित श्रेणी म तभी रखा जाता है जब असामान्य व्यवहार उसकी आदत या व्यक्तित्व का अभिन्न अग या विशेषक (trait) बन जाता है।

इस वग के बालको को उचित शिक्षा या मागदशन द्वारा ही सुधारा जा सकता है। अ यथा वे भविष्य में अनैतिक, अपराधी, समाजद्रोही या मानसिक रोगी बन सकते हैं।

कुसमायोजित अथवा समस्यात्मक बालकों का वर्गीकरण (classification of maladjusted or problem children)

कुसमायोजित बालकों को उनकी समस्याओ की प्रकृति एव मात्रा के आधार पर अनेक प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है। दोसाझ (1974) न इन बालको को उनकी समस्या की प्रकृति के अनुसार तीन वर्गों मे विभाजित किया है

(i) व्यक्तिगत समस्या वाले बालक,
(ii) सामाजिक एव नतिक समस्या वाले बालक,
(iii) विशिष्ट समस्याओ वाले बालक।

भागव एव सवानियाँ (1983) ने इन तीन वर्गों मे आन वाले कुसमायोजित समस्यात्मक बालको के व्यवहारो और लक्षणो की निम्नलिखित सूची प्रस्तुत की है

(1) व्यक्तिगत समस्या वाले बालक—इस वग मे आने वाले कुसमायोजित बालक अपनी असामान्यता से स्वय ही प्रभावित होते हैं और उनसे उत्पन्न हानियों को स्वय झेलते हैं। इस प्रकार के कुसमायोजन से दूसरो को हानि पहुँचने की आशका नही के बराबर होती है, किन्तु वे माता पिता, शिक्षको आदि के लिए समस्या का विषय अवश्य बन जाते हैं। इनमें निम्नलिखित कुसमायोजित व्यवहार प्रारूप अथवा लक्षण दृष्टिगत होते हैं

(i) अत्यधिक सकोच या लज्जा करना।
(ii) भयभीत रहना,
(iii) अँगूठा चूसना,
(iv) निराशा की भावना से ग्रसित रहना,
(v) बीमार रहना,
(vi) चिन्तित रहना,
(vii) शीघ्र रोना,
(viii) हकलाना या तुतलाना,

(ix) बिस्तर पर मूत्र करना,
(x) स्कूल न जाना या स्कूल से भाग जाना,
(xi) कक्षा म चुपचाप गुमसुम बैठे रहना,
(xii) घर छोडकर भागना,
(xiii) दिवास्वप्न देखना,
(xiv) मित्र न बनाना एव एकान्त म रहना।

(2) सामाजिक एव नैतिक समस्या वाले बालक—इस वग मे ऐसे असामान्य बालक आते हैं जो समाज म समायोजित नही हो पाते तथा अनतिक एव अवांछित व्यवहार करते हैं। इस प्रकार मे कुसमायोजित एव नतिक दृष्टि मे विचलित बालक स्कूल एव समाज के लिए अनेक समस्याएँ उत्पन्न करते है। ऐसे कुसमायोजित बालको में निम्नलिखित व्यवहार प्रारूप एव लक्षण मिलत हैं

(i) अशिष्टता से बात करना,
(ii) तोड फोड करना,
(iii) गाली गलोज/लडाई झगडा करना,
(iv) समाज के नियम भग करना,
(v) विद्यालय काय/गृह काय न करना,
(vi) विपरीत लिंगी बालको/बालिकाओं से छेडछाड करना,
(vii) क्रोधित होना/आक्रमण करना,
(viii) बेईमानी करना,
(ix) झूठ बोलना,
(x) सामाजिक एव नतिक नियमो का उल्लघन करना आदि।

(3) विशिष्ट समस्याओं वाले बालक—इस वग म ऐसे समस्यात्मक बालक आते हैं जिनम किसी प्रकार की अत्यधिक ऋणात्मक अथवा धनात्मक विशिष्टता पायी जाती है जो प्राय अभिभावको, शिक्षकों एव स्वय के लिए समस्या खडी कर देता हैं जैसे—

(i) दृष्टिहीनता/न्यून दृष्टि,
(ii) बधिरता/ऊँचा सुनना,
(iii) मूकता,
(iv) अपगता/विरूपण,
(v) बीमार रहना,
(vi) मानसिक दृष्टि से बाधित होना,
(vii) हीनता से ग्रसित होना,
(viii) मनस्ताप से ग्रसित होना
(ix) वचित होना (deprived),

(x) प्रतिभा सम्पन्न होना,

(xi) सृजनशील होना।

समस्यात्मक बालकों की पहचान (Identification of problem children)

समस्यात्मक/कुसमायोजित/नैतिक विचलित बालकों को उपचारात्मक शिक्षण एवं मार्गदर्शन प्रदान करने हेतु इनको पहचानना, चुनना, उनके व्यवहारों की असामान्यता की प्रकृति तथा उसकी तीव्रता की जानकारी एक अनिवार्यता है। अत शिक्षकों एवं परामर्शदाताओं को इन बालकों की पहचान, वस्तुनिष्ठ या वैज्ञानिक विधियों के सहारे करना चाहिए। कुछ मुख्य विधियों का संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है

(1) निरीक्षण विधि—निरीक्षण विधि एक सोद्देश्य प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति के बाह्य व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। इस विधि का प्रयोग समस्यात्मक बालकों के व्यवहारों का सामान्य परिस्थितियों जैसे कक्षा, खेल के मैदान, प्रयोगशाला आदि में अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इस निरीक्षण के द्वारा बालक के समस्यात्मक व्यवहारों एवं कुसमायोजन की प्रकृति के विषय में आँकड़े प्राप्त हो सकते हैं। निरीक्षण का विवरण निर्धारण मापनी (rating scales) अथवा कथात्मक अभिलेखों (anecdotal records) के रूप में आलेखित किया जा सकता है।

(2) साक्षात्कार विधि—साक्षात्कार आमने सामने बैठकर बात चीत करने की एक प्रक्रिया है। शिक्षक अथवा साक्षात्कारकर्ता बालक से सीधे बात चीत करके समस्यात्मक व्यवहार के विषय में जानकारी प्राप्त करते हैं।

(3) अभिभावक सम्पर्क—समस्यात्मक बालकों के कुसमायोजन एवं अवाछित व्यवहारों की जानकारी शिक्षक बालक के अभिभावकों अथवा माता पिता से सम्पर्क स्थापित कर प्राप्त कर सकते हैं।

(4) शिक्षक एवं कर्मचारियों से सम्पर्क—इस प्रकार के छात्रों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी विद्यालय में पढ़ाने वाले अन्य शिक्षकों एवं काम करने वाले कर्मचारियों से सम्पर्क स्थापित कर प्राप्त किया जा सकता है।

(5) सहपाठियों एवं मित्रों से वार्तालाप—समस्यात्मक बालकों के मित्रों एवं सहपाठियों से साक्षात्कार एवं वार्तालाप करके भी इनके असामान्य व्यवहारों के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(6) सचयी अभिलेख (Cumulative records)—समस्यात्मक बालकों की पहचान करने में सचयी अभिलेख भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते हैं क्योंकि सचयी अभिलेख में किसी भी बालक के सम्पूर्ण स्कूली जीवन की घटनाओं, उपलब्धियों तथा उसकी समस्त विशिष्टताओं का पूरा लेखा जोखा संग्रहित रहता है। इसका निरीक्षण एवं अध्ययन कर बालक के असामान्य व्यवहार एवं व्यक्तित्व की असामान्यताओं के

असामा य व्यवहार एव व्यक्ति व की असामा यताओ के कारणो का भी पता लगाया जा सकता है।

(7) शारीरिक परीक्षण—चिकित्सको द्वारा किये गये शारीरिक, नैदानिक परीक्षण भी समस्यात्मक बालको की पहचान एव समस्यात्मक व्यवहार के कारणो को ज्ञात करने मे सहायता प्रदान करते हैं।

(8) मनोवैज्ञानिक परीक्षण—विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण परिसूची एव प्रश्नावलियो आदि के प्रयोग से समस्यात्मक बालको की पहचान करने मे सहायता मिलती है।

यद्यपि उपर्युक्त वर्णित सभी विधियाँ समस्यात्मक बालको की पहचान के लिए प्रयोग मे लायी जाती हैं किन्तु कोई भी विधि अपने आप मे पूर्ण नही है। अत समस्यात्मक बालको की सही पहचान के लिए इनमे से कई विधियो का प्रयोग साथ साथ करना चाहिए।

कुसमायोजित अथवा समस्यात्मक व्यवहार के कारण (Causes of Maladaptive or Problematic Behaviour)

समस्यात्मक व्यवहार अथवा कुसमायोजन के अनेक कारण हैं। ये कारण स्वय बालको के व्यक्तित्व म, समाज, स्कूल एव घर के वातावरण मे अन्तर्निहित हो सकते है। अध्ययन की सुविधा का ध्यान म रखते हुए इन कारणो को निम्नलिखित चार वर्गों म प्रस्तुत किया गया है

(1) आनुवशिक कारण (Hereditary causes)—वशानुक्रम के द्वारा अनेक बीमारियाँ अपगता तथा अक्षमता बालकों को जन्म से ही ग्रसित कर उन्हें अक्षम बना देता हैं। सामान्यत अपनी अपगता जनितहीन भावना के कारण अनेक बालक क्षतिपूर्ति करने के प्रयास म कुसमायोजित एव समस्यात्मक बन जाते हैं। वशानुक्रम के कारण उत्पन्न असामान्यताओ मे बुद्धि दौबल्यता ग्रन्थि विकार, प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात, मिर्गी आदि प्रमुख हैं।

(2) शारीरिक कारण (Physical causes)—अनेक प्रकार की शारीरिक अपगता, दुर्बलता एव अक्षमता बालको को कुसमायोजित बना देती है। इन अपगताओ के कारण वे सामान्य बालको के समान सुसमायोजित बनकर प्रगति नही कर पाते। वाछित लक्ष्यो से दूर रह जाने के कारण अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति वे अवाछित एव अनैतिक रीतियो से करने लगते हैं। कुसमायोजन एव नैतिक विचलन के अनेक शारीरिक कारणो मे मुख्य हैं—दृष्टि हीनता श्रवण विकलागता, गूगापन अपगता, शारीरिक कमजोरी, बीमारी आदि।

(3) स्वभावगत एव सवेगात्मक कारण (Temperamental and emotional causes)—बचपन से ही कुछ बालको को परिवार, पडोस एव समाज मे उचित

मनोवैज्ञानिक वातावरण नही मिल पाता। अत वे अवांछित आदतो एव मानसिक उद्वेगो के शिकार हो जाते हैं। उनकी मानसिक एव सवेगात्मक आवश्यकताओ की पूर्ति न हो पाने के कारण उनमें कुसमायोजित व्यवहार विकसित हो जाते हैं जैसे अँगूठा चूसना, बिस्तर पर मूत्र त्याग करना, चिडचिडापन, अधीरता, अस्थिरता आदि। कुछ बालक अत्यधिक भावुक स्वभाव के होते हैं। उनकी भावनाओ को थोडी सी ठेस लगने पर व विह्वल हो जाते हैं। उनम अनेक प्रकार के समस्यात्मक व्यव हार प्रकट होने लगते हैं।

(4) सामाजिक तथा परिवेशजनित कारण (Social and environmental causes)—व्यक्तित्व के निर्धारको मे वातावरण एव वंशानुक्रम प्रमुख हैं। इन दोनो की परस्पर क्रिया का प्रतिफल ही व्यक्तित्व है। बालक सभी प्रकार क मानसिक, शारीरिक, सामाजिक एव नैतिक आचरण अपने पर्यावरण से ही अर्जित करता है। समाज तथा घर के दूषित, विकृत एव तनावपूर्ण वातावरण म पलने वाले बालक कुसमायोजित की चपेट मे आ जाते हैं। निम्न स्तर की सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति (SES) नीरस घरेलू वातावरण, समुचित पालन पोषण का अभाव, अत्य धिक लाड प्यार एव सुरक्षा माता पिता के मध्य अविश्वास एव तनाव पूर्ण सम्बन्ध, सौतेली मा की क्रूरता, सीलन से भरे तम घोटू मकान परिवार के वयस्क सदस्यो की बुरी आदतें आदि अनेक ऐसे कारण हैं जो बालको मे कुसमायोजित व्यवहार प्रारूपो का सृजन करते हैं।

इसी प्रकार विद्यालय का दूषित वातावरण शिक्षको मे गुटबन्दी शिक्षको का निम्न शैक्षिक एव नैतिक स्तर, घिसी पिटी एव ऊबाने वाली अनुदेशन प्रणाली, भेद भाव, पक्षपात, अनुशासनहीनता, आदि भी इस वर्ग मे आने वाले कारण हैं।

इसके अतिरिक्त समाज मे प्रचलित कुरीतियाँ, पास पडौस का ग दा वाता वरण, जातीय एव भाषागत भेदभाव आदि भी वातावरण से सम्बन्धित ऐसे कारण है जो बालको को समस्यात्मक बना देते हैं। नैतिक एव धार्मिक शिक्षा का अभाव भी बालको के असामान्य व्यवहार का कारण बन सकता है।

(5) मानसिक कारण (Mental causes)—सामान्य मानसिक योग्यता के अभाव मे बालक विद्यालयो के शैक्षिक कार्यक्रमों मे पिछड जाते हैं। सामान्य मान सिक योग्यता के अतिरिक्त बालक मे कुछ मुख्य विशिष्ट अभिक्षमताओं जैसे गणितीय अभिक्षमता अमूर्त तर्क अभिक्षमता, भाषा अभिक्षमता आदि की कमी भी पायी जा सकती है। इन अभिक्षमताओ की कमी के कारण स्कूल के अन्य विषयों में जैसे भाषा, गणित आदि म वे पिछडने लगते हैं। मानसिक कारको मे रुचियों का स्थान भी प्रमुख है। बालक की रुचियो के अनुकूल शैक्षिक अवसर न मिलने पर उनम कुसमा-योजन विकसित हो जाता है। व्यक्तित्व के विकासको की ओर ध्यान दिये बिना जो शिक्षा दी जाती है, वह भी बालकों म कुसमायोजन उत्पन्न करती है।

(6) नैतिक कारण (Moral causes)—शशवावस्था मे विकास सामान्यता 'सुख' और 'कष्ट' के प्रनियम (Principle of pleasure and pain) के द्वारा निर्देशित होता है। अर्थात् जिस व्यवहार को करने के पश्चात् शिशु को सुख मिलता वह उसे अच्छा समझता है और जिस काय के पश्चात् उसे दुख मिलता है, उसे वह बुरा समझता है।

जैसे जसे वह बडा होता है, समाज की नैतिकता के अनुसार उसे सुखद या दुखद अनुभव प्रभावित होते हैं। जसी सामाजिक सगति मे बालक रहेगा, उसमे प्रचलित नैतिकता उसके व्यवहार को प्रभावित करगी। किशोरावस्था मे बालको की तकशक्ति का विकास होता है। यदि नैतिकता के नियमो को तक आधारित बना दिया जाता है और बालक की दृष्टि आध्यात्मिकता एव नैतिकता की ओर मोड दी जाती है तो उसमे नैतिक मूल्य दृढ होते हैं। इसके विपरीत बालक की सगति बिगड जाने पर जहाँ नतिकता नाम की कोई चीज नही है और कवल सुखवाद एक मात्र नीति निर्धारण तत्व है बालक अपराधिक कार्यों मे लग जाते हैं और वे समस्यात्मक बालक अथवा अपचारी बालक बनकर समाज के लिए सिर दद बन जाते हैं।

समस्यात्मक बालकों के विशिष्ट उदाहरण (Specific examples of problem children)

विभिन्न प्रकार के असामान्य बालकों की अपनी पृथक समस्याएँ होती हैं। इन समस्याओ के पीछे कुछ विशिष्ट कारण होते हैं। शारीरिक, शक्षिक एव मानसिक विशिष्टताओ अथवा असामान्यताओ के कारण समस्यात्मक व्यवहार करने वाले बालको की शिक्षा का विवरण अन्यत्र दिया गया है। यहाँ केवल उन समस्यात्मक व्यवहारो की सक्षिप्त विवेचना की जा रही है जिन्हे हम नैतिकता विचलित (moral deviates) व्यवहार की श्रेणी म रखते हैं।

नतिकता विचलित या अपचारी बालक (Moral deviates or delinquents)

शारीरिक अपगता से ग्रसित विकलांगो की ओर ध्यान न दीजिए सम्भवत वे मर जायेंगे मानसिक रोगियो की ओर ध्यान न दीजिए वे भूख से तडप तडप कर मर जायेंगे अपचारी या नतिकता विचलित की ओर ध्यान न दीजिए वे समाज एव अपने साथियों मे अशान्ति, गडबडी और बुराइयो का प्रदूषण फैलायेंगे।

समाज के लिए सर्वाधिक गम्भीर समस्यायें और खतरे अपचारी बालको के समान विकलांगो का अन्य कोई समूह खडा नहीं कर सकता। अत इनकी ओर समाज क सदस्यो सुधारको एव शिक्षको को विशेष ध्यान देना चाहिए।

नतिक या सामाजिक दृष्टि से कुसमायोजित बालक वह है जो अपने वातावरण मे समरस नहीं हो सका है। ये ऐसे बालक हैं जिन्हें हम भगोडे या अपचारी या बाल अपराधी कहते हैं। ऐसे बालक केवल अपने मे ही अन्तद्वन्द्व से ग्रसित नहीं

हैं अपितु वे समाज मे भी द्वन्द्वात्मक स्थिति मे या विरोधी बनकर खडे हैं। बुनियादी तौर पर वे वैर और विद्वेष एव शत्रुतापूर्ण मनोभावो से ग्रसित हैं। चाहे यह मनोभावना समाज के प्रति हो या स्वय के प्रति। चोरी, लूटपाट, मारपीट, झगडा फसाद करने वाले इस मनोभावना को समाज के प्रति व्यक्त करते है। दूसरी ओर शराबी एव नशीली दवाओ का सेवन करने वाले एकान्तवासी वैर भावना को अपने पर ही झेलते हैं।

नैतिकता विचलित व्यावहारिक समस्याओ के कुछ सामान्य उदाहरण हैं—झूठ बोलना एव चोरी करना।

झूठ बोलना (lying)—मूलत बालको मे झूठ बोलने की प्रवृत्ति नही होती है। साथ ही साथ उनमे इतनी समझ भी नही होती कि कोई बात गलत होने पर किसको हानि पहुच सकती है। किन्तु जिस वातावरण मे वे रहते हैं उसके प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव से वे वेझिझक झूठ बोलने लगते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ बालक इतने कल्पनाशील होते हैं कि जो विचार उनकी कल्पना म आते हैं उन्ही को वे सत्य मान लेते हैं। इस प्रकार झूठ बोलने की प्रवृत्ति किसी बालक मे जब आदत का रूप धारण कर लेती है तब वह एक शैक्षिक व सामाजिक समस्या बन जाती है।

झूठ बोलने के अनेक चेतन एव अचेतन कारण हो सकते हैं, जसे—सत्य बोलने पर पिटाई का भय, लोगो मे अपने को ऊचा दिखाने तथा उन्हें आकर्षित करने की चाह दूसरे बालको मे रग जमाने, गप हांकने बडो से प्रशसा पाने की इच्छा तथा कल्पनालोक मे विचरण करना आदि कुछ ऐसे कारण हैं जो बालक मे अपनी ही आवश्यकताओ एव प्रेरणाओ से पनपते हैं। कई बार झूठ बोलने की आदत पारिवारिक वातावरण एव माता पिता के व्यवहार, कठोर अनुशासन अधिक लाड प्यार के कारण बालको मे विकसित होती है।

झूठ बोलने की आदत पड जाने पर बालक सभी लोगो को यहाँ तक अपने माता पिता एव परिवार के अन्य सदस्यो को सन्देह की दृष्टि से देखने लगता है और अपने ही जसा 'झूठा' समझने लगता है। सन्देह की यह भावना धीरे धीरे उसके चरित्र को कमजोर बनाती जाती है और उसमे एक निष्क्रिय व्यक्तित्व को विकसित करती है।

चोरी करना (stealing)—कुसमायोजन के समस्यात्मक व्यवहार प्रारूपों म चोरी करना सबसे अधिक व्यापक एव प्रचलित है। चोरी व्यक्तिगत लाभ या दूसरा से बदला लेने की भावना के कारण की जाती है। प्राय हर आयु वग एव परिवार के बालको म चोरी करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। जब यह प्रवृत्ति आदत मे बदल जाती है और बालक इसको छिपाकर करने लगता है तब चोरी समस्यात्मक व्यवहार की श्रेणी मे आ जाती है।

चोरी करने की प्रवृत्ति भी अनेक मनोवैज्ञानिक एव पर्यावरणीय कारणो से हो सकती है जैसे निधनता, दूसरो को परेशान करने की इच्छा, बदला लेने की भावना, साहसिक काय करने की प्रवृत्ति, असुरक्षा की भावना आदि। कई बार माता पिता ऐसा व्यवहार करते हैं कि बालको के नतिक मूल्यो का इतना ह्रास हो जाता है कि वे चोरी और झूठ बोलने की आदत विकसित कर लेते हैं, जैसे—जब कोई बालक चोरी करता है और पकडा जाता है तब सारा दोष माता पिता अपने पर ले लेते हैं और बालक को लज्जा एव ग्लानि से बचाना चाहत हैं। इस प्रकार का व्यवहार उन्ह अपरोक्ष रूप से पुनबलन प्रदान करता है और धीरे धीरे वे पक्के चोर बन जाते हैं।

नैतिक मूल्यो से विचलित होते होते बालक ऐसे बडे बडे अपराध करने लगता है जो उन्ह बाल अपराधी की श्रेणी मे ला खडा करता है।

बाल अपराधी (Delinquent Child)

बालकों के द्वारा सामाजिक एव नैतिक मूल्यो के विपरीत किया गया प्रत्येक काय 'बाल अपराध' कहलाता है तथा उन्हें करने वाला बालक 'बाल अपराधी'। हीली (Healy) के शब्दो म, 'वह बालक जो व्यवहार मे सामाजिक प्रतिमानो से विचलित हो जाता है, अपराधी कहलाता है।" वेरेशियस तथा मिलर ने बाल अपराध की विस्तत परिभाषा दी है। उनके अनुसार, बाल अपराध अल्पवयस्क के द्वारा किया गया वह व्यवहार है जो विशेष कानूनी प्रतिमानो अथवा सामाजिक सस्थानो के मानदण्डो को बार-बार अथवा और गम्भीरता के साथ तोडता है। इसके फलस्व रूप ऐसा व्यवहार करने वाले व्यक्ति या समूह के विरुद्ध कानूनी कायवाही करने का दृढ आधार प्राप्त हो जाता है।'

इन परिभाषाओ का विश्लेषण करने से हमे यह ज्ञात होता है कि बाल अपराध म निम्नलिखित तीन बातें स्पष्ट रूप से आती हैं

(i) बाल अपराध एक समाज विरोधी व्यवहार है।

(ii) यह एक विशेष आयु वग (12 से 21 वर्ष) के बालको एव किशोरो द्वारा किए जाते हैं। और

(iii) कानून के द्वारा दण्डनीय होते हैं।

भारतीय सविधान के परिप्रेक्ष्य में बाल अपराध के अ तगत वे सभी काय-व्यवहार आ जाते हैं जिनमे सामाजिक मूल्यो म बाधा और जानबूझ कर अवहेलना होती है या जिनसे बाल अधिनियम 1920, 1924 एव 1948 का उल्लघन होता हो। सामा यत बाल अपराध क निम्नलिखित रूप दृष्टिगत होते हैं

(1) सग्रह एव लोभी प्रवृत्ति (Acquisitive tendency)—बालको के अपराधी कार्यों म से अधिकाश तत्क्षण प्राप्ति' या 'सग्रह की प्रवृत्ति को स तुष्ट करने के लिए होते हैं। इस प्रकार के कार्यों मे 'चोरी प्रमुख है। जो घर से प्रारम्भ

होती है तथा समय के साथ बढ़ते बढ़ते अन्य परिस्थितियों जैसे स्कूल, बाजार, पड़ोस आदि तक फैल जाती है। चोरी करना भी एक कुसमायोजन है जिससे कुछ देर के लिए तनाव से मुक्ति मिलती है। चोरी का काय किशोरावस्था म 'गैंग' बनाकर भी किया जाने लगता है। दिन प्रतिदिन की अभ्यासों की आदतों को पूरा करने के लिए ये गैंग दिन-दहाड़े साहसिक चोरियाँ भी करने लगते हैं। उच्च सामाजिक आर्थिक परिस्थिति वाले परिवारों के बालक भी गैंग बनाकर चोरी करने का अपराध करते हैं।

(2) धोखाधड़ी (Forgery)—प्रायः उत्तम बौद्धिक क्षमता वाले किशोरों के द्वारा किये गये अपराधों में 'धोखाधड़ी' प्रमुख है। ऐसे किशोर लोगों को बेवकूफ बनाकर पैसा ठगने, दूसरों के हस्ताक्षर की हूबहू नकल करके बैंक से पैसे निकाल लेने, कक्षा में दूसरे की हाजिरी (proxy) बोलने, झूठ बोलने आदि अपराध करते हुए पाये जाते हैं। इसके *अतिरिक्त जुआ खेलना, जेब काटना भी धोखाधड़ी के उदाहरण हैं।*

(3) उग्र प्रवृत्तियाँ (Aggressive tendencies)—अनेक बाल अपराधियों में उग्र व्यवहार करने की प्रवृत्ति मिलती है। उग्र व्यवहार की अभिव्यक्ति कुसमायोजित बालक सजीव एवं निर्जीव वस्तुओं को क्षति पहुँचाकर करते हैं। उग्र एवं आक्रामक व्यवहार से इन अपराधियों को तनाव से तात्कालिक मुक्ति मिलती है और सुख की अनुभूति होती है। कुछ प्रमुख उग्र व्यवहार जिन्हें अपराध माना जाता है, वे हैं

(i) घर, स्कूल अथवा सार्वजनिक सम्पत्ति को नुकसान पहुँचाना।
(ii) स्कूली सामाजिक एवं नैतिक नियमों का उल्लंघन करना।
(iii) दूसरों को शारीरिक तथा मानसिक कष्ट पहुँचाना।
(iv) निरीह पशुओं को यातना देना या उत्पीड़ित (torture) करना।
(v) मारपीट तथा गाली गलौज करना।
(vi) हत्या करना।
(vii) आत्महत्या करना आदि।

(4) लैंगिक अपराध (Sex Delinquency)—किशोरों में कुसमायोजन लैंगिक अपराधों के रूप में भी प्रकट होता है। प्राय निम्नलिखित प्रकार के लैंगिक अपराध किशोरों द्वारा किये जाते हैं

(i) हस्त मैथुन
(ii) समलिंगी मैथुन
(iii) विषम लिंगी मैथुन
(iv) बलात्कार
(v) पशुओं के साथ मैथुन
(vi) अश्लीलता का प्रदर्शन

(vii) विषमलिंगियों के साथ अभद्र व्यवहार एवं छेड़छाड़

(viii) स्कूल के या सार्वजनिक भवनों की दीवारों पर भद्दे चित्र बनाना तथा अश्लील बातें लिखना।

(ix) अश्लील बातें तथा भद्दे मजाक करना आदि।

(5) पलायन या मनोड्डयन (Escapist tendency)—कुसमायोजन का यह प्रारूप वास्तविकता का सामना न कर उससे भागना है। जैसे—

(i) स्कूल से भाग जाना,

(ii) घर से भाग जाना आदि।

इन कार्यों के अतिरिक्त धूम्रपान, मद्यपान, नशीली दवाओं का सेवन, भीख माँगना, आवारागर्दी करना आदि ऐसे अपराध हैं जो बालकों के द्वारा किये जाते हैं तथा कानूनी दृष्टि से दण्डनीय है।

बाल अपराध की रोकथाम (Prevention of delinquency)

अंग्रेजी मे एक कहावत प्रचलित है (Prevention is better than cure) अर्थात 'रोकथाम उपचार से बेहतर है।' माता पिता, शिक्षक तथा समाज के सदस्यों का यह कर्तव्य है कि वे घर, विद्यालय और समाज मे ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करें जो बाल अपराध की रोकथाम करने मे सक्षम हो। उन्हे चाहिए कि वे बालकों के समक्ष अपने आचरण से उच्च नैतिक तथा चारित्रिक आदर्श उपस्थित करें। परिस्थितियों मे सुधार लाने के कुछ प्रमुख उपाय या सुझाव निम्नलिखित हैं

(1) अभिभावकों को शिक्षित करना (Educating parents)—अभिभावकों को बाल विकास, बाल व्यक्तित्व पर पर्यावरण के प्रभाव, बाल अपराध के मनोविज्ञान आदि से परिचित कराना, अपराध की रोकथाम की दृष्टि से बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। कोई भी बालक 'अपराधी बालक' के रूप में जन्म नहीं लेता। माता पिता शिक्षक और समाज अपनी गलत नीतियों रीतियों से उन्हे अपराधी बनाते हैं।

अत अपराधी बालक को शिक्षित करने से पहले इस दृष्टि से वयस्कों को शिक्षित करना पहली आवश्यकता है। बाल विकास का समुचित ज्ञान प्राप्त कर माता पिता एवं शिक्षक बालक को उचित समय पर या बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं पर समुचित निर्देशन देकर उन्हें अपराध की अन्धी गलियों मे भटकने से रोक सकते हैं।

(2) बालकों को उचित मनोवैज्ञानिक एवं भौतिक परिवेश मे रखना (Keeping the child in proper psychological and physical environment)—घर विद्यालय तथा समाज का वातावरण ऐसा होना चाहिए जिसमे बालक की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो। वातावरण ऐसी सुविधाओं से युक्त होना चाहिए जिनके द्वारा बालक की भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा

सके । माता पिता के सम्बन्धो मे तनाव, गृह कलह आदि वातावरण को प्रदूषित करते हैं । यदि वयस्क जन पारिवारिक प्रदूषित वातावरण को सुधारने मे किन्ही कारणो से असमर्थ हो तो बालक को उस वातावरण से दूर आवासीय विद्यालयो (Residential School) बाल केन्द्रो (child centres) अथवा विशिष्ट विद्यालयो (special schools) मे रखना लाभप्रद होता है ।

(3) स्कूल मे समुचित शिक्षा सुविधाएँ प्रदान करना (Providing proper educational facilities in school)—स्कूलो मे आवश्यक शैक्षिक सुविधाओ का अभाव छात्रो मे कुसमायोजन विकसित करता है । खचाखच भरी हुई कक्षाएँ शिक्षको का अभाव नीरस पाठ्यक्रम एव शिक्षण विधि, भयप्रद परीक्षण पद्धति, खेलकूद एव अन्य मनोरजक कार्यक्रमो का अभाव आदि कुछ ऐसे कारण हैं जो अच्छे बालको को भी अपचारी बना सकते हैं । अत स्कूलो मे योग्य शिक्षको की नियुक्ति, पाठ्य एव पाठ्य सहगामी क्रिया कलापो की व्यवस्था, समुचित परीक्षा प्रणाली, अनुशासन आदि की तरफ ध्यान देकर बालको के लिए नैतिक, धार्मिक तथा यौन शिक्षा की उचित व्यवस्था प्रदान करने से बालको मे समुचित सामाजिक एव नैतिक मूल्यो का विकास होगा ।

(4) समाज मे व्याप्त बुराइयों को दूर करना (Irradicating evils of society)—सामाजिक पर्यावरण म उपस्थित एव प्रचलित बुराइयाँ बाल अपराध के प्रमुख कारण है । समाज मे व्याप्त छुआछूत, जातिवाद, भेदभाव, चोर बाजारी, घूस खोरी आदि बुराइयाँ बालको और किशोरो की भावनाओ को बुरी तरह प्रभावित करती है । बालक के मन में यदि ऐसी भावना भर जाय कि इस तरह के गलत काम करने वाले मौज-मस्ती के साथ सम्मानित जीवन व्यतीत कर रहे हैं फिर तो किसी प्रकार के सुधार की आशा नही है । यदि इसके विपरीत इन बुराइयो को दूर करने के लिए प्रभावी एव कठोर कदम उठाए जायँ तथा इन कुकृत्यो को करने वाले लोगो को न्यायालय के द्वारा दण्डित किया जाय, उनको समाज मे सम्मान और प्रतिष्ठा न मिले तभी बालक अपराध की ओर कदम नही बढ़ायेंगे ।

बाल अपराध तथा शिक्षा (Juvenile Delinquency and Education)

बाल अपराध की रोकथाम हेतु ऊपर कुछ सुझाव दिये गये हैं । सामान्य विद्यालयो मे बाल अपराध की रोकथाम के लिए कुछ अन्य उचित सुझावो का अनुपालन कर विद्यालय के वातावरण को इतना स्वस्थ, सरस और प्रेरणादायक बनाया जा सकता है कि बालक बाल अपराध की ओर बढ़ने का ही अवसर नही पायेंगे । उपयोगी शिक्षा एव निर्देशन प्रदान करने के लिए स्कूल के व्यवस्थापको तथा शिक्षको को निम्नलिखित बातो की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए

(1) विद्यालय के आस पास के वातावरण को दूषित नही होने देना चाहिए । विद्यालय परिसर स्वच्छ, सुन्दर और आकर्षक रहे, ऐसा प्रबन्ध करना आवश्यक है ।

साथ ही साथ विद्यालय के निकट गन्दी आदतो वाले बाहरी तत्वा जैसे गुण्डे, बदमाश खोमचे वालो को जमघट लगाने से रोकना चाहिए। विद्यालय के आस पास शराब खाना, जुए का अड्डा आदि चलाने की अनुमति नही देनी चाहिए।

(ii) विद्यालय मे सहयोग व मैत्रीपूर्ण वातावरण का सजन करना चाहिए

(iii) पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियो, पाठ्य सहगामी क्रियाओं का निर्धारण बालको की रुचि एव क्षमता के अनुरूप होनी चाहिए। प्रत्येक बालक को किसी न किसी कायक्रम म भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

(iv) यदि विद्यालय मे विकलाग, मन्दबुद्धि तथा प्रतिभाशाली बालक हो तो उनकी शिक्षा के लिए पृथक विशेष कक्षाओ की व्यवस्था करनी चाहिए। साथ ही साथ उनको अन्य सामान्य बालको को मुख्य धारा में मिलाने के लिए विशेष प्रकार के कायक्रमो का सचालन आवश्यक है।

(v) विद्यालय से निरन्तर अनुपस्थित रहने वाले अथवा बीच मे भाग जाने वाले बालको के अभिभावको से सम्पक स्थापित करना चाहिए तथा इनके पीछे क्या कारण हैं, जानकर उसका निवारण तुरन्त करना चाहिए।

(vi) विद्यालय मे उच्च जीवन मूल्यो, आदर्शो एव लक्ष्यो को बच्चा के सामने प्रस्तुत करना चाहिए। साथ ही साथ शिक्षको को सवदा यह प्रयास करना चाहिए कि उनका निजी व्यवहार उच्च आदर्शो के अनुरूप हो।

(vii) विद्यालय मे नैतिक, धार्मिक तथा यौन शिक्षा की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। बालको पर कठोर अनुशासन लादना अथवा अनुचित काय करने पर उन्हे प्रताडित एव शारीरिक दण्ड नही देना चाहिए। इसके स्थान पर स्व अनुशासन की आदतो का विकास करना चाहिए तथा उन पर कुछ कार्यों को करने का उत्तरदायित्व भी सौंपना चाहिए।'

(viii) गरीब छात्रा को आर्थिक सहायता देना तथा उनके द्वारा किये गये अच्छे कार्यों पर उन्हे पुरस्कृत करना चाहिए।

(ix) सभी स्तरो पर व्यावसायिक शिक्षा एव 'हॉबी क्लब्स' (Hobby Clubs) की व्यवस्था की जानी चाहिए।

बाल-अपराध का उपचार (Treatment of Juvenile Delinquency)

बाल अपराधी अल्पवयस्क होते हैं। अत न्यायालयों तथा समाज के द्वारा वयस्को के समान उन्हे दण्डित नहीं किया जाता। उनके अपराध की निरन्तरता तथा गम्भीरता के अनुरूप उनके लिए उपचारात्मक व्यवस्था की जाती है। अत इनको विशेष सुधार—विद्यालयो (Reformatory Schools) मे रखा जाता है। इन विशेष विद्यालयो म विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षक एव मनोचिकित्सक बाल अपराधियो का

उपचार विशेष मनोवज्ञानिक तकनीकों द्वारा करते हैं । बाल अपराधियो की समस्याओं की प्रकृति के अनुरूप निम्नलिखित विधियो मे से किसी एक को या एक से अधिक को अपनाकर उपचार का काय किया जाता है

(i) पुनर्शिक्षा (Re-education)—अपराधी बालक द्वारा अर्जित समस्यात्मक व्यवहार, नैतिकता के ह्रास एव नकारात्मक अभिवृत्तियो के कारण होता है । अत उस व्यवहार का उन्मूलन करने हेतु बालको को दुबारा सही जानकारी देने और समुचित अभिवृत्ति के विकास के लिए समस्या के क्षेत्रो मे उसे स्पष्ट, सही एव विस्तृत ज्ञान देने की आवश्यकता है जैसे—यौन शिक्षा, नैतिक शिक्षा, व्यक्ति और समाज का परस्पर सम्बन्ध आदि ।

(ii) भावविरेचन (Abreaction)—बाल अपराध की इस उपचारात्मक विधि म अपनी दमित इच्छाओ एव मानसिक ग्रन्थियो को चेतना के स्तर पर लाकर व्यक्त करने के लिए अवसर प्रदान किया जाता है । यह काय मनोचिकित्सक या शिक्षक ऐसे वार्तालाप के द्वारा करता है जिसमे मुक्त अभिव्यक्ति (free expression) तकनीकी का प्रयोग किया जाता है ।

(iii) अनुनय (Persuation)—इस विधि मे बालक को अपराध न करने के लिए तरह तरह से समझाया जाता है । यह एक प्रकार का अनुनय विनय होता है । इसमे चिकित्सक बालक के समक्ष अपराधो को छोडने के लिए तक प्रस्तुत करता है । चिकित्सा का परिणाम बालक की स्वेच्छा पर निभर करता है । इस विधि के उपयोग से अपराध जो कुसमायोजन का एक लक्षण मात्र है, दूर हो सकता है । किन्तु अपराध के कारण को दूर तो किया नहीं जाता और कुसमायोजन दूसरे लक्षणो के रूप मे प्रकट हो सकता है । अत यह विधि बहुत प्रभावकारी नही होती ।

(iv) सुझाव एव परामर्श (Suggestion and Counselling)—बालक स्वभावत सुझाव ग्रहण करने वाला होता है । यदि उ ह समुचित सुझाव दिये जाएँ तो वे सुधर सकते हैं । परामश ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक अपनी समस्याओ को स्वय समझता है और परिभाषित करता है तथा समस्या को दूर करने के लिए अपने को तयार करता है । परामर्श के द्वारा मनोचिकित्सक अथवा शिक्षक बालक के बिखरे हुए कमजोर 'अह' (ego) को व्यवस्थित एव शक्तिशाली बनाता है । फलस्वरूप बालक अपनी समस्याओ के समाधान म स्वय को सक्षम पाता है ।

(v) वातावरण परिवतन उपचार (Environmental Treatment)—अभी तक जिन उपचार तकनीको का हमने उल्लेख किया, वे सभी अपराधी बालक की मनोवृत्ति मे परिवतन लाने का प्रयास करते हैं । किन्तु इस विधि मे विशेष रूप से बालक के घर तथा विद्यालय के वातावरण को सुधारने का प्रयास किया जाता है । चिकित्सक, बालक के अपराध के कारणो को ज्ञात कर उसी के अनुरूप बालक के प्रति माता पिता तथा शिक्षकों की अभिवृत्ति को बदलने की चेष्टा करते हैं । शिक्षकों

एव अभिभावकों को यह समझाया जाता है कि वे घर एव विद्यालय के वातावरण को इस प्रकार बदले कि बालक की उचित मांगो एव आवश्यकताओ की पूर्ति हो सके। ऐसा सम्भव न होने पर बालक को घर से या विद्यालय से हटाकर दूसरे विद्यालयो या सुधार विद्यालयो मे रखा जाता है। वातावरण बदलने से बालक का कुसमायोजन समाप्त होता है और अपराध से वह मुक्त हो जाता है।

(vi) व्यवहार मे परिवर्तन (Behaviour Modification)—व्यवहार परिवर्तन की प्रविधि बाल अपराध के उपचार मे एक नवाचार है। यह प्रविधि स्कीनर के क्रिया प्रसूत अनुबन्धन (operant conditioning) के अधिगम सिद्धान्त पर आधारित है। (देखिए अध्याय 5) बाल अपराध जन्मजात नही है। यह सीखा हुआ एक व्यवहार है। अत इस व्यवहार को बदला जा सकता है। इस प्रविधि मे अपराधिक व्यवहार को 'दण्डित' एव वाछित व्यवहार को 'पुरस्कृत' कर (पुनर्बलित कर) नये एव वाछित व्यवहार को पुष्ट किया जाता है तथा आपराधिक व्यवहार का विलोप कर दिया जाता है। सामान्यत इस प्रविधि मे आवश्यक व्यावहारिक कौशलो का प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है और अवाछित उपचार व्यवहार का विलोपन (extinction) किया जाता है। इस प्रविधि को असामाजिक व्यवहार के उपचार मे उल्लेखनीय सफलता मिली है।

अभ्यास के प्रश्न

1 समायोजन का अर्थ स्पष्ट करते हुये समायोजन प्रक्रिया के मुख्य तत्वो का वर्णन कीजिए।

2 समस्यात्मक बालक किसे कहते हैं? इनकी पहचान हेतु आप किन विधियो का सहारा लेंगे?

3 कुसमायोजन क्या है? कुसमायोजित व्यवहार के दो उदाहरण दीजिए।

(गोरखपुर विश्वविद्यालय, 1989)

4 समस्यात्मक बालको का वर्गीकरण करते हुये समस्यात्मक व्यवहारो के कारणो की समीक्षा कीजिए।

5 समस्यात्मक व्यवहार के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हुये उपचारात्मक विधियों का सक्षिप्त वर्णन कीजिए।



19

शारीरिक विकलांग बालक

[PHYSICALLY HANDICAPPED CHILD]

एक बालक जो किसी ऐसे शारीरिक दोष से ग्रसित है जिसके कारण उसके शैक्षिक, व्यावसायिक, संवेगात्मक या सामाजिक समायोजन में बाधा उपस्थित होती है, उसे शारीरिक विकलांग कहते हैं। शारीरिक अपंगता के कारण इन बालकों को आसानी से पहचाना जा सकता है। शारीरिक विकलांग बालकों का वर्गीकरण उनके दोष ग्रसित अंगों या तन्त्रों के आधार पर निम्नलिखित पाँच वर्गों में किया जा सकता है

(1) चक्षु विकलांग (Visually handicapped)
(2) श्रवण विकलांग (Aurally handicapped)
(3) वाक विकलांग (Speech handicapped)
(4) विरूपित (Crippled)
(5) शरीर से अस्वस्थ अथवा अस्वस्थ विकलांग (Unhealthy handicapped)

विकलांगता का दुष्परिणाम (Adverse effect of handicap)

शारीरिक दोष एवं विरूपता का बहुत गहरा प्रभाव विकलांग बालकों के व्यक्तित्व पर पड़ता है। उनमें आत्मग्लानि की भावना बढ़ने लगती है। जीवन की वास्तविकताओं से वे अपने को अलग करने लगते हैं। वे अन्तर्मुखी होने लगते हैं और उनमें मानसिक रोगों के लक्षण पनपने लगते हैं। उनका व्यक्तित्व गलत मोड़ लेकर असामाजिक धाराओं की ओर उन्मुख होने लगता है। बाल अपराध एवं अपराधी प्रवृत्ति उनमें प्रबल होने लगती है। विकलांग बालकों को सफलतापूर्वक निर्देशित एवं शिक्षित करने हेतु हमें उनकी अपंगता, उससे उत्पन्न प्रभाव एवं कुसमायोजन को भली भाँति समझना होगा।

अपंग बालकों में रुचि लेने की प्रवृत्ति अभी नवीन है। कुछ दशकों पूर्व ही मनोवैज्ञानिकों और शिक्षाशास्त्रियों ने विकलांग बालकों का व्यवस्थित अध्ययन, उपचार एवं शिक्षा के सम्बन्ध में कार्य करना आरम्भ किया है।

विकलागों की शिक्षा के उद्देश्य (Goals of education for physically handicapped)

शारीरिक विकलागो की शिक्षा उनकी अगमता की प्रकृति पर निर्भर करती है। किन्तु सभी प्रकार के विकलागो की शिक्षा के कुछ प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

(1) उपकरणात्मक विषयो म उच्चतम स्तर की प्रभावकारिता प्राप्त करना।

(2) विशिष्ट प्रकार की विकलागता के सन्दर्भ में ऐसे पाठ्यक्रमो का निर्माण एव अनुसरण करना और शिक्षण अथवा प्रशिक्षण की ऐसी व्यूह रचनाओ को निर्धारित करना जिनके द्वारा विकलाग प्रभावकारी एव उपयोगी जीवनयापन कर सके।

(3) विकलाग स्कूली बालको के मानसिक एव शारीरिक स्वास्थ्य रक्षा की पूर्ण व्यवस्था करना।

(4) बालको म प्रेरणा का ऐसा प्रारूप जाग्रत एव विकसित करना जो उनम स्कूल एव स्कूल के बाहर उपलब्धि करने की आकाक्षा एव प्रेरणा भर सके।

(5) विकलाग बालको के मन मे एसी अभिलाषा एव इच्छा जाग्रत करना कि वे सामान्य व्यक्तियो के क्रिया कलापो तथा कार्यक्रमो मे भाग ले।

(6) विकलागो म यथार्थ आत्म सम्प्रत्यय (realistic self concept) विकसित करना।

सभी प्रकार के विकलागो की शिक्षा के उपयुक्त सामान्य उद्देश्यो की ओर ध्यान देना सभ्य प्रजातान्त्रिक एव समाजवादी देश के लिए आवश्यक है। किसी भी सामाजिक प्रणाली की परिपक्वता की महत्त्वपूर्ण कसौटी है कि वह समाज अपने विकलागो एव परित्यक्त सदस्यो की ओर कितना ध्यान देता है।

1 चक्षु विकलाग (Visually handicapped or blind)

चक्षु विहीनता सरलता से पहचानी जा सकने वाली विकलागता है। चक्षु हीनता एक ऐसा दृष्टि विकार है जिसके कारण बालक दृश्य सामग्रियो के प्रयोग से वंचित रह जाता है और फलस्वरूप उसकी शिक्षा बाधित होती है।

चक्षु विकलागता के प्रकार—शैक्षिक दृष्टि से चक्षु विकलाग बालको को दो वर्गों म विभाजित किया जा सकता है—

(1) नेत्रहीन (Blind)—इस वर्ग म वे सभी चक्षु विकलाग बालक आते हैं जो जन्म से ही पूर्ण या आशिक रूप से अधे होते हैं या बचपन मे ही पूर्ण या आशिक रूप से अधे हो जाते है। ऐसे बालको की शिक्षा सामान्य विद्यालयों मे सम्भव नही हो पाती है।

(ii) आंशिक दृष्टि (Partially vision)—आंशिक दृष्टि बालक वे हैं जो उपचार या चश्मे (Lenses) की सहायता से अधिगम प्रक्रिया में दृश्य सामग्रियों का उपयोग कर लेते हैं।

चक्षु विकलांगता के कारण—नेत्ररोग विशेषज्ञों के अनुसार चक्षु विकलांगता के अनेक कारण हैं। सामान्य दृष्टि वाले व्यक्ति भी लापरवाही, उचित उपचार न करवाने एवं बीमारी में सावधानियाँ न बरतने आदि के कारण अन्धे हो जाते हैं। कुपोषण, धूप, धूल, धुआँ भी आंशिक अन्धता (partial blindness) रतौंधी, रंग-अन्धता (colour blindness) आदि को जन्म देते हैं। चक्षु विकलांगता के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं

(i) संक्रामक रोग (Infectious disease)—60% से 70% तक संक्रामक रोगों से ग्रसित बालक प्रायः असावधानी के कारण चक्षुहीन हो जाते हैं। रक्त विकार के कारण भी चक्षुहीनता पायी जाती है।

(ii) दुर्घटना एवं चोट (Accident or Injury)—सुरक्षा एवं निर्देशन के अभाव में, मारपीट या दुर्घटना के कारण नेत्र में लगी घातक चोट भी चक्षुहीनता का कारण बन जाती है।

(iii) वंशानुगत (Hereditary)—कभी कभी वंशानुगत कारणों से भी अन्धता होती है।

(iv) साधारण रोग (Common disease)—विभिन्न नेत्ररोग व अन्य शारीरिक रोग भी चक्षुहीनता का कारण हो सकते हैं।

(v) विष का प्रभाव (Effect of poisons)—विष का प्रभाव भी चक्षुहीनता का एक कारण हो सकता है।

चक्षु विकलांग बालकों की विशेषताएँ एवं व्यक्तित्व

एक अन्धा बालक अनन्त अन्धकार में रहता है। संसार में जीना उसके लिए बहुत ही कठिन, चिढ़ाने, डराने और झुंझलाने वाला हो सकता है। आशंका यह है कि बालक कुण्ठाग्रसित होकर कल्पना एवं अयथार्थ की दुनिया में भटक न जाय। चक्षुहीनता बालकों के विकास और व्यक्तित्व के निम्नलिखित आयामों को प्रभावित करती है।

चक्षुहीन बालक की मानसिक संरचना

चक्षुहीन बालकों में निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं

(i) घटी हुई शक्ति एवं गतिशीलता—समुचित रूप से न देख पाने के कारण नेत्रहीन बालक उत्साह विहीन, शक्तिविहीन और गतिविहीन बन जाते हैं। वे कोई कार्य स्वयं करने में और कहीं जाने से घबराते हैं।

(ii) पहल का अभाव—हीनता की भावना और संवेगिक अवरोधों के कारण दृष्टि दोषयुक्त बालकों में किसी भी कार्य के लिए पहल करने में हिचक होती है।

(iii) हीनता की भावना—हीनता की भावना नेत्रहीन बालकों के प्रतिपूरक (compensatory) व्यवहारों म प्रतिफलित होती है।

(iv) अत्यधिक चिन्ता—नेत्रहीन बालक अपने वतमान भविष्य के बारे म अत्यधिक चिन्ता करते हैं।

(v) स्वैर कल्पना (Phantasy) की दुनियां मे आश्रय लेना—बालक जो कुछ वास्तविक जीवन मे नही प्राप्त कर सकते, उसे स्वैर कल्पना की दुनिया मे कल्पित रूप में प्राप्त करने की आदत के शिकार बन जाते हैं।

चक्षु विकलांगता का व्यक्तित्व पर प्रभाव

चक्षु विकलांगता बालकों के व्यक्तित्व पर निम्नलिखित प्रभाव डालती है—

(i) गतीय क्रियाओं मे अवरोध—अन्धे बालको की गतीय क्रियाएँ बहुत अधिक मात्रा म सीमित रहती हैं क्योंकि चक्षुहीनता सामा य शारीरिक क्रिया कलापो मे अवरोध उत्पन्न करती हैं।

(ii) इच्छा विफलता—चक्षु विहीनता इन बालको की स्वाभाविक इच्छाओ, आकांक्षाओ एव आवश्यकताओ की पूर्ति मे बाधा खडी करती ह और बालको की इच्छाओ को बाधित करती है।

(iii) बढा हुआ स्नायुविक और शारीरिक तनाव—सीमित गतिशीलता, अत्यधिक मेहनत, किन्तु अत्य त अल्प इच्छाओ का पूरा होना आदि ऐसे कारण ह जो अन्धे बालकों मे स्नायुविक एव शारीरिक तनाव को बेहद बढा देते ह।

(iv) सामाजिक अपर्याप्तता—बालक अनुभव करता है कि वह अ य बालको से भिन्न है। यह उसके मन मे यह भाव भरती है कि सामाजिक दृष्टि से वह बहुत निरीह, अयोग्य एव अपर्याप्त है।

चक्षु विकलांग बालकों की शिक्षा (Education of Visually Handicapped)

यह प्रचलित धारणा है कि अन्धे इतने अधिक विकलांग हैं कि वे स्वय अपनी देखभाल या अपनी जीविका नही चला सकते। लोग उन्हें अक्सर समाज का अनुत्पादक अग एव परिवार के लिए भार समझते हैं। यह सत्य नही है, आज हम देखते हैं कि अनेक अन्धे लोग काम धन्धो मे लगे हुए हैं। कुछ खास प्रकार के धन्धो मे तो उन्हें आँख वालो स भी अधिक पसन्द किया जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि उन्ह समुचित शिक्षण एव प्रशिक्षण प्रदान किया जाय।

अपनी अपगता के बावजूद अन्धे या आशिक दृष्टिहीन समाज म समुचित समायोजन कर सकें, यही इनकी शिक्षा का उद्देश्य है। इस काय के लिए विशिष्ट रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता है।

(1) ब्रेल लिपि (Braille) का ज्ञान कराना एव अ य उपयोगी हस्तकलाओ एव कौशलो का प्रशिक्षण देना चक्षु विकलांगो के शिक्षण का अग है। यह काय विशेष शिक्षा सस्थाओ द्वारा किया जाता है।

(2) विशेष प्रकार के उपकरणों की सहायता से चक्षु विकलांगों को लिखना, पढ़ना, सामान्य गणित, भूगोल और अन्य स्कूली विषयों की शिक्षा दी जा सकती है।

(3) शिक्षण एवं प्रशिक्षण के अतिरिक्त सबसे बड़ी आवश्यकता है इन बालकों का सामाजिक समायोजन में सहायता देना और इनमें आत्म विश्वास जाग्रत करना। यह कार्य विभिन्न पाठ्य सहगामी क्रियाओं जैसे—खेलकूद, व्यायाम, ड्रिल, योगासन, संगीत आदि द्वारा किया जा सकता है।

अभिभावकों एवं समाज के सदस्यों में चक्षु विकलांगों के प्रति समुचित अभिवृत्ति विकसित करना होगा ताकि वे इन बालकों को आवश्यक सहायता एवं प्रोत्साहन प्रदान कर सकें।

यह सत्य है कि चक्षु विकलांगों के पास बाह्य दृष्टि नहीं है किन्तु समुचित शिक्षण द्वारा उनमें ज्ञान और कौशल की ज्योति जगाकर आन्तरिक दृष्टि विकसित की जा सकती है जिसके सहारे वे वातावरण में अवस्थित प्रत्येक वस्तु को देख सकते हैं, कार्य कर सकते हैं और समाज के लिए उपयोगी नागरिक बन सकते हैं।

भारत में चक्षु विकलांगों की शिक्षा में अब विशेष रुचि ली जा रही है। नेशनल एसोसियेसन फोर द ब्लाइण्ड इस क्षेत्र में कार्य करने वाली व्यक्तिगत और सामाजिक संस्थाओं के क्रिया कलापों को समन्वित करने का प्रयास करती है। चक्षु विकलांगों के लिए अनेक अन्ध विद्यालय तो खोले ही गये हैं इसके साथ ही साथ औद्योगिक गृहशाला, शरण कार्यशाला (sheltered workshop) अन्धे व्यक्तियों के प्रशिक्षण और व्यावसायिक नियोजन के लिए चलाये जा रहे हैं। चक्षु विकलांगों की शिक्षा के क्षेत्र में अनुसंधान एवं शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु देहरादून में अवस्थित 'राष्ट्रीय दृष्टिहीन विकलांग संस्थान' 1971 से बालकों के सर्वांग कल्याण के लिए कार्यरत है।

2 श्रवण विकलांग (Aurally Handicapped)

श्रवण विकलांगता एक ऐसी शारीरिक अक्षमता है जो बालक को मौखिक माध्यमों द्वारा शिक्षा ग्रहण करने में बाधक होती है। दृष्टि के समान ही श्रवण ज्ञानार्जन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। किन्तु दुर्भाग्यवश इसकी ओर अभी उतना ध्यान नहीं दिया गया है। विकलांगता को 3 वर्गों में विभाजित किया जा सकता है

(i) जन्मजात बधिर (Born deaf)—इस श्रेणी में ऐसे विकलांग बालक आते हैं जो जन्म से ही बधिर हैं। चूंकि ये सुन नहीं सकते अतः बोल भी नहीं पाते। इन्हें सामान्य बोल चाल की भाषा में गूंगा बहरा (deaf mute) कहते हैं।

(ii) ऊँचा सुनने वाले (Hard of hearing)—इस वर्ग में ऐसे बालक आते हैं जिनकी श्रवण शक्ति कम है और श्रवण सहायक यन्त्रों के माध्यम से इनकी कुछ सहायता की जा सकती है।

(iii) ऐसे लोग जो बडे होने पर दुर्घटनाओ, चोट आदि के कारण बहरे हो जाते हैं।

श्रवण विकलांगता के कारण (Causes of Aural Handicap)

श्रवण विकलांगता श्रवणेन्द्रिय मे विकार उत्पन्न हो जाने के कारण होता है। श्रवण दोष के आधारभूत कारणो का जानना कठिन काय है। फिर भी विभिन्न सम्भावित कारण निम्नलिखित हैं

1 जन्मजात बधिरता

(i) गर्भावस्था म माता के रोगी होने पर अथवा विष पान मदिरापान, अन्य नशीले पदार्थों का सेवन करने के कारण गर्भस्थ शिशु की श्रवण शक्ति नष्ट हो सकती है।

(ii) कभी कभी श्रवण विकलांगता वंशानुगत भी होती है।

(iii) असुरक्षित प्रसव, प्रसव के समय चोट लगने, विकृत रक्त संचार रक्त म श्वेत रक्ताणु का अनुपात बिगडने, ऑक्सीजन की कमी आदि के कारण श्रवण इन्द्रिय विकृत हो सकती है।

2 जन्म पश्चात बधिरता

(i) बीमारी—खसरा, चेचक, टाइफाइड, मम्स, कुकुरखाँसी आदि रोग भी श्रवण विकलांगता के कारण हैं। मध्य कर्ण म घाव या मवाद हो जाने तथा मध्य कर्ण की हड्डियो मे अतिरिक्त कैल्सियम के जमाव के कारण श्रवण तन्त्र मे विकार उत्पन्न हो जाता है और लोग कम सुनने लगते हैं।

(ii) दुघटना—दुघटना के कारण चोट लगने से मध्य कर्ण मे पानी भर जाने से बहुत अधिक आवृत्ति वाली (तेज ध्वनि) के कारण श्रवण शक्ति का ह्रास होता है।

(iii) मनोवैज्ञानिक एव संवेगात्मक कारणो से भी लोगो को बहरा बनते हुए देखा गया है। वृद्धावस्था म शारीरिक शक्ति क्षीण होने के साथ श्रवण शक्ति भी क्षीण हो जाती है।

श्रवण विकलांग बालकों की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ

बहरे और अर्ध बहरे बालक कई प्रकार से बाधित होते हैं। जीवन में अनेक ऐसे सुख जिनके लिए सामान्य श्रवण क्षमता एक आवश्यक अंग है, उनसे वे वंचित रह जाते हैं। उदाहरण के लिए, वे चलचित्रों टी॰ वी॰, रेडियो, थियेटर, संगीत, भाषण या प्रवचन आदि अनेक रोजमर्रा के वाचिक परस्पर क्रियाओ का पूर्ण आनन्द नही उठा पाते।

मानसिक विकास—श्रवण विकलांगता बालको मे तनाव उत्पन्न करती है। यह सामान्य तथा मानसिक और पेशीय थकान उत्पन्न करने वाली होती है। श्रवण

विकलाग के कारण बच्चे, सामान्य बालको की तुलना मे ज्यादा देर से सीख पाते हैं और इस कारण उनके लिए सीखना बहुत कठिन हो जाता है। इस प्रकार श्रवण विकलागता इन बालको के मानसिक विकास मे बाधा बन जाती है।

सामाजिक विकास—बधिर बालक को सामाजिक समायोजन के क्षेत्र मे बडी कठिनाई का सामना करना पडता है क्योकि उसके सामाजिक अनुभव सामान्य बालको की तुलना मे कम समृद्ध होते हैं। वह दूसरों को कम समझ पाता है और दूसरे उसे कम। दूसरे के साथ उसके सम्बन्ध इस अपगता के कारण प्रभावित होते हैं। अत सामान्य बालको की तुलना मे सामाजिक सुसमायोजन की सम्भावना उनमें कम रहती है। अधिकाश अध्ययनों मे यह पाया गया है कि बधिर बालक सामान्य बालको की तुलना मे अधिक अन्तर्मुखी, कम दबग अथवा प्रभावी, कम आत्म आग्रही (self assertive) होते हैं। एच० डब्ल्यू० कुरी ने अपने एक अध्ययन मे पाया कि श्रवण विकलागता का बाल अपराध से घनिष्ट सम्बन्ध है।

श्रवण विकलाग बालकों की शिक्षा (Education of Aurally Handicapped)—एकदम बहरे बालको की शिक्षा विशेष प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षको द्वारा विशेष विद्यालय मे ही सम्भव होगी। इन विशिष्ट विद्यालयो मे उन्हे श्रवण सम्बन्धी प्रशिक्षण देना पडेगा ताकि वे भाषा की समझ और बोलने की क्षमता विकसित कर सकें।

ऊँचा सुनने वाले या अध बहरे बालकों को ओष्ठ सचालन द्वारा पढना (lip reading) सीखने के पश्चात सामान्य स्कूल की कक्षाओ मे समायोजित किया जा सकता है। किन्तु यहाँ इस बात पर ध्यान विशेष देना पडेगा कि अन्य बालक श्रवण विकलांगो का मजाक न उडावें।

जो किसी दुर्घटना या बीमारी के कारण बहरे हो गये हैं उनके पुनर्वास की समस्या बहुत महत्वपूर्ण है क्योकि इनका समाज मे समायोजित होना कठिन है। पहले वे सामान्य जीवन व्यतीत कर चुके हैं अचानक विकलाग बन जाने के कारण अपने वातावरण को सर्वथा भिन्न पाते हैं अत वे अवसाद ग्रसित (depressed) अन्तर्मुखी बन जाते है। यह बात उनके समायोजन पर दूरगामी प्रभाव डालती है। यदि उन्हें अपने स्वजनो परिवार के लोगो से सहानुभूति नही मिलेगी तो वे जीवन मे कभी भी समायोजित न हो सकेंगे। अनुसधानो के आधार पर यह ज्ञात हुआ है कि बहरे लोगो मे सामान्य जन की तुलना म ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता अधिक होती है वे कम थकते हैं तथा सामाजिक परस्पर व्यवहार अथवा बात व्यवहार मे अधिक सावधान रहते हैं।

श्रवण विकलागो को किसी प्रकार की शक्षिक सुविधा प्रदान करने के पूर्व यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि यह पता लगा लिया जाय कि व्यक्ति म बधिरता की मात्रा कितनी है। बधिरता के निदान हेतु बहुत जटिल एव सवेदनशील उपकरणो की आवश्यकता पडती है। जसे ही बालकों की बधिरता की मात्रा एव प्रकृति ज्ञात

हो जाती है, उन्हें इसके आधार पर वर्गीकृत कर उनकी कक्षाओं का निर्माण कर उन्हें समूह में शिक्षा दी जा सकती है। अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि सामूहिक श्रवण सहायक यन्त्रों की सहायता से इन्हें सामूहिक शिक्षा दी जा सकती है और यह प्रभावकारी भी होती है।

बधिर बालकों की शिक्षा का आवश्यक अंग है उनके माता-पिता को ऐसा मार्गदर्शन प्रदान करना जो उनको समायोजन में सहायता प्रदान करे क्योंकि कई बार ऐसा देखने में आया है कि माता पिता श्रवण विकलांग बालक की विकलांगता के दुष्परिणामों को नहीं समझते और अपने विकलांग बालक के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं जो उसे और भी कुसमायोजित बना देता है।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि अभिभावकों, प्रशिक्षित शिक्षकों एवं डाक्टरों द्वारा उचित समय पर दी गई सहायता श्रवण विकलांगों की शिक्षा में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है और श्रवण विकलांगों को सामान्य जीवनयापन की दिशा में बहुत आगे बढ़ा सकती है।

3 **वाक् विकलांगता (Speech handicapped)**

सामान्य वाक् ध्वनि का न होना ही वाक् विकलांगता है। वाक् विकलांग द्वारा बोली गयी बात को श्रोता नहीं समझ पाते या विलम्ब से समझते हैं। वाक् दोष से हमारा तात्पर्य है, अस्पष्ट उच्चारण, असंगत ध्वनि, हकलाना, तुतलाना आदि। शाब्दिक दृष्टि से वाक् विकलांगता ऐसा वाणी विकार है जिसके कारण वाणी स्पष्ट और नियमित शब्दों के स्थान पर केवल ध्वनि के रूप में प्रकट होती है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वाक् विकलांग की वाणी अस्पष्ट और अनियमित होती है। इसमें शब्दों के स्थान पर केवल ध्वनि मात्र ही निकलती है।

वाक् विकलांगता के प्रकार—वाक् विकलांगता को निम्नलिखित चार वर्गों में विभाजित किया गया है—

(i) वाक् दोष (Articulatory disorders)—ध्वनि स्थानान्तरण, विचलन, विकृति एवं इनके सम्मिलन से उत्पन्न दोषों से युक्त बालकों को इस वर्ग में रखा जाता है। इस दोष के अनेक उदाहरण हमें नित्य विद्यालयों में या घरों में देखने को मिलते हैं। जैसे बालक 'मास्टर साहब' के स्थान पर 'मास्साब' आ रहा हूँ के स्थान पर 'आरा हूँ' आदि दोषपूर्ण उच्चारण करते हैं।

(ii) घोष दोष (Vocal disorders)—इससे प्रभावित व्यक्ति की वाक् ध्वनि की तीव्रता एवं आयाम में स्पष्ट विचलन पाये जाते हैं। वाक् ध्वनि में कम्पन, भारीपन, अक्षरों का शब्दों के बीच से लुप्त हो जाना आदि इसके उदाहरण हैं।

(iii) वाणी स्खलन (Stuttering)—इस दोष में वाणी का प्रवाह सामान्य नहीं रहता। इससे ग्रसित व्यक्ति बोलते समय कई बार रुकता है या विराम लेता है और बोलने में हिचकिचाता है। स्वरों, शब्दों या वाक्यांशों को दुहराता है या लम्बा

खींचता है, कभी कभी इन व्यक्तियों में बोलते समय आँखों या चेहरे के भावों में, मांसपेशियों में तनाव तथा श्वांस लेने की अनियमितता भी पायी जाती है।

(iv) विलम्बित वाणी (Delayed speech)—कुछ बालकों में ध्वनि उच्चारण का विकास आयु के अनुरूप न होकर कुछ विलम्ब से होता है। सामान्यतः बालक 9 से 15 माह के बीच ध्वनि उच्चारण आरम्भ कर देते हैं किन्तु इस वर्ग में आने वाले बालक ऐसा नहीं कर पाते।

(v) तालू या ओष्ठ विकृति (Cleft palate and lips)— कुछ बालक जन्म से ही विकृत तालू या ओष्ठ वाले होते हैं। यह विकृति उन्हें कुरूप बनाने के साथ साथ वाणी विकलांग भी बना देती है।

वाक विकलांगता के कारण—वाक विकलांगता के कारणों को निम्नलिखित दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है

(i) शारीरिक कारण—वाक विकलांगता के शारीरिक कारणों में विकृत ओष्ठ या तालू, श्रवण विकृति, ग्रन्थि अनियमितता और प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात आदि हैं।

(ii) मानसिक कारण—माता पिता एवं बड़ों के कठोर व्यवहार, भाई बहनों से ईर्ष्या द्वेष, पारिवारिक कलह, माता पिता में से किसी का गुजर जाना आदि कुछ ऐसे कारण हैं जो बालक के संवेगात्मक समायोजन को इस हद तक प्रभावित कर देते है कि बालकों में वाक विकार जैसे हकलाना, तुतलाना आदि विकसित हो जाते हैं। यह हकलाना मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि से चिन्ता मनस्ताप (Anxiety neurosis) का लक्षण माना गया है।

वाक विकलांग बालकों की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ

वाक विकलांग को सामान्य बाल विकास में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अपने विचारों को अभिव्यक्त न कर पाने के कारण वह सभी साथियों से स्वयं को अलग कर लेता है। वह अन्तर्मुखी और आत्मकेन्द्रित बन जाता है। चूंकि उसकी वाणी दूसरों में झुंझलाहट उत्पन्न करती है इसलिए वह अत्यन्त संवेदनशील और आत्म सजग बन जाता है। कितनी बार तो दूसरों के प्रति उसके मन में वैमनस्य अथवा दुर्भावना भर जाती है। वह हीनता की भावना से ग्रसित हो जाता है। अपनी विकलांगता की अतिपूर्ति (over compensation) में वह लगा रहता है। इसमें भी असफल होने पर वह समाज विरोधी व्यवहार करने लगता है।

वाक् विकलांग बालकों की शिक्षा (Education of the speech defectives)

वाक विकलांगों को यदि समुचित रीति से सँभाला जाये तो वे शैक्षिक और सुधारात्मक क्रियाकलापों से बहुत लाभ उठा सकते हैं। ऐसे बालकों को उनके लिए अलग से चलाई जाने वाली संस्थाओं में जाकर नियमित रूप से सुधारात्मक कक्षाओं में उपस्थित रहना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर उन्हें मनोचिकित्सकों एवं कण्ठ रोग विशेषज्ञों के पास उपचार व परामर्श के लिए भेजा जा सकता है।

वाक विकलांगों को शिक्षा के सामान्य प्रनियम (Principles of education for speech defectives)

नीचे कुछ ऐसे प्रनियम दिये गये हैं जिनका अनुपालन कर वाक विकलांगो के शिक्षक लाभ उठा सकते हैं

(1) पर्याप्त अभिप्रेरणा का प्रनियम (Principle of adequate motivation)—शिक्षक को सवप्रथम विकलांगो की वाणी मे सुधार हेतु अभिप्रेरित करना चाहिए। बालक को शीघ्रातिशीघ्र यह अनुभव कराना चाहिए कि वाणी मे जल्दी सुधार कराने से ही उसे लाभ होगा। जितनी गहराई से बालक इस बात को समझेगा, उतनी ही उत्सुकता से वह सुधारात्मक पाठो को ग्रहण कर उनका अभ्यास करेगा।

(2) विकलांगता पर अत्यधिक बल देने से बचने का प्रनियम (Principle of avoidance of over emphasis on handicap)—शिक्षक को विकलांगता के स्तर एव मात्रा पर अधिक बल नही देना चाहिए। यदि बालक को यह अनुभव हुआ कि वह अपनी वाणी मे सुधार नही कर सकता तब वह हतोत्साहित हो जायेगा और उसका आत्मविश्वास बिखर जायेगा। यह स्थिति उसके लिए दुगुनी हानिकारक हो जायेगी।

(3) सही निदान का प्रनियम (Principle of correct diagnosis)—किसी भी प्रकार की सुधारात्मक एव विकासात्मक शिक्षा हेतु निदान करना अनिवार्य है। वाक विकलांगो के दोष के पीछे कौन सा कारण है? दोष का क्या स्तर है? यह सब ज्ञात करना निदान के द्वारा ही सम्भव होगा। अत निदान बहुत सावधानी, गहराई और सच्चाई के साथ करना चाहिए। जल्दबाजी मे किया गया निदान गलत निष्कर्षों पर पहुंचा देगा। फलस्वरूप सुधार के स्थान पर हानि होने की सम्भावना बढ जायेगी।

(4) उपयुक्त वाक अभ्यास का प्रनियम (Principle of suitable speech exercises)—वाक विकलांग बालकों को समुचित एव पर्याप्त वाक अभ्यास देना चाहिए। कौन-सा अभ्यास किस बालक के लिए उपयुक्त होगा यह निदान से ज्ञात होगा। शिक्षक को बालक के सामने स्वय सही और गलत दोनो ही ढगो से बोलकर बालक को समझाना चाहिए और बालको को दोनो मे क्या अन्तर है, इसे भी बताना चाहिए।

(5) चिन्ता निरसन का प्रनियम (Principles of elimination of worrying)—70 से 80 प्रतिशत वाक विकलांग हकलाहट या तुतलाहट से ग्रसित होते हैं। यह दोष अधिकतर सावेगिक कारणो जैसे–चिन्ता, लज्जा, ग्लानि दुश्चिन्ता आदि के कारण उत्पन्न होते हैं। इसलिए शिक्षको का यह प्रयास होना चाहिये कि कक्षा का वातावरण आनन्ददायक, सुखप्रद मैत्री भावना से परिपूर्ण और स्वस्थ होना चाहिए। शिक्षक का व्यवहार और कक्षा का वातावरण दोनो ही ऐसे तत्वो से पूर्ण तथा मुक्त होने चाहिए जो बालको मे चिन्ता को जन्म देती हैं।

(6) लज्जा एव घबराहट से बचाव का प्रनियम (Principle of avoidance of embarrassement)—वाक् विकलागो की कक्षा में उन परिस्थितियो से दूर रखना चाहिए जो उनम लज्जा या घबराहट उत्पन्न कर सकती हैं। सामान्य कक्षाओ मे ऐसी सम्भावना है कि सामान्य बालक वाक् विकलांगो को अपनी हँसी मजाक का विषय बना लें। इस प्रकार की परिस्थिति इन विकलागो की अपगता को और अधिक बढा देगी। इसलिए शिक्षक को बहुत सावधानी से प्रेमपूर्वक इस परिस्थिति को सम्भालना चाहिए।

वाक विकलाग बालको को विशेष ध्यान और सरक्षण मिलना चाहिए। यदि उनकी ओर ध्यान न दिया गया और उन्हें चिढाने का पात्र बना दिया गया तो उनकी स्थिति और भी दयनीय हो जायगी। जसा कि हम पहले बता चुके हैं कि अधिकाश वाक विकलाग मनोवैज्ञानिक कारणो से ग्रसित रहते हैं न कि शारीरिक कारणो से। अत उनका उपचार मुख्यत मनोविज्ञान एव शिक्षाशास्त्र पर आधारित होना चाहिए जहाँ तक सम्भव हो जल्दी स जल्दी बाल्यावस्था मे ही दोष को पहचान कर उसका उपचार आरम्भ कर देना चाहिए। विकलाग बालको को उनकी विकलागता का उपचार करते हुए उन्हे सामान्य बच्चो की मुख्यधारा म समायोजित होने का अवसर निरतर प्रदान करना चाहिए।

4 विरूपित बालक (Crippled Child)

विरूपित अथवा अस्थि विकलाग उन बालको को कहते है जिनमे कोई शारीरिक दोष या विरूपण हो। अपन अक्षम अगो के कारण ऐसे बालक सामाजिक और शैक्षिक क्षेत्र मे समायोजन करने म कठिनाई का अनुभव करते है।

सामान्य रूप से विरूपित बालको को दो वर्गों म विभाजित किया जाता है

(1) जन्मजात विरूपित बालक—कुछ बालक तन्त्रिकाओं, पेशियो व हड्डियो मे दोष होने के कारण अथवा गर्भकाल मे दोषपूर्ण विकास के कारण विकृत शारीरिक अगो के साथ ही जन्म लेते हैं। ऐसे सभी बालक जन्मजात विरूपित कहलाते हैं।

(2) दुर्घटना अथवा बीमारी के कारण विरूपित—दुर्घटना एव कुछ रोगो के कारण बालक की अस्थि सन्धियो पेशियो एव आकृति मे विकृति आ जाती है। इस प्रकार के विरूपित बालक इस वर्ग के अन्तगत आते हैं।

विरूपता के कारण—गर्भावस्था मे कुपोषण, बीमारी, रक्ताल्पता, प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात एव अन्य आनुवशिक व्यतिक्रम आदि जन्मजात विरूपण के कारण हैं।

दुर्घटना बीमारी पक्षाघात मानसिक आघात आदि कुछ ऐसे कारण हैं जो जीवन की किसी भी अवस्था मे व्यक्ति को विरूपित लोगो की श्रेणी म लाकर खडा कर सकते हैं।

विरूपित बालकों की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ

विरूपित बालक औसत बालक की तुलना मे शारीरिक दृष्टि से कम शक्तिशाली होते हैं। अग भग अथवा अगविहीनता के कारण व सामान्य बालको के खेल

वृद, मनोरंजन एवं सामाजिक कार्यक्रमों में सम्मिलित नहीं हो पाते। फलस्वरूप उनमें एकाकीपन और हीनता की भावना विकसित होने लगती है। उनमें आत्म-विश्वास, पहल आदि सकारात्मक गुणों का अभाव होने लगता है। कई बार समाज में उन्हें अपमानित किया जाता है या उनका मजाक उड़ाया जाता है। इस कारण वे अपने जीवन को निरर्थक और भारस्वरूप समझने लगते हैं।

कुछ अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि विरूपित बालकों का बौद्धिक स्तर सामान्य बालकों की तुलना में उच्च स्तर का पाया गया है। साथ ही साथ उनमें अपनी अपंगता की अतिपूर्ति (over compensation) का प्रयास भी दृष्टिगत होता है। अपंगता के अतिरिक्त इन बालकों की शैक्षिक, सांवेगिक एवं सामाजिक आवश्यकताएं सामान्य बालकों के समान ही होती हैं।

विरूपित बालकों की शिक्षा (Education for crippled)

यह बात स्वयं सिद्ध है कि विरूपित बालकों की शिक्षा व्यवस्था हमें ऐसी संस्थाओं में करनी होगी जो विशेष प्रकार के विरूपित बालकों की शिक्षा एवं कल्याण के लिए स्थापित किये गये हैं।

विरूपित बालकों के विषय में हम सवदा यह याद रखना चाहिए कि वे अपनी अपंगता के क्षेत्र को छोड़कर अन्य सभी बातों में सामान्य बालकों के समान ही हैं। इस तरह से हम कह सकते हैं कि वे एक प्रकार से सामान्य बालक ही हैं। दूसरी ओर यह भी सत्य है कि अपनी शारीरिक अपंगता के कारण सामान्य बालकों के समान सक्रिय शारीरिक कार्य करने में वे उतने सक्षम नहीं हैं किन्तु इसके साथ शिक्षकों को यह भी समझना चाहिए कि उनकी इच्छाएँ व आकांक्षाएँ सामान्य बालकों के ही समान हैं। अतः हमें उन्हें सभी आवश्यक शैक्षिक अवसर प्रदान करने चाहिए जो उनकी अपंगता के अनुरूप हैं।

विरूपित बालकों के लिए शक्षिक कार्यक्रम बनाते समय हम उनकी विशिष्ट शारीरिक अपंगता को सदैव ध्यान में रखना चाहिए और उन्हें उसी के अनुरूप विशेष ध्यान, पालन पोषण, शिक्षा और मार्गदर्शन देना चाहिए

विरूपित बालकों की शिक्षा के सामान्य प्रनियम (General principles of education for Crippled)

विरूपित बालकों की शिक्षा के लिए एक आदर्श पाठ्यक्रम बहुत व्यापक होना चाहिए ताकि इन विकलांगों का सर्वांगीण विकास हो सके। इनकी शिक्षा व्यवस्था में निम्नलिखित प्रनियमों का अनुपालन लाभकारी सिद्ध होगा

(1) शारीरिक अपंगता के अनुरूप शैक्षिक पाठ्यचर्या के निर्माण का प्रनियम—विरूपित बालकों की शिक्षा का पहला प्रनियम है—उनकी विरूपता के अनुसार शैक्षिक पाठ्यचर्या एवं कार्यक्रमों का निर्माण। उदाहरण के लिए जिस बच्चे का हाथ कटा हुआ है और जिस बच्चे के दोनों पैर कटे हुये हैं उनके लिए समान

विकलांग बालकों की शिक्षा में अनेक समस्याएँ खड़ी होती हैं। पहली समस्या है उनके विकलांग अंग के अनुसार उन्हें विशेष शिक्षा देना। साथ ही साथ उनका सर्वांगीण विकास करने के लिए उनकी सामान्य शिक्षा की व्यवस्था करना। उनका सावेगिक एवं सामाजिक समायोजन अच्छा हो इस हेतु उनके लिए ऐसे कार्यक्रमों की रचना करनी होगी जो उनमें आत्म विश्वास एवं आत्म निर्भरता की भावना विकसित करे। उनके लिए निर्मित संस्थाओं में समुचित शैक्षिक एवं व्यावसायिक उपकरण तथा विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता भी पड़ेगी। इसके अतिरिक्त इन संस्थाओं में विशेषज्ञ चिकित्सकों का उपलब्ध होना भी आवश्यक है।

5 अस्वस्थ विकलांग (Unhealthy Handicapped)

वे बालक जो शारीरिक अस्वस्थता अथवा शक्तिहीनता के कारण पढ़ाई-लिखाई में अपेक्षाकृत कमजोर होते हैं या जिनके लिए स्कूल में विशेष स्वास्थ्य सेवा की व्यवस्था करनी पड़ती है, उन्हें अस्वस्थ विकलांग कहा जाता है।

मिर्गी (epilepsy), ग्रन्थि असन्तुलन (endocronological imbalance), तपेदिक (tuberculosis), हृदय रोग (cardiac anomalies), सूखा रोग (rickets), श्वास रोग (asthama), रक्ताल्पता (anaemia) आदि रोगों से ग्रसित बालक इस विकलांगता के वर्ग में आते हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ निम्नलिखित विशिष्ट शारीरिक अयोग्यताएँ भी हैं जो बालकों को लिखना पढ़ना, सामान्य गणित (3 basic R'S) आदि सीखने में अक्षम बनाती हैं, वैसे ये बालक बुद्धिमान होते हैं किन्तु इन शारीरिक अपंगताओं के कारण वे शैक्षिक कार्य करने में अपने को असमर्थ पाते हैं—

(i) कान्जेनिटल डिस्लेक्सिया (Congenital Dyslexia)—'पढ़ना' सीखने की विशिष्ट अक्षमता।

(ii) कान्जेनिटल डिसग्रफिया (Congenital Dysgraphia)—'लिखना' सीखने की विशिष्ट अक्षमता।

(iii) कान्जेनिटल एप्रक्सिया (Congenital Apraxia)—हस्तकौशल व सीख पाने की विशिष्ट अक्षमता।

(iv) कान्जेनिटल वर्ड ब्लाइंडनेस (Congenital word blindness)—बालक अक्षरों और शब्दों का साफ साफ देख तो सकता है किन्तु लिखे हुए शब्दों का अर्थ नहीं बता पाता।

(v) कान्जेनिटल वर्ड डेफनेस (Congenital word-deafness)—इसमें बालक सामान्य ढंग से सुन सकता है किन्तु जो कुछ सुनता है, उसका अर्थ नहीं बता पाता।

अस्वस्थ विकलांग सदैव अस्वस्थ रहने के कारण चिड़चिड़े, दुर्बल एवं चिन्ता-ग्रस्त रहते हैं। उनका शारीरिक विकास रुक जाता है या मन्द पड़ जाता है। वे

शैक्षिक कार्यक्रमो की रचना करना बहुत बुद्धिमतापूर्ण शैक्षिक निर्णय नही कहा जा सकता। विरूपता के अनुरूप यदि पाठ्यक्रम बनाया जाय तो विरूपित बालको को अधिक लाभ होगा, इसमे जरा भी सन्देह नही है।

(2) सावेगिक समायोजन एव सुरक्षा का प्रनियम—शारीरिक विरूपिता के कारण इस प्रकार के विकलागो का सामाजिक एव सावेगिक समायोजन बिगड जाता है। अत इनके लिए बनायी गयी शिक्षण एव प्रशिक्षण की व्यवस्था मे सवेगात्मक समायोजन की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। हमे ऐसे कार्यक्रम और विद्यालय सगठनात्मक वातावरण का निर्माण करना होगा जिनके द्वारा इन विकलागो की हीन भावना का उन्मूलन हो सके तथा इनमे पहल, आत्म विश्वास एव आत्मनिर्भरता विकसित हो।

(3) प्रेरणा एव दृढ़ निश्चय के विकास का प्रनियम—अपगता के कारण उत्पन्न जीवन की निरर्थकता की भावना का समाप्त करने तथा इन विकलागो म यह भावना भरने के लिए कि वे भी वह सब कुछ कर सकते हैं जो एक सामान्य बालक कर सकता है। शिक्षको को उनके लिए ऐसे कार्यक्रमो की रचना करनी चाहिए जिनसे उनमे अपने जीवन को सुधारने की अभिलाषा बलवती हो, वे अभिप्रेरित हो और शैक्षिक एव जीवन के उद्देश्यो तक पहुचने के लिए दृढ निश्चयी बन सकें।

(4) शारीरिक दक्षता विकसित करने का प्रनियम—ऐसे विकसित बालको की शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि वे अपनी शारीरिक अपगता पर विजय प्राप्त कर सके। जो अग उनके पास नही है या विकसित हो चुका है उस अग द्वारा जो काय सामान्य बालक करते हैं उस कमी को पूरा करने वाले शिक्षण एव प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। विकसित बालको को उत्पादक अथवा व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान कर उनकी शारीरिक दक्षता को विकसित करना इनकी शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।

(5) शैक्षिक एव सन्तुलित विकास का प्रनियम—कई बार शिक्षक एव अभिभावक विरूपित बालको को व्यावसायिक प्रशिक्षण देना मात्र ही उनकी शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य मान लेते हैं। इस प्रकार विरूपित बालको का एकागी विकास होता है। आवश्यकता इस बात की है कि विरूपित बालको का सर्वांगीण विकास भी होना चाहिए। अत उनकी पाठ्यचर्या म सैद्धान्तिक एव सभी प्रकार क शैक्षिक विषयों को स्थान मिलना चाहिए।

(6) चिकित्सा सुविधा प्रदान करने का प्रनियम—शारीरिक अपगता का निदान एव उसकी चिकित्सा के द्वारा ही विरूपित बालकों को स्वस्थ बनाया जा सकता है। स्वास्थ्य अच्छा होने पर ही वे शैक्षिक एव व्यावसायिक शिक्षण एव प्रशिक्षण प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं।

विरूपित बालको की शिक्षा मे अनेक समस्याए खडी होती ह । पहली समस्या है उनके विरूपित अग के अनुसार उन्हे विशेष शिक्षा देना । साथ ही साथ उनका सर्वांगीण विकास करने के लिए उनकी सामान्य शिक्षा की व्यवस्था करना । उनका सावेगिक एव सामाजिक समायोजन अच्छा हो इस हेतु उनके लिए ऐसे कायक्रमो की रचना करनी होगी जो उनमे आत्म विश्वास एव आत्म निर्भरता की भावना विकसित करे । उनके लिए निर्मित सस्थाओ मे समुचित शैक्षिक एव व्यावसायिक उपकरण तथा विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षको की आवश्यकता भी पडेगी । इसके अतिरिक्त इन सस्थाओ मे विशेषज्ञ चिकित्सको का उपलब्ध होना भी आवश्यक है ।

5 अस्वस्थ विकलाग (Unhealthy Handicapped)

वे बालक जो शारीरिक अस्वस्थता अथवा शक्तिहीनता के कारण पढाई-लिखाई म अपेक्षाकृत कमजोर होते हैं या जिनके लिए स्कूल मे विशेष स्वास्थ्य सेवा की व्यवस्था करनी पडती है, उन्ह अस्वस्थ विकलाग कहा जाता है ।

मिर्गी (epilepsy), ग्रन्थि असन्तुलन (endocronological imbalance), तपेदिक (tuberculosis), हृदय रोग (cardiac anomalies), सूखा रोग(rickets), श्वास रोग (asthama), रक्ताल्पता (anaemia) आदि रोगो से ग्रसित बालक इस विकलागता के वर्ग म आते हैं ।

इसके अतिरिक्त कुछ निम्नलिखित विशिष्ट शारीरिक अयोग्यताएँ भी ह जो बालको को लिखना पढना, सामान्य गणित (3 basic R'S) आदि सीखने म अक्षम बनाती हैं, वसे य बालक बुद्धिमान होत हैं किन्तु इन शारीरिक अपगताओ के कारण वे शक्षिक काय करने म अपने को असमथ पाते है—

(i) काजेनिटल डिस्लेक्सिया (Congenital Dyslexia)— पढना' सीखन की विशिष्ट अक्षमता ।

(ii) काजेनिटल डिसग्रफिया (Congenital Dysgraphia)—'लिखना' सीखने की विशिष्ट अक्षमता ।

(iii) काजेनिटल एप्रक्सिया (Congenital Apraxia)—हस्तकौशल व सीख पान की विशिष्ट अक्षमता ।

(iv) काजेनिटल वड ब्लाइडनेस (Congenital word blindness)— बालक अक्षरो और शब्दो का साफ साफ देख तो सकता ह किन्तु लिखे हुए शब्दो का अर्थ नही बता पाता ।

(v) काजेनिटल वड डेफनेस (Congenital word-deafness)—इसम बालक सामान्य ढग से सुन सकता है किन्तु जो कुछ सुनता है, उसका अथ नहीं बता पाता ।

अस्वस्थ विकलाग सम्व अस्वस्थ रहने के कारण चिडचिडे, दुबल एव चिन्ता-ग्रस्त रहत है । उनका शारीरिक विकास रुक जाता है या मन्द पड जाता है । य

शारीरिक श्रम नहीं कर पाते। शारीरिक एवं मानसिक थकान के कारण वे अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान केंद्रित नहीं कर पाते हैं अतः वे अक्सर कक्षा में पिछड़ जाते हैं।

अस्वस्थ बालकों की शिक्षा—इन बालकों की शिक्षा के लिए भी सामान्य प्रनियम वे ही हैं जो विरूपित बालकों की शिक्षा के लिए हैं। विशेष बात जिसकी ओर ध्यान देना है वह है कि विद्यालय में ऐसे विकलांगों को सदैव अन्य सामान्य बालक के साथ सामाजिक कार्य, मनोरंजन, खेलकूद आदि के कार्यक्रमों में उनकी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के अनुसार भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इन विकलांगों के लिए उचित स्वास्थ्य सेवा एवं देखरेख की विशेष व्यवस्था करनी चाहिए। इनके लिए संतुलित भोजन और व्यायाम आदि की व्यवस्था घर और विद्यालय दोनों में ही होनी चाहिए। साथ ही साथ स्वतन्त्र वातावरण में कार्य करने का अवसर प्रदान करने से इनमें स्वास्थ्य लाभ तथा आत्मनिर्भरता की भावना का विकास किया जा सकता है।

शारीरिक विकलांग बालकों की शिक्षा (Education of physically handicapped children)

विकलांग बालकों की विशेषताओं उनकी समस्याओं आदि की चर्चा विभिन्न प्रकार के विकलांग के सन्दर्भ में स्थान स्थान पर पहले की जा चुकी है। यहाँ विकलांगों की शिक्षा से सम्बन्धित सामान्य व्यवस्थाओं की चर्चा की जायेगी। विकलांग बालक अपनी विकलांगता के प्रकार और उसके स्तर के आधार पर शिक्षित किये जाते हैं। *अतः विकलांगता के स्तर के अनुरूप उनकी शिक्षा व्यवस्था भी बदल जाती है।* कुछ विकलांग बालक सामान्य कक्षाओं में ही विशिष्ट शिक्षकों द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं, कुछ दूसरे अलग कक्षाओं में तथा कुछ अन्य विकलांग विद्यालयों में या आवासीय विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करते हैं। किसी भी व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षा प्राप्त करने वाले विकलांगों को अन्ततः हम शिक्षा की मुख्य धारा एवं उससे भी बढ़कर समाज की मुख्य धारा में मिलाने का प्रयास करना चाहिए। विकलांग बालकों की शिक्षा व्यवस्था के कुछ मुख्य प्रारूप निम्नलिखित हैं

विशेष परिभ्रामी शिक्षक व्यवस्था (Special visiting teachers)

सामान्य कक्षाओं में विकलांग बालक सामान्य शिक्षकों के सम्मुख अनेक समस्याएँ उत्पन्न कर देते हैं। इन समस्याओं का समाधान विकलांग बालकों की शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त परिभ्रामी शिक्षकों की सहायता से दूर किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिक समाजसेवी, उच्चारण विशेषज्ञ आदि परिभ्रामी शिक्षकों की भूमिका निभा सकते हैं। ऐसे परिभ्रामी शिक्षक पूर्व नियोजित समय सारिणी एवं कार्यक्रमों के अनुसार एक ही दिन में अनेक विद्यालयों में विकलांग बालकों की शिक्षा में सहायक बनते हैं।

विकलांगों के लिए विशेष कक्षा व्यवस्था (Special classes for handicapped)

गम्भीर रूप से विकलाग बालकों की व्यवस्था सामान्य कक्षाओ में सम्भव नही हो पाती अत उनके लिए सामान्य विद्यालयो मे अलग से विशेष कक्षा की व्यवस्था करनी पडती है। अपनी विकलागता की प्रकृति के अनुरूप उन्हें विशेष कक्षाओ मे विकलागता के क्षेत्र मे विशेष रूप से प्रशिक्षित शिक्षकों द्वारा शिक्षा दी जाती है। शेष समय म य विकलाग सामान्य बालकों की कक्षाओं में ही अध्ययन करते हैं। इन कक्षाओं म विकलागो को आवश्यक सहायक यन्त्रो के प्रयोग का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

विकलाग विद्यालय व्यवस्था (Schools for Handicapped)

विशेष रूप से विकलाग बालको के लिए अलग विद्यालय की व्यवस्था करना जैसे मूक बधिर बालको के लिए 'मूक बधिर विद्यालय', नेत्रहीनों के लिए 'अन्ध विद्यालय' की व्यवस्था। इन विद्यालयो म विशिष्ट विकलागता के लिए विशिष्ट सहायक उपकरण विशिष्ट शिक्षक आदि की व्यवस्था रहती है।

शारीरिक विकलागों हेतु कल्याण योजनाएँ (Plans for the welfare of physically handicapped)

विकलागो के प्रति परिवर्तन दृष्टिकोण के कारण अब विकलागो को दूसरो की दया एव भिक्षा वृत्ति पर आश्रित रहने के लिए नही छोडा जाता। भारत सरकार ने राष्ट्रीय पचवर्षीय योजना मे विकलांगो का कमजोर वर्ग का एक भाग मान लिया है। भारतीय सविधान के अनुच्छेद 41 तथा 46 मे भी विकलाग व्यक्तियो के कल्याण पर जोर दिया गया। इन्ही सब विचारो को ध्यान मे रखते हुए छठी पचवर्षीय योजना के दौरान सरकार ने विकलागो के लिए 24 40 करोड रुपये का प्रावधान किया था। सातवी पचवर्षीय योजना म यह राशि चार गुना अधिक बढा दी गयी है और विकलागो के कल्याण के लिए 124 करोड रु० का प्रावधान है।

विकलागों के कल्याण हेतु भारत सरकार ने जो पहला कदम उठाया वह है उन्हे रोजगार उपलब्ध कराने के लिए 1957 मे बम्बई मे शारीरिक विकलागों के लिए एक विशेष 'रोजगार कार्यालय' (Employment Exchange) स्थापना। इस प्रयास मे सफलता मिली और आज देश के सभी राज्यो एव प्रमुख नगरो म इस प्रकार के 22 कार्यालय खुल चुके हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकलागो की सहायता करने के लिए विशेष रोजगार कार्यालयों के 41 कक्षा की भी स्थापना की गयी है।

विकलागो के कल्याण की दिशा म दूसरा कदम था श्रम मन्त्रालय के अधीन कम उम्र के विकलागो के पुनर्वास मे सहायता पहुचाने के लिए जून सन 1968 म बम्बई और हैदराबाद म दो शारीरिक विकलाग व्यावसायिक पुनर्स्थापना केन्द्रों का

खोला जाता । इस कदम का भी विकलांग व्यक्तियों ने पुरजोर स्वागत किया और अब भारत में ऐसे 14 केन्द्र कायरत हैं।

इन 14 केन्द्रों में से 6 केन्द्रों में कुशलता प्रशिक्षण कार्यशालाओं की स्थापना की गयी है जो अहमदाबाद, बम्बई, बंगलौर, हैदराबाद, मद्रास तथा त्रिवेन्द्रम में स्थित हैं।

नयी शिक्षा नीति के तहत विकलांग बच्चों को सामान्य शिक्षा की मुख्य धारा में मिलाने के लिए एक योजना तैयार की गयी है। प्रौढ़ विकलांग व्यक्तियों को एकीकृत शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार ने जामिया मिलिया इस्लामिया (नयी दिल्ली), रामकृष्ण विद्यालय, कोयम्बटूर (तमिलनाडु), बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उत्तर प्रदेश), तथा उत्कल विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर (उड़ीसा) में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने के लिए 6 केन्द्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन कार्यक्रमों को निश्चित करने में एन० सी० आर० टी० सहायता प्रदान करती है। इसी क्रम में आज देश में विकलांगों की शिक्षा के क्षेत्र में अनुसन्धान, प्रशिक्षण, डाकुमेन्टेशन तथा मार्गदर्शन की सेवाएँ प्रदान करने हेतु राष्ट्रीय स्तर पर भारत सरकार ने विकलांगों के प्रत्येक मुख्य वर्ग के लिए 'राष्ट्रीय संस्थान' स्थापित किये हैं। इसके फलस्वरूप विकलांग समुदाय के कल्याण कार्य की प्रगति हुयी है। ये राष्ट्रीय संस्थान हैं—

(1) राष्ट्रीय दृष्टिहीन विकलांग संस्थान, देहरादून 1971,
(2) राष्ट्रीय अस्थिरचना विकलांग संस्थान, कलकत्ता 1981,
(3) अलीयावर राष्ट्रीय श्रवणहीन विकलांग संस्थान, बम्बई 1982,
(4) राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, हैदराबाद 1984।

सन 1981 में विकलांग अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष के स्मारक के रूप में विकलांगों को विकलांगता के अनुसार सहायता सामग्रियों और उपकरणों के वितरण के लिए भारत सरकार ने एक योजना चालू की है। इसके अधीन 1288 रु० प्रतिमाह से कम आय वाले लोगों को 25 से लेकर 1500 रु० तक के उपकरण मुफ्त दिये जाते हैं और 1288/- से 2500 रु० प्रतिमाह आय वालों को ये उपकरण आधे दाम पर मिल सकते हैं।

सरकारी नौकरियों में भी 3 प्रतिशत का आरक्षण विकलांगों के लिए स्वीकार किया गया है। इनके लिए नौकरियों में 10 वर्ष तक की आयु की छूट दी गयी है। टेलीफोन की दरों में भी प्रत्येक काल (Call) के लिए इन्हें 50 पैसे के स्थान पर 30 पैसे ही देने पड़ते हैं। रेलवे मन्त्रालय ने विकलांगों के लिए टिकटों पर 50 से 75 प्रतिशत तक की रियायत देने का प्रावधान किया है। केन्द्रीय सरकार विकलांगों को उनके मूल वेतन का 10 प्रतिशत वाहन भत्ता के रूप में देती है। विकलांगों को रियायती दर पर पेट्रोल और डीजल भी देने की व्यवस्था है। विकास प्राधिकरण

द्वारा बनाये गये मकानों में से 5 प्रतिशत विकलांगों के लिए आरक्षित हैं। इसी प्रकार विकलांगों के कल्याण के लिए अनेक सुविधाएँ सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाओं की ओर से प्रदान की जा रही हैं। दुर्भाग्य की बात यह है कि कई विकलांग व्यक्तियों को इस बात का पता ही नहीं है कि भारत सरकार ने उनको कौन कौन सी सुविधाएँ और रियायतें दी हैं। इस जानकारी के अभाव में वे इन सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पाते और यह भी नहीं जानते कि इस काय के लिए उन्हें किससे सम्पर्क करना चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि विकलांगों के लिए स्थापित व्यावसायिक पुनर्वास केन्द्रों की जानकारी उन्हें दी जाय। (देखिये परिशिष्ट 1)। इन व्यावसायिक पुनर्वास केन्द्रों (Vocational Rehabilitation Centres VRC) के मुख्य उद्देश्य एवं काय निम्नलिखित हैं—

(i) विकलांगों का व्यावसायिक दृष्टि से मूल्यांकन करना व उन्हें समायोजन क्षमता प्रदान करना।

(ii) केन्द्रों पर आये व्यक्तियों की आवश्यकताओं जैसे चिकित्सीय, रोजगार आदि को ज्ञात कर उन्हें तत्सम्बन्धी चिकित्सालय, रोजगार केन्द्र आदि के विषय में सूचना प्रदान करना तथा उन्हें समुचित परामर्श देना।

(iii) विकलांगों को इस प्रकार सहायता करना ताकि वे स्वयं अपनी आवश्यकतानुसार पुनर्वास योजना बना सकें।

(iv) विकलांगता की प्रकृति के आधार पर स्वतन्त्र प्रतिस्पर्धा परीक्षणों के विषय में सूचना देना।

(v) रोजगार केन्द्रों को, विकलांगों को व्यवसाय देने वाली संस्थाओं से जोड़ना।

(vi) पुनर्वास सेवाओं को प्रोत्साहन एवं बढ़ावा देना तथा समुदायों में पुनर्वास योजनाओं के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति का विकास करना।

(vii) वयस्क विकलांगों का मनोवैज्ञानिक, शारीरिक एवं व्यावसायिक मूल्यांकन के उपरान्त उनके पुनर्वास हेतु नौकरी प्रशिक्षण, रोजगार तथा शारीरिक पुनर्वास की क्रिया में सहयोग पहुंचाना।

विकलांगों की शिक्षा समायोजन एवं पुनर्वास सम्बन्धी समस्याओं का निराकरण केवल सरकारी प्रयासों से ही सम्भव नहीं है। इसके लिए समाज, शिक्षण संस्थान एवं सरकार के सम्मिलित प्रयास की आवश्यकता है। इस सम्मिलित प्रयास एवं उसके निमित्त काय करने की प्रेरणा का जागरण शिक्षा के क्षेत्र में कायरत शिक्षकों एवं अन्य कायकर्ताओं का ही दायित्व है।

अभ्यास के प्रश्न

1 शारीरिक विकलांग किसे कहते हैं? विकलांगता का वर्गीकरण करते हुए बालकों के व्यक्तित्व पर इसके दुष्परिणामों की विवेचना कीजिए।

2 विकलांगों की शिक्षा के सामान्य उद्देश्यों की समीक्षा कीजिए।

3 चक्षु विकलांग बालकों के व्यक्तित्व की विशेषताओं का वर्णन करते हुये उनकी शिक्षा की एक रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।

4 श्रवण विकलांग बालकों की मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ क्या हैं? उनकी शिक्षा की सामान्य रूपरेखा का वर्णन कीजिए।

5 वाक् विकलांगता के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन करते हुये उनकी शिक्षा के सामान्य प्रनियमों की समीक्षा कीजिए।

6 विरूपित बालक कितने प्रकार के होते हैं? उनकी मनोवैज्ञानिक विशेषताओं एवं शिक्षा की रूपरेखा पर प्रकाश डालिए।

7 अस्वस्थ विकलांग किसे कहते हैं? इनकी शिक्षा के स्वरूप को निर्धारित कीजिए।

8 शारीरिक विकलांग बालकों की शिक्षा की समस्याओं का उल्लेख करते हुए सामाजिक संस्थाओं एवं सरकार द्वारा इनकी शिक्षा और पुनर्वास के लिए किये जाने वाले कार्यों की समीक्षा कीजिए।

9 शारीरिक रूप से विकलांग कौन है? ऐसे बच्चों की शिक्षा के लिए अभिभावक क्या कर सकते हैं?



परिशिष्ट–1

विकलांगों के लिए व्यावसायिक पुनर्वास केन्द्र

1. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   आई० टी० आई० कैम्पस, कुबेर नगर
   अहमदाबाद—382340।
   (गुजरात)।
2. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   सी० टी० आई० कैम्पस,
   सिओन
   बम्बई—400022।
3. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   22, होसुर रोड,
   बंगलौर (कर्नाटक)।
4. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   38, बी० आर० लेन,
   बेलियाघाटा
   कलकत्ता—700010।
   (पश्चिम बंगाल)।
5. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   आई० टी० आई० होस्टल बिल्डिंग
   आई० टी० आई० कैम्पस, पूसा
   नयी दिल्ली—110012।
6. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   4—एस० ए०, जवाहर नगर,
   जयपुर—302004 (राजस्थान)।
7. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   नेपियर टाउन (बस स्टण्ड के पास)
   जबलपुर—482001 (म० प्र०)।
8. विकलांग पुनर्वास केन्द्र
   ए० टी० आई० कैम्पस, विद्या नगर
   हैदराबाद—500007 (आ प्र प्रदेश)।

9 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
सी० टी० आई० कम्पस,
उद्योग नगर,
कानपुर—208022 (उ० प्र०)।

10 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
ए० टी० आई० कैम्पस, गिल रोड
लुधियाना—143003 (पजाब)

11 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
सी० टी० आई० कम्पस, गिडी
मद्रास—600032
(तमिलनाडु)।

12 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
रहेबारी
गुवाहाटी—781008 (असम)।

13 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
नालनचिरा
त्रिवेन्द्रम—695015 (केरल)।

14 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
एस० आई० आर० डी० कैम्पस
यूनिट VIII
भुवनेश्वर—754012
(उडीसा)।

15 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
द्वारा/रोजगार और मनुष्य शक्ति
नियोजन निदेशक
अगरतला (त्रिपुरा)।

16 विकलाग पुनर्वास केन्द्र
द्वारा/उपक्षेत्रीय रोजगार कार्यालय
विकलागों के लिए, कोठी बिल्डिग,
पहली मजिल (केवल स्त्रियां)
बड़ोदरा—390001 (गुजरात)।